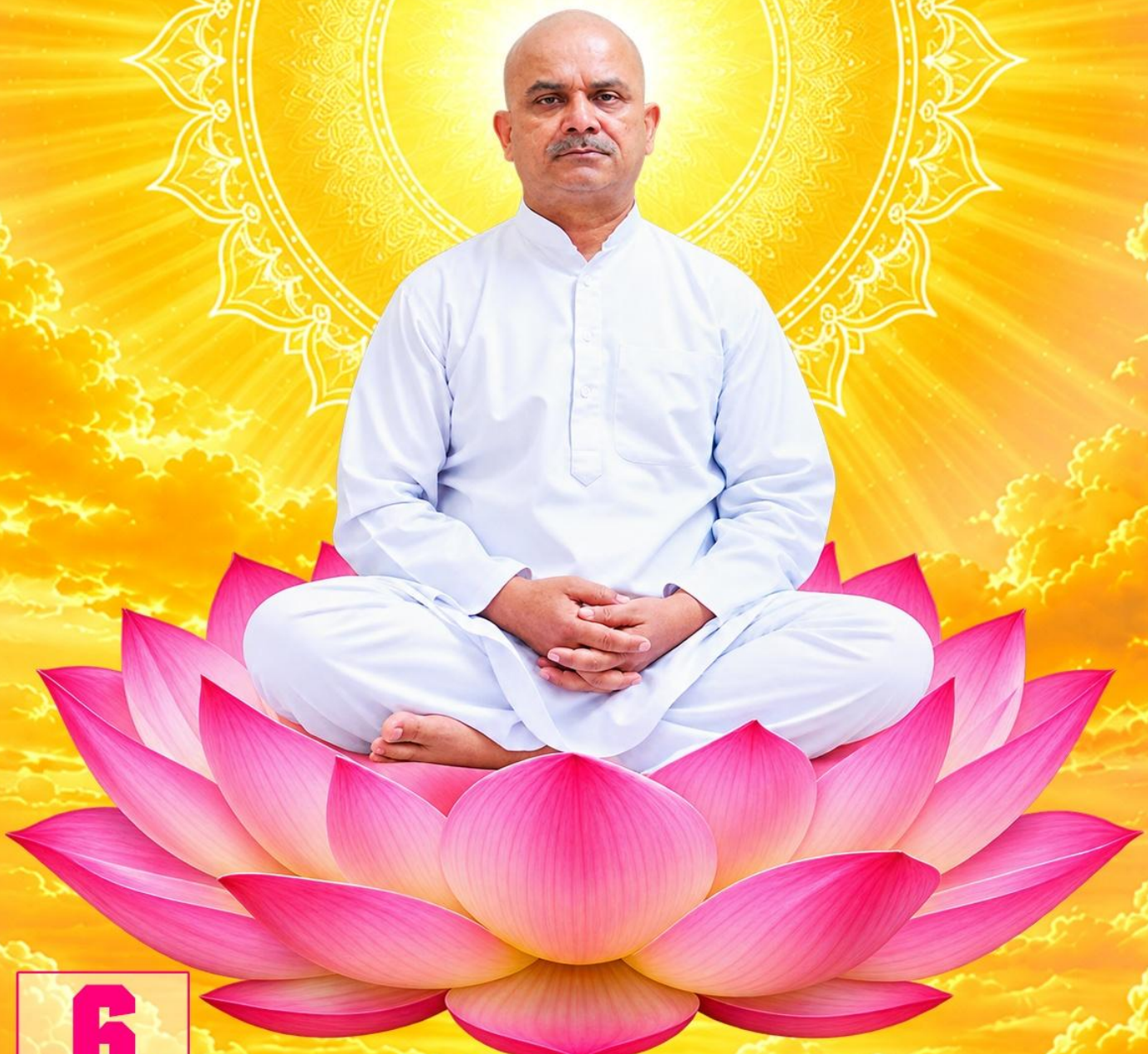
तत्त्वज्ञानी के अनुभव

(शिवछिद्र, परा-प्रकृति)



6 BOOK

योगी आनन्द जी

तत्त्वज्ञानी के अनुभव

(शिवछिद्र, परा-प्रकृति)

योगी आनन्द जी

आंतरिक विकास करके जिसने शिवछिद्र के विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया है, वह ब्रह्म स्वरूप ही हो गया है। ऐसे पुरुष भूलोक पर जन्म ग्रहण करने के लिए नहीं आते है।

तत्त्वज्ञानी के अनुभव

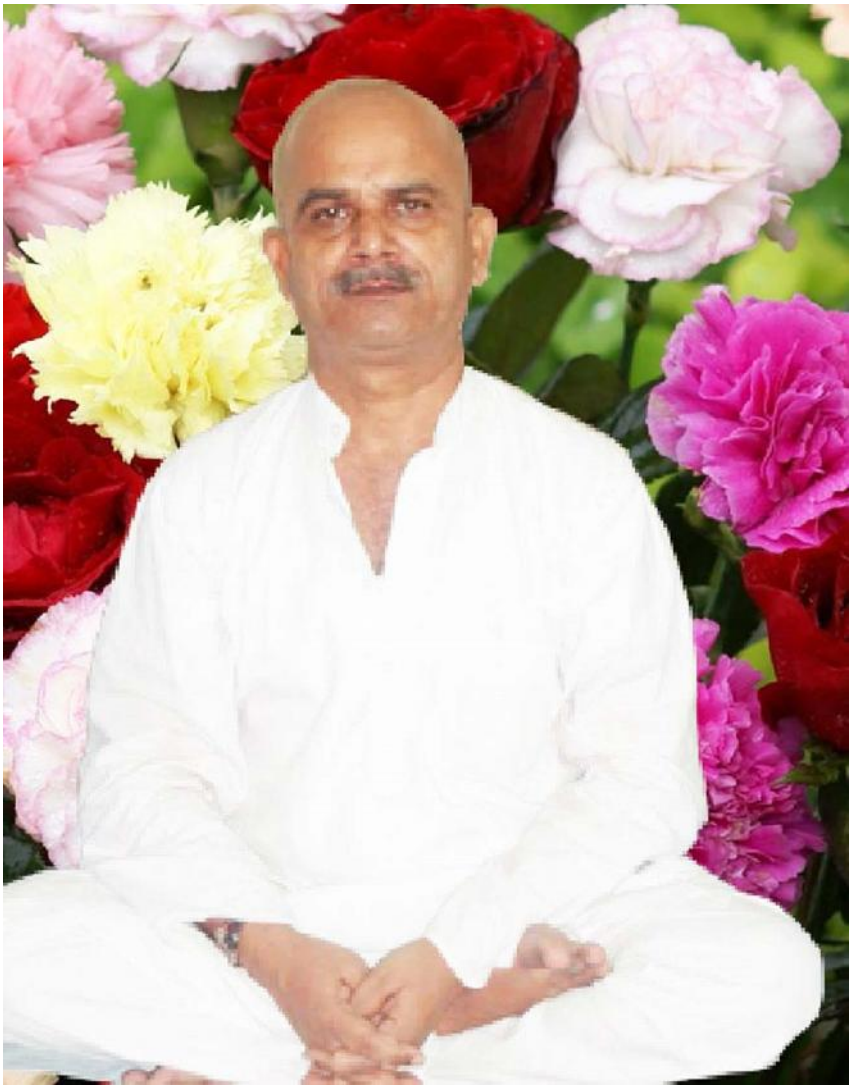
(शिवछिद्र, परा-प्रकृति)

ISBN 978-93-345-5895-1

© लेखक
योगी आनन्द जी

Publisher:
Self Published
Printer: Bhargava Mudranalaya,
46/38C, Behind MISHRATVS, New Bairhana, Old G T Road,
Bairhana, Allahabad - 211003, Uttar Pradesh

anandkyogi@gmail.com
http://www.kundalinimeditation.in/
http://www.youtube.com/c/YogiAnandJiSahajDhyanYog
https://www.fb.com/sahajdhyanyog/



योगी आनन्द जी

प्रस्तावना

जीवनमुक्त अवस्था प्राप्त होते समय अभ्यासी को किस प्रकार के अनुभव आते हैं एवं संसारी व्यक्तियों का व्यवहार तत्त्वज्ञानी पुरुषों के साथ कैसा होता है, इस विषय में पुस्तक में लिखा गया है। कुछ साधकों की प्रबल इच्छा थी कि मैं एक ऐसी पुस्तक लिखूँ - जिसमें अध्यात्म में उच्चतम अवस्था के समय जीवनमुक्त पुरुष अपना जीवन इस संसार में रहकर किस प्रकार से जीता है? ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होने के बाद चित्त पर स्थित अज्ञानता धीरे-धीरे अभ्यासानुसार कैसे नष्ट होती है? अज्ञानता नष्ट होते समय अभ्यासी को अत्यन्त कष्ट देने वाले कलेशात्मक कर्माशयों को भोग कर नष्ट किया जाता है। ऐसी अवस्था में उसके निकट सम्बन्धी अपमानित करके उसका त्याग तक कर देते हैं, उसी समय अभ्यासी को सांसारिक रिश्तों का सही रूप से भान होता है।

निरुद्धावस्था के समय व्युत्थान के संस्कार निरुद्ध होने लगते हैं, और पर-वैराग्य के संस्कार प्रकट होने लगते हैं। चित्त की शुद्धता को अभ्यास के द्वारा इतना बढ़ाया जाता है, जब तक वह स्फटिक मणि के समान शुद्ध ना हो जाए। चित्त की ऐसी शुद्धता प्राप्त करने के लिए आरोही-अवरोही क्रम से अभ्यास करना पड़ता है। अंतिम अवस्था में शिवछिद्र का भी विकास-क्रम करना अतिआवश्यक है। यह शिवछिद्र अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति के मध्य अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान रहता है। अभ्यास के द्वारा जब शिवछिद्र के स्वरुप का विकास-क्रम हो जाता है उस समय अभ्यासी को सगुण-ब्रह्म नारायण और परमशिव का साक्षात्कार होता है। फिर परा-प्रकृति का पूर्ण अवतरण हो जाता है, तब अभ्यासी के लिए परा-प्रकृति सर्वत्र व्याप्त हो जाती है। उचित समय आने पर अभ्यासी इस स्थूल शरीर का त्याग कर परा-प्रकृति (ईश्वर का लोक) में सदैव के लिये स्थित हो जाता है।

साधकों, वर्तमान समय में ऐसी पुस्तक आपको बाजार अथवा अन्य जगहों पर शायद ही प्राप्त होगी, क्योंकि इस अवस्था को अभ्यासी इतने स्पष्ट रूप से लेख नहीं लिखता है। यह पुस्तक हमारी समाधि में आए अनुभवों के आधार पर लिखी गई है।

- **योगी आनन्द जी**

आभार

कुछ साधक मुझसे बहुत समय से कह रहे थे कि गुरुजी आप हम सभी के लिए ऐसी पुस्तक लिखने की कृपा कीजिए, जिसमें तत्त्वज्ञान प्राप्त करने के बाद अभ्यासी को कैसी अवस्था प्राप्त होती है, उस समय उसे कैसे-कैसे अनुभव और अनुभूतियाँ आती हैं? अन्त में मोक्ष के समय अपरा-प्रकृति का स्वरूप कैसा होता है?

मैंने समय निकालकर लेख लिखना शुरू किया। थोड़ा सा अपरा-प्रकृति का अवरोध भी आया। फिर भी कुछ महीनों में इस लेख को पूरा कर लिया गया। बाद में इस पुस्तक को टाइप करने के लिए कुछ साधकों के सहयोग से यह कार्य भी पूर्ण हो गया। मैं उन साधकों का आभार व्यक्त करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि जिज्ञासु पाठकों को इस पुस्तक को पढ़ कर आध्यात्मिक लाभ प्राप्त होगा।

- **योगी आनन्द जी**

पाठकों से कुछ शब्द

प्रिय पाठकों! कुछ साधकों की तीव्र इच्छा थी और उन्होंने कई बार मुझसे पूछा भी था कि आपके द्वारा लिखी हुई अगली पुस्तक हमें पढ़ने के लिए कब उपलब्ध होगी। आपकी अवस्था वाले अभ्यासियों को किस प्रकार के दिव्य अनुभव दिखाई देते हैं, क्योंकि आप जैसे तत्वज्ञानी योगी वर्तमान समय में विरले ही होंगे। जो योगी इस अवस्था को प्राप्त भी होंगे, वह अपने आप को समाज वालों के सामने प्रकट ही नहीं करते हैं। आप ही एक ऐसे तत्वज्ञानी योगी हैं जो समाज वालों के सामने प्रकट होकर न जाने कितने साधकों का मार्गदर्शन कर रहे हैं। आपके मार्गदर्शन में बहुत से साधक उच्चावस्था को प्राप्त कर अभ्यास करने में लगे हुए हैं, इसलिए हम सभी जिज्ञासु यह चाहते हैं कि आपको समाधि अवस्था में जो अनुभव आये हैं, उन अनुभवों का संग्रह करके एक पुस्तक का स्वरूप प्रदान करें। ताकि हम सभी साधक और समाज के लोग समझ सकें कि योगी को अभ्यास द्वारा प्राप्त उच्चतम अवस्था में संसार के स्वरूप का कैसा भान होता है।

ज्ञान की अवस्था में योगी को अपरा-प्रकृति का स्वरूप कैसा दिखाई देता है? ऋतम्भरा-प्रज्ञा का चित्त पर उदय होने के बाद से ईश्वर (सगुणब्रह्म) प्राप्ति तक किस प्रकार की अनुभूति होती है? मनुष्य जो अज्ञानतावश इस संसार को अपना समझते हुए जीवन के अन्त समय तक माया-मोह के कारण इच्छाओं के आधीन हुआ सिर्फ दु:ख की ही अनुभूति करता रहता है। फिर वृद्धावस्था में जर्जर हुआ स्थूल शरीर किसी प्रकार के सांसारिक कार्य करने के लायक नहीं रह जाता है, मगर इच्छाएँ अब भी प्रबल रहती हैं। ऐसी अवस्था में उसके परिवार वाले व सगे-सम्बन्धी भी उसके साथ तिरस्कार जैसा व्यवहार करने लगते हैं, और अन्त में स्थूल शरीर सदैव के लिए शान्त हो जाता है।

मनुष्य का जन्म तो मिल गया, मगर मनुष्य शरीर प्राप्त होने का कोई लाभ प्राप्त नहीं कर पाता है। इस प्रकार का जन्म तो अन्य शरीरधारियों को भी प्राप्त होता है, फिर मनुष्य और अन्य शरीरधारियों में अन्तर क्या रहा? क्योंकि मनुष्य शरीर के द्वारा ही अध्यात्म मार्ग पर चलकर ईश्वर की प्राप्ति अथवा अपने स्वरूप में (आत्मा) स्थित हुआ जा सकता है। मैंने अभ्यास के द्वारा उच्चतम अवस्था को प्राप्त किया हुआ है, इसलिए मैं इस विषय को अपने लेख के द्वारा बताने का प्रयास कर रहा हूँ।

2- इस पुस्तक को लिखने के लिए मुझे मानसिक रूप से थोड़ी परेशानी सी हुई है। इस परेशानी का कारण यह है कि वर्तमान समय में मेरे चित्त पर पुस्तक लिखने के लिए संस्कार विद्यमान नहीं हैं। जब तक चित्त पर पुस्तक लिखने के लिए संस्कार ही नहीं होंगे, तब तक मैं कैसे पुस्तक लिख सकता हूँ? वर्तमान समय में मेरी आध्यात्मिक अवस्था निरुद्धावस्था वाली है। यह निरुद्धावस्था समाधि के समय निरन्तर नहीं बनी रहती है। चित्त शुद्धि के लिए स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक आरोह-अवरोह क्रम के अभ्यास से चित्त की शुद्धि होती रहती है, जिससे स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक समान रूप से शुद्धि हो जाय। इस प्रकार का अभ्यास कई वर्षों से अभी तक चल रहा है। इतनी लम्बी अवधि तक इस प्रकार का अभ्यास इतने समय से करने का कारण यह भी है कि मैं साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये शिविर भी लेता रहता हूँ। शिविर के समय साधकों पर शक्तिपात करने, कुण्डलिनी ऊर्ध्व करने या साधकों को किसी भी प्रकार की आध्यात्मिक सहायता करने के कारण मुझे निम्न अवस्था में आना पड़ता है। इससे हमारे चित्त पर साधकों के विभिन्न प्रकार के कर्माशय आ जाते हैं। इन कर्माशयों को भोगते समय मुझे पूर्ण रूप से संसार में उतरना पड़ता है। इस कारण हमारे जीवन के कई वर्ष समाज के कल्याण में ही व्यतीत हो चुके हैं।

जब साधकों के कर्माशय और गन्दगी को भोगकर समाप्त कर रहा होता हूँ, उस समय अपनी अवस्था के अनुसार मेरी सोच में परिवर्तन आ जाता है, तब यह इच्छा नहीं चलती है कि मैं इतनी उच्चावस्था वाली पुस्तक को लिखूँ। अगर मैं साधकों के कर्माशय भोगने से इन्कार कर दूँ, तो ऐसी अवस्था में साधकों के संस्कार व गन्दगी उसी साधक के पास चले जायेंगे, जिस साधक के ये संस्कार होते हैं। तब उस साधक की साधना या अभ्यास में उन्नति नहीं हो पायेगी, क्योंकि निम्न श्रेणी के तमोगुण से युक्त कर्माशय उस साधक को भोगने होंगे। साधकों के आध्यात्मिक उत्थान के लिये मैं इन कर्माशयों को भोगने में लगा रहता हूँ ताकि साधकों का आध्यात्मिक मार्ग ईश्वर की ओर प्रशस्त हो सके। इन साधकों को क्या मालूम कि मैं इनको आध्यात्मिक मार्ग में आगे बढ़ाने के लिये क्या-क्या करता रहता हूँ।

साधको! मैं यह बताना चाहता हूँ कि जब मैं व्युत्थान की अवस्था में होता हूँ, तब मेरे चित्त का प्रवाह संसार की ओर उन्मुख रहता है। ऐसी अवस्था में इतने उच्च श्रेणी की अवस्था वाले अनुभवों को एवं उनके अर्थ लिखना थोड़ा मुश्किल सा होता है और जब कठोर अभ्यास के द्वारा ईश्वर उन्मुख हुआ चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होता है, तब इस संसार की वास्तविकता का भान होने लगता है। ऐसी अवस्था में मन संसार से विरक्त होकर ईश्वर में लगा रहता है। उस समय किसी प्रकार के सांसारिक कार्यों में

मन ही नहीं लगता है, सिर्फ ईश्वर चिन्तन करना या ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहना अच्छा लगता है। फिर भी समय निकालकर इस पुस्तक को लिखने का प्रयास किया है। जब इस पुस्तक को लिखने लगा, उस समय समाधि का अभ्यास नहीं करता था और न ही ईश्वर को याद करता था ताकि मेरा मन इस पुस्तक को लिखने में लग सके। फिर पुस्तक को लिखने से पहले ईश्वर से प्रार्थना की- "हे ईश्वर! मुझे इतना सामर्थ्य व योग्यता दीजिये कि अपने अनुभवों और उनके अर्थ को लिख सकूँ"। इसी प्रकार देवी सरस्वती जी से प्रार्थना की।

एक और सत्य आप सभी साधकों को बताना चाहता हूँ, कि जब मैं इस पुस्तक को लिख रहा था उस समय मुझे विभिन्न प्रकार की परेशानियाँ उपस्थित हो जाती थीं। इन परेशानियों को उस समय मैंने कुछ साधकों को बताया था। पुस्तक लिखते समय मुझे स्पष्ट दिखाई देता था कि मेरा दाहिना हाथ जो पेन पकड़कर लिख रहा था, वह जड़ रूप में मांस-पिण्ड का एक अंग है। मैं हाथ नहीं हूँ, मैं इस हाथ से भिन्न हूँ। कभी ऐसा लगता था- हाथ रूपी मांस पेन पकड़कर लिख रहा है और मैं उसे लिखते हुए देख रहा हूँ। ऐसा लगता है- इसको कोई दूसरा कन्ट्रोल कर रहा है, मैं हाथ से अलग हूँ। कभी-कभी मेरा दाहिना हाथ मस्तिष्क के सन्देश को स्वीकार नहीं करता था, ऐसी अवस्था में मेरा हाथ एक ही शब्द को कई बार लिख देता था, हाथ के द्वारा मैं इस विचित्र क्रिया को देखता रहता था। मैं अपने दाहिने हाथ को एक ही शब्द को कई बार लिखने से रोक नहीं सकता था। यह क्रिया अक्सर होती रहती थी, फिर मैं लेख में सुधार करता था। आधी पुस्तक लिखने के बाद हमारा मस्तिष्क लिखने के लिए कार्य करना बन्द कर देता था, फिर कुछ समय के लिए मैं लेख लिखना बन्द कर देता था। मैंने निश्चित किया कि मैं इस लेख को अवश्य ही पूर्ण करूँगा, मुझे चाहे जितनी परेशानी और रुकावटें क्यों न आयें।

इस पुस्तक में अवरोध आने का कारण अपरा-प्रकृति थी। वह नहीं चाहती थी कि मैं इस पुस्तक को लिखूँ क्योंकि इस पुस्तक में कुछ स्थानों पर अपरा-प्रकृति का भेद लिखना चाहता था। अपरा-प्रकृति अपना भेद सभी के सामने नहीं बताना चाहती थी अर्थात अपरा-प्रकृति अपने विषय में बताना नहीं चाहती है। वह जीव को सदैव भ्रम में डाले रखना चाहती है। प्रकृति नहीं चाहती है कि कोई भी जीव उसके बन्धन से मुक्त हो।

ईश्वर के भय से अपरा-प्रकृति आखिरी जन्म में तत्वज्ञानी योगी के सामने अपना भेद खोलने के लिये मजबूर होती है ताकि तत्वज्ञानी योगी को अथवा आखिरी जन्म में अभ्यासी को प्राकृतिक बन्धन से मुक्ति मिल सके। यह अपरा-प्रकृति ईश्वर के भय से भयभीत रहती है। यह अपरा-प्रकृति जीवों को भ्रम में

डाले रहती है ताकि जीव के लिये जन्म-जीवन और मृत्यु का चक्र घूमता रहे। इससे अपरा-प्रकृति का व्यापार चलता रहता है। फिर भी इस पुस्तक में कुछ स्थानों पर मैंने अपरा-प्रकृति के भेद के विषय में लिखा है अथवा लिखने का प्रयास किया है। मैंने उतना ही प्रकृति के विषय में लिखने का प्रयास किया है जितना पाठकों का मस्तिष्क इस लेख को समझने में स्वीकार कर सके, वरना पाठकों को लिखे गये शब्द व्यर्थ ही लगेंगे।

3- मैंने अभी तक पाँच पुस्तकें लिखी हुई हैं- 1- सहज ध्यान योग, 2- योग कैसे करें, 3- तत्वज्ञान, 4- त्राटक, 5- प्राणतत्व। 1- सहज ध्यान योग- इस पुस्तक को मैंने बहुत ही सरल भाषा में लिखा है। यह पुस्तक उन जिज्ञासुओं के लिये बहुत उपयोगी है जो अभी तक सहज ध्यान योग के विषय में नहीं जानते हैं और इस मार्ग में आगे बढ़ने के लिये अभ्यास करना चाहते हैं। इसलिये अध्यात्म मार्ग के जिज्ञासुओं को सबसे पहले हमारी पुस्तक 'सहज ध्यान योग' पढ़नी चाहिए। 2- योग कैसे करें- इस पुस्तक में मैंने अपने अभ्यास के विषय में एवं उस समय आये अनुभवों को लिखा है और उन अनुभवों के अर्थ भी लिखे हैं। नये अभ्यासियों के लिये यह पुस्तक बहुत उपयोगी रहेगी। इस पुस्तक को पढ़ने पर उन अभ्यासियों को जानकारी मिलेगी कि अभ्यास करते समय किस प्रकार के अनुभव आते हैं और उनका अर्थ इस प्रकार का होता है। 3- तत्वज्ञान- इस पुस्तक में तत्वज्ञान के विषय में लिखा है। तत्वज्ञान किसी भी अभ्यासी को अंतिम जन्म में प्राप्त होता है। मैंने इसमें लिखा है कि सबीज समाधि की विशारदता पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का चित्त पर प्राकट्य होता है। यह प्रज्ञा अज्ञान की विरोधी होती है। अभ्यासी के चित्त पर विद्यमान अज्ञान को यह प्रज्ञा मूल से उखाड़कर फेंक देती है फिर चित्त को शुद्ध कर देती है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रकाश में अपरा-प्रकृति के पाँचों तत्वों का साक्षात्कार होता है। पाँचों तत्वों के साक्षात्कार के बाद अपरा-प्रकृति उस अभ्यासी के लिये नष्ट हुए के समान हो जाती है। इससे उस अभ्यासी को उसका लक्ष्य (आत्मस्थिति) प्राप्त होना निश्चित हो जाता है। यह पुस्तक पढ़ने व समझने में थोड़ी कठिन सी लगेगी। मैं इस पुस्तक में कुछ जगहों पर सरल शब्दों को नहीं लिख पाया क्योंकि तत्वज्ञान विषय थोड़ा कठिन-सा है। 4- त्राटक- इस पुस्तक में मैंने त्राटक के विषय में विस्तार से लिखा है। मैंने अभ्यास के द्वारा त्राटक में श्रेष्ठता प्राप्त की है। अगर किसी अभ्यासी को गुरू पद पर बैठना है उसके लिए त्राटक का अभ्यास करना अतिआवश्यक है, ताकि गुरू को दूर से ही अपने शिष्यों पर शक्तिपात करने में सहायता मिल सके। 5- प्राणतत्व- इस पुस्तक में मैंने प्राणों के विषय में समझाया है। प्राणों का महत्व मनुष्य के जीवन में कितना है, स्थूल शरीर

के अन्दर प्राणों को अभ्यास के द्वारा व्यवस्थित ढंग से रोकने और फैलाने से शरीर पर कितना अच्छा प्रभाव पड़ता है, इस विषय में विस्तार से समझाया हुआ है।

बहुत से पाठक मेरी पुस्तकों को क्रमशः सहज ध्यान योग, योग कैसे करें, तत्वज्ञान, त्राटक और प्राणतत्व को नहीं पढ़ते हैं। कोई सी भी पुस्तक पढ़ने लगते हैं। इस कारण से पाठकों को कभी-कभी हमारे लेख (पुस्तक) समझने में थोड़ी परेशानी सी होती है। कभी-कभी सामान्य पाठक सबसे पहले 'तत्वज्ञान' पुस्तक को पढ़ने लगता है। तत्वज्ञान पुस्तक में कठिन विषय होने के कारण उसके समझ में नहीं आती है। यह पुस्तक उच्चावस्था प्राप्त अभ्यासी को पढ़ने पर समझ में आयेगी। इसलिये किसी भी पाठक को मेरी पुस्तकें क्रमानुसार पढ़नी चाहिए ताकि हमारा लेख उनकी समझ में आये। मेरी छठवीं पुस्तक बिल्कुल सरल भाषा में लिखी गयी है। कहीं-कहीं पर कुछ शब्द आवश्यकतानुसार कठिन से लिखे गये हैं क्योंकि उन शब्दों की जगह सरल शब्द नहीं लिख पाया हूँ। मगर जो अभ्यासी उच्चावस्था को प्राप्त हैं, और जिन पाठकों को हिन्दी भाषा का अच्छा ज्ञान है उन्हें तत्वज्ञान पुस्तक पढ़ने में किसी प्रकार की कठिनता नहीं होगी।

4- बहुत समय पहले मुझे अपरा-प्रकृति ने सिर्फ पाँच साधकों का मार्गदर्शन करने के लिए कहा था। मैं शुरूआत में पाँच साधकों का मार्गदर्शन करने लगा। कुछ समय बाद साधकों का मार्गदर्शन करने के लिए शिविर भी लेने लगा। अब मेरे मार्गदर्शन में बहुत से साधक योग का अभ्यास कर रहे हैं। मुझे अपरा-प्रकृति ने साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये मना किया हुआ है। इसका प्रमुख कारण था - मैं शिविर के समय साधकों की योग्यता न होने पर भी कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करके ऊर्ध्व कर देता था। मुझे मालूम था कि आध्यात्मिक नियमों के अनुसार साधकों की कुण्डलिनी शक्ति इस प्रकार ऊर्ध्व नहीं करनी चाहिये थी। साधकों को पहले अभ्यास करना चाहिये था, फिर योग्यतानुसार उचित अवस्था पर ही कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करना चाहिए था। मुझे मालूम है कि जो साधक मेरे पास साधना सीखने आये थे, उनमें से किसी की भी ऐसी अवस्था नहीं थी कि वह अपनी कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत कर सकें। फिर भी साधकों की अयोग्यता होते हुए भी मैं कुण्डलिनी शक्ति को ऊर्ध्व कर देता था और कुछ साधकों को शक्तिपात करके उन्हें आगे की अवस्था प्राप्त करा देता था।

मैं ऐसा इसलिये करता था क्योंकि मुझे मालूम था कि मेरे पास जो साधक मार्गदर्शन लेने आते हैं, वे इतना अभ्यास नहीं कर पाते हैं कि उन्हें शक्तिपात किया जाय अथवा उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत की जाय। फिर भी जीवों के कल्याण हेतु मैं उन अभ्यासियों पर शक्तिपात करता था, उनकी कुण्डलिनी शक्ति भी जाग्रत कर देता था और उनका आगे की ओर मार्ग प्रशस्त कर देता था। अगर ये साधक भविष्य में अभ्यास करना छोड़ देंगे तो भी अगले जन्मों में निश्चय ही योग का अभ्यास करेंगे, क्योंकि मैं उचित मात्रा में शक्तिपात करता था। साधकों पर शक्तिपात के अतिरिक्त मैं उनका कर्म भी ग्रहण करता था और उनके चित्त पर स्थित कुछ मात्रा में तमोगुण रूपी गन्दगी भी ग्रहण करता था। फिर मैं अपनी कुटिया में आकर अभ्यास के द्वारा और भोग कर साधकों के कर्म नष्ट करता रहता था। ऐसी अवस्था में मुझे कभी-कभी मानसिक और शारीरिक कष्ट भी भोगना पड़ता था। फिर भी साधकों के कल्याण के लिये प्रकृति के आदेश की अवहेलना कर देता था।

अपरा-प्रकृति ने मुझे अक्टूबर 2018 में सख्त आदेश दिया- **"दिसम्बर 2018 के बाद आप शिविर लेना बन्द कर दीजिये, अब आप साधकों का मार्गदर्शन नहीं करेंगे। आपको पाँच साधक बनाने के लिये बोला गया था, मगर आपने बहुत से साधक बना दिये। साधकों को आप अभ्यास नहीं करने देते हैं, कर्म करने से पहले ही कर्मों का फल दे देते हो, यह मेरी व्यवस्था में हस्तक्षेप है। दिव्य शक्तियों के सन्देश पर भी आप ध्यान नहीं देते हो। आप भूलोक पर योग का फल प्राप्त करने आये हो। आप कहते हो- मैं जीवों के कल्याण के लिए कार्य करता हूँ, ये कार्य मेरी व्यवस्था के अन्तर्गत आते हैं। इसे आप छोड़ दो और अपना शेष कार्य पूर्ण कीजिये, जिस कार्य के लिये यहाँ आये हो, वे कार्य पूर्ण होने के बाद आप अपने लोक को गमन करें। आपको कई बार दिव्य शक्तियों ने भी कुछ सन्देश दिये हैं, इन सन्देशों का पालन कीजिये"**। अपरा-प्रकृति ने जो शब्द मुझसे कहे, वो शब्द मैंने यहाँ पर लिखे हैं। जो शब्द मुझे याद नहीं आ रहे हैं, वे नहीं लिखे हैं। अपरा-प्रकृति मुझे समझाकर और डाँटकर थोड़ी देर में अदृश्य हो गयी।

साधकों! फिर मैंने रायवाला (हरिद्वार) शिविर में अक्टूबर 2018 में सभी साधकों से कहा- "अब मैं शिविर नहीं करूँगा। प्रकृति देवी ने सन् 2018 के बाद शिविर करने से मना कर दिया है। आप सभी साधक अपना-अपना गुरू अथवा मार्गदर्शक ढूँढ लीजिये, अब मैं किसी भी साधक को मार्गदर्शन नहीं कर पाऊँगा"।

इसके बाद भी भावुकता में आकर साधकों के कल्याण हेतु भारत में पूना (महाराष्ट्र), वृन्दावन (मथुरा, उ०प्र०), दिल्ली, गाँधीनगर (गुजरात) और ब्रैम्पटन (कनाडा) आदि कई शहरों में शिविर किये हैं, अर्थात साधकों के कल्याण हेतु प्रकृति के आदेश को नहीं माना है और साधकों का मार्गदर्शन किया। अब मुझे समझ में आ रहा है- मुझे प्रकृति के आदेश का पालन करना चाहिए था। अब मैं कोशिश करूँगा कि साधकों का मार्गदर्शन न करूँ। प्रकृति का आदेश मेरे लिए बिल्कुल सही है क्योंकि मेरी अवस्था वाला कोई भी योगी वर्तमान समय में साधकों का मार्गदर्शन नहीं करता है। अगर मैंने मार्गदर्शन करना बन्द नहीं किया, तो अभ्यास द्वारा ईश्वर के चित्त में (परा-प्रकृति में) अन्तर्मुखी रहने की निरन्तरता नहीं रह पायेगी। ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहने की अथवा स्थित-प्रज्ञ रहने की निरन्तरता हमारे चित्त में होनी चाहिये। तभी परा-प्रकृति (ईश्वर के चित्त) में स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात प्रवेश मिल पायेगा। वर्तमान समय में अभ्यास के द्वारा ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होता हूँ, मगर सांसारिक कार्यों के कारण (साधकों का मार्गदर्शन) अपरा-प्रकृति में अवस्थिति हो जाती है।

अगर, मैं साधकों का मार्गदर्शन नहीं करता तथा अपरा-प्रकृति के कहने के बाद सन् 2018 में मार्गदर्शन करना बन्द कर देता, तो वर्तमान समय में मेरी अन्तिम अवस्था होती अथवा कुछ वर्ष पूर्व ही स्थूल शरीर त्यागकर मैं चला जाता। तत्वज्ञानी को स्थित-प्रज्ञ अवस्था प्राप्त करने के लिये गुरू पद को त्याग देना चाहिये अथवा मार्गदर्शन करना बन्द कर देना चाहिए। इससे निरुद्धावस्था में स्थिरता आती है। निरुद्धावस्था के अभ्यास के समय चित्त पर व्युत्थान के संस्कार निरुद्ध हो जाते हैं तथा पर-वैराग्य के संस्कार धीरे-धीरे प्रकट होकर इनकी अवधि बढ़ती रहती है। जैसे-जैसे पर-वैराग्य के संस्कारों की अवधि बढ़ेगी, वैसे-वैसे व्युत्थान के संस्कारों के प्रकट होने की अवधि घटती रहती है। इसीलिए तत्वज्ञानी पुरुष गुरू पद पर बैठना पसन्द नहीं करते हैं। वह धीरे-धीरे अपने साधकों के मार्गदर्शन का कार्य करना बन्द कर देते हैं ताकि स्थित-प्रज्ञ की अवस्था धीरे-धीरे बढ़ाई जा सके।

5- कुछ साधकों को यह भ्रम हो जाता है कि उनके सातों चक्र खुले हुए हैं। कुछ ऐसे भ्रमित साधक मुझे मार्गदर्शन करते समय मिले हैं। ऐसे साधकों की संख्या कई है, इन साधकों की संख्या लिखना नहीं चाहता हूँ। इससे भाषित होता है कि हमारे समाज में योग्य एवं अनुभवी गुरूओं की बहुत कमी है अथवा ऐसे भ्रमित साधक स्वयं अपने आप में यह भ्रम पाल लेते हैं कि हमारे सातों चक्र खुले हुए हैं। कुछ साधकों ने हमारे शिविर में ही मुझसे बोल दिया- "गुरूजी, हमारे सातों चक्र खुले हुए हैं, आपसे मार्गदर्शन लेना चाहता हूँ"। मैं उस साधक से बोला- "जब आपके सातों चक्र खुले हुए हैं तब आप मुझसे क्या

जानना चाहते हैं"? तब वह साधक बोला- "मेरा गहरा ध्यान नहीं लगता है। मैं जानना चाहता हूँ कि मेरा गहरा ध्यान कैसे लगेगा"? अब ऐसे साधक के लिये क्या कहूँ। इसी प्रकार अन्य शिविर में भी एक साधक ने कहा – "मेरे सातों चक्र खुले हुए हैं"। मैंने पूछा- "आपका गुरू कौन है जिसके मार्गदर्शन में आप साधना करते हो"? उसने मुझे उत्तर दिया- आप ही मेरे गुरू हैं। मैं बोला- मैं आपको नहीं जानता हूँ, मैंने आपको मार्गदर्शन नहीं किया है। तब वह बोला- मैं आपके पूना वाले शिविर में आया था। फिर मैंने उसे समझाने का प्रयास किया, मगर वह तर्क-वितर्क करता रहा। फिर अन्त में मुझे उस साधक को मोबाइल में ब्लॉक करना पड़ा। इसी प्रकार विदेश में रहने वाली एक साधिका ने फेसबुक मैसेंजर पर सम्पर्क करके बोला- मैं अमुक देश में रहती हूँ, मेरे सातों चक्र खुले हुए हैं, मगर मेरा ध्यान नहीं लगता है। आप मुझे मार्गदर्शन कीजिए ताकि मेरा ध्यान लगने लगे। फिर उसने भारत में आकर सम्पर्क करने की कोशिश की, मगर मैंने मार्गदर्शन करने में रुचि नहीं ली। इस प्रकार कई साधकों ने मुझे बताया कि उनके सातों चक्र खुले हुए हैं और वो मुझसे मार्गदर्शन लेना चाहते हैं।

ऐसे भ्रमित अज्ञानी साधकों को मैं क्या कहूँ? किस प्रकार से समझाऊँ कि उनकी समझ में आ जाये कि आपको भ्रम हो गया है, आपके सातों चक्र नहीं खुले हुए हैं। जब मैंने उन्हें समझाने का प्रयास किया तब वह थोड़े से दुःखी और नाराज से हो गये, मगर उन्होंने मेरी बात स्वीकार नहीं की, कि उनको भ्रम हो गया है और उनके सातों चक्र नहीं खुले हैं। अभी आपका ठीक से अभ्यास होना शुरू नहीं हुआ है, अभी सिर्फ अभ्यास की शुरूआत है। जब मैंने ऐसे साधकों के विषय में जानने का प्रयास किया, तब मुझे जानकारी मिली कि किसी साधक का प्राण कण्ठ चक्र तक जाता है, तो किसी साधक का ध्यान लगना शुरू हुआ है। प्राणायाम और ध्यान के कारण उनके सिर के ऊपरी भाग पर सूक्ष्म नाड़ियों के अन्दर प्राणों की हलचल होनी शुरू हो गयी है। ऐसी अवस्था में सिर के ऊपरी भाग पर सिर के अन्दर हल्की-हल्की सी गुदगुदी, प्राणों की हलचल के कारण चींटियाँ-सी रेंगना, अथवा प्राणों का दबाव महसूस होता है। कभी-कभी प्राणों के दबाव के कारण अथवा प्राणों की हलचल के कारण नाड़ियों में भरे तमोगुण के कारण अभ्यासी के सिर के ऊपरी भाग में भारीपन-सा महसूस होता है। जब ध्यान के समय उसके सिर के ऊपरी भाग में गुदगुदी-सी होती है तब उस गुदगुदी के कारण अभ्यासी सुख की अनुभूति करता है। इसी प्रकार जब कण्ठ चक्र के ऊपर की अवस्था होने पर अथवा कुछ अभ्यासियों का ब्रह्मरंध्र खुल जाने पर ऐसा सोचते हैं कि उनका सहस्रार चक्र खुल गया है, वह पूर्ण हो गये हैं। इसीलिए मेरा कहना है- साधक को अनुभवी गुरू के मार्गदर्शन में अभ्यास करना चाहिए। जिस महापुरुष का सहस्रार चक्र खुला हो, वह

गुरू सही मार्गदर्शन करेगा। वह अपने शिष्य को अध्यात्म मार्ग के विषय में अच्छी तरह से भली-भाँति समझायेगा।

आजकल सोशल मीडिया के द्वारा और यूट्यूब पर ढेर सारी सामग्री अध्यात्म के विषय में मिल जायेगी। कुछ वीडियो भी मिल जायेंगे, जिसमें बताया गया होगा कि मात्र कुछ समय में ही सातों चक्र खुल जायेंगे। अगर इस प्रकार से सातों चक्र खुल जाते, तब पूर्णता मिलने में देर नहीं लगती। बहुत से साधकों को मोक्ष की अवस्था प्राप्त हो जाती, ऋषियों-मुनियों और तपस्वियों को कई जन्मों तक कठोर अभ्यास नहीं करना पड़ता।

साधको! यह बात पूर्णतया सत्य है कि आप वर्तमान जन्म में चाहे जितना अभ्यास कर लें, मगर आपका सहस्रार चक्र विकसित नहीं होगा। इसका कारण यह है- सहस्रार चक्र सिर्फ उसी साधक का अभ्यास के द्वारा विकसित होता है जिसका आखिरी जन्म होता है अर्थात अन्तिम जन्म में ही अभ्यासी का सहस्रार चक्र विकसित होता है। अंतिम जन्म उसी का होता है जिसका जन्म प्रकृतिलय अवस्था से होता है। प्रकृतिलय अवस्था से जन्मे योगी का वर्तमान जन्म में अभ्यास के द्वारा उचित समय पर सहस्रार चक्र विकसित होने लगता है। सहस्रार चक्र विकसित होते समय अभ्यासी को समाधि अवस्था में सहस्रार चक्र का विकास-क्रम बारीकी से होता हुआ स्पष्ट दिखाई देता है। यह विकास-क्रम अभ्यासानुसार कुछ वर्षों तक चलता रहता है। ऐसे अभ्यासी के अन्दर दिव्यता की विलक्षणता होती है क्योंकि सबीज समाधि की विशारदता पर उसके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो जाता है। फिर ऋतम्भरा-प्रज्ञा अभ्यासानुसार चित्त की भूमि नष्ट करने लगती है, इसी भूमि पर अभ्यासी द्वारा किये गये कर्मों के कर्माशय विद्यमान रहते हैं। ऋतम्भरा-प्रज्ञा अज्ञान की विरोधी होती है, प्रज्ञा का प्रकाश अभ्यासी के चित्त पर धीरे-धीरे फैलने लगता है।

चित्त जैसे-जैसे प्रज्ञा के प्रकाश से युक्त होता जाता है, वैसे-वैसे चित्त पर स्थित अज्ञान को मूल से समाप्त करती जाती है अर्थात अज्ञानता को मूल से उखाड़कर फेंक देती है, इसी प्रकार अभ्यासानुसार अभ्यासी के चित्त पर विकास-क्रम चलता रहता है। निरुद्धावस्था की अवधि भी अभ्यासानुसार बढ़ती रहती है। इससे पहले चित्त पर विवेक का प्राकट्य होता है जो जड़ और चेतन की भिन्नता का ज्ञान कराता है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी को चित्त पर स्थित क्लेशात्मक कर्मों को भी भोगना पड़ता है, तभी संसार के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होता है। उसके अपने सगे-सम्बन्धी भी तिरस्कृत करने लगते हैं। कभी-कभी अभ्यासी को त्याग भी देते हैं तब उसे वास्तविक ज्ञान होता है कि इस संसार में उसका कोई नहीं है, वह

स्वयं अपने आप में अकेला है। क्लेशात्मक कर्म अत्यंत कष्टदायी होते हैं, इन कष्टों की अनुभूति वही अभ्यासी करता है। ऐसे कर्मों को भोगते समय संसार के प्रति वैराग्य उत्पन्न होने लगता है, यह उसके लिये अत्यंत लाभकारी होता है।

कुछ वर्षों बाद चित्त की शुद्धता के अनुसार उचित समय पर परा-प्रकृति का उसके चित्त पर अवतरण होना शुरू हो जाता है। परा-प्रकृति का अभ्यासी के चित्त पर अवतरण होना अतिआवश्यक है। अभ्यासानुसार जितना परा-प्रकृति का अवतरण होगा, अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति उतनी ही शुद्ध होती जायेगी। अभ्यासी के अन्दर स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक आरोह-अवरोह क्रम से शुद्धता होती रहती है। अपरा-प्रकृति का आवरण भी नष्ट होते समय अभ्यासी को भोगकर नष्ट करना होता है। इसी समय शिवछिद्र का भी विकास-क्रम होने लगता है। शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण के मध्य में होता है। तत्वज्ञानी योगियों का कहना है- जिसने शिवछिद्र के विषय में पूर्ण रूप से जान लिया, वह ब्रह्म स्वरूप हो गया। इस पुस्तक में शिवछिद्र के विषय में विस्तार से लिखा गया है। हे भ्रमित अभ्यासियों! पहले सहस्रार चक्र की महिमा के विषय में जान लीजिये, फिर ऐसा कहना- मेरा सहस्रार चक्र खुला हुआ है। क्या आपका गुरू इस विषय में जानता है? क्या अभ्यास के द्वारा आपके गुरूदेव ने यह अवस्था प्राप्त कर ली है?

6- निरुद्धावस्था के समय अभ्यासी, ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहता है अथवा अपने स्वरूप में स्थित रहता है। यह अवस्था शुरूआत में थोड़ी अवधि के लिए रहती है, फिर अभ्यास के अनुसार धीरे-धीरे निरुद्धावस्था का समय बढ़ता रहता है। निरुद्धावस्था के समय व्युत्थान के संस्कार निरुद्ध हो जाते हैं, तब चित्त पर पर-वैराग्य के संस्कारों का उदय होता है। अभ्यास के अनुसार पर-वैराग्य के संस्कारों का उदय होने का समय बढ़ता रहता है और व्युत्थान के संस्कारों का समय घटता रहता है। समाधि के बाद भी पर-वैराग्य के संस्कारों का प्रभाव अभ्यासी के चित्त पर कुछ समय के लिये बना रहता है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी चुपचाप गुमसुम-सा बैठा रहता है क्योंकि उस समय अभ्यासी का चित्त, ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहता है। अभ्यासी की बाह्य स्थिति बड़ी विचित्र सी रहती है। सबसे विचित्र बात यह होती है कि अभ्यासी के स्थूल नेत्र खुले रहते हैं मगर स्थूल नेत्र स्थूल जगत को नहीं देख रहे होते हैं। क्योंकि अभ्यासी उस समय जाग्रत अवस्था में नहीं होता है, इसलिए उसे स्थूल जगत का भान नहीं रहता है। उसकी अवस्था कारण जगत अथवा महाकारण जगत में होती है। ऐसी अवस्था में अगर उसके सामने स्थूल जगत में कोई घटना घट जाय अथवा घट रही हो, तो उस घटना का भान उसे नहीं होता है।

निरुद्धावस्था के समय निर्बीज समाधि लगती है। निर्बीज समाधि के समय चित्त पर संसार का बीज नहीं रहता है अर्थात चित्त पर किसी प्रकार की वृत्तियाँ उपस्थित नहीं रहती हैं। अभ्यास करते समय शुरूआत में यह अवस्था थोड़ी अवधि के लिए रहती है, फिर अभ्यास के अनुसार यह अवस्था धीरे-धीरे बढ़ती रहती है। अब कहा जा सकता है- जब संसार का बीज चित्त पर नहीं रह गया तब निर्बीज समाधि भंग ही क्यों हो जाती है? इसका कारण यह है- चित्त की भूमि पर अनन्त काल से व्युत्थान के संस्कार विद्यमान रहे हैं, इसलिए चित्त की भूमि पर कुछ समय बाद व्युत्थान के संस्कार प्रकट हो जाते हैं। जब व्युत्थान के संस्कार प्रकट होने लगते हैं, तब पर-वैराग्य के संस्कार निरुद्ध होने लगते हैं। यही क्रम अभ्यास के समय चलता रहता है। इस प्रकार के अभ्यास से व्युत्थान के संस्कार धीरे-धीरे घटते रहते हैं और पर-वैराग्य के संस्कार धीरे-धीरे बढ़ते रहते हैं।

ऐसी अवस्था में यह कहा जा सकता है- जब व्युत्थान के संस्कार नष्ट हो जाते हैं, तब दोबारा प्रकट ही क्यों होते हैं? इसका समाधान यह है- व्युत्थान के संस्कारों का चित्त उपादान कारण है। उपादान कारण होने के कारण चित्त पर फिर से व्युत्थान के संस्कार प्रकट हो जाते हैं। निर्बीज समाधि के अभ्यास से चित्त धीरे-धीरे शुद्ध होता रहता है। ऐसी अवस्था में आरोही-अवरोही क्रम की शुद्धता से चित्त की शुद्धि होनी शुरू हो जाती है। इस तरह के अभ्यास के समय साधक असमंजस में पड़ जाता है। वह सोचता है- अभी तो मैं निर्बीज समाधि का अभ्यास कर रहा था, मगर अब शुरुआती अवस्था उपस्थित हो गयी।

शुरूआती अवस्था उपस्थित होने पर स्थूल शरीर, स्थूल इन्द्रियों आदि का शुद्धीकरण होना शुरू हो जाता है, फिर धीरे-धीरे अभ्यास करते हुए आगे की ओर बढ़ता रहता है। कुछ समय के बाद फिर निर्बीज समाधि की अवस्था उपस्थित हो जाती है। यही क्रम वर्षों तक चलता रहता है। ऐसा इसलिये होता है - ताकि स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक समान शुद्धि हो जाय। इसी प्रकार चित्त को शुद्ध किया जाता है, ताकि जीव और चित्त की समान शुद्धि हो जाये। समान शुद्धि होने पर जीव अपना प्रतिबिम्ब चित्त पर देख सके।

जब जीव अपना प्रतिबिम्ब चित्त पर देख लेता है, तब जीव अपने मूल स्वरूप आत्मा में सदैव के लिये स्थित हो जाता है। चित्त को बनाने वाले गुण सदैव के लिए अपनी मूल प्रकृति में विलीन हो जाते हैं। चित्त अपने स्वरूप से नष्ट हो जाता है।

चित्त पर गुणों का दो प्रकार का परिणाम हो रहा है, एक- बाह्य परिणाम और दूसरा- आंतरिक परिणाम। अभ्यास के द्वारा गुणों का चित्त पर बाह्य परिणाम रुकने पर चित्त पर स्थित वृत्तियाँ निरुद्ध हो जाती हैं, फिर दृश्य का दिखाई देना बन्द हो जाता है क्योंकि दृश्य वृत्तियों के द्वारा ही देखा जाता है। चित्त पर जब गुणों का बाह्य परिणाम होना रुक जाता है, तब भी आंतरिक परिणाम होने के कारण चित्त का स्वरूप बना रहता है। इस आंतरिक परिणाम को रोकने के लिये चित्त को स्फटिक मणि के समान शुद्ध करना होता है। इसी कारण चित्त को आरोह-अवरोह क्रम से शुद्ध किया जाता है।

जब चित्त पर बाह्य परिणाम होना बन्द हो जाता है, ऐसी अवस्था में अभ्यासी ज्यादातर चुपचाप ठूँठ के समान बैठा रहता है। उस समय उसकी स्थूल इन्द्रियाँ निष्क्रिय-सी रहती हैं, इसलिए वह दूर से पागलों की भाँति बैठा हुआ दिखाई देता है। उसे उस समय संसार का भान नहीं रहता है। मगर इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी पागल व्यक्ति को देखकर तत्वज्ञानी या परमहंस समझ लिया जाय। पागल मनुष्य का चित्त अज्ञान से युक्त और तमोगुण से आच्छादित रहता है, उसका मस्तिष्क विक्षिप्त अवस्था में होता है, इसलिये उसे संसार का भान नहीं रहता है। तत्वज्ञानी या परमहंस का चित्त ज्ञान से युक्त रहता है, उसके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश विद्यमान रहता है, अज्ञानता का नामोनिशान तक नहीं रहता है, उसका चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहता है। ऐसे महापुरुष से यदि ज्ञान के विषय में पूछा जाय, तो उचित समय पर ज्ञान का भी उपदेश दे सकता है, मगर अंतिम अवस्था में विद्यमान हुआ तत्वज्ञानी सिर्फ चुपचाप भी बैठा रह सकता है।

चित्त की संरचना बड़ी विचित्र सी होती है। चित्त के अन्दर छिद्र और विवर भी बहुत ज्यादा मात्रा में होते हैं। इन छिद्रों और विवरों में क्लेशात्मक कर्म विद्यमान रहते हैं। ऋतम्भरा-प्रज्ञा का चित्त पर प्राकट्य होने के बाद, पहले चित्त की भूमि अभ्यासानुसार धीरे-धीरे टूटने लगती है अर्थात चित्त की भूमि पर जहाँ पर कर्माशय विद्यमान रहते हैं, वह चित्त की भूमि टूटने अथवा नष्ट होने की प्रक्रिया अभ्यासानुसार कुछ वर्षों तक चलती है। जब चित्त की भूमि टूट रही होती है तब अभ्यासी को अत्यंत क्लेशात्मक कर्म भोगने पड़ते हैं। इन क्लेशात्मक कर्मों को भोगते समय अपने घर-परिवार, रिश्तेदार और शुभचिंतक लोग अभ्यासी से दूर हो जाते हैं तथा विरोधी बन जाते हैं। अभ्यासी को अपना जीवन जीने में घोर परेशानियों और कष्टों का सामना करना पड़ता है।

अभ्यास के समय चित्त की भूमि टूटकर फिर दोबारा चित्त की भूमि का निर्माण हो जाता है। इसका कारण यह है- अभ्यासी के अभ्यास में निरन्तरता नहीं रह पाती है। ऐसा क्लेशात्मक कर्म भोगते समय

होता है क्योंकि उसे कुछ परेशानियों और कठिनाइयों के कारण अपरा-प्रकृति में आसक्त होकर कुछ समय के लिये जीवन जीना पड़ता है। उस समय उसका अभ्यास भी पहले की अपेक्षा थोड़ा कम हो जाता है। कुछ समय बाद अभ्यास में फिर निरन्तरता आ जाती है, फिर पहले की भाँति चित्त की भूमि नष्ट होने लगती है। इसी प्रकार चित्त स्वच्छ हो-होकर निर्मल होता रहता है।

अभ्यासी की परेशानियाँ व कष्ट थोड़े से कम हुए थे कि फिर से क्लेशात्मक कर्म भोगने के लिये उपस्थित हो जाते हैं। इसका कारण यह है- चित्त पर स्थित छिद्रों व विवरों के कारण, उनके अन्दर विद्यमान अज्ञान से युक्त तमोगुणी कर्म नष्ट होने लगते हैं। ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश छिद्रों व विवरों के अन्दर पड़ता है तब ये क्लेशात्मक कर्म छिद्रों व विवरों से बाहर निकलने लगते हैं, फिर यही कर्माशय अभ्यासी द्वारा भोगकर नष्ट किये जाते हैं। फिर उन छिद्रों और विवरों में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश पड़ते ही छिद्र और विवर ज्ञान के प्रकाश से भर जाते हैं। उस स्थान पर चित्त स्वच्छ होकर ज्ञान का प्रकाश फैल जाता है और वह स्थान स्वच्छ होकर प्रकाशित हो जाता है। इन छिद्रों और विवरों के भरते समय, जब उनके अन्दर विद्यमान कर्म भोगे जाते हैं, तब उन कर्मों के कारण अभ्यास के समय उच्च अवस्था और निचली अवस्था प्राप्त होती है।

शिवछिद्र और ब्रह्मरंध्र दोनों अलग-अलग होते हैं। वर्तमान समय में बहुत से साधकों का ब्रह्मरंध्र खुला हुआ है। मैंने मार्गदर्शन करते समय स्वयं बहुत से साधकों का ब्रह्मरंध्र खोला हुआ है। साधक का कण्ठचक्र जब खुल जाता है, तो कुछ समय के अभ्यास के बाद प्राण सीधा ऊपर की ओर ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँच जाता है। कुण्डलिनी शक्ति को ब्रह्मरंध्र द्वार तक आने में कुछ महीने अथवा कुछ वर्ष लग जाते हैं। साधक के कुछ वर्षों तक कठोर अभ्यास करने के बाद गुरू-कृपा के द्वारा ब्रह्मरंध्र खुल जाता है। साधक चाहे जितना कठोर अभ्यास कर ले, उसकी प्राणवायु ब्रह्मरंध्र द्वार को नहीं खोल सकती है। कुण्डलिनी शक्ति ही ब्रह्मरंध्र द्वार को खोलती है क्योंकि ब्रह्मरंध्र द्वार की संरचना ही ऐसी होती है।

शिवछिद्र का विकास सिर्फ तत्वज्ञानियों का होता है। तत्वज्ञान किसी भी अभ्यासी को अन्तिम जन्म में प्राप्त होता है। तत्वज्ञानी का कई वर्षों तक कठोर अभ्यास के बाद अंतिम समय में शिवछिद्र का विकास होता है। यह शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान रहता है। दूसरे शब्दों में- अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति के मध्य में शिवछिद्र होता है। शुरूआत में शिवछिद्र के द्वारा ही परा-प्रकृति के क्षेत्र में जाया जा सकता है। परा-प्रकृति का अवतरण शुरूआत में शिवछिद्र के द्वारा ही होता है। चित्त की शुद्धता बढ़ने पर तत्वज्ञानी को शिवछिद्र पहले सामने की ओर अपरा-प्रकृति के आवरण में दिखाई देता

है, फिर शिवछिद्र अभ्यासी को सिर के ऊपर की ओर दिखाई देता है। अन्त में शिवछिद्र का स्वरूप अदृश्य हो जाता है, तब उसे सर्वत्र परा-प्रकृति दिखाई देती है।

अपरा-प्रकृति का प्राकट्य अभ्यासी को समाधि अवस्था में शिवछिद्र के अन्दर से होता हुआ दिखाई देता है। अभ्यासी को समाधि अवस्था में बहुत दूर से 'ॐ' की ध्वनि आती हुई सुनाई देती है। उसे ऐसा लगता है 'ॐ' की ध्वनि दूर किसी गुफा के अन्दर से आ रही है। 'ॐ' की ध्वनि के साथ गति उत्पन्न होती है, गति उत्पन्न होते ही जोरदार (भयंकर) आवाज के साथ महाविस्फोट होता है, महाविस्फोट के साथ ही प्रकाश उत्पन्न होता है। फिर अपरा-प्रकृति के सृजन का कार्य शुरू हो जाता है। अपरा-प्रकृति आकाश तत्व में अधिष्ठित होकर वायु तत्व के द्वारा अपना सृजन करती है। इसीलिए मैंने लिखा है- जिसने शिवछिद्र का विकास कर लिया है, शिवछिद्र के विषय में पूर्ण रूप से जान लिया है, उसने ब्रह्म को जान लिया है अर्थात ब्रह्म को प्राप्त हो गया है।

कुछ अभ्यासी ब्रह्मरंध्र को ही सहस्रार चक्र समझ लेते है। ब्रह्मरंध्र के खुलने के बाद ब्रह्मरंध्र के अन्दर दिखाई देने वाले तेजस्वी प्रकाश को निर्गुण ब्रह्म का स्वरूप समझ लेते हैं। साधको! ब्रह्मरंध्र स्वयं अपने आप में चक्र नहीं है, इसे चक्र समझ लेना अज्ञानता है। ब्रह्मरंध्र का शाब्दिक अर्थ है- 'ब्रह्म का द्वार'। अभ्यासी का कण्ठचक्र जब खुल जाता है, तब कुण्डलिनी शक्ति कण्ठचक्र से तुरन्त ऊपर की ओर नहीं जाती है। कुण्डलिनी को कण्ठचक्र से ऊपर की ओर जाने के लिए साधक को अभी और इंतजार करना पड़ता है, ताकि अभ्यास के द्वारा उसके चित्त पर और शुद्धता बढ़ सके। अर्थात पहले की अपेक्षा अभ्यास द्वारा चित्त पर और शुद्धता बढ़ानी पड़ती है, फिर उचित शुद्धता होने पर कुण्डलिनी शक्ति कण्ठचक्र से ऊपर की ओर जाने का प्रयास करने लगती है।

कण्ठचक्र खुलने के बाद प्राण सीधा ऊपर की ओर, सीधे मार्ग से जाने का प्रयास करने लगता है। कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र द्वार तक जाने के लिये तीन मार्ग होते हैं: 1- सीधा मार्ग, 2- पश्चिम मार्ग, 3- पूर्व का मार्ग। कुण्डलिनी शक्ति क्रमशः तीनों मार्गों को स्वच्छ करती हुई ब्रह्मरंध्र द्वार तक पहुँचती है। कण्ठचक्र से ब्रह्मरंध्र द्वार की दूरी थोड़ी सी दिखाई देती है, मगर कण्ठचक्र के क्षेत्र और ब्रह्मरंध्र द्वार के क्षेत्र की अवस्था में भारी अन्तर होता है। इसलिये कुण्डलिनी शक्ति को ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँचने के लिये बहुत समय लग जाता है। कभी-कभी कुछ साधकों की कुण्डलिनी शक्ति कुछ वर्षों में अथवा अगले जन्मों में ब्रह्मरंध्र द्वार पर पहुँचती है। ब्रह्मरंध्र द्वार तक कुण्डलिनी शक्ति को पहुँचने के लिये समय सीमा निश्चित नहीं है। साधक के पूर्व जन्मों का अभ्यास और वर्तमान जन्म का अभ्यास समय की अवधि निश्चित करता है।

ब्रह्मरंध्र द्वार को कुण्डलिनी शक्ति ही खोलती है, इस द्वार को प्राणवायु नहीं खोल सकती है। ब्रह्मरंध्र द्वार से पहले तन्मात्राओं का क्षेत्र होता है। ब्रह्मरंध्र द्वार के अन्दर अहंकार का क्षेत्र होता है। अहंकार चित्त का पहला विकार होता है। जब अभ्यासी ब्रह्मरंध्र द्वार के अन्दर प्रवेश करता है, तब उसे सर्वत्र अत्यंत तेजस्वी प्रकाश विद्यमान दिखाई देता है। अभ्यासी स्वयं अपने आप को उस प्रकाश के अन्दर खड़ा हुआ पाता है। अभ्यासी प्रकाश के अन्दर खड़ा हुआ बहुत प्रसन्न होता है, उसी समय उसे आकाश में गूँजती हुई आवाज सुनाई देती है- "मैं ही ब्रह्म हूँ", "मैं ही ब्रह्म हूँ", "मैं ही हूँ"। अभ्यासी स्वयं भी कह रहा होता है- "मैं ही ब्रह्म हूँ"। समाधि टूटने पर अभ्यासी सोचता है- "मुझे निर्गुण ब्रह्म का साक्षात्कार हो गया है, मैं ब्रह्म में स्थित हो गया हूँ"। वह सोचता है- अब मुझे कठोर अभ्यास करने की क्या जरूरत है, मैंने तो ब्रह्म को प्राप्त कर लिया है, मैं पूर्ण हो गया हूँ।"

ब्रह्मरंध्र के अन्दर निर्विकल्प समाधि लगती है। निर्विकल्प समाधि के समय अभ्यासी को समय का भान नहीं रहता है। पहले की अपेक्षा निर्विकल्प समाधि का समय बहुत बढ़ जाता है। अभ्यासी के अन्तिम जन्म में सहस्रार चक्र का विकास होता है। सहस्रार चक्र के विकास के समय निर्बीज समाधि लगती है, यह अवस्था निरुद्धावस्था वाली होती है। निर्विकल्प समाधि और निर्बीज समाधि में भारी अन्तर होता है। निर्विकल्प समाधि के समय चित्त पर संसार का बीज विद्यमान रहता है, जबकि निर्बीज समाधि के समय चित्त पर संसार का बीज नहीं रहता है। मैं एक ऐसे अभ्यासी को जानता हूँ जिसका ब्रह्मरंध्र खुला हुआ था, वह अपने आपको ब्रह्म में स्थित हुआ समझता था कि मुझे निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति हो गयी है। इसीलिए कहा जाता है- अनुभवी गुरू के मार्गदर्शन में ही योग का अभ्यास करना चाहिये। ऐसा मार्गदर्शन एक तत्वज्ञानी योगी कर सकता है।

7- कई वर्षों पूर्व की बात है। बहुत से लोगों के द्वारा सुना था कि वह साधिका अमुक देवी का अवतार है। उस समय उस साधिका का समाज के लोग बहुत श्रद्धा से दर्शन करने आते थे और उसका यशगान भी करते थे। मुझे व्यक्तिगत रूप से यह मालूम नहीं है कि उसने योग का कितना अभ्यास किया था और उसकी आध्यात्मिक योग्यता क्या थी। इसी प्रकार मैंने कई अभ्यासियों के विषय में सुना था- वह अमुक देवी और देवता का अवतार है। मैं ऐसे अवतारों के विषय में कहना चाहूँगा- वर्तमान समय में किसी को भी अवतार कहना सर्वथा गलत है। पहले अवतार के विषय में जान लें कि अवतार किसे कहते हैं? अवतार का अर्थ होता है- 'अवतरित होना', अर्थात- "जन्म न लेना बल्कि प्रकट होना"।

भगवान श्री राम और भगवान श्री कृष्ण ने अवतार लिया था। इन दोनों ने माता कौशल्या और माता देवकी के द्वारा सामान्य मनुष्यों की भाँति जन्म नहीं लिया था बल्कि वे दोनों प्रकट हुए थे। शास्त्रों में इस विषय में विस्तार से वर्णन मिल जायेगा। सामान्य मनुष्यों का जन्म उनके चित्त पर स्थित कर्मों के अधीन होकर होता है। मनुष्य जन्म ग्रहण करने के बाद उसके चित्त पर स्थित प्रारब्ध कर्मों को भोगने में लग जाता है। अवतारी महापुरुष परा-प्रकृति (ईश्वर के लोक) के क्षेत्र से अवतरित होने के लिये भूलोक पर आते हैं। उनका अवतार लेने का कारण उनके चित्त पर जीवों का कल्याण करने का संकल्प होता है। ऐसे महापुरुषों का चित्त कर्मों से रहित हुआ दिव्य प्रकाश से युक्त रहता है।

ऐसे महापुरुष जब भूलोक पर अवतरित होने के लिये आते हैं, तब ईश्वर की सम्पूर्ण शक्तियाँ अंश रूप में लेकर आते हैं। सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति को अपने अधीन किये रहते हैं। ये अवतारी पुरुष अधर्मियों का नाश करने और धर्म की स्थापना करने के लिये आते हैं। कभी-कभी उचित समय पर ये लीलाएँ भी करते रहते हैं। भगवान श्री राम जी का जंगल में सोने के हिरन के पीछे दौड़ना हो या युद्ध के समय नागपाश में बँधे रहना हो, भगवान श्री कृष्ण का युद्ध न करके युद्धभूमि से भागना हो आदि उदाहरण पढ़ने को मिलते हैं। इन लीलाओं में महत्वपूर्ण कार्य व शिक्षाएँ छुपी हुई हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण जी अर्जुन से कहते हैं- "**इस संसार में कोई ऐसा कार्य नहीं है जो मैं इच्छा मात्र से कर न सकूँ**"। अवतारी पुरुष ऐसे होते हैं।

अभ्यासियों को यह भ्रम हो जाना कि वह अमुक देवी-देवता के अवतार हैं और वर्तमान समय में मनुष्य शरीर में जन्म ले लिया है। इन अभ्यासियों की जब सविकल्प समाधि लगती है, यह समाधि कण्ठचक्र से ऊपर और ब्रह्मरंध्र द्वार से नीचे की अवस्था में लगती है, इस अवस्था में त्रिपुटी (दृष्टा, दृष्टि, दृश्य) बनती है। कभी-कभी अभ्यासी को दिखाई देता है कि मैं अमुक देवी-देवता बन गया हूँ। अभ्यासी अपने आपको किसी देवी-देवता के स्वरूप वाला बना हुआ देखता है, तब उसे भ्रम हो जाता है कि पूर्वकाल में वह अमुक देवी-देवता था। कभी-कभी उनके शिष्यों को भी ऐसा दृश्य दिखाई देता है। उस दृश्य में उसे अपने गुरू का क्षणिक पारदर्शी स्वरूप भाषित हो जाता है। उस शिष्य को लगता है- हमारे गुरूदेव पूर्वकाल में अमुक देवी या देवता थे जबकि इस प्रकार की सोच शिष्य की सर्वथा गलत होती है।

सविकल्प समाधि के समय चित्त पर स्थित अत्यंत सशक्त सात्विक वृत्ति किसी देवी या देवता का स्वरूप धारण कर लेती है। ऐसी सात्विक वृत्तियों में इतनी सामर्थ्य होती है कि वह किसी भी देवी या देवता का स्वरूप धारण कर सकती है। उस समय चित्त पर स्थित अन्य सहयोगी सात्विक वृत्तियाँ उस

अत्यंत सशक्त सात्विक वृत्ति का सहयोग करती हैं। ऐसा दृश्य कुछ क्षणों तक दिखाई देता है। फिर समाधि भंग हो जाती है। इसलिए साधको! ऐसे व्यक्ति से मार्गदर्शन न लें जो अपने आप को किसी का अवतार कहे। जब वह स्वयं अपने आपके विषय में नहीं जानता है, तब वह साधकों को क्या मार्गदर्शन करेगा?

मनुष्य चाहे जितना योग का अभ्यास कर ले, चाहे कई सालों तक या कई जन्मों तक अभ्यास करता रहे, फिर भी वह कभी ईश्वर या भगवान नहीं बन सकता है। इसका मुख्य कारण है- ईश्वर (सगुण ब्रह्म) का चित्त साम्यावस्था वाला होता है, उसका ज्ञान नित्य है। ईश्वर (सगुण ब्रह्म) कभी जन्म नहीं लेता है, वह अजन्मा है।

ईश्वर का चित्त गुणों की साम्यावस्था वाला होता है। उसके चित्त पर गुणों की साम्यावस्था के कारण किसी प्रकार का परिणाम नहीं होता है। परिणाम न होने के कारण ईश्वर का चित्त जैसा आदिकाल में था वैसा ही सदैव बना रहता है। उसके चित्त पर ज्ञान सदैव नित्य ही रहता है। गुणों में किसी प्रकार का परिणाम न होने के कारण उसके चित्त में कभी परिवर्तन नहीं होता है। किसी प्रकार का परिवर्तन न होने के कारण उसे नित्य कहा गया है। वैसे नित्य सिर्फ निर्गुण ब्रह्म ही है। मगर सगुण ब्रह्म (ईश्वर) काल (समय) से परे होने के कारण नित्य कह दिया जाता है। ईश्वर का चित्त परा-प्रकृति से सम्बंधित होता है। परा-प्रकृति का निर्माण आकाश तत्व की प्रधानता से हुआ है। इस आकाश तत्व में सत्वगुण की प्रधानता रहती है, अन्य दोनों गुण गौण रूप में रहते हैं इसलिये आकाश तत्व विलक्षणता वाला स्वप्रकाशित रहता है।

मनुष्य का चित्त गुणों की विषमावस्था वाला होता है। विषमावस्था के कारण सदैव परिणाम होता रहता है। इस कारण चित्त की अवस्था में सदैव परिवर्तन होता रहता है। मनुष्य का ज्ञान परिणामी होता है क्योंकि परिणाम के द्वारा प्राप्त होता है। मनुष्य का चित्त अज्ञान से युक्त रहता है। अज्ञान से युक्त हुआ चित्त सांसारिक वस्तुओं को प्राप्त करने में लगा रहता है, क्योंकि उसकी इन्द्रियाँ बहिर्मुखी होने के कारण इच्छाओं के अधीन हुआ मनुष्य सुख-दु:ख को भोगता रहता है। मनुष्य जीवन में जब वह अध्यात्म मार्ग को अपनाता है तब ढेरों जन्मों तक ईश्वर-चिन्तन करने के बाद अथवा योग मार्ग में अभ्यास करता हुआ अन्तिम जन्म में तत्वज्ञान को प्राप्त कर ईश्वर के लोक (परा-प्रकृति) को प्राप्त होता है। परा-प्रकृति में अनन्त काल तक समाधि में स्थित हुआ उचित समय पर निर्गुण ब्रह्म में विलीन हो जाता है। चित्त को बनाने वाले गुण अपने मूल प्रकृति (परा-प्रकृति) में विलीन हो जाते हैं।

इस पुस्तक में मैंने समाधि अवस्था में आए अनुभवों को लिखा है और इन अनुभवों का अर्थ भी लिखा है। मैंने अपने दूसरी पुस्तक '**योग कैसे करें**' में सितंबर 1984 से मई 1999 तक के अनुभव व उसके अर्थ लिखे हैं। फिर मैंने अपने तीसरी पुस्तक **'तत्त्वज्ञान'** में जनवरी 2000 से दिसंबर 2010 तक समाधि अवस्था में आए अनुभवों और उन अनुभवों के अर्थों को लिखा है। अब इस छठवीं पुस्तक **'तत्त्वज्ञानी के अनुभव'** में अप्रेल 2011 से जुलाई 2026 तक समाधि अवस्था में आए अनुभवों व उन अनुभवों के अर्थ लिखे हैं। अनुभवों का अर्थ लिखने का कारण यह था- जो साधक साधना कर रहे हैं, उन्हें ध्यानावस्था में अनुभव आते है अथवा अनुभूतियाँ भी होती हैं। अगर ऐसे साधकों के नज़दीक उनके मार्गदर्शक उपस्थित नहीं हैं तब इन पुस्तकों को पढ़कर ध्यानावस्था में आए अनुभवों का अर्थ समझ सकते है अथवा अर्थ का अनुमान लगा सकते हैं। साधकों के अनुभव उनके चित्त पर स्थित वृत्तियों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, लेकिन अवस्था के अनुसार अनुभवों का अर्थ सूक्ष्म रूप से समझ में आ जाता है।

विषय सूची

क्र.सं.	नाम	पृष्ठ
	सन् 2011	
1.	मैं स्वर्ण मुकुट से युक्त, ज्ञान से युक्त चित्त, नदी रूपी संसार को पार करना है, तीर और कमान टूट गया, सर्वोच्च अवस्था पर, सम्पूर्ण संसार मेरा ही स्वरूप	32-35
2.	ज्ञान का पाठ पढ़ाओ, हे जन्म से रहित मेरे पुत्र, कमल का फूल, ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर, अहंकार का ब्रह्म की ओर गमन	36-38
	सन् 2012	
3.	सोने का सिंहासन, भगवान श्रीकृष्ण जी ने बोला, ज्ञानचक्र एंटी क्लॉक वाइज, तुम प्रकृति के स्वामी हो, हमारी आरती उतारी गयी	40-43
	सन् 2013	
4.	सात मंजिल वाला ज्ञान, सात्विक अहंकार, सिंहासन, झण्डा, सिर्फ एक ही ब्रह्म है दूसरा कोई नहीं है, बहाउल्लाह जी से सम्पर्क, बन जाओ इसके विधाता	44-49
5.	गौतम बुद्ध जी, आदिशक्ति का अवतरण, ऋतम्भरा-प्रज्ञा, साधकों को स्वयं अभ्यास करने दो, अहंकार ने मुँह से पैर को पकड़ा, अपने मार्गदर्शन में	50-53
6.	हमारे लोक आ जाना, चित्त बहा नाड़ी, परम् मम्, तू चतुर्थम है, अहंकार की अवस्था में, कुण्डलिनी द्वारा संसार का बीज नष्ट करना	54-58
7.	दिव्य शक्तियों से युक्त हो जाओगे, सातों चक्रों का दिखाई देना, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के ऊपर खड़े होना, दिव्य शक्तियाँ, नियुक्त किये जाओगे, नमो नमः	59-62
	सन् 2014	
8.	मोक्ष का मार्ग पकड़ो, सन्तानों को समान रूप से, श्वास और संसार	64-65
9.	शुभ्र, शुभ्रम, दिव्यम, नखतम्, श्रेष्ठता और निम्नता, संसार का स्वरूप, चकिया का पाट कील के बिना घूमता हुआ, सहस्त्रदल कमल सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त, सभी को माफ किया, ऋतम्भरा-प्रज्ञा, कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन	66-70

10.	पूर्व जन्म में, चित्ताकाश, कुम्भक के समय, अहंकार के अंतिम क्षेत्र की ओर, अहंकार का स्वरूप, सिर्फ ईश्वर से प्रेम करो, आगे का मार्ग तय करो	71-78
11.	सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई, कुण्डलिनी शक्ति ने पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति को छिन्न भिन्न कर दिया, रीढ़ की हड्डी, महाविस्फोट, ऋतम्भरा-प्रज्ञा	79-83
12.	साधक की तरह नहीं ब्रह्म के समान जिओ, तुम किसी की प्रकृति को बदल नहीं सकते, त्रेता युग का अनुभव, सूखा बाँस, कुण्डलिनी और सिंहासन, उल्टा वृक्ष, अगली अवस्था के लिए, भ्रान्ति, परम शान्ति का जागरण	84-88

सन् 2015

13.	सुरंगनुमा जगह से बाहर आया, मरने के बाद, समय से पहले, सहस्त्रार से टपकता हुआ पदार्थ, लक्ष्य ब्रह्म, रजनीश जी (ओशो), पशुत्व का नष्ट होना	90-94
14.	जन्म मृत्यु का चक्र मूल से उखड़ गया, मार्गदर्शन का इतिश्री, मनुष्य दो प्रकार के, सर्वे दुखाय सर्वे सुखाय, साधक छोड़ कर चले जायेंगे, हनुमान जी, आवश्यक जानकारी	97-100
15.	तमोगुणी अहंकार में दिव्यता का प्रवेश, सम्मान प्राप्त होगा, तमोगुणी अहंकार को फाड़ डाला, संसार का स्वरूप, भगवान गौतम बुद्ध जी, सब कुछ मेरा, दुष्यंत और शकुंतला, हनुमान जी, भगवान श्री कृष्ण जी का सन्देश	102-107
16.	भगवान श्री राम जी का सन्देश, शरीर के अन्दर के अंग निकाल दिये, ऋतम्भरा-प्रज्ञा, सर्वत्र व्यापकम्, सत्यम् ब्रुयात् प्रियम् ब्रुयात्, ऋतम्भरा-प्रज्ञा	108-111

सन् 2016

17.	शांति की ओर, शेषनाग का स्वरूप, भगवान विष्णु जी, सात स्वर्ण कलश, शक्ति चाहिये, बैलगाड़ी बिना बैल के, 730 दिन, तुम्हारी बागडोर हमारे हाथों में है, काली देवी प्रलय उन्मुख	112-116

सन् 2017

18.	ऋतम्भरा-प्रज्ञा, कुण्डलिनी शक्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त, अपने आपको प्रणाम, शिविरों के कारण चित्त मलिन हुआ, शिवछिद्र का खुलना, परा-प्रकृति का अवतरण और शिवछिद्र, हे श्रेष्ठ पुरुष, कुण्डलिनी शक्ति	117-121

19. परा-प्रकृति का अवतरण, सत्वगुणी अहंकार, तुम अपराधी जैसे हो, मंत्र दिया गया, ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन 122-124

सन् 2018

20. ऋतम्भरा-प्रज्ञा, मैं चोटी के ऊपर खड़ा हो गया, परा-प्रकृति का अवतरण और शिवछिद्र, चित्त स्फटिक मणि के समान, शिव और शक्ति, चित्ताकाश 125-128

21. हनुमान जी, शिवत्व का अर्थ, शिवत्व की पदवी दी गयी, कुण्डलिनी शक्ति मेरे सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त 129-131

सन् 2019

22. कुण्डलिनी शक्ति, भगवान गणेश जी, कलिंग का राजा, सहस्त्रार चक्र के ऊपर दो और चक्र 133-136

सन् 2020

23. दिव्य स्त्री-पुरुष व सिंहासन, मैं अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर, आटे को छानना, कुण्डलिनी से मेरा रिश्ता, मेरा विमान, भगवान शंकर जी खम्भे के रूप में 137-141

24. मैं कमल के फूल के ऊपर बैठ गया, कुछ अनुभव, मैं अपनी इच्छानुसार मर सकता हूँ, भूलोक पर, अग्नि नहीं आकाश बनो, मार्गदर्शन नहीं करूँगा, जाल से बाहर आना 142-146

25. सरस्वती देवी का सन्देश, संताप मिट जायेगा, मार्गदर्शन करना बन्द कर दीजिए, माता प्रकृति देवी का सन्देश, भगवान श्री कृष्ण जी, शिवलिंगों का प्रकट होना, परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के बीच 147-149

सन् 2021

26. मेरा शरीर मिट्टी का बना हुआ, मंत्र एक विज्ञान, शक्ति मंत्र के विषय में, आध्यात्मिक सुख का त्याग करो, विशुद्धता और अशुद्धता 150-151

27. परम शान्ति, विश्व विजयी बनो, हे ज्ञानी पुरुष, कठोर निर्णय लो, मेरी उम्र बढ़ा दी गयी, ऋतम्भरा-प्रज्ञा 152-153

सन् 2022

28.	मेरा शरीर, रथ का पहिया, अमृत कलश, कुण्डलिनी शक्ति की कृपा, भगवान श्री हरि की कृपा, ऋतम्भरा-प्रज्ञा और भगवान शिव, प्रभु के पैरों के दर्शन	154-157
29.	ॐ निजस्वरुपाय नम:, विराट स्वरूप, भगवान श्री हरि जी हृदय गुफा में, आवरण का छिन्न-भिन्न होना, शिवलिंग स्फटिक मणि के समान, नार (बेल) से फल डण्ठल के स्थान से अलग हो गये, उल्टी गदा वाला स्थान	158-161
30.	शरीर के अन्दर से रथ निकला, ईगल की आँख, शिवछिद्र के अन्दर, राख का ढेर व कढ़ाई, प्रकृति को स्वच्छ किया जाना, रस्सा, भूमि के अन्दर, आवश्यक जानकारी, अहंकार के विषय	162-167
31.	वायु तत्व, अग्नि तत्व, जल तत्व, पृथ्वी तत्व का तारतम्य, अपरा-प्रकृति और चित्त, मेरा और साधकों का सूक्ष्म तारतम्य, चित्त की भूमि पर एन्टी-क्लॉक वाइज गति, मेरे आदर्श ब्रह्मर्षि विश्वामित्र जी	168-173
32.	पाँच फनों वाले शेषनाग जी, आवश्यक जानकारी, शिवछिद्र, सूक्ष्म शरीर और मानव कंकाल, मानव कंकाल का तड़फना, मैं शेषनाग ही हूँ, हृदयगुफा के अन्दर शिवलिंग और पिलर, संसार का स्वरूप, दुख अस्थायी, संसार को समझ लिया है	174-178
33.	चित्त की शुद्धता, सिर की बाहरी दो परतें टूटकर उखड़ने लगी, कलियुग के सिर पर चार स्वर्ण कलश, भगवान नारायण और शेषनाग के विशाल स्वरूप के दर्शन, तेजस्वी मणि, भगवान श्री राम जी का दर्शन, शिवछिद्र और शेषनाग जी	179-184
34.	पिसा हुआ आटा, देवर्षि नारद जी का सन्देश, परम पिता का सन्देश, ईश्वरीय सत्ता, भगवान श्री नारायण जी का दर्शन, भगवान शेषनाग जी, भगवान शेषनाग जी की स्तुति, तुम भगवान शेषनाग जी की शरण में हो, यह भी शेषनाग जी का स्वरूप है	185-188
35.	महल की आखिरी दीवार और आकाश, बैलगाड़ी, स्त्री के शरीर का बाहरी आवरण निकाला, पेड़ का सूखा तना, स्वच्छ सफेद शिवलिंग, अण्डाकार क्षेत्र में नीचे की ओर छिद्र, आग से सब कुछ जल गया	189-193
36.	नाव मेरे पास आयी, अण्डाकार आवरण टूटने लगा, चकिया, शिवलिंग और घड़ा, सिर्फ मैं हूँ और तुम हो, युवा भगवान श्री कृष्ण जी के चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन, दिव्य श्वेत हाथी का दर्शन, धर्म ध्वज यान	194-198

37.	मुकुट, मार्ग की अंतिम सीमा, सभी अधर्मी है, संसार तो बहता ही रहेगा, त्याग करो, कुण्डलिनी का स्वरूप व गति, कुण्डलिनी शक्ति की गति रोक सकता हूँ, तुम जैसा कहोगे, कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे अपने विषय में समझाया	199-202
38.	भगवान मृत्युन्जय जड़ स्वरूप में, भगवान श्री विष्णु जी का विशेष प्रकार से दर्शन, मैं मुक्त हो गया, अस्मिता का आवरण निकाल रहा हूँ, संसार त्यागने के पश्चात	203-206

सन् 2023

39.	तीन नेत्र वाली स्त्री, अपरा-प्रकृति ही बन्धन में बँधती है और मुक्त होती है, सर्वोच्च स्थान पर, तीसरा नेत्र, सातों चक्र जड़ स्वरूप और निम्नमुखी, भगवान शेषनाग जी ने कहा, मूलाधार चक्र में आग की लपटें उठना	207-211
40.	इनको त्यागो, मैं ब्रह्माण्ड का सबसे शक्तिशाली पुरुष बनू, सम्पूर्ण आकाश में विद्यमान तेजोमयी देवी के दर्शन, लाओ मंजीरे बजाओ मंजीरे, संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का अभ्यास कीजिए	212-213
41.	संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का उपाय, भगवान शंकर जी का आदेश शिवलिंग की स्थापना करो, ऋतम्भरा प्रज्ञा की आकाश में चारों ओर गति, तेजोमयी देवी का आशीर्वाद, गुरु माता और तेजोमयी देवी का सन्देश, मेरा स्वभाव, कर्माशयों का जलना, इस संसार का त्याग कर दो	214-218
42.	प्रकृति देवी की इच्छा, संहार करने की शक्ति, शान्त हो जाओ शान्ति स्थापित करो, पूर्ण सत्य अपनाने से संसार नहीं चलता, भगवान श्री कृष्ण जी जड़ रूप में, ढेरों सफलताऐं, शिवलिंग की पूजा, भगवान श्री राम जी	219-222
43.	संघर्षमय जीवन, ऋतम्भरा-प्रज्ञा, भगवान शंकर जी से प्रार्थना, मानव आकार का शुद्ध होना, अहंकार का स्वरूप, अपरा-प्रकृति जड़ रूप में, शिवलिंग, मैं चित्ताकाश में, अज्ञानता की जड़ों को उखाड़ना	223-227
44.	शिवलिंग आवरण मात्र, अहंकार का स्वरूप, ईश्वर से माँगो, तपेश्वर, तारा, जब शान्त हो जाओगे, एक स्त्री हृदय गुफा के मुहाने पर, राख का ढेर, चित्ताकाश, सुषुम्ना नाड़ी, हृदय गुफा के अन्दर भगवान नारायण और शेषनाग जी, सूर्य नाड़ी-चंद्र नाड़ी, ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप नष्ट हुए के समान हुए, सिर का ऊपरी भाग और नवयुवक	228-234

45.	ब्रह्माण्ड के मध्य में खड़े आकार वाले खम्बे का मूल, सुबह होने वाली है, शिवछिद्र, संसार की व्यवस्था मुझ पर छोड़ दो	235-237

सन् 2024

46.	माता शक्ति का सन्देश, आकाश तत्व का परमाणु, मेरा पारदर्शी स्वरूप, मंत्र जाप करते समय, स्फटिक मणि, मैं और शनिदेव, संसार का स्वभाव, कमल के फूल पर, त्याग की भावना और अहंकार, चित्त, मेरी गोद में	238-244
47.	स्फटिक मणि, सनकादिक ऋषि और अपरा-प्रकृति, मैं स्त्री भी हूँ और पुरुष भी, सिर धड़ से अलग, भगवान श्री गणेश जी का साक्षात्कार, चित्त की आखिरी सीमा के पास, शरीर के अन्दर शुद्धता, चित्त की अवस्था	245-252
48.	तुम महान हो, तुम श्रेष्ठ हो, प्रकृति की गति के ऊपर सहजासन मुद्रा में बैठा, शिवछिद्र, आवरण नोंच डाला, मैं शिवछिद्र के उस पार चला गया, मन्दिर के अन्दर, शिवछिद्र, बैलगाड़ी, शिवछिद्र के उस पार चला गया	253-257
49.	मन्दिर का ऊपरी गुम्बद, प्रभु आप कहाँ हो, कुण्डलिनी शक्ति, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने वाली, भगवान विष्णु जी, सर्वत्र घी फैल गया, नीला पुरुष, शिवछिद्र सिर के ऊपरी भाग पर, घड़ा छिद्र की ओर जाता हुआ, ऊर्जावान शरीर	258-262
50.	सोने का मुकुट, कर्मों का नाश करने के लिये भेजा गया है, उल्टे घड़े से, सहस्त्रदल कमल का स्वरुप, स्थूल शरीर का स्वरूप मिटने लगा	263-265

सन् 2025

51.	शिवछिद्र के अन्दर खड़ा हूँ, परा-प्रकृति का अवतरण नाभि क्षेत्र में, नदी का अस्तित्व समाप्त, विशाल स्वरूप में कमल की कली, भगवान् गणेश जी का सुन्दर स्वरुप दो चेहरे वाला, स्फटिक मणि जैसा, किम्प पुरुष द्वारा पालकी ढोना	266-271
52.	अपरा-प्रकृति के आवरण का साक्षात्कार, भगवान नारायण, शेषनाग और परम् शिव का साक्षात्कार, शिवछिद्र के अन्दर गरुड़ जी का दर्शन, कछुआ शिवछिद्र में विलीन हो गया	272-276
53.	शिवछिद्र और अपरा-प्रकृति का आवरण, चूल्हे के ऊपर कढ़ाई, अपरा-प्रकृति का आवरण टूर-टूट कर नष्ट हो गया, भगवान वराह, कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन	277-279

54.	चित्त की भूमि, श्रेष्ठ गुण, अखण्ड शान्ति, तुम सिर्फ अकेले हो, सहस्त्रदल कमल का स्वरूप, मन्दिर के गुम्बद का ऊपरी सिरा, कुण्डलिनी शक्ति सहस्त्रदल कमल के ऊपर, अत्यन्त विशाल दरवाजा	280-283
55.	गणेश जी जड़ स्वरूप में, कुण्डलिनी शक्ति जड़ स्वरूप में, भगवान विष्णु जी जड़ स्वरूप में, उल्टी गदा के समान उठा हुआ क्षेत्र, भगवान विष्णु जी, भगवान विष्णु जी से प्रार्थना, महा कुण्डलिनी शक्ति का साक्षात्कार, सुषुम्ना नाड़ी, तमोगुणी अहंकार	284-295

सन् 2026

56.	मैं भगवान शेषनाग जी के स्वरुप वाला, धर्ममेघ समाधि, चित्त का स्वरूप स्फटिक मणि के समान, भगवान विष्णु जी चतुर्भुज व सहस्त्रभुज स्वरूप, भगवान विष्णु जी आप यहाँ, ॐ का दर्शन जड़ रूप में	297-304
57.	ज्ञान के सातों स्तर तेजहीन होकर नष्ट हुए के समान, कीचड़ साफ किया जा रहा, दोनों प्रकृतियाँ, अहंकार के तीन टुकड़े कर दिये, अस्मिता का साक्षात्कार, परम् शान्ति को प्राप्त, चित्त की भूमि की स्वच्छता, चक्र जड़ रूप में	305-313
58.	विशाल स्वरूप वाला सात्विक अहंकार, सात्विक इन्द्रियों का स्वरूप, कर्माशयों का जलकर राख का ढेर होना, चित्त पर राख का ढेर, तमोगुणी अहंकार मृत हुए के समान, कुण्डलिनी शक्ति का प्राकट्य होना, आवश्यक जानकारी	314-322
59.	दो मुँह वाला तमोगुणी अहंकार, सत्वगुणी अहंकार, चित्त का स्वरुप शिवलिंग के रूप में, मानव आकृति का पारदर्शी आवरण, अस्मिता, शिवछिद्र, हृदय गुफा के द्वार पर पर्दा, तीतर पक्षी, शिवलिंग के ऊपर का जाल नष्ट हुआ	325-330
60.	ऋतम्भरा-प्रज्ञा, परा-प्रकृति ने कमल का फूल दिया, कछुए का स्वरूप, कछुए को कुचला जा रहा है, ग्राह्य और ग्रहण रूप में अहंकार, परम पवित्र पुरुष, कछुए का स्वरूप, शिवलिंग का स्वरूप, बाल रूप में भगवान शंकर जी	332-338
61	बाल रूप में भगवान श्रीकृष्ण जी, अमृत कलश, चित्त को स्वच्छ करना, सिंहासन पर बैठा पुरुष, भगवान नारायण जी शेषनाग की शैया पर लेटे हुए, भगवान शंकर जी, सहस्त्रदल कमल और ध्वज, जीव को अपना स्वरूप दिखाई देना	339-345
62	विशाल आकार वाली कमल कली का खिलना, विशाल आकार वाला अत्यन्त सुन्दर प्रकाशित महल, भगवान शंकर जी के समान पुरुष और महा कुण्डलिनी शक्ति	346-348

मैं स्वच्छ निर्मल पारदर्शी पिण्ड के ऊपर खड़ा हूँ, भगवान शेषनाग जी, नवजात
63 शिशु, स्वच्छ निर्मल अण्डाकार क्षेत्र, शिवलिंग और भगवान शंकर जी, संसार की यात्रा पूर्ण हुई, भगवान विष्णु जी और मैं, त्याग कर दीजिए, आप कौन है 349-354
62. इस लेख के अन्त में 357

सन् 2011

मैं स्वर्ण मुकुट से युक्त

यह अनुभव 1 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। सामने की ओर अत्यंत स्वच्छ आकाश में (अन्तरिक्ष में) सोने का बना हुआ सुन्दर नक्काशीदार विशाल दरवाजा दिखाई दिया। मैं उस सुन्दर नक्काशीदार दरवाजे को देख रहा था। उस विशाल दरवाजे के उस पार निर्मल स्वच्छ आकाश में सफेद स्वच्छ भाप जैसी विद्यमान थी, क्योंकि वह विशाल नक्काशीदार दरवाजा खुला हुआ था इसलिए उस पार का क्षेत्र स्वच्छ दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों बाद दरवाजे के उस पार का आकाश अपनी जगह पर गोल-गोल घूमने लगा। उस आकाश को अपनी जगह पर गोलाकार घूमते हुए कुछ क्षण ही बीते थे कि फिर उसका स्वरूप बदलने लगा। वह सूरज जैसे स्वरूप वाला बन गया। इसके साथ ही इसका रंग बदलकर सुनहरे रंग वाला हो गया तथा वह (आकाश) मेरी ओर आने लगा। विशालकाय नक्काशीदार दरवाजा भी अपने स्थान पर घूम रहा था। मेरी ओर आते समय सम्पूर्ण क्षेत्र का स्वरूप छोटा होता जा रहा था। फिर उस सम्पूर्ण क्षेत्र का स्वरूप छोटा ही होकर सुन्दर बड़े मुकुट के आकार वाला बन गया, तब तक वह मुकुट मेरे बिल्कुल पास आ गया। मैंने उस मुकुट को दोनों हाथों से पकड़ लिया, फिर वह सुन्दर मुकुट मेरे हाथों से अलग होकर अपने आप मेरे सिर के ऊपर रख गया। अब मैं उस स्वर्ण मुकुट को लगाये हुए आकाश की ओर देख रहा था।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला आकाश बिल्कुल शान्त व निर्मल था। स्वच्छ भाप जैसी वस्तु सात्विक भाव के स्वरूप का प्रतीक है। सुन्दर नक्काशीदार विशाल दरवाजे का अर्थ है- मुझे निकट भविष्य में आगे की अवस्था प्राप्त होगी। बहुत से अभ्यासियों को इस प्रकार का दिखाई देता है, तब उनकी अवस्था अनुसार अर्थ अलग-अलग भी होता है। इस प्रकार के दरवाजे का अर्थ कभी-कभी किसी लोक के प्रवेश-द्वार का प्रतीक होता है, कभी-कभी कुण्डलिनी शक्ति के जागरण के समय इस प्रकार का मिलता-जुलता दरवाजा दिखाई देता है। अनुभव में उस क्षेत्र का स्वरूप बदलकर स्वर्ण मुकुट के रूप वाला हो गया, फिर अपने आप स्वर्ण मुकुट मेरे सिर पर रख गया। इसका अर्थ है- भविष्य में अभ्यास के द्वारा उस क्षेत्र पर विजय प्राप्त कर लूँगा। मुझे आगे की अवस्था प्राप्त होगी।

ज्ञान से युक्त चित्त

यह अनुभव 15 मई को सुबह 10 बजे ध्यानावस्था में आया। मैं अपने हाथों में एक पात्र पकड़े हूँ, उस पात्र में घी भरा हुआ है, इस पात्र का घी सामने रखे पात्र में उड़ेल रहा हूँ। जब वह पात्र पूरी तरह से भर गया, फिर घी पात्र से नीचे की ओर चारों तरफ फैलने लगा, तब मैंने उस पात्र में घी उड़ेलना बन्द कर दिया। अब मैंने उस पात्र के अन्दर झाँक कर देखा जिसमें घी पहले से भरा था। पात्र के अन्दर देखने पर मैं चौंक पड़ा, क्योंकि उस पात्र में घी इतना शुद्ध व निर्मल था कि घी पूरी तरह से पारदर्शी जैसा लग रहा था अर्थात वह घी शुद्धता की चरम सीमा वाला कहा जा सकता है। पात्र के अन्दर तली दिखाई नहीं दे रही थी, बल्कि तली के स्थान पर तेज प्रकाश दिखाई दे रहा था। मैं उस प्रकाश को देख कर मुस्कुरा रहा था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जिस पात्र में घी डाला जा रहा है, वह पात्र चित्त का प्रतीक है। घी ज्ञान के स्वरूप का प्रतीक है। पात्र में घी पूर्ण रूप से भर जाना तथा चारों ओर आसपास फैल जाना का अर्थ है - चित्त में ज्ञान का प्रकाश पूर्ण रूप से फैल जाना (विद्यमान हो जाना) दर्शाता है। जिस पात्र को अपने हाथों में पकड़े हूँ उस पात्र के अन्दर घी अत्यन्त शुद्ध व निर्मल है अर्थात ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश अत्यन्त शुद्ध व निर्मल होता है, इसीलिये पात्र की तली में ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश अत्यन्त निर्मल दिखाई दे रहा है। यह अवस्था मुझे अभ्यास के द्वारा भविष्य में प्राप्त होगी। अनुभव में यह दृश्य दिखाई दिया है, भविष्य में यह अवस्था प्राप्त होना निश्चित हो गया है।

नदी रूपी संसार को पार करना है

यह अनुभव 22 मई को आया था। अनुभव में पानी से रहित सूखी हुई नदी के ऊपर (भूमि पर), इसके उद्गम क्षेत्र (मूल स्रोत) की ओर तीव्र गति से भागता हुआ चला जा रहा हूँ। इस नदी का उद्गम क्षेत्र उत्तर दिशा की ओर है ऐसा मुझे मालूम था, तभी मुझे आकाश से आवाज सुनाई दी- "इसे पार करना है।" आवाज सुनकर मैं सामने की ओर देखने लगा तथा सोचने लगा- मुझे क्या पार करना है? सामने की ओर सम्पूर्ण नदी में ऊँचा-सा जाल लगा दिखाई दिया, जाल की ऊँचाई बहुत थी। आश्चर्य की बात यह थी कि जाल के उस पार नदी में पानी भरा हुआ था। जाल में छिद्र होने के बावजूद उस पार का पानी छिद्रों द्वारा इधर (मेरी ओर) नहीं आ रहा था, जबकि जाल बड़े-बड़े छिद्रों वाला था, पानी वहीं पर ठहरा हुआ था

(जाल की ऊँचाई देखकर मैं समझ गया था कि छलांग लगाकर जाल की ऊँचाई को पार नहीं कर सकता था)। मैं नदी के बायीं ओर किनारे आया, फिर धीरे-धीरे इच्छा शक्ति से ऊपर की ओर उठने लगा। कुछ क्षणों में मैं जाल की ऊँचाई के ऊपर खड़ा हो गया। अब जाल की ऊपर वाली ऊँचाई मेरे पैर के तलवे के नीचे थी। उसी समय अनुभव समाप्त हो गया। अनुभव में मैंने जाल को पार नहीं किया था, नदी के बायीं ओर जाल के ऊपर खड़ा हुआ था।

अर्थ- अनुभव में सूखी हुई नदी संसार का स्वरूप है। नदी सूखी हुई है अर्थात संसारी पदार्थों के प्रति मेरे चित्त पर इच्छाओं का समाप्त हो जाना है। जाल बन्धन का स्वरूप होता है। मैं जाल के ऊपर खड़ा हूँ अर्थात बन्धन को पैरों के नीचे दबा रखा है अथवा बन्धन को पार कर जाऊँगा। जाल के उस पार पानी भरा हुआ है अर्थात अविद्या से युक्त सांसारिक इच्छाएँ ही हैं। जीवों के कल्याण के लिए निष्काम भाव से कर्म करके उन इच्छाओं को समाप्त करना होगा। ईश्वरीय कार्यों से युक्त कर्म करके उन इच्छाओं को समाप्त करना होगा।

तीर और कमान टूट गया

यह अनुभव 3 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में मैं आकाश में खड़ा हुआ हूँ। मैंने पीछे की ओर मुँह किया और बोला- "तीर और कमान तो टूट गया।" यह शब्द कहते ही मैं आगे की ओर चल दिया। जैसे ही मैं आगे की ओर तीन-चार कदम चला, तब मैंने सामने की ओर देखा- "तीर और कमान टूटा हुआ पड़ा था।" मैं टूटे हुए तीर और कमान को देख रहा था, तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- तीर और कमान से लक्ष्य भेदा जाता है, इसलिये श्रेष्ठ साधकों की उच्चावस्था में तीर-कमान का अनुभव आता है। यदि तीर कमान पर चढ़ा हुआ हो तथा तीर की नोक नीचे की ओर (भूमि की ओर) हो, ऐसा अनुभव आये तब इसका अर्थ होता है- अभ्यासी सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए लक्ष्य भेदने का प्रयास कर रहा है। अगर अनुभव में दिखाई दे- अभ्यासी तीर को कमान पर चढ़ाए हुए आकाश की ओर लक्ष्य भेद रहा है, तब इसका अर्थ होता है- अभ्यासी ईश्वर प्राप्ति के लिए प्रयासरत है, अथवा ईश्वर को प्राप्त करना चाहता है। अभ्यासी को अनुभव में दिखाई दे कि उसके सामने की ओर तीर कमान टूटा हुआ पड़ा है, तब इसका अर्थ होता है- अभ्यासी ने ईश्वर प्राप्ति के लिए लक्ष्य भेद दिया है। अर्थात उस अभ्यासी को भविष्य में ईश्वर प्राप्ति अथवा मोक्ष अवश्य मिलेगा। ऐसे अभ्यासी के अन्तःकरण

में किसी प्रकार की इच्छाएँ ही नहीं रह जाती हैं, उसके लिये सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थ नष्ट हुए के समान हो जाते हैं।

सर्वोच्च अवस्था पर

यह अनुभव 4 जून का है। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मैं अत्यन्त निर्मल स्वच्छ आकाश में खड़ा हूँ। मुझे अनुभूति हुई कि मेरे पैर के नीचे कुछ है। तब मैंने अपनी दृष्टि नीचे की ओर की, तो मुझे दिखाई दिया- पैर के तलवे के नीचे सीढ़ी का ऊपरी भाग छू रहा है। मैंने गौर करके नीचे की ओर देखा-नीचे की ओर एक सीढ़ी बिल्कुल सीधी 90 अंश कोण बनाती हुई अंतरिक्ष (आकाश) में ही खड़ी है, सीढ़ी के नीचे की ओर भूमि आदि नहीं है। सर्वत्र आकाश ही आकाश है। जब मुझे सीधी खड़ी सीढ़ी का दृश्य दिखाई दिया तभी सीढ़ी का ऊपरी भाग उलटकर नीचे की ओर जाने लगा अर्थात सीढ़ी नीचे की ओर जाने लगी। तभी मुझे महसूस हुआ- मेरे सिर का ऊपरी भाग आकाश के ऊपरी भाग से छू रहा है। मैं आकाश में सर्वोच्च स्थान पर खड़ा हूँ। वहाँ सिर्फ आकाश ही आकाश है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई दिया- मैं आकाश में सर्वोच्च स्थान पर खड़ा हूँ। इस अनुभव का अर्थ है- अभ्यास के द्वारा भविष्य में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करूँगा। मुझे ज्ञान की सम्पूर्ण अवस्थाऐं (सातों अवस्थाएँ, सातों ज्ञानभूमि अर्थात सम्पूर्ण तत्वज्ञान) प्राप्त होंगी। सहस्त्रार चक्र ज्ञान का आयतन है, मेरा सहस्त्रार चक्र खुला होने के कारण अपरा-प्रकृति से सम्बंधित पूर्ण ज्ञान प्राप्त होगा।

सम्पूर्ण संसार मेरा ही स्वरूप

यह अनुभव 5 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में ध्यान पर बैठा था तब मैं ही स्वयं अपने आप से कहने लगा- "हे पुत्र! समस्त संसार तुम्हारा ही स्वरूप है।" मैं स्वयं ही बार-बार कह रहा था। कुछ क्षणों बाद मैं फिर कहने लगा- "तुम्हीं इस संसार के स्वामी हो।" ये वाक्य मैंने दो-तीन बार कहे। फिर मुझे अनुभूति होने लगी- मैं समस्त संसार में व्याप्त हूँ। मुझे शान्ति की अनुभूति हो रही थी। फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया।

अर्थ- इस अनुभव का अर्थ गूढ़ है। जब अभ्यासी पूर्णता को प्राप्त कर लेता है अर्थात स्थितप्रज्ञ अवस्था में अभ्यास कर रहा होता है अर्थात निरुद्धावस्था का अभ्यास कर रहा होता है, तब इस प्रकार की अनुभूति होती है। अभ्यासी ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होता है। सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति को अपने अन्दर समेटे रखता है।

ज्ञान का पाठ पढ़ाओ

यह अनुभव 28 जुलाई को ध्यानावस्था में आया। मैं अनुभव में आसन पर बैठा हुआ था। सामने की ओर से मेरे पास पैक की हुई कोई वस्तु आ गयी। यह पैकिंग सफेद कागज द्वारा की गयी थी। पैक की हुई वस्तु मेरे पास आकर अपने आप उसके ऊपर वाली पैकिंग फटने लगी। कुछ क्षणों में सफेद कागज वाली पैकिंग फट कर अलग हो गयी। पैकिंग फटने के बाद उसके अन्दर काठ (लकड़ी) की दो पट्टियाँ निकलीं, इन पट्टियों पर गाँव में विद्यार्थी शुरुआत में पढ़ाई करते हैं। ऐसा गाँव के स्कूलों में कहीं-कहीं पर पढ़ाई अब भी होती है। कुछ क्षणों बाद मेरे सामने सुन्दर सी एक स्त्री प्रकट हो गयी। उसके आसपास चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था अर्थात वह हल्के प्रकाश के अन्दर खड़ी हुई थी। मैं उस स्त्री की ओर टकटकी लगाकर देख रहा था। फिर कुछ क्षणों बाद मैं बोला- मैं आपको प्रणाम करता हूँ, आप कौन हैं? कृपया मुझे अपना परिचय दीजिए। वह स्त्री बोली- "मैं तुम्हारी माँ हूँ और ज्ञान की देवी हूँ अब आप, लोगों को ज्ञान का पाठ पढ़ाओ, लोग आपकी बात मानेंगे, यह हमारा आपको वरदान भी है"। फिर उस स्त्री ने आशीर्वाद मुद्रा में हाथ मेरी ओर उठाया। कुछ क्षणों बाद वह स्त्री अदृश्य हो गयी। जब मैंने सामने की ओर देखा तब दृश्य में दिखाई दिया- सामने खड़े आकार में लाइनदार बहुत दूर तक काठ की पट्टियाँ रखी हुई हैं। मैं इन पट्टियों की गिनती नहीं कर सकता हूँ, बस इतना अनुमान लगा सकता हूँ कि काठ की वह पट्टियाँ शायद कई सौ होंगी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में काठ (लकड़ी) की बनी हुई पट्टियाँ दिखाई दी हैं। काठ की ऐसी पट्टियों पर गाँव में प्राइमरी स्कूलों में अब भी पढ़ाई होती है। किसी समय मैंने भी ऐसी ही पट्टियों पर पढ़ाई की थी। अब उन पट्टियों की जगह पर कहीं-कहीं स्कूलों में स्लेट पर पढ़ाई होने लगी है। अनुभव में मेरे पास पट्टियाँ आ गयी थीं तथा अनुभव के अन्त में भी सैकड़ों पट्टियाँ लाइनदार रखी हुई दिखाई दीं। उस स्त्री ने अपना परिचय ज्ञान की देवी के रूप में दिया था। ज्ञान की देवी कौन है आप सभी जानते हैं। उसने मुझे आशीर्वाद

और वरदान भी दिया। उस देवी का कहना था- "आप ज्ञान का पाठ पढ़ाओ", अर्थात मैं लोगों को योग सिखाऊँ, लोग आपकी बात मानेंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि अगर मैं लोगों को योग सिखाऊँगा तो लोगों मुझसे योग सीखेंगे। अब भविष्य बताएगा कि मैं लोगों को योग सिखाऊँगा कि नहीं सिखाऊँगा, मगर अनुभव का यही अर्थ निकलता है- मैं सैकड़ों लोगों को योग सिखाऊँगा। लोग मुझसे योग अवश्य सीखेंगे क्योंकि उस देवी का आशीर्वाद और वरदान मेरे साथ है। साधकों! मैं लोगों को कब से योग सिखाऊँगा, यह भविष्य बताएगा।

हे जन्म से रहित मेरे पुत्र

यह अनुभव 29 जुलाई को ध्यानावस्था में आया। मेरा ध्यान अच्छा लगा हुआ था तभी आकाशवाणी हुई- "हे जन्म से रहित मेरे पुत्र! तुम्हें, यहाँ पर बहुत अधिक समय नहीं रहना है। फिर भी जितने समय तक रहना है प्रसन्नता से रहो। इस संसार में किसी के भी प्रति कुछ भी न सोचो।" मुझसे आकाशवाणी द्वारा बहुत से शब्द कहे गये थे, मगर मुझे जो शब्द याद रहे, सिर्फ उन्हीं को लिखा है।

अर्थ- अनुभव में आकाशवाणी द्वारा मुझे बताया गया कि हमारा अगला जन्म होना सम्भव नहीं है। इसीलिए कहा गया- "हे जन्म से रहित मेरे पुत्र।" यह जन्म मेरा आखिरी जन्म है, यह पहले से ही निश्चित है। प्रकृति का सिद्धान्त है कि आखिरी जन्म में ही सहस्त्रार चक्र का विकास-क्रम शुरू होता है क्योंकि सहस्त्रार चक्र ज्ञान का आयतन है। यह ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्राकट्य के बाद ही प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य पहले होता है फिर सहस्त्रार चक्र का विकास-क्रम होता है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश चित्त की भूमि को तोड़ने लगता है, फिर चित्त पर स्थित अविद्या की जड़ों को मूल से नष्ट करने लगती है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा अविद्या की विरोधी होती है। जन्म के कारण चित्त पर स्थित कर्माशयों को भी अभ्यासी द्वारा भोग कर नष्ट करने पड़ते हैं, इन्हें शेष कर्माशय कहते हैं। ये कर्माशय बहुत क्लेशात्मक होते हैं, ऐसे कर्माशयों को भोगते समय अभ्यासी को संसार की वास्तविकता का ज्ञान होने लगता है। अन्त में चित्त की भूमि पर ज्ञान का प्रकाश फैल जाता है, फिर ज्ञान के प्रकाश के कारण अभ्यासी द्वारा किये गये कर्मों के संस्कार नहीं बनते हैं। ऐसी अवस्था में अर्थात कर्माशयों से रहित हुआ चित्त वाले अभ्यासी जन्म लेते नहीं देखे गये हैं। फिर स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात परा-प्रकृति में स्थित होकर अपने स्वरूप को प्राप्त हो जाते हैं।

कमल का फूल

यह अनुभव 8 अगस्त को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने थोड़ा-सा ऊपर की ओर आकाश में भगवा साड़ी पहने एक स्त्री सहजासन मुद्रा में बैठी हुई प्रकट हो गयी। वह स्त्री मुझे देख रही थी। उसने अपने बायें हाथ से अपनी साड़ी सिर के ऊपर रखी, फिर दाहिने हाथ से भगवा रंग का कमल का फूल मुझे देने के लिये अपना हाथ मेरी ओर बढ़ाया। मैं उस भगवा रंग के कमल के फूल को गौरपूर्वक देख रहा था, तभी ये अनुभव समाप्त हो गया। मेरी आँखें खुल गयी और ध्यान टूट गया।

अर्थ- अनुभव में भगवा साड़ी पहने स्त्री प्रकृति का ही स्वरूप है। भगवा रंग का कमल का फूल मुझे देने के लिये उसने अपना हाथ मेरी ओर बढ़ाया। भगवा रंग का कमल के फूल का अर्थ होता है- त्याग, पवित्रता और ज्ञान। ऐसा लगता है भविष्य में मुझे संसारिक पदार्थों का पूर्ण रूप से त्याग करना पड़ेगा, तथा तत्त्वज्ञान की प्राप्ति पूर्ण रूप से होगी, क्योंकि चित्त की शुद्धता चरम सीमा तक होगी। ऐसा अनुभव का अर्थ बता रहा है। स्वयं प्रकृति सम्मानपूर्वक मुझे भगवा रंग का कमल का फूल दे रही है तथा खुद भी भगवा रंग साड़ी पहने हुए है।

ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर

यह अनुभव 8 सितम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में देखा-ब्रह्मरन्ध्र के अन्दर फल जैसे आकार का कुछ रखा हुआ है। इस फल को देखते ही इच्छा शक्ति के द्वारा धक्के मार-मारकर नीचे की ओर गिरा दिया, फिर इच्छा शक्ति के द्वारा उस फल को फोड़ डाला। उस फल के अन्दर छोटे-छोटे बहुत से बीज चिपके हुए थे। ऐसा लग रहा था कि अभी वे बीज पूर्ण रूप से पके नहीं है अर्थात ये बीज भोगने के लिये अभी कुछ समय लगेगा। ये बीज संसार से सम्बंधित है।

अहंकार का ब्रह्म की ओर गमन

यह अनुभव 3 अक्टूबर को सुबह ध्यानावस्था में आया। हमारे अन्दर से एक पुराना-सा काला नाग बाहर की ओर निकलकर जाने लगा। मैंने उस नाग को जाने से रोका नहीं, बल्कि मैंने सोचा- "जाने

दो।" जब यह नाग आधे से ज्यादा निकल गया, तब नाग का पेट फट गया। फटे हुए पेट के अन्दर से पतला-सा नाग निकलने लगा। यह नाग पूर्व दिशा की ओर मुँह करके पूर्व दिशा की ओर जाने लगा। जब दूसरा नाग आधा निकल आया, तब पहले काले नाग का पेट पूँछ की ओर चिरता हुआ चला गया, जैसे करेला चीरा जाता है। पहले वाले नाग का पेट पूँछ की ओर चिरता जा रहा था, दूसरा वाला नाग बाहर की ओर निकलता जा रहा था। अन्त में पूँछ अलग नहीं हुई बल्कि दोनों की पूँछ आपस में जुड़ी रही। दूसरे वाला नाग पूर्व दिशा की ओर चला जा रहा था। पहले वाला नाग की पूँछ आपस में जुड़ी होने के कारण घिसटता जा रहा था, दोनों की पूँछ आपस में जुड़ी रही। पहले वाले नाग का मुँह पश्चिम दिशा की ओर था तथा दूसरे वाले नाग का मुँह पूर्व दिशा की ओर था, इसलिये दूसरा वाला नाग पूर्व दिशा की ओर चला जा रहा था।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले नाग अहंकार के प्रतीक हैं। पहले वाला नाग जो हमारे अन्दर से निकल रहा था वह तमोगुणी अहंकार का प्रतीक था। दूसरे वाला नाग जो पहले वाले नाग के पेट (अन्दर से) से ही निकल कर बाहर आया था, वह सत्वगुणी अहंकार का प्रतीक है। तमोगुणी अहंकार में तमोगुण की प्रधानता और बहिर्मुखता के कारण इसका प्रवाह संसार की ओर रहता है, इसीलिए इसे निम्न मुखी प्रवाह वाला कहा गया है क्योंकि इसका सम्बन्ध अपरा-प्रकृति से रहता है। सम्पूर्ण संसार में तमोगुण प्रधान रूप से रहता है। तमोगुणी अहंकार से ही पंचभूत व मन का प्राकट्य होता है। यह तमोगुणी अहंकार ग्राह्य और ग्रहण रूप से अपने आप में बरतता रहता है। सत्वगुणी अहंकार में सत्वगुण की प्रधानता के कारण ब्रह्म की ओर उन्मुख रहता है। इसीलिये अनुभव में वह सत्वगुणी अहंकार (नाग) पूर्व दिशा की ओर जाते हुए दिखाई दिया। जीवन्मुक्त अवस्था वाले अभ्यासी के अन्दर सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य हो जाता है, फिर वह अपने धाम (परा-प्रकृति या ईश्वर के लोक) को स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात चले जाते हैं। इस अनुभव से स्पष्ट हो रहा है कि अन्त समय में सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य हमारे चित्त में अवश्य हो जायेगा। उस समय तमोगुणी इन्द्रियों का स्वरूप बदल कर सत्वगुणी इन्द्रियों का प्राकट्य होगा क्योंकि तमोगुणी इन्द्रियाँ बहिर्मुखी होकर सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति में लगी रहती हैं।

सन् 2012

सोने का सिंहासन

यह अनुभव जनवरी के प्रथम सप्ताह में आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- सर्वत्र आकाश ही आकाश विद्यमान था। सामने की ओर से हमारी ओर को कोई वस्तु आकाश में धीरे-धीरे चली आ रही है। अब हमारी दृष्टि उस वस्तु की ओर ठहर गयी जो हमारी ओर चली आ रही थी। कुछ क्षणों में वह वस्तु हमारे सामने बिल्कुल पास आ गयी। अब मुझे वह वस्तु स्पष्ट दिखाई देने लगी। वह बहुत बड़ा सिंहासन था। यह सिंहासन पूर्ण रूप से चमकते हुए सोने से बना हुआ था। वह सिंहासन हमारे सामने थोड़ी दूरी पर ठहर गया। मैं उस सिंहासन को गौरपूर्वक देख रहा था, क्योंकि इस प्रकार का सिंहासन पहले कभी नहीं देखा था। वह सिंहासन बहुत बड़े आकार में बना हुआ था। हमारे सामने बायीं ओर से सिंहासन तक पहुँचने के लिये बहुत सुन्दर नक्काशीदार कुछ सीढ़ियाँ बनी हुई थी। मैं सीढ़ियों व सिंहासन को देख रहा था। सिंहासन बहुत ही सुन्दर नक्काशीदार बना हुआ था। सिंहासन के ऊपर की ओर छतरी मुकुट नुमा बनी हुई थी। सिंहासन के तीनों ओर अर्थात बायीं ओर (सीढ़ियों की ओर), सामने और दाहिने ओर लगभग दो फुट ऊँची सुन्दर नक्काशीदार बनी हुई रेलिंग लगी थी। अब मेरी दृष्टि फिर बायीं ओर बनी सीढ़ियों की ओर गयी। सीढ़ियों के पायदान की चौड़ाई लगभग एक मीटर की होगी, सीढ़ियाँ लगभग तीन-चार थी। सम्पूर्ण सिंहासन चमकते हुए सुनहरे रंग के सोने से बना हुआ था। मैं इस बहुत सुन्दर सिंहासन को गौरपूर्वक देख रहा था, तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में सम्पूर्ण दृश्य आकाश के अन्दर ही था। चारों ओर सर्वत्र आकाश ही विद्यमान था। भूमि कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। अनुभव में दिखाई देने वाला सिंहासन बहुत ही बड़ा था। सम्पूर्ण सिंहासन चमकते हुए सोने द्वारा बना हुआ था। सिंहासन का स्वरूप और विशालता देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इस सिंहासन पर बैठने वाला व्यक्ति निश्चय ही महापुरुष होगा। ऐसे सिंहासन पर सबसे ऊँचे पद वाला ही पुरुष बैठेगा। अनुभव में दिखाई देने वाले सिंहासन का अर्थ है- मुझे भविष्य में सबसे ऊँची अवस्था या पद प्राप्त होगा। अध्यात्म में सबसे ऊँची अवस्था मोक्ष प्राप्ति की होती है, जिसे जीवन्मुक्त अवस्था, निरुद्धावस्था, सगुण ब्रह्म प्राप्ति की अवस्था, स्थितप्रज्ञ अवस्था, ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होने की अवस्था, शरीर त्यागने के बाद परा-प्रकृति के क्षेत्र में स्थित होने की अवस्था आदि, ये सभी अवस्थाऐं

लगभग पर्यायवाची शब्द जैसे हैं। इन सभी अवस्थाओं की परिभाषा में थोड़ा अन्तर है। निर्वाण की अवस्था प्राप्त करनी है अर्थात परम शान्ति की प्राप्ति करना है। इनमें से कुछ अवस्थाओं को प्राप्त हो चुका हूँ, शेष अवस्थाऐं अभ्यास के द्वारा भविष्य में प्राप्त हो जायेगी, तभी इस सिंहासन पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

भगवान श्री कृष्ण जी ने बोला

यह अनुभव 3 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। हमारे सामने आकाश में ऊँचा पर्वत नुमा प्रकाश विद्यमान था। उस पर्वत नुमा प्रकाश के ऊपर, प्रकाश से बने हुए भगवान श्री कृष्ण जी खड़े हुए थे। वह अपना सुदर्शन चक्र भी लिये हुए थे, उनका स्वरूप स्पष्ट नहीं दिखाई दे रहा था। मैं बोला- "प्रभु! आप स्पष्ट क्यों नहीं दिखाई दे रहे हो?" भगवान श्री कृष्ण जी बोले- "पहले अपने चित्त को और शुद्ध करो तब मैं अपने वास्तविक स्वरूप में दिखाई दूँगा।" फिर उन्होंने अपना सुदर्शन चक्र मेरी ओर चला दिया। सुदर्शन चक्र हमारी ओर आने लगा। मैं सुदर्शन चक्र को अपनी ओर आते हुए देख कर चौंक पड़ा, फिर वह सुदर्शन चक्र हमारे दाहिनी ओर से होते हुए पीछे की ओर चला गया। फिर अनुभव समाप्त हो गया। **अर्थ-** अनुभव में भगवान श्री कृष्ण जी ने मुझसे कहा- "मेरे वास्तविक स्वरूप को देखने के लिए अपना चित्त और शुद्ध करो।" अब मैं निश्चय ही अपना चित्त और ज्यादा शुद्ध करने का प्रयास करूँगा ताकि भगवान श्री कृष्ण जी के वास्तविक स्वरूप के दर्शन कर सकूँ।

ज्ञानचक्र एंटी क्लॉक वाइज

यह अनुभव 13 मई को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा-हमारे मस्तक के सामने रथ के पहिये के समान आकार वाला एक गोलाकार चक्र एन्टी-क्लॉक वाइज धीरे-धीरे गति कर रहा है। यह एन्टी-क्लॉक वाइज गति थोड़ा सा झटका सा देकर हो रही है। कुछ क्षणों बाद इस गोलाकार चक्र की गति ठहर गयी। क्षण भर के लिए वह चक्र स्थिर रहा, फिर कुछ क्षणों बाद वह चक्र क्लॉक वाइज अपनी जगह पर घूमने लगा। अभी कुछ क्षण ही क्लॉक वाइज घूमते हुए बीते थे कि वह ज्ञान चक्र अदृश्य हो गया। उस स्थान पर

चित्त की भूमि क्लॉक वाइज घूमती हुई दिखाई देने लगी। कुछ क्षणों तक यह दृश्य देखता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला रथ के पहिये जैसा चक्र 'ज्ञानचक्र' है। यह ज्ञानचक्र सभी सांसारिक मनुष्यों के सूक्ष्म शरीर के अन्दर मस्तक पर घूमता रहता है। मनुष्य की चित्त की शुद्धता और अशुद्धता पर इसकी गति निर्भर करती है। शुद्ध चित्त वाले मनुष्य का ज्ञानचक्र तेज गति से घूमता है, तथा तामसिक चित्त वाले मनुष्य का ज्ञानचक्र धीमी गति से घूमता है। सांसारिक मनुष्यों को अपना ज्ञानचक्र दिखाई नहीं देता है क्योंकि ये ज्ञानचक्र सूक्ष्म शरीर के अन्दर होता है। सिर्फ योग्य साधकों को ही ज्ञानचक्र ध्यानावस्था में कभी-कभी दिखाई देता है। अनुभव में ज्ञानचक्र एन्टी-क्लॉक वाइज गति कर रहा था। एन्टी-क्लॉक वाइज गति को प्रलय उन्मुख गति कहते हैं। ऐसी एन्टी-क्लॉक वाइज गति सिर्फ जीवन्मुक्त पुरुष के अन्दर होती है, क्योंकि जीवन्मुक्त होने के कारण उसके चित्त में सृष्टि उन्मुखता समाप्त हो जाती है क्योंकि उसका चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होता है अर्थात जो पुरुष अभ्यास के द्वारा जन्म, आयु, मृत्यु से रहित हो जाते हैं, उनका ज्ञानचक्र एन्टी-क्लॉक वाइज घूमता रहता है। अनुभव में ज्ञानचक्र ने अपनी एन्टी-क्लॉक वाइज गति रोक कर क्लॉक वाइज गति करनी शुरू कर दी थी। इसका अर्थ है- अब मुझे कुछ समय तक सांसारिक कार्य करने होंगे। अभी मुझे यह मालूम नहीं है कि मुझे कब तक सांसारिक कार्य करने होंगे? हाँ इतना जरूर मालूम है कि भविष्य में किये जाने वाले कार्य अवश्य ही ईश्वरीय कार्य होंगे। मैं ऐसे कार्यों को करने के लिए समर्पित हूँ। ऐसे कार्य करते समय (ईश्वरीय) मेरा किसी प्रकार से पतन नहीं होगा, बल्कि मेरा चित्त और शुद्ध हो जायेगा।

तुम प्रकृति के स्वामी हो

यह अनुभव 23 मई सुबह ध्यानावस्था में आया। आज सुबह गहरा ध्यान लगा। जब ध्यान करने का समय पूरा हुआ तब धीरे-धीरे टूटने लगा अर्थात ध्यान हल्का होने लगा, तब हमारे अन्तःकरण से आवाज आयी- "तुम प्रकृति के स्वामी हो, तुम्हें अब कुछ नहीं करना है, सिर्फ प्रकृति की व्यवस्था देखनी है।" इन शब्दों को सुनने के बाद मैं चौंक पड़ा और सोचना लगा- यह मुझ से क्या कहा जा रहा है क्योंकि इन शब्दों का अर्थ मैं समझ रहा था।

अर्थ- ये शब्द मेरे अन्तःकरण से गहराई से प्रकट हो रहे थे। प्रकृति का स्वामी ईश्वर होता है। ईश्वर के अधिकार में ही अपरा-प्रकृति होती है, फिर ऐसे शब्द मेरे अन्तःकरण में क्यों प्रकट हो रहे थे? हो सकता है मेरे अन्दर जीवेश्वर की योग्यता आ गयी हो। इसका अर्थ है- जीवात्मा (हमारे) के अन्दर ईश्वरीय गुण आने लगे हों।

हमारी आरती उतारी गयी

यह अनुभव 25 मई को रात्रि 11.30 बजे आया। मैं आँखें बन्द किये हुए लेटा हुआ जाग रहा था। उस समय मैंने देखा- मैं बैठा हुआ हूँ। मेरे सामने एक बहुत बड़े आकार वाला दीपक प्रकट हो गया और दीपक जलने लगा। दीपक में एक बहुत मोटी बाती जल रही थी। उस दीपक को एक विशाल आकार वाला हाथ पकड़े हुए था, फिर उस दीपक को हमारे सामने अति नजदीक कर दिया गया। तब स्पष्ट दिखाई दिया- उस दीपक को एक युवा सन्यासी पकड़े हुए था अर्थात हमारी आरती एक युवा सन्यासी उतार रहा था। क्षण भर बाद मुझे दिखाई दिया- यह सन्यासी कोई स्त्री है, इसका शरीर अत्यन्त विशालकाय वाला था, मैं उसके सामने छोटा सा बच्चा जैसा लग रहा था। मैंने उसका मुँह देखना चाहा, मगर उसका मुँह दिखाई नहीं दिया। अब मैंने अपनी दृष्टि ऊपर की ओर की ताकि उसका चेहरा देख सकूँ, मगर तभी दृष्टि नीचे की ओर आ जाती थी। उस स्त्री का शरीर बहुत ही सुन्दर था, उसके हाथ पैर अति नजदीक थे, इससे निश्चय हो गया कि उसके अंग बहुत सुन्दर हैं। अब हमारी दृष्टि दीपक के लौ पर स्थिर हो गयी। हमारी आरती उतारी जा रही थी, फिर कुछ क्षण बाद हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में पहले दिखाई दिया कि मेरी आरती उतारने वाला कोई सन्यासी है। कुछ क्षणों बाद दिखाई दिया आरती उतारने वाली कोई स्त्री है। उस स्त्री का चेहरा नहीं देख पा रहा था सिर्फ उसकी गर्दन तक ही मैं देख पा रहा था। इतना निश्चित था आरती उतारने वाली स्त्री साधारण स्त्री नहीं थी बल्कि दिव्य स्त्री थी। इस अवस्था में सन्यासी द्वारा अथवा दिव्य स्त्री द्वारा आरती उतारा जाना ही जीवेश्वर पद को प्राप्त हो जाना होता है।

सन् 2013

सात मंजिल वाला ज्ञान

यह अनुभव 27 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में मैंने देखा- मुझे एक मोटा सा बहुत ऊँचा खम्बा जैसा दिखाई दिया। मैं उस ऊँचे खम्बे को गौरपूर्वक देखने लगा। खम्बा एक ही था मगर बाहरी ओर से खम्बा सात मंजिला जैसा दिखाई दे रहा था। मैंने बड़े आराम से गिनती करके कहा- यह तो सात मंजिल वाली इमारत जैसी है। उस खम्बे के ऊपरी सिरे पर कमल की अविकसित कली बहुत बड़ी लगी हुई थी या विद्यमान थी। मेरी दृष्टि उस अविकसित कली पर पड़ते ही वह धीरे-धीरे विकसित होने लगी। कुछ क्षणों बाद उस अविकसित कली ने बड़े फूल का स्वरूप ले लिया। इस फूल के ऊपर की ओर मध्य में कमल की एक और कली प्रकट होकर दिखाई देने लगी। हमारी दृष्टि जब इस अविकसित कली पर पड़ी, उसी समय यह कली भी धीरे-धीरे विकसित होने लगी और कुछ क्षणों में विकसित होकर पूरी तरह से फूल बन गयी। जब यह कली विकसित होने लगी थी तब इसके अन्दर से लाल रंग का सिन्दूर जैसा पाऊडर निकलने लगा। ऐसा लगता था मानो इस कली के अन्दर लाल रंग का सिन्दूर जैसा पाऊडर भरा हुआ है। जैसे-जैसे कली विकसित होती जा रही थी, वैसे-वैसे कली के अन्दर से सिन्दूर जैसा पाऊडर चारों तरफ नीचे की ओर फैल रहा था। कुछ क्षणों बाद फिर यह कली विकसित होकर बड़ा सुन्दर सा फूल बन गयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैंने अपनी तत्वज्ञान वाली पुस्तक में लिखा है कि ज्ञान की सात प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं। ये अवस्थाएँ ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्राकट्य के बाद ही शुरू होती हैं। चौथी अवस्था के बाद ही पाँचवी अवस्था वाले ज्ञान प्राप्त किये हुए साधक या अभ्यासी को जीवन्मुक्त कहना शुरू किया जाता है। पाँचवी से सातवीं अवस्था वाला ज्ञान प्राप्त किये अभ्यासी को जीवन्मुक्त योगी कहा जाता है। इसके बाद वाली अवस्था वाला अभ्यासी विदेह-मुक्त कहा जाता है। इन्हीं अवस्थाओं को योगी क्रमशः अभ्यास के द्वारा जानता व अनुभूति करता है। जिस पदार्थ को वह जान लेता है, फिर उसका अस्तित्व व प्रभाव उसके लिये नष्ट हुए के समान हो जाता है। अनुभव में दिखाई देने वाली सात मंजिल वाली इमारत के विषय में अभ्यास के द्वारा जैसे-जैसे क्रमशः साक्षात्कार होता जाता है वैसे-वैसे उस पदार्थ को दुबारा जानने की आवश्यकता नहीं होती है इसलिए उस अभ्यासी के लिये एक बार जाने हुए पदार्थ का अस्तित्व नष्ट हुए

के समान हो जाता है। मगर अन्य जीवों के लिए वह पदार्थ उपस्थित रहता है। इस अनुभव का अर्थ है- मैं भी अभ्यास के द्वारा इस सात मंजिल वाले ज्ञान को (सात पायदान वाले ज्ञान को) भविष्य में जान लूँगा। ऐसा तभी होगा जब अभ्यास करते हुए क्रमशः अपरा-प्रकृति के सम्पूर्ण पदार्थों को अथवा उन पदार्थों से निर्मित वस्तुओं का त्याग कर दूँगा।

सात्विक अहंकार

यह अनुभव 9 मई को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने थोड़ा-सा नीचे की ओर मनुष्य के सिर का ऊपरी भाग दिखाई दे रहा है। सिर के ऊपर अत्यन्त उज्जवल सफेद पारदर्शी जैसा सिर्फ नाग का फन स्थित है। सिर के ऊपर सफेद फन देखकर मैं चौंक पड़ा, क्योंकि ऐसे सफेद फन वाले नाग मैंने कभी नहीं देखे हैं। जिस सिर के ऊपर नाग का फन स्थित था, वह सिर मेरा ही था। दृश्य में ऐसा लगता था, मानो सिर के ऊपर नाग का फन निकल आया हो। उस फन के मुँह पर एक काली सी लाइन बनी हुई थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैं दूर से दृष्टा रूप में स्थित हुआ यह दृश्य देख रहा था। दृश्य में मेरा ही सिर मुझे दिखाई दे रहा था। ऐसा लगता था- मानो कोई मनुष्य बैठा हुआ साधना कर रहा है। अनुभव में सिर के ऊपर नाग का सफेद फन मेरे ही सात्विक अहंकार का स्वरूप है। कई वर्षों से हमारे चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो चुका है। यह ऋतम्भरा-प्रज्ञा चित्त पर स्थित अज्ञानता को धीरे-धीरे अभ्यासानुसार नष्ट करती रहती है, फिर उस स्थान पर ज्ञान का प्रकाश फैला देती है। इस प्रकार धीरे-धीरे क्रमशः चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैलता रहता है और चित्त पर अज्ञानता धीरे-धीरे अभ्यासानुसार कम होती रहती है। एक समय ऐसा भी आता है जब अभ्यासी के चित्त पर ज्ञान के प्रकाश की अधिकता हो जाती है तथा सत्वगुण की मात्रा ज्यादा हो जाती है तब तमोगुणी अहंकार का प्रभाव कम होने लगता है और सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य होने लगता है। ऐसा तभी होता है जब अभ्यास के द्वारा चित्त के प्रवाह का, ईश्वर उन्मुखता में निरन्तरता बनी रहती है। जब निरन्तरता टूट जाती है तब तमोगुणी अहंकार का प्रभाव चित्त पर बराबर बना रहता है। ऐसा तभी होता है जब अभ्यासी का अभ्यास कम होने लगता है तथा अभ्यासी संसार में किसी न किसी तरह से बहिर्मुख या लिप्त होने लगता है चाहे अभ्यासी स्थूल जगत में परोपकार के ही कार्य क्यों न करने लगा हो। मैंने भी जीवों के कल्याण के लिये साधकों का मार्गदर्शन कुछ वर्षों तक किया। जबकि

मुझे दिव्य शक्तियाँ बराबर मना करती रहीं कि अब आप मार्गदर्शन करना बन्द कर दीजिए, फिर भी मैं मार्गदर्शन करता रहा। इस प्रकार के कार्य करने से निरुद्धावस्था की अवधि कम होने लगती है तब व्युत्थान के संस्कार प्रकट होने लगते हैं। ऐसा सिर्फ उन्हीं अभ्यासियों के साथ होता है जिनका आखिरी जन्म है और उनके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हुए कुछ वर्ष बीत चुके हैं। जिनका आखिरी जन्म नहीं है, उनके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य नहीं होता है और न ही उनके चित्त पर सात्विक अहंकार का प्राकट्य होगा। ऐसे अभ्यासियों को समाज में सदैव परोपकार करते रहना चाहिए, तभी उनका कल्याण है।

सिंहासन

यह अनुभव 9 मई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने नीचे की ओर से ऊपर की ओर आकाश में धीरे-धीरे सोने का बना हुआ सिंहासन का ऊपरी भाग दिखाई दिया। सिंहासन धीरे-धीरे ऊपर की ओर आ रहा था। मैं उस सिंहासन को गौरपूर्वक देख रहा था। कुछ क्षणों बाद सिंहासन का स्वरूप मुझे पूर्ण रूप से दिखाई देने लगा। सोने का बना हुआ सिंहासन बहुत बड़े आकार वाला था तथा बहुत ही सुन्दर लग रहा था। कुछ क्षणों बाद वह सिंहासन ऊपर आकर हमारे सामने थोड़ी दूरी पर ठहर गया। अब मैं सिंहासन को देखकर प्रसन्न हो रहा था। मैं समझ रहा था कि यह सिंहासन हमारे लिये ही आकाश में प्रकट होकर आया है। कुछ क्षणों तक मैं उस सिंहासन को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- सिंहासन का अर्थ होता है- ऊँचे पद पर बैठने का विशेष प्रकार का आसन या राजगद्दी। राजा के आसन को भी सिंहासन कहते हैं, जो शक्ति और अधिकार का प्रतीक माना गया है। वैसे सिंहासन शब्द दो शब्दों को मिलाकर बना है। अनुभव में इस प्रकार सोने का ऊँचा सिंहासन दिखाई देने का अर्थ है- भविष्य में मैं ऊँचे पद (गुरू पद पर) बैठूँगा, यश और कीर्ति भी प्राप्त होगी अर्थात समाज में विशेषता को लेकर सम्मान मिलेगा।

झण्डा

यह अनुभव 9 मई को दोपहर ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मुझे सामने की ओर आकाश में बहुत ऊँचा बड़ा-सा एक झण्डा दिखाई दे रहा है। यह सम्पूर्ण दृश्य प्रकाश में दिखाई दे रहा था। चारों ओर सर्वत्र निर्मल आकाश था। झण्डा ऐसा लग रहा था मानो बहुत बड़ी विजय प्राप्त कर ली है अथवा बहुत बड़ी विजय प्राप्त करने वाला हूँ। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- झण्डा का अर्थ होता है- झण्डा गौरव और संप्रभुता को दर्शाता है। कभी-कभी विजय का भी प्रतीक होता है। अनुभव में झण्डा दिखाई देने का अर्थ है- भविष्य में अवश्य विजय को प्राप्त करूँगा। सम्भवता भविष्य में मैं अध्यात्म का प्रचार-प्रसार करूँगा तथा बहुत से साधकों को आध्यात्मिकता में उनकी सहायता करके आगे बढ़ाऊँगा। इसी कार्य की बुलन्दी पर पहुँचना है। इसलिए झण्डा ऊँचाई में फहरा रहा है।

सिर्फ एक ही ब्रह्म है दूसरा कोई नहीं है

यह जानकारी 9 मई को सायंकाल अनुभव में दी गयी। मैं कुछ दिनों से मंत्रों का जाप बहुत करता हूँ। प्राणायाम भी तीन-चार बार कठोरता से करता हूँ। ध्यानावस्था में आकाश से आवाज आयी- **"सिर्फ एक ही ब्रह्म है दूसरा कोई नहीं है।"** कुछ समय बाद फिर आकाश से आवाज आयी- **"योग का मार्गदर्शन करना अज्ञानता के अन्तर्गत आता है, इसलिए तुम मार्गदर्शन करना भविष्य में शीघ्र ही बन्द कर देना। इन साधकों का भी मार्गदर्शन करना बन्द करना होगा। तुम्हें पूर्ण रूप से ज्ञान में स्थित होना है।"**

अर्थ- यह जानकारी ध्यानावस्था में आकाशवाणी द्वारा दी गयी। मुझसे दो बातें कही गयीं। एक- ब्रह्म एक ही है दूसरा कोई नहीं है, दूसरी- योग के विषय का मार्गदर्शन करना अज्ञानता के अन्तर्गत आता है, इसलिए मार्गदर्शन करना बन्द कर देना। पूर्ण रूप से ज्ञान में स्थित होना है। यह तो सत्य है कि सिर्फ एक ही ब्रह्म है दूसरा कोई (तत्व) नहीं है। मैं भी यही मानता हूँ, इसलिए सम्पूर्ण संसार (अपरा-प्रकृति) का त्याग करना है, तभी ब्रह्म की प्राप्ति होगी। योग का मार्गदर्शन करना अज्ञानता के अंतर्गत आता है, क्योंकि अज्ञानता विज्ञानमय कोष तक रहती है और ज्ञान इससे आगे की अवस्था है। मुझे इसी में (ज्ञान में) स्थित

होना है इसलिए मेरा यह अंतिम जन्म हुआ है। भविष्य में कुछ समय बाद निश्चय ही मैं ज्ञान में स्थित हो जाऊँगा तथा साधकों का मार्गदर्शन करना भी बन्द करूँगा।

बहाउल्लाह जी से सम्पर्क

बहाउल्लाह जी बहाई धर्म के संस्थापक थे। इनका जन्म ईरान में हुआ था। इनका बचपन का नाम मिर्जा हुसैन अली था। इनके विषय में लेख मिलता है- उन्नीसवीं सदी में सभी धर्मों की एकता, मानवता और भाई-चारा व समानता का सन्देश दिया करते थे। इन्हें ईश्वर का प्रकाश माना जाता था। इन्होंने मानवजाति के लिए शांति और प्रेम का मार्ग दिखाया। बहाई धर्म वालों ने दिल्ली में नेहरू प्लेस के पास लोटस टेम्पल बनवाया हुआ है। बहुत से लोग लोटस टेम्पल को देखने जाते हैं। एक बार मैं भी कुछ साधकों के साथ लोटस टेम्पल देखने गया था, तब मैंने वहाँ पर ध्यान किया। ध्यान के समय मेरा सम्पर्क बहाई धर्म के संस्थापक से हुआ था। उन्होने ध्यानावस्था में मुझसे कुछ कहा था, मगर वो क्या कह रहे थे, मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा था क्योंकि वह जिस भाषा में बात कर रहे थे वह भाषा हमारी समझ में बिलकुल नहीं आ रही थी। मैंने उनसे कहा- "आप कौन हैं? आप क्या कह रहे हैं, हमारी समझ में नहीं आ रहा है"। मेरे द्वारा इस प्रकार कहने पर वह कुछ समय तक सोच मुद्रा में बने रहे, फिर उन्होंने बोलना शुरु किया। अबकी बार उनके कहे गये शब्द मुझे समझ में आ रहे थे क्योंकि वह उर्दू भाषा में बात कर रहे थे। कुछ शब्द समझ में नहीं आ रहे थे मगर ज्यादातर शब्द समझ में आ रहे थे। उनके द्वारा कहे गये शब्द मैं गौरपूर्वक सुन रहा था। बहाउल्लाह जी ने मुझसे बहुत बातें कही, मगर लिखते समय जो बातें याद आयी लिख रहा हूँ। उनके द्वारा कही गयी बहुत सी बातें भूल चुका हूँ।

बहाउल्लाह जी ने कहा- "आप पर आयी हुई विपत्ति अल्लाह ताला की मेहरबानी से सहन कर लेते हो। अगर हम पर भी ऐसी विपत्ति आयी होती, तो हम भी अशान्त हो जाते। इंशा अल्लाह आप तो धैर्यवान हैं, आप फिर मेरी जगह पर आइये, मैं आपका खैर-मक्दम करता हूँ।"

कुछ दिनों बाद उन्होंने फिर मुझे बुलाया और कहा- "आप हमारे यहाँ लोटस टेम्पल आइये, मैं आपका इंतजार कर रहा हूँ।" लगभग दो माह बाद मैं फिर अगस्त माह में जन्माष्टमी के दिन लोटस टेम्पल में गया था, तब उन्होंने फिर मुझसे कुछ कहा था। अबकी बार जो उन्होंने कहा था उसे थोड़ी देर बाद लिख लिया था। अबकी बार मेरे साथ एक साधक और एक साधिका भी थी।

जब मैं लोटस टेम्पल के अन्दर गया तब उन्होंने मुझसे सम्पर्क किया। फिर बहाउल्लाह जी मुझसे बोले- "तुम समाज के ऐसे उभरे हुए पुरुष हो जिसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है। ऐ नेक इन्सान! तुम समाज में ऐसी नेकी फैलाओ कि अल्लाह भी खुश हो जाए। ऐ खुदा के बन्दे! तुम खुदा के ही स्वरूप हो। हमें, हमारे साथ, हमारा न होने पर भी, हम सब के साथ ही रहे हो। परवरदिगार का रहम तुम्हारे साथ हो। मैं जानता हूँ तुम कौन हो, अच्छी तरह से जानता हूँ। हमारा वतन, हमारी कौम ऐसे नुमाइन्दे को न पा सकी। अच्छा हुआ तुम आये, आते रहिये, मन प्रसन्न होता है। नूर के नूर को नमन। पुरुष की पुरुषता ही पुरुषता में हो, वह पुरुष है, ऐसे पुरुष तुम हो। चुपचाप जीना पुरुषता नहीं है, संघर्ष में जीना पुरुषता नहीं, सेवा करना भी पुरुषता नहीं है। पुरुष वह है जो पुरुषत्व को प्राप्त होकर भी पुरुष बनकर रहे। ये लोग तुम्हें नहीं समझ पा रहे हैं, और न ही तुम्हें समझ पायेंगे। पुरुषत्व को प्राप्त होकर भी तू अपने आप में है, यही तेरी श्रेष्ठता है। तुम्हारा कोई इन्तजार कर रहा है, अब उसके पास जाओ। मैं फिर तुम्हें बुलाऊंगा।

इस प्रकार बहाउल्लाह जी ने दो-तीन बार और मुझे बुलाया, तब भी इसी प्रकार की बातें उनसे हुई थी। उन सब बातों को यहाँ पर नहीं लिख रहा हूँ।

बन जाओ इसके विधाता

यह जानकारी 13 सितम्बर को ध्यानावस्था में दी गयी। मैं ध्यान कर रहा था तभी आकाश से आवाज सुनाई दी- "अब समय आ गया है कि इस सृष्टि से ऊपर उठ जाओ। तुम यहाँ पर क्या ढूँढ रहे हो, किसे ढूँढ रहे हो, तुम्हारा यहाँ कोई नहीं है, तुम्हारा यहाँ कुछ नहीं है।" इन शब्दों को सुनकर मैं बोला- "इसका अर्थ है कि मैं यहाँ पर मार्गदर्शन करना छोड़ दूँ"। उत्तर- "हाँ। तुम परम श्रेष्ठ हो, सम्पूर्ण सृष्टि को अपने आगोश में समेट लो, बन जाओ इस सृष्टि के विधाता।"

अर्थ- "साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द करके अपने स्वरूप में स्थित हो जाओ," इस अनुभव का अर्थ है। मैं साधकों को जो अभ्यास करवाता हूँ, मार्गदर्शन करता हूँ उसे बन्द करो, प्रकृति स्वयं किसी दूसरे मार्गदर्शक की व्यवस्था करेगी।

गौतम बुद्ध जी

भगवान गौतम बुद्ध जी से 9 अक्टूबर को ध्यानावस्था में बात हुई। मैंने गौतम बुद्ध जी से ज्ञान प्राप्ति के विषय में प्रश्न किया था, क्योंकि मुझे लगभग 13 वर्ष पूर्व से ज्ञान प्राप्ति की शुरुआत हुई थी। भगवान गौतम बुद्ध जी ने बताया- "जब ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है उसी समय से ज्ञान प्राप्ति की शुरुआत हो जाती है। ज्ञान प्राप्त एक साथ नहीं होता है, बल्कि क्रमशः धीरे-धीरे अभ्यास के अनुसार बढ़ता रहता है, इसी अनुसार अज्ञान धीरे-धीरे कम होता रहता है। अन्त में पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाने पर आपके नजदीकी और शुभचिंतक लोग छोड़कर जाने लगते हैं अथवा सभी को त्याग दिया जाता है। तब समझना कि पूर्णता की अवस्था प्राप्त होने वाली है। फिर कुछ समय बाद स्थूल शरीर का त्याग कर देना।" भगवान गौतम बुद्ध जी ने मुझे बहुत सी बातें बताई थी, मगर अन्त में जो याद रहा सिर्फ उन्हीं बातों को लिखा है।

आदिशक्ति का अवतरण

यह अनुभव 19 नवम्बर को शाम 6:00 बजे आया। ध्यानावस्था में आवाज आयी- "परम सिद्ध सिद्धेश्वरी आदिशक्ति अवतरित हो रही है।" आकाशवाणी सुनकर मैं चौंक गया कि ये कैसे शब्द हैं? तभी ऐसा आभास हुआ जैसे ऊपर अंतरिक्ष से निर्मल पारदर्शी प्रवाह नीचे की ओर आ रहा है। यह प्रवाह सहस्त्रार चक्र में ऊपरी ओर से अन्दर प्रवेश कर गया। फिर कुछ क्षणों बाद सहस्त्रार चक्र के अन्दर से आवाज आयी- "पुत्र, मैं तुम्हारी माँ, सिद्धों की दिव्य दृष्टि अगम्य ईश्वरीय शक्ति हूँ, वैसे सभी प्राणी हमारे ही पुत्र हैं, मगर विशेषता वाला ही हमारा पुत्र कहलाता है।" आदिशक्ति फिर बोली- "हमारा संसार तुम्हारा ही स्वरूप है। गौरपूर्वक देखो, तुम सभी प्राणियों में व्याप्त हो, ये सब तुम्हारे ही शरीर हैं, फिर किसी प्राणी द्वारा किए गए व्यवहार से दु:ख कैसा। हे पुत्र! सिद्धों के लिये अगम्य, मैं तुम्हारे अन्दर स्थित हूँ, मैं परम शान्ति में स्थित हूँ। तुम्हारा जो नाश हो रहा है वह हो जाने दो।"

आदिशक्ति की आवाज जब आनी बन्द हो गयी, तब मुझे दिखाई दिया तथा अनुभूति हुई कि जो प्रवाह हमारे सहस्त्रार चक्र में प्रवेश किया था, वह प्रवाह हमारे हृदय में स्थित हो गया है। आदिशक्ति का कोई स्वरूप नहीं था, सिर्फ शुद्ध निर्मल आकाश तत्व था। इस आकाश तत्व का स्वरूप तब दिखाई दिया

था, जब इसका प्रवाह ऊपर अंतरिक्ष से हमारी ओर आ रहा था, फिर हमारे सहस्त्रार चक्र के अन्दर समा गया। मगर जो आवाज सुनाई दे रही थी, वह आवाज आकाश के अन्दर से स्त्री की आवाज आ रही थी।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव ध्यानावस्था में 21 नवम्बर को आया- सायंकाल के समय मैं ध्यानावस्था में बैठा हुआ था। उस समय दिखाई दिया- आकाश में काले-काले बादल छाये हुए हैं। वह बादल मेरे देखते ही टुकड़े-टुकड़े हो गये। पूर्व दिशा की ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो गया है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा की प्रकाश-किरण हमारे चेहरे पर पड़ रही है। कुछ क्षणों तक मैं ऋतम्भरा-प्रज्ञा को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन अबकी बार बहुत दिनों बाद हुआ है। काले बादल तमोगुणी कर्माशय के प्रतीक हैं। एक-डेढ़ वर्ष से मैं कई साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। उनके कुछ तमोगुणी कर्म हमारे चित्त पर आ गये, इसीलिए तमोगुणी कर्म चित्त पर काले बादलों के रूप में दिखाई दे रहे थे। ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रभाव से सब तमोगुणी कर्म टुकड़े-टुकड़े हो गये। कुछ समय बाद ये तमोगुणी कर्म मेरे चित्त पर नष्ट हो जायेंगे क्योंकि ये कर्म मेरे नहीं है, बल्कि कुछ साधकों के कर्म किये जाने के बाद उनके चित्त पर कर्माशय के रूप में विद्यमान हो गये थे। मेरे द्वारा साधकों पर शक्तिपात किये जाने पर साधकों के कुछ तमोगुणी कर्म हमारे चित्त के अन्दर आ गये। अब वही कर्म ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रभाव से मेरे चित्त पर नष्ट हो रहे हैं।

साधकों को स्वयं अभ्यास करने दो

ये जानकारी ध्यानावस्था में 23 नवम्बर को दी गयी। ध्यानावस्था में आकाश के अन्दर से ये ध्वनि सुनाई दी- **"इस संसार में कोई भी पदार्थ तुम्हारा नहीं है। किसी साधक की साधना आगे की ओर बढ़ जाये अर्थात साधक की आध्यात्मिक उन्नति हो जाये, यह सोचने का तुम्हारा कार्य नहीं है। जो हो रहा है उसे स्वयं होने दो। साधक के अभ्यास में हस्तक्षेप मत करो।"** फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया।

अर्थ- मैं साधकों का मार्गदर्शन करते समय साधकों पर शक्तिपात करता रहता हूँ तथा उसकी आध्यात्मिक अवस्था आगे की ओर बढ़ाने का प्रयास करता रहता हूँ। साधकों को अपने अभ्यास के बल पर आगे की ओर बढ़ने देना चाहिये, मगर मैं शक्तिपात करके साधकों के कर्मों का नाश करता रहता हूँ। जो अवस्था साधकों को कई वर्षों तक अभ्यास करने के बाद प्राप्त होनी चाहिए, वह अवस्था शक्तिपात करके योगबल के प्रभाव से साधक को शीघ्र निकट भविष्य में अथवा तुरन्त प्राप्त करा देता हूँ। इससे साधक के चित्त पर स्थित तमोगुणी कर्म तथा अन्य प्रकार के कर्म मुझे धारण करने पड़ते हैं अथवा साधकों के कर्म स्वयं मेरे अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। जो कर्म साधक को कुछ महीनों व सालों में भोग कर नष्ट करने चाहिये इन कर्मों को मैं अपने योगबल के प्रभाव से तुरन्त नष्ट कर देता हूँ अथवा उन कर्मों को मैं धारण कर लेता हूँ। जो अवस्था साधक को कठोर अभ्यास के द्वारा पाँच-दस साल में प्राप्त होनी चाहिए, वह तुरन्त प्राप्त करा देता हूँ। इससे प्रकृति की व्यवस्था में सीधा हस्तक्षेप होता है, इसलिए प्रकृति व दिव्य शक्तियाँ नाराज हो जाती हैं। मैं साधकों को कल्याण भाव से, आगे की आध्यात्मिक अवस्था प्राप्त करा देता हूँ। इसीलिये मुझसे कहा जाता है- उन्हें खुद अभ्यास करने दो।

अहंकार ने मुँह से पैर को पकड़ा

यह अनुभव 24 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- एक नाग ने मेरे बांये पैर के निचले भाग को मुँह खोलकर जोर से पकड़ लिया। नाग का शरीर बड़ा था, इसलिए उस नाग का मुँह भी बहुत बड़ा था। नाग अपने मुँह से पिंडली का निचला भाग अर्थात एड़ी से लगभग 5 इंच ऊपर का क्षेत्र पकड़े हुए था। मैंने अपनी इच्छाशक्ति से एक विशेष प्रकार के धारदार हथियार से नाग की गर्दन काट दी। तभी अनुभव में दिखाई देने वाले दोनों पैरों के ऊपर वाला क्षेत्र दिखाई दिया। पैर के ऊपरी भाग को देखते ही मैं चौंक गया क्योंकि मैं पैरों के सहारे शरीर के ऊपरी भाग की ओर देखता जा रहा था, तब मुझे दिखाई दिया- ये पैर तो भगवान शंकर जी के पैर हैं, भगवान शंकर जी खड़े हुए हैं, उन्ही का पैर नाग पकड़े हुए है। भगवान शंकर जी दाहिने हाथ में त्रिशूल पकड़े हुए हैं, उनकी लम्बी-लम्बी कुछ जटाएँ नीचे की ओर कमर तक लटकी हुई हैं, सिर के ऊपर छोटा सा बालों का जूड़ा लगा हुआ है। भगवान शंकर जी भी कौतूहल से उस पैर को देख रहे हैं, जिस पैर को नाग पकड़े हुए है। अब हमारी दृष्टि पैर के निचले भाग की ओर गयी। नाग अब भी अपने मुँह से पैर को पकड़े हुए था। नाग का मुँह काफी मोटा दिखाई दे रहा था। नाग का गर्दन से कटा हुआ धड़ वही पर पड़ा हुआ था। मगर उसी समय एक आश्चर्यजनक बात हो गयी। मुँह की ओर

कटे हुए भाग से लगभग 6 इंच लम्बा काले रंग का पतला सा दूसरा धड़ प्रकट हो गया, जबकि पहले वाला धड़ काफी मोटा व लम्बा सा था, वहीं मृत पड़ा हुआ था, यह दृश्य मैं दूर से देख रहा था। पहले मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था- नाग मेरा ही बांया पैर पकड़े था। जब मैंने नाग की गर्दन काट दी, इसके बाद मुझे भगवान शंकर जी के पैर दिखाई देने लगे।

अर्थ- यह अनुभव हमारे लिए बहुत श्रेष्ठ है। इस अनुभव में जो नाग पैर की पिंडली को मुँह से दबाए हुए है वह नाग अहंकार का स्वरूप है। अनुभव में मैं स्पष्ट देख रहा था- एक नाग मेरे बांये पैर को अपने मुँह से दबाए हुए था, लेकिन कुछ क्षणों बाद देखा- वही नाग भगवान शंकर जी के बांये पैर को पकड़े हुए है। बड़े आश्चर्य की ये बात थी कि मेरे पैर की जगह भगवान शंकर जी का पैर दिखाई दे रहा था। क्या मैं और भगवान शंकर जी एक दूसरे के अन्दर समाए हुए हैं? मैं दृष्टा रूप से भी दूर से देख रहा हूँ। अहंकार के शरीर को काट कर अलग नहीं किया जा सकता है इसीलिए उसका धड़ (शरीर) दूसरा प्रकट हो गया, मगर छोटे स्वरूप में प्रकट हुआ था। इस अनुभव का अर्थ है- अहंकार का प्रभाव सिर्फ पैर के निचले भाग में ही सीमित है। अहंकार का प्रभाव सम्पूर्ण शरीर पर नहीं है। ऐसा ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा अज्ञानता नष्ट होने पर ज्ञान का प्रकाश चित्त पर फैलने के कारण हुआ है। अज्ञान और तमोगुण की मात्रा घटने के कारण तमोगुणी अहंकार का प्रभाव घट रहा है।

अपने मार्गदर्शन में

यह अनुभव भी 24 नवम्बर को आया था। ध्यानावस्था में किसी की आवाज सुनाई दी- "हे योगी पुत्र, अपने मार्गदर्शन में कुछ लोगों को और शामिल कर लो"। इस आवाज को सुनकर मैंने सोचा- यह कौन कह रहा है। तब मैंने पूछा- आप कौन हैं, आपका नाम क्या है? मेरे प्रश्न के उत्तर में आवाज सुनाई दी- "ऐसा समझो मैं तुम्हारा पिता हूँ।" उसने अपना परिचय स्पष्ट नहीं दिया।

आजकल मैं सिर्फ पाँच साधकों को योग सिखाता हूँ। ज्यादा साधकों को योग सिखाने की इच्छा भी नहीं है। अब मैं सोचूंगा फिर निर्णय करूँगा कि मुझे और साधकों को भी योग सिखाना है क्या?

हमारे लोक आ जाना

26 नवम्बर को मैं ध्यान कर रहा था तब ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी। यह आवाज ऊपर की ओर आकाश से आ रही थी- "इतने ..... वर्ष बाद हमारे लोक आ जाना, तब तक आप भूलोक पर कठोर अभ्यास करो।"

मुझे आकाश वाणी ने समय बताया था कि इतने वर्ष बाद हमारे लोक में आ जाना, मगर मैं यहाँ पर उन वर्षों की संख्या नहीं लिख रहा हूँ क्योंकि यह लिखना उचित नहीं समझता हूँ कि कितने वर्षों बाद स्थूल शरीर को त्यागना है। मैं ऐसा अनुमान लगा रहा हूँ- यह ध्वनि आकाश के ऊपरी क्षेत्र से आयी थी, तो यह सन्देश ईश्वर के ओर से आया होगा क्योंकि स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात ईश्वर के लोक में ही जाना है। तत्वज्ञान से युक्त योगी स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात ईश्वर के लोक (परा-प्रकृति) में ही जाते हैं।

चित्त-बहा नाड़ी

यह अनुभव जल्दी-जल्दी तीन-चार बार आया। 25 नवम्बर को शाम के समय यह अनुभव आया- संकरी सी बहुत लम्बी सुरंग सी है। उसके अन्दर का दूर-दूर तक दिखाई दे रहा है। उसके अन्दर की दीवारें काले रंग के पदार्थ से युक्त हैं अर्थात सुरंगनुमा जगह अन्दर से काले रंग की दिखाई दे रही है। मैंने अपने आपको इसी सुरंगनुमा जगह के अन्दर खड़ा पाया।

कुछ दिनों पूर्व मैंने देखा था- मैं किसी नाड़ी के अन्दर प्रवेश कर गया हूँ। उस नाड़ी के अन्दर का मार्ग बन्द है, तभी मैं इच्छा शक्ति के द्वारा उस नाड़ी से बाहर आ गया। तब मैंने देखा- नाड़ी के बाहर आखिरी भाग से एक-एक बूँद करके पानी की बूँद निकल रही है और वह पानी की बूँद नीचे की ओर टपक रही है। वही बूँद आगे चलकर नदी का रूप धारण कर लेती है।

अर्थ- इस नाड़ी का नाम चित्त-बहा नाड़ी कहा जाता है क्योंकि इसी नाड़ी के अन्दर से वृत्तियाँ बाहर निकल रही होती हैं। वही वृत्तियाँ बाहर संसार का रूप धारण कर रही हैं। इससे चित्त बहा करता है इसलिए इसको चित्त-बहा नाड़ी कहा गया है। अभी यह हमारे लिए यह नाड़ी बन्द है मगर जब अभ्यास के द्वारा खुल जायेगी, इस नाड़ी का हमारे लिए खुलना आवश्यक है, फिर चित्त का बहाव रुक जायेगा। तब

हमारे लिए संसार सदैव के लिए नष्ट हुए के समान जैसा हो जायेगा। सुना है- बहुत से उच्च कोटि के योगी इस नाड़ी का सिद्धि के लिए प्रयोग करते हैं। ऐसा सभी योगी नहीं कर सकते है।

परम् मम्

यह अनुभव दोपहर को 28 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया। अनुभव में मैं सहस्त्रदल कमल (सहस्त्रार चक्र में) के ऊपर बैठा हुआ सामने की ओर देख रहा था। उसी समय मैं स्वयं ही अपने आप कहने लगा- परम् मम्, परम् मम्, परम् मम्। मैं कुछ क्षणों तक अपने आप यही शब्द बोले जा रहा था।

अर्थ- यह शब्द स्वयं मैं अपने आप के लिए कह रहा था। परम् मम् का अर्थ होता है "सर्वोच्च, सर्वोत्तम, सबसे ऊँचा, अन्तिम, श्रेष्ठ, उत्तम। यह उच्चतम स्तर को दर्शाता है। इसका उपयोग अध्यात्म में ईश्वर या परमेश्वर के सन्दर्भ में किया जाता है। इसका अर्थ है- सबसे ऊँची सत्ता, शाश्वत, जो हमेशा रहने वाला हो। अर्थात परम् का अर्थ किसी भी चीज का उच्चतम, अंतिम या सर्वोच्च होना।

तू चतुर्थम है

मैं और मेरे साथ एक साधक 5 दिसम्बर 2013 को आगरा (उ०प्र०) में दयालबाग देखने गये। पहले दयालबाग के अन्दर की सुन्दर बनावट देखी, फिर वहीं पर मंदिर के सामने बैठकर ध्यान करने लगे। हमारा ध्यान गहरा लगा हुआ था तभी ध्यानावस्था में मुझे किसी की आवाज जोर से गूँजती हुई सुनाई दी- "हे सिद्धेश्वर, तू चतुर्थम है, तू षष्टम है"। उसी समय वहाँ के नौकर ने आकर ध्यान से मुझे उठा दिया और बोला- "यहाँ मत बैठो, बाहर जाओ"। मेरा ध्यान टूट गया। मुझे इस नौकर की भाषा अच्छी नहीं लगी, मगर मैं कुछ बोला नहीं, उठकर बाहर आ गया। वह नौकर क्या जाने- "मैं कौन हूँ, क्या कर रहा हूँ"? बाहर आकर थोड़ी देर तक बैठा रहा, फिर चल दिया। मुझे जो शब्द ध्यानावस्था में कहे गये थे- उनमें से कुछ शब्द याद रहे, जो याद रहे वो लिख दिया है। शायद अभी कुछ और भी ध्यानावस्था में कहा जाता, मगर नौकर रूपी अवरोध आ गया।

अर्थ- चतुर्थम- चतुर्थम शब्द का अर्थ मैंने इस प्रकार लगाया। "चौथे प्रकार का पुरुष", अर्थात संसार में तीन प्रकार के पुरुष होते हैं। इन तीन प्रकार से परे चौथे प्रकार का भी पुरुष होता है। ऐसे चौथे प्रकार के पुरुष इस संसार में विरले ही होते हैं।

1- पहले प्रकार का पुरुष वह होता है जो जिसे देता है वह उसे देता है। जैसे- दुकानदार और ग्राहक। ग्राहक दुकानदार को रूपये देता है तथा दुकानदार उन रूपयों के बदले उसे वस्तु देता है। संसार में ज्यादातर मनुष्य ऐसे ही होते हैं। व्यवहार के बदले व्यवहार की इच्छा रखते हैं।

2- दूसरे प्रकार के वह मनुष्य हैं जो सिर्फ देते ही रहते हैं लेते नहीं हैं। जैसे- पिता और सन्त पुरुष। पिता अपने पुत्र को सदैव देता ही रहता है। इसी प्रकार सन्त पुरुष सिर्फ देते ही रहते हैं सांसारियों को, बदले में कुछ भी नहीं लेते हैं।

3- तीसरे प्रकार के पुरुषों में योगी व भक्त आदि आते हैं, वे संसार से किसी प्रकार की इच्छा न रखते हुए सिर्फ ईश्वर को ही भजते रहते हैं।

4- चौथे प्रकार के वह पुरुष होते हैं जो आप्तकाम और आत्माराम होते हैं- अर्थात किसी प्रकार की इच्छा नहीं रखते हैं तथा अपनी ही आत्मा में रमण करते रहते हैं। ऐसे पुरुष संसार में विरले ही होते हैं। संसारी पुरुष ऐसे पुरुषों की बराबरी नहीं कर सकता है। ऐसा पुरुष पूर्ण होता है।

षष्टम- इस शब्द के दो प्रकार के अर्थ लगाये जा सकते हैं। एक- जिसका अर्थ होता है "पूर्णब्रह्म"। कहीं-कहीं पर वर्णन मिलता है कि शरीर पाँच प्रकार के होते हैं, छटवाँ ब्रह्म होता है। इन शरीरों के नाम इस प्रकार से हैं:- 1- स्थूल शरीर, 2- सूक्ष्म शरीर, 3- कारण शरीर, 4- महाकारण शरीर, 5- अति महाकारण शरीर, 6- निर्गुण ब्रह्म। वैसे लेखों में चार प्रकार के शरीर का वर्णन मिलता है।

दूसरा अर्थ है- छः प्रकार की ऋतुओं वाली प्रकृति। अर्थात इस सृष्टि को चलाने वाले। अर्थात प्रकृति भी तुम हो, ब्रह्म भी तुम हो अर्थात "पूर्णब्रह्म हो"।

सिद्धेश्वर- सिद्धों के ईश्वर अर्थात ईश्वर।

उस सन्त पुरुष ने हमारी अतिशयोक्ति करके स्तुति कर दी। यही महापुरुषों का स्वभाव होता है कि वह दूसरों को अपने से श्रेष्ठ ही बताते रहते हैं।

आगरा के दयाल बाग में जहाँ मैं गया था, वहाँ बहुत सुन्दर मन्दिर कई वर्षों से बन रहा है। यह संस्था राधा-स्वामी वालों की है। इसका मुख्य आश्रम ब्यास में है। ब्यास पंजाब का अमृतसर के पास जिला है। मेरी बात राधा स्वामी संस्था के संस्थापक से हो रही थी। ये संस्था एक आध्यात्मिक संस्था है। इस संस्था के उत्तर भारत में बहुत से अनुयायी हैं।

अहंकार की अवस्था में

यह अनुभव 14 दिसम्बर का है। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मनुष्य का बहुत बड़ा सिर है। मैं सिर के ऊपरी भाग में रहता हूँ। उसी सिर के ऊपरी भाग में ऊपर की ओर गोलाकार रूप में बड़ा सा छिद्र है। उस छिद्र के उस पार अत्यन्त निर्मल आकाश है, ऐसा मुझे छिद्र के अन्दर से ऊपर की ओर देखने पर मालूम हुआ। एक बार ध्यानावस्था में छिद्र के उस पार चला गया। छिद्र के उस पार सिर्फ निर्मल उज्ज्वल आकाश ही आकाश है। ऐसा मैंने वहाँ जाकर देखा था, फिर कुछ समय बाद वापस आ गया। वापस आकर मैं सिर के ऊपरी भाग में ही उपस्थित बना रहा। कुछ क्षणों बाद मैं फिर ऊपर की ओर दृष्टि करके सिर के ऊपरी भाग में ऊपर की ओर विद्यमान गोलाकार छिद्र को देखने लगा तथा छिद्र के उस पार का आकाश दिखाई देने लगा। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैं सिर के ऊपरी भाग में उपस्थित हूँ। सिर का ऊपरी भाग ब्रह्मरंध्र के अन्दर का क्षेत्र होता है। यह क्षेत्र अहंकार की अवस्था वाला होता है। मैं पहले अपनी पुस्तकों में तथा वीडियो में बता चुका हूँ कि जब साधक का ब्रह्मरंध्र खुल जाता है तब उसकी योग्यता अहंकार के अंतर्गत आ जाती है। ब्रह्मरंध्र के पहले का क्षेत्र तन्मात्राओं के अंतर्गत आता है, इसीलिये ब्रह्मरंध्र खुलने से पहले अभ्यासी को ध्यानावस्था में कई बार भिन्न-भिन्न तरह के नाद सुनाई देते हैं। ये नाद तन्मात्राओं द्वारा उत्पन्न होते हैं। सामान्य अवस्था में भी मेरी अवस्था अहंकार के अंतर्गत रहती है जबकि बहुत से साधकों को कई वर्षों के अभ्यास के बाद, उनमें से कुछ ही साधकों की अवस्था अहंकार तक आ पाती है। सिर के ऊपरी ओर का गोलाकार बड़ा सा छिद्र जो दिखाई दे रहा था वह **शिवछिद्र** था। **शिवछिद्र** के उस पार का क्षेत्र परा-प्रकृति का क्षेत्र है इसके विषय में आगे वर्णन किया जायेगा। यह छिद्र सभी साधकों का नहीं खुल सकता है। सिर्फ उन्हीं साधकों का **शिवछिद्र** खुलता है जिनका वर्तमान जन्म आखिरी जन्म होता है।

आखिरी जन्म लेने से पहले ही प्रकृति सम्पूर्ण व्यवस्था कर देती है। जैसे उनके माता-पिता का चयन पहले से ही प्रकृति कर देती है जिससे अभ्यासी के कर्मों का नाश हो सके, उसका चित्त शुद्ध हो सके और उसके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो सके। ऐसे अभ्यासी को घोर क्लेशात्मक कर्म भोगने पड़ते हैं, इससे उसे संसार का विषय सम्बंधी ज्ञान होता है, तथा चित्त पर स्थित अज्ञानता का धीरे-धीरे अभ्यासानुसार नाश होता रहता है। अन्त में स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात ईश्वर के लोक में चला जाता है।

कुण्डलिनी द्वारा संसार का बीज नष्ट करना

यह अनुभव 22 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। अत्यन्त स्वच्छ निर्मल तेजस्वी क्षेत्र वाले पाइपनुमा जगह के अन्दर मैं तेजी से ऊपर की ओर चला जा रहा हूँ। इस पाइपनुमा जगह की दीवार अत्यन्त सफेद प्रकाश से प्रकाशित है। मैं ऊपर की ओर बड़े आराम से चला जा रहा हूँ। उस सँकरी सी जगह में मुझे कोई परेशानी नहीं हो रही है। उसी समय मैंने देखा- मेरी जगह पर एक नाग ऊपर की ओर चढ़ रहा है। मैं दूर से यह देख रहा हूँ। नाग का मुँह और मुँह के पास का थोड़ा सा शरीर मुझे दिखाई दे रहा था। नाग को ऊपर की ओर चढ़ने में थोड़ी सी परेशानी सी हो रही है। ऐसा लगता था- मानो नाग को ऊपर चढ़ने के लिए अधिक जोर लगाना पड़ रहा है। तभी दिखाई दिया- उस प्रकाशित जगह के ऊपरी भाग में आगे की ओर कुछ वस्तु है इसलिये आगे का मार्ग अवरुद्ध सा है, मगर आश्चर्य की बात यह है उस नाग ने अपना मुँह बलपूर्वक उस वस्तु के अन्दर घुसेड़ दिया, जो वस्तु उस मार्ग में अवरोध के रूप में स्थित थी। नाग ने ऊपर की ओर उस वस्तु के अन्दर मुँह घुसेड़ कर वह वस्तु नीचे की ओर गिरा दी। जब वह वस्तु नीचे की ओर गिरने लगी, तब स्पष्ट दिखाई दिया- वह वस्तु छोटे-छोटे बीजों का एक पिण्ड सा है, जैसे टमाटर के बीज एक जगह पिण्ड रूप में स्थित हों। इसके बाद मुझे उस पाइपनुमा मार्ग के बाहर का दृश्य दिखाई देने लगा। मैं देख रहा था- निर्मल आकाश में स्वच्छ सफेद प्रकाशित पाइप सा स्थित है। मैं उस पाइपनुमा जगह का ऊपरी आखिरी भाग देख रहा था, उसका ऊपरी सिरा आकाश के मध्य में स्थित था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में पहले दिखाई दिया- उस पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर मैं ही हूँ, और तेजी से ऊपर की ओर चला जा रहा हूँ। मुझे ऊपर की ओर जाते समय किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं हो रही थी। कुछ क्षणों बाद देखा- उस पाइपनुमा जगह के अन्दर एक नाग ऊपर की ओर चढ़ता चला जा रहा है।

अनुभव में दिखाई देने वाला नाग स्वयं कुण्डलिनी शक्ति है। वह पाइपनुमा जगह पाइप नहीं है बल्कि एक नाड़ी है। इसी नाड़ी के अन्दर कुण्डलिनी उर्ध्व होकर गमन करती है। इस नाड़ी को सुषुम्ना-नाड़ी कहते हैं। शास्त्रों में वर्णन मिलता है कि सुषुम्ना के अन्दर भी एक नाड़ी होती है, उसे ब्राह्मी या ब्रह्म नाड़ी कहते हैं। सुषुम्ना नाड़ी मूलाधार से लेकर सहस्त्रार चक्र तक जाती है। कुण्डलिनी शक्ति जब सुषुम्ना नाड़ी के अन्दर से गमन करती हुई ऊपर तक पहुँचती है तब अभ्यासी को उच्च चेतना, संतुलन और आनन्द की अवस्था प्राप्त होती है।

अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति ने संसार का बीज, जो पिण्ड रूप में सुषुम्ना नाड़ी के ऊपरी भाग में विद्यमान थे, उन्हें नीचे की ओर फेंक दिये ताकि भोग कर नष्ट किये जा सकें। ये बीज के रूप में कर्माशय ही होते हैं, इन कर्माशयों को अभ्यास करते हुए भोग कर नष्ट करने होंगे। कर्माशयों को भोगने के बाद ईश्वर के लोक का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा। इससे अभ्यासी को संसार में जन्म ग्रहण करने के लिये नहीं आना पड़ेगा क्योंकि जन्म ग्रहण करने का कोई कारण नहीं रह जाता है।

दिव्य शक्तियों से युक्त हो जाओगे

मुझे 22 दिसम्बर को रात्रि के समय ध्यानावस्था में बताया गया। ध्यानावस्था में सुनाई दिया- "हे योगी पुत्र, दु:खी मत होओ, तुम शीघ्र ही दिव्य शक्तियों से युक्त हो जाओगे।" मैं ध्यानावस्था में इन शब्दों को सुनकर चौंक पड़ा तथा उस समय ये शब्द सुनकर प्रसन्नता भी हुई तथा सोचने लगा कि शायद मुझे फिर कुण्डलिनी शक्ति वाला वरदान प्राप्त हो जायेगा।

जैसा मुझे ध्यानावस्था में बताया गया- भविष्य में दिव्य शक्तियों से युक्त हो जाओगे। ऐसा समय कब आयेग, यह तो मालूम नहीं है। मगर इतना विश्वास अवश्य है कि ऐसा समय अवश्य आयेगा, जब मैं दिव्य शक्तियों से युक्त हो जाऊँगा।

सातों चक्रों का दिखाई देना

यह अनुभव 22 दिसम्बर को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने की ओर आकाश में एक चक्र देख रहा हूँ। यह चक्र पूर्ण रूप से विकसित है। उसी समय उस चक्र के नीचे सीध में

थोड़ी-थोड़ी दूरी पर कुछ और चक्र दिखाई दिये। मैंने गौरपूर्वक उन चक्रों को देखा और उनकी गिनती भी की। वे सभी चक्र गिनती में सात थे। वो सातों चक्र पूर्ण रूप से विकसित थे और सूक्ष्म सफेद धागे जैसी एक लाइन से आपस में जुड़े हुए थे अर्थात एक सूक्ष्म सफेद धागे जैसी लाइन नीचे वाले चक्र से लेकर ऊपर वाले चक्र तक सभी को स्पर्श करती हुई गयी थी। इन सभी चक्रों के दायी ओर और बायी ओर सफेद धागे जैसी पतली लाइने भी विद्यमान थीं। ऐसा भी दिखाई दे रहा था- सबसे ऊपर का चक्र नीचे के सभी चक्रों को प्रभावित कर रहा है, अर्थात ऐसा लगता था सबसे ऊपर चक्र के अधीन सभी निचले चक्र हैं। ये सम्पूर्ण दृश्य सामने आकाश में दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों बाद वे सभी सातों चक्र एक पारदर्शी जैसे मानव आकार के अन्दर दिखाई देने लगे। वह मानव आकार बैठा हुआ था। उस पारदर्शी जैसे मानव आकार के शरीर में कुछ प्रमुख नाड़ियाँ भी दिखाई दे रही थीं। ऐसा लग रहा था मानो वह ध्यान मुद्रा में बैठा हुआ है।

अर्थ- अनुभव में बैठा हुआ पारदर्शी जैसा मानव आकार हमारा ही सूक्ष्म शरीर था। वो विकसित सातों चक्र हमारे शरीर के अन्दर के विकसित चक्र हैं। सूक्ष्म धागे जैसी लाइन सुषुम्ना नाड़ी है। सुषुम्ना नाड़ी सभी चक्रों को स्पर्श करती हुई प्रभावित करती रहती है। चक्रों के दांये और बांये ओर की दोनों नाड़ियाँ सूर्य-नाड़ी और चन्द्र-नाड़ी हैं। ध्यानावस्था में सातों चक्र व तीनों प्रमुख नाड़ियाँ मेरे ही शरीर के अन्दर की दिखाई दे रही थीं।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के ऊपर खड़े होना

यह अनुभव 23 दिसम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मुझे सुनाई दिया- "किसी एक घड़े के अन्दर अपना पैर डालो।" यह आवाज नीचे की ओर से आती हुई सुनाई दी, इसलिए मैंने नीचे की ओर दृष्टि की- नीचे की ओर चार घड़े चौड़े मुँह वाले रखे थे। कुछ क्षणों बाद दुबारा फिर नीचे की ओर से आती हुई ध्वनि सुनाई दी- "किसी एक घड़े के अन्दर अपना पैर डालो।" आवाज सुनकर मैं सोच में पड़ गया। इसका अर्थ क्या है, यह जो आवाज नीचे की ओर से आ रही है। मुझे क्यों कहा जा रहा है?- "एक घड़े के अन्दर पैर डालो"। मैंने ज्ञान से पूछा- यह जो आवाज नीचे की ओर से आ रही है, मुझे किसी एक घड़े के अन्दर पैर डालने के लिए कहा जा रहा है, ऐसा क्यों कहा जा रहा है? मेरे द्वारा ज्ञान से ऐसा पूछे जाने पर ज्ञान ने उत्तर दे दिया- "ये चारों घड़े धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के प्रतीक हैं। इन घड़ों के

अन्दर पैर मत डालना, इनके ऊपर खड़े हो जाओ।" फिर मैं इन चारों घड़ों के ऊपर खड़ा हो गया। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

इस अनुभव में मुझे अपना शरीर और न ही पैर दिखाई दे रहे थे। फिर भी मुझे ऐसा लग रहा था- मैं उन चारों घड़ों के ऊपर खड़ा हो गया हूँ।

अर्थ- घड़ा चित्त के स्वरूप का भी प्रतीक होता है। साधक का जब ब्रह्मरंध्र खुलने वाला होता है तब यह ब्रह्मरंध्र उसे उल्टे घड़े के रूप में दिखाई देता है अर्थात इस घड़े का मुँह नीचे की ओर होता है। जीव को चार प्रकार की अनुभूति होती है- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें से पहले तीन प्रकार की अनुभूति संसार का भोग करते हुए करता है। चौथा प्रकार है 'मोक्ष'। जीव के लिए इन तीनों प्रकार के भोगों से मुक्त होने को मोक्ष कहते हैं। इन चारों से परे ब्रह्म का स्वरूप होता है अथवा ब्रह्म के स्वरूप में स्थिति है। कहीं-कहीं पर लेख मिलता है- जीव को भोग और अपवर्ग दोनों से पूर्ण होना होगा, तभी अपने स्वरूप में स्थिति होगी। जीव जब भोग और अपवर्ग का कार्य पूर्ण कर लेता है फिर उसके लिए कुछ भी शेष नहीं रहता है अर्थात अपने स्वरूप में सदैव के लिए स्थित हो जाती है।

दिव्य शक्तियाँ

24 दिसम्बर की रात्रि को ध्यानावस्था में मुझे बताया गया- "तुम्हारे शरीर में कुछ दिव्य शक्तियाँ एक-डेढ़ साल में कार्य करने लगेगी।" इन दिव्य शक्तियों के विषय में मुझे कुछ नहीं बताया गया। ये दिव्य शक्तियाँ कौन-कौन सी होंगी और किस प्रकार से कार्य करेंगी?

कुछ समय बाद मुझे कुछ दिव्य शक्तियों के विषय में बताया गया तथा उनसे सम्बन्धित समझाया भी गया। मगर मैंने कभी भी इन शक्तियों से सम्बंधित कुछ भी नहीं सोचा। मैंने त्याग का मार्ग अपनाया क्योंकि मेरा लक्ष्य पूर्ण ज्ञान प्राप्ति अथवा अपने स्वरूप में स्थित होना है।

नियुक्त किये जाओगे

ये जानकारी 25 दिसम्बर को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझसे कहा गया- "मेरी बात गौर से सुनो, मेरे शब्द भी गौरपूर्वक याद रखो"।

1- तुम किसी से कुछ नहीं कहोगे।

2- कोई व्यक्ति क्या कार्य करता है, उसको उस विषय में भी कुछ नहीं कहोगे उसका कर्म उसे अवश्य भोगना होगा।

3- तुम किसी के स्वभाव को नहीं बदल सकते हो, और न ही बदलने की कोशिश करना। मनुष्य की प्रकृति के अनुसार उसका स्वभाव होता है।

4- तुम्हें ये बातें अपने आप में अपनानी होगी। ऐसा समझो ये तुम्हारी परीक्षा है। तुम दूसरों की परीक्षा लेते हो, तुम्हारी भी परीक्षा ली जा रही है।

5- तुम्हें किसी कार्य के लिए नियुक्त किया जायेगा। पहले तुम्हें परीक्षा पास करनी होगी, फिर उस कार्य के लिये तुम्हारी नियुक्ति होगी।

साधकों! मुझे ये नहीं बताया गया कि किस कार्य के लिये हमारी नियुक्ति होगी, भविष्य में मुझसे क्या कार्य लिया जायेगा।

नमो नमः

ये शब्द 25 दिसम्बर को ध्यानावस्था में सुनाई दिये। ये शब्द ऊपर आकाश से आ रहे थे। नमो नमः, नमो- तत् सत्, नमो तत् सत् नमो नमः, हे धर्म ध्वज नमो नमः। जब ये शब्द आकाश से प्रकट हो रहे थे तब आकाश में एक विशेष प्रकार की गूँज थी।

अर्थ- नमो नमः इन शब्दों का अर्थ है- बार-बार नमस्कार, प्रणाम या वन्दन होता है। ईश्वर या बड़ी शक्ति के साथ बार-बार नमन करने का भक्ति भाव से युक्त तरीका है। विनम्रता के साथ समर्पण व्यक्त करता है। कुछ मंत्र व पूजा के समय ये शब्द प्रयोग किये जाते हैं।

नमो तत् सत् नमो नमः- इन शब्दों का अर्थ है- उस परम सत्य (ब्रह्म) या भगवान को मेरा सादर नमन। मंत्र परमात्मा की सर्वोच्च वास्तविकता और सर्वव्यापी अस्तित्व को स्वीकार करते हुए नि:स्वार्थ भाव से की गयी वन्दना है। जो सांसारिक मोह से परे मोक्ष का प्रतीक माना जाता है।

तत् = जो सर्वोच्च निराकार ब्रह्म है। उसके लिये प्रयोग किया गया है।

सत् = सत्य या 'अस्तित्व' जो शाश्वत और वास्तविक है।

हे धर्म ध्वज नमो नमः- हे धर्म के ध्वज आपको नमस्कार है या धर्म के प्रतीक ध्वज को प्रणाम है। यह धर्म आस्था और अधर्म पर धर्म की विजय को दर्शाता है। यह सात्विक शक्ति और धर्म की स्थापना की प्रेरणा देने वाला पवित्र उद्घोष है।

सन् 2014

मोक्ष का मार्ग पकड़ो

यह बात मुझसे 17 मार्च को ध्यानावस्था में कही गयी। मुझसे कहा गया- "संसार दु:खों का स्वरूप है। जीव का सम्बन्ध जब तक संसार से रहेगा, तब तक उसे किसी न किसी प्रकार की दुखों की अनुभूति होगी। इसलिए मोक्ष का मार्ग पकड़ो, दुखों से ऊपर उठो, त्याग दे सब कुछ, तू शुद्ध चेतन तत्व है,"।

अर्थ- मोक्ष का मार्ग पकड़ो अर्थात सभी प्रकार की इच्छाओं से रहित हो जाओ। वह इच्छा भले ही परोपकार की ही क्यों न हो, क्योंकि ऐसी इच्छाओं का सम्बन्ध संसार से ही होता है।

सन्तानों को समान रूप से

यह अनुभव 24 अप्रैल को आया। ध्यानावस्था में प्रकृति से मेरी बात हुई थी। प्रकृति ने मुझे बताया- "जो माता-पिता सम्पत्ति के बटवारे के समय पुत्री और पुत्र में भेदभाव करते हैं उनके लिए नरक बना हुआ है, उन्हें अवश्य ही नरक की यातना सहनी होगी"।

प्रकृति ने यह बात हमे पहली बार बतायी है। मैंने भी निश्चय किया है कि मैं उन्ही लोगों को योग सिखाऊँगा, जो पुत्र व पुत्री को समान रूप से देखते होंगे, तथा चल-अचल सम्पत्ति को समान रूप से भेदभाव किये बिना देने को तैयार होंगे।

जब मैं शुरुआत में साधकों को साधना सिखाता था तब यह शर्त साधकों को बताता था, लेकिन कुछ समय बाद ऐसा नहीं हो सका। फिर मैं साधकों को बिना ये बात कहे सिखाने लगा क्योंकि कुछ साधकों ने ऐसा करने से मना कर दिया था। मैंने सोचा मेरा कार्य साधकों का मार्गदर्शन करना है अपनी बातें मनवाना नहीं है।

श्वाँस और संसार

यह अनुभव 25 अप्रैल को आया। ध्यानावस्था में मैं देख रहा था- हमारे सामने की ओर से नदी का प्रवाह हमारी ओर चला आ रहा है। नदी बहुत बड़ी आकार वाली लग रही है। तभी मैंने देखा- जब मैं श्वाँस लेता हूँ, तब नदी का पानी बड़ी तीव्र गति से प्रकट होकर हमारी ओर बहने लगता है, ऐसा लगता है मानो मुझे यह पानी बहा ले जायेगा। जब श्वाँस मेरे अन्दर कुछ समय के लिए ठहर जाती है, तब नदी का पानी बड़ी तीव्र गति से सूखने लगता है फिर कुछ क्षणों में नदी का सम्पूर्ण पानी सूख जाता है, उस जगह की भूमि सूखी हुई नदी के समान दिखने लगती है। जैसे ही मैं श्वाँस छोड़ता हूँ- वैसे ही पानी पुनः प्रकट होकर बहने लगता है। यह दृश्य देखने में बहुत अच्छा लग रहा था। पूरक और रेचक के समय नदी बहने लगती थी। आंतरिक कुम्भक के समय नदी सूख जाती थी। कुछ क्षणों तक मैं यह दृश्य देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- नदी चित्तवृत्तियों का स्वरूप है, इन्ही वृत्तियों के द्वारा संसार की अनुभूति भी होती है। पूरक और रेचक के समय प्राण गति करता है। इस प्राण का प्रभाव चित्त पर स्थित वृत्तियों पर पड़ता है। उस समय चित्त पर विद्यमान वृत्तियाँ बाहर की ओर निकलने लगती हैं जो अनुभव में पानी के रूप में दिखाई देती हैं तब नदी के रूप में बहता हुआ पानी दिखाई देता है ऐसा लगता है नदी बह रही है। अन्दर की ओर श्वाँस रोकने पर अर्थात आन्तरिक कुम्भक के समय प्राण हठपूर्वक ठहरा होता है तब कुछ क्षणों के लिये वृत्तियाँ बहिर्मुखी नहीं हो पाती हैं, उस समय नदी का पानी सूखता हुआ अथवा सूखा हुआ दिखाई देता है।

चित्त के अन्दर प्राणों का स्पन्दन सदैव होता रहता है। इसी स्पन्दन के कारण चित्त की वृत्तियाँ बाहर की ओर निकलती रहती हैं। ये वृत्तियाँ आँखों से तेज स्वरूप से निकलती हैं फिर पदार्थों का स्वरूप धारण कर लेती हैं। तब संसार का स्वरूप दिखाई देता है। पूर्ण रूप से वृत्तियों के ठहर जाने पर संसार का भान नहीं रहता है।

मेरे आदर्श विश्वामित्र जी ने बहुत समय पहले कुम्भक के विषय में मुझे समझाया था। कठोर कुम्भक का अभ्यास करने पर संसार ठहर जाता है अर्थात संसार की गति ठहरने लगती है अथवा ठहर जाती है। चित्त पर स्थित कर्माशयों का नाश भी होने लगता है, चित्त की मलिनता भी नष्ट होने लगती है क्योंकि मनुष्य का शरीर रूपी पिण्ड और ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड में कोई अन्तर नहीं है। ब्रह्माण्ड बड़ा पिण्ड है

तथा मनुष्य का शरीर छोटा पिण्ड है, दोनों का आपस में तारतम्य बना रहता है। अभ्यासी जब कुम्भक लगाता है तब उसका प्रभाव सिर्फ शरीर के अन्दर ही नहीं पड़ता है बल्कि उसका प्रभाव उस ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड पर भी पड़ता है। कुम्भक या प्राणायाम का अभ्यास अनुभवी मार्गदर्शक से ही सीखना चाहिये ताकि शारीरिक परेशानी न हो।

शुभ्र, शुभ्रम, दिव्यम, नखतम्

ये शब्द ध्यानावस्था में 7 मई को सुने। मैं गहरे ध्यानावस्था में था तब ऊपर आकाश से ये शब्द सुनाई दिये- "आप शुभ्र, आपके विचार शुभ्रम, आपके कार्य दिव्यम, आपका ज्ञान नखतम"।

ये शब्द मैंने ध्यानावस्था में सुने थे। इनका अर्थ इस प्रकार है:-

शुभ्र- शुभ्र का अर्थ- शुद्ध, उज्ज्वल, दीप्तिमान, प्रकाशमान, किरणें फैलाने वाला आदि कई प्रकार के अर्थ निकलते हैं। अनुभव में बताया गया मैं ऐसा हूँ, अर्थात शुभ्र स्वरूप वाला हूँ।

शुभ्रम्- हमारे विचार शुभ्रम हैं, ऐसा अनुभव में मुझे बताया गया है। इस शब्द का अर्थ इस प्रकार है- अच्छा, सुन्दर, कल्याणकारी या शुभ होता है।

दिव्यम्- हमारे द्वारा किये गये कार्य दिव्य हैं। इसका अर्थ यह है- दिव्य, अलौकिक, पवित्र, ईश्वरीय या भगवान का अंश, प्रतिभा, अद्वितीय आध्यात्मिक गुणों का प्रतीक है।

नखतम्- हमारा ज्ञान नख (नाखून) पर्यन्त है। ज्ञान का स्थान सिर अर्थात मस्तिष्क होता है। यहाँ पर नखतम् शब्द आया है अर्थात नाखून शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ है- सिर से लेकर हाथ और पैर के नाखून तक। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं, सम्पूर्ण ज्ञान वाला हो गया हूँ।

अनुभव का अर्थ हमारी आध्यात्मिक योग्यता से मेल कर रहा है, क्योंकि ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश (ज्ञान का प्रकाश) हमारे सम्पूर्ण चित्त पर पड़ रहा है।

श्रेष्ठता और निम्नता

ये शब्द 11 मई को ध्यानावस्था में सुनाई दिये। संसार में निर्लिप्तता ही श्रेष्ठता है, संसार में लिप्तता ही निम्नता है। जो मनुष्य इस संसार में लिप्त रहता है उस मनुष्य के लिये निम्नता है। जो मनुष्य संसार में निर्लिप्त रहते हैं ऐसे मनुष्यों को श्रेष्ठ कहते हैं। निम्नता का कारण अज्ञानता है और श्रेष्ठता का कारण उसका ज्ञान (तत्वज्ञान) है। अपरा-प्रकृति का प्रवाह निम्नमुखी होता है। जो मनुष्य संसार में लिप्त हुआ सदैव संसारी पदार्थों को प्राप्त करने का प्रयास करता रहता है वह अज्ञानता के कारण बन्धन में बँधता रहता है। इसका फल जन्म, जीवन और मृत्यु है क्योंकि ऐसा मनुष्य संसार की ओर बहिर्मुखी रहता है इसलिये इसे निम्नमुखी कहते हैं। जो मनुष्य आध्यात्मिक अभ्यास करता हुआ ईश्वर या आत्मा (ब्रह्म) की ओर उन्मुख रहता है तथा सांसारिक पदार्थों को निर्लिप्त भाव से व्यवहार करता है, उसे श्रेष्ठता कहते हैं क्योंकि ऐसा मनुष्य भविष्य में ज्ञान (तत्वज्ञान) से युक्त होकर अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है अथवा ईश्वर को प्राप्त कर लेता है। उसे श्रेष्ठता कहते हैं।

संसार का स्वरूप

प्राणायाम करते समय 14 मई को शाम के समय मेरे अंतःकरण से आवाज सुनाई दी- "अब संसार में क्या शेष रह गया, वह तो नष्ट हुए के समान हो गया है, इसमें अब जानना कुछ भी शेष नहीं रह गया है, सब कुछ तो जान लिया है, यह संसार द्यूत क्रीड़ा के समान कपट पूर्ण है, अब हमें इससे कोई शिकायत नहीं है, सब कुछ नष्ट हो जाना चाहिए।"

अर्थ- तत्त्वज्ञान के द्वारा संसार की वास्तविकता का ज्ञान हो गया है। संसार का स्वरूप वास्तव में सूखे हुए बाँस के समान है, बाँस अन्दर-बाहर से पूर्ण रूप से नीरस होता है, साथ में बीच-बीच में गाँठे होती हैं। इसी प्रकार का संसार का स्वरूप होता है।

चकिया का पाट कील के बिना घूमता हुआ

यह अनुभव 20 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं अपनी दृष्टि नीचे की ओर करके देख रहा था- पहले समय में अनाज पीसने के लिए घरों में चकिया होती थी, वैसी ही चकिया का ऊपरी पाट घूमता हुआ दिखाई दिया। आश्चर्य यह था कि चकिया के पाट का घूमने का तरीका सही नहीं था। वह अपनी जगह पर तो गोलाकार गति कर रहा था, मगर पाट अण्डाकार पथ पर घूम रहा था। चकिया के पाट के मध्य में एक छिद्र होता है हमारी दृष्टि उसी छिद्र पर ठहरी हुई थी। छिद्र के मध्य में लोहे की स्थिर वाली कील नहीं थी। इसी कील के सहारे चकिया का ऊपरी पाट गोलाकार गति करता रहता है। चकिया में यही स्थिर कील नहीं थी। छिद्र के द्वारा निचला भाग (नीचे स्थिर पाट का) दिखाई दे रहा था। छिद्र से नीचे की ओर देखने से स्पष्ट होता था कि नीचे का पाट स्थिर है, मध्य में लोहे की कील नहीं है, इसलिये चकिया का ऊपरी पाट अपनी जगह पर गोलाकार रूप में घूम रहा है, मगर उसका पथ (रास्ता) अण्डाकार रूप में है। जैसे पृथ्वी अपनी जगह पर गोलाकार चक्कर लगाती है, मगर उसका पथ अण्डाकार रूप में होता है क्योंकि वह सूर्य का भी चक्कर लगाती है। चकिया में कुछ भी नहीं पीसा जा रहा है, चकिया का खाली पाट घूम रहा था।

अर्थ- अनुभव में चकिया का ऊपरी पाट बिना कील के अण्डाकार रास्ते पर घूम रहा था। इससे उस पाट की गति देखने पर आश्चर्य सा हो रहा था, क्योंकि चकिया का पाट गोलाकार रूप से कील के सहारे घूमता रहता है। अनुभव में चकिया के मध्य में लोहे की स्थिर वाली कील नहीं है इसलिये चकिया का पाट अण्डाकार रास्ते पर घूम रहा था। चकिया में सदैव अनाज पीसा जाता है, पर अनुभव में किसी प्रकार अनाज नहीं पीसा जा रहा था। चकिया का पाट बिना अनाज के खाली घूम रहा था। लोहे की कील का अर्थ है- अज्ञान या अविद्या। चकिया संसार का स्वरूप है। ऐसा समझो- चकिया का ऊपरी पाट अपरा-प्रकृति का स्वरूप है, नीचे का स्थिर पाट परा-प्रकृति का स्वरूप है, और लोहे की कील अज्ञान का स्वरूप है।

जब तक जीव अज्ञानता में स्थित रहता है, तब तक संसार रूपी चक्र में पीसा जाता है अर्थात जन्म, आयु, मृत्यु को प्राप्त होता रहता है। अज्ञान के नष्ट होने पर उसके लिए संसार का स्वरूप भी नष्ट हुए के समान हो जाता है, फिर जीव संसार के आवागमन से मुक्त हो जाता है। चकिया का ऊपरी पाट लोहे की स्थिर कील न होने के कारण गति तो कर रहा है मगर उसका पथ (रास्ता) थोड़ा सा बदल कर अण्डाकार रूप में हो गया है। अनाज का अर्थ- कर्माशयों का स्वरूप होता है। चित्त पर कर्माशयों का नाश हो जाने के

कारण कील (अज्ञानता) भी नष्ट हो गयी और इस कारण चकिया के पाट की गति का स्वरूप बदल गया है।

सहस्त्रदल कमल सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त

यह अनुभव जुलाई के अंतिम सप्ताह में आया। मैंने देखा- मेरे सामने सहस्त्रदल कमल पूर्ण रूप से विकसित हुआ सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति में व्याप्त है। कमल की पंखुडियों में डण्डी के पास निचले भाग में हल्का सा काला-काला पदार्थ लगा हुआ है। फिर अनुभव समाप्त हो गया। अबकी बार सहस्त्रदल कमल का दर्शन बहुत दिनों बाद हुआ है।

अर्थ- सहस्त्रदल कमल ज्ञान का आयतन है। इस सहस्त्रदल कमल को विकसित करने में कई वर्षों तक कठोर अभ्यास करना पड़ा है। इस अवस्था में समाज का आध्यात्मिक कल्याण करता रहा हूँ तथा घोर क्लेशात्मक कर्मों को भी भोगा हुआ है। अभी भी हल्का सा तमोगुण कर्म प्रभावी हो रहा है, इसका कारण यह भी हो सकता है कि मैं वर्तमान में साधकों का मार्गदर्शन करते समय उनके तमोगुणी कर्मों का नाश भी करता रहता हूँ। शायद उन्हीं साधकों का कुछ तमोगुण हमारे चित्त पर विद्यमान है। अब इस तमोगुण को नष्ट करने का प्रयास करूँगा। इस तमोगुण को नष्ट करने के लिये मुझे समाज से निन्दा सुननी पड़ेगी। इस अवस्था में संसार के विषय में अच्छी बुरी अनुभूति होती रहती है। इसी प्रकार संसार के वास्तविक स्वरूप का भान होता है। इससे वैराग्य मजबूत होता है।

सभी को माफ किया

यह निर्णय मैंने 8 अगस्त को लिया। मैंने निश्चय किया कि जिन लोगों ने हमारे साथ बुरा व्यवहार या दुर्व्यवहार किया, चाहे वो लोग हमारे निकट सम्बंधी हो अथवा अन्य समाज वाले हो, मैं सभी को माफ करता हूँ। मुझे इन लोगों से कुछ लेना-देना नहीं है क्योंकि मैंने माफ कर दिया है।

मुझे मालूम है मैंने तो इन लोगों को माफ कर दिया है, मगर प्रकृति इन लोगों को माफ नहीं करेगी। क्योंकि मेरे साथ दुर्व्यवहार करने वालो के अन्तःकरण में उस दुर्व्यवहार के संस्कार बन गये हैं। जब उचित समय आयेगा तब प्रकृति अपनी व्यवस्था के अनुसार अवश्य ही दण्ड देगी। ऊपर से योगी पुरुष के साथ

किया गया अकारण का दुर्व्यवहार का फल (दण्ड) समान्य व्यक्तियों की अपेक्षा कई गुना ज्यादा होता है। जब ऐसी व्यवस्था प्रकृति ने बना रखी है तो मैं क्यों चिन्तित होऊँ? दया आती है उन लोगों पर जो अनजाने में मुझसे गलत व्यवहार करते हैं, ऐसे लोगों को ईश्वर माफ करे क्योंकि इन्होने हमारे साथ बुरा व्यवहार करके हम पर एहसान किया है। इनके द्वारा किये गये व्यवहार के कारण हमारे चित्त पर स्थित मलिनता और तमोगुणी कर्मों की कुछ मात्रा को कम कर दिया है। ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों की मैं मन से वन्दना करता हूँ तथा ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ- इन अज्ञानी लोगों को माफ किया जाय क्योंकि इन्होंने अनजाने में हमारा भला किया है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

मैं 6 अगस्त को ध्यानावस्था में सोच रहा था- अब मुझे ऋतम्भरा-प्रज्ञा बहुत समय से दिखाई नहीं दी? तभी आवाज आयी- "क्या ऋतम्भरा-प्रज्ञा सदैव दिखाई देती रहेगी,?, अभ्यासानुसार यह धीरे-धीरे निरुद्ध हो जाती है, मगर आरोह-अवरोह क्रम के अभ्यास के कारण यह कभी दिखाई देगी, तो कभी कुछ दिनों तक दिखाई नहीं देगी। अभ्यासानुसार कुछ वर्षों में ऋतम्भरा-प्रज्ञा निरुद्ध हो जायेगी"।

कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन

यह अनुभव 9 अगस्त को ध्यानावस्था में सुबह के समय आया। मैंने देखा- सामने की ओर मुझसे थोड़ी दूरी पर एक नागिन फन ऊपर की ओर उठाए हुए कुण्डली मारे बैठी हुई थी। उस नागिन की कुण्डली मात्र थोडी सी पूँछ के द्वारा बनी हुई थी और उसका शेष शरीर ऊपर की ओर उठा हुआ था। वह सुनहली नागिन फन ऊपर की ओर उठाए हुए मुझे देख रही थी। वह नागिन जिस जगह पर कुण्डली मारे हुए बैठी हुई थी, उसके कुण्डली के नीचे के क्षेत्र में प्रकाश पुँज विद्यमान था अर्थात प्रकाश पुँज के ऊपर नागिन कुण्डली मारे हुए मुझे देख रही थी। उसका फन बहुत चौड़ा था। वहाँ पर कहीं भी भूमि नहीं थी सर्वत्र चारों ओर आकाश ही आकाश था। आकाश में प्रकाश फैला हुआ था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- सुनहली नागिन जो कुण्डली मारे बैठी हुई है, वह कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप है। मैं पहले लिख चुका हूँ- जब अभ्यास के द्वारा साधक के शरीर में कुण्डलिनी पूर्ण यात्रा कर लेती है और हृदय में

स्थित हो जाती है, तब वह अपने अग्नि तत्व वाले शरीर को छोड़कर वायु तत्व वाले शरीर में परिवर्तित हो जाती है। फिर अभ्यासी को कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन नहीं होता है। उस समय साधक की अवस्था वायु तत्व से सम्बंधित होती है। कुण्डलिनी शक्ति भी वायु तत्व से सम्बंधित अपना विकास-क्रम करती रहती है। फिर साधक अपना स्थूल शरीर त्याग कर चला जाता है अर्थात मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। फिर अगले जन्मों में उचित समय पर योग का अभ्यास करना शुरु कर देता है। मगर मेरा यह आखिरी जन्म है, हमारे चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो चुका है और भविष्य में मुझे अंतिम अवस्था तक पहुँचना है इसलिए मुझे कुण्डलिनी शक्ति का साक्षात्कार होता रहता है।

कुछ समय पहले 22 दिसम्बर 2013 को कुण्डलिनी शक्ति का अनुभव आया था। उस समय कुण्डलिनी शक्ति अनुभव में सुषुम्ना नाड़ी के ऊपरी सिरे पर स्थित थी। इसका अर्थ है- अभ्यासी के शरीर में कुण्डलिनी वायु तत्व में स्थित होकर विकास-क्रम करती रहती है, ये विकास-क्रम अभ्यासी के अभ्यासानुसार ही होता है। बहुत से अभ्यासी कुण्डलिनी स्थिर होने को ही पूर्णता समझने की गलती कर लेते है फिर अपना अभ्यास कम करके दूसरे साधकों का मार्गदर्शन करना शुरू कर देते हैं। इससे वह अभ्यासी पतन को प्राप्त होने लगता है, मगर खुद अभ्यासी ये सब कुछ समझ नहीं पाता है।

ऐसे मार्गदर्शक या गुरू भिन्न-भिन्न प्रकार की सांसारिक सुख-सुविधाओं को भोगना शुरु कर देते है तथा अनावश्यक रूप से कुछ गुरू तो धन अर्जित करने में लग जाते है और यश-कीर्ति के चक्कर में पड़े रहते है, मगर शक्तिपात के नाम पर उनका योगबल कार्य करने में असमर्थ होने लगता है। इसलिये अपने कल्याण हेतु सदैव निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिये। परिपक्व अवस्था में ही मार्गदर्शन करना उचित है।

पूर्व जन्म में

यह जानकारी मुझे 9 अगस्त को एक ऋषि ने ध्यानावस्था में दी थी। शाम के समय मैं ध्यानावस्था में बैठा हुआ था तभी मुझे आवाज सुनाई दी- द्रुत गति से अगली अवस्था को प्राप्त करने वाले अभ्यासी को इस ऋषि का प्रणाम स्वीकार कीजिए। मैं इन शब्दों को सुनकर चौंक गया। मुझे आसपास कोई दिखाई नहीं दिया। मैंने पूछा- आप कौन है? तुरन्त आवाज आयी- तुम्हारा मित्र हूँ। मैं बोला- आपका क्या नाम है? कृपया आप अपना नाम बताए? फिर आवाज ने उत्तर दिया- "मेरा नाम शालभ्य है"। मैं बोला- आप

मुझे कैसे जानते हो? आवाज ने उत्तर दिया- मैं तुम्हारा मित्र हूँ, हम दोनों एक साथ योग का अभ्यास किया करते थे। तुम तेज तर्रार स्वभाव वाले थे और मैं सीधा-साधा स्वभाव वाला था। कई बार मैंने तुम्हें समझाया, मगर तुम्हारे समझ में कुछ भी नहीं आया। उस समय हमारा क्या नाम था? उस आवाज ने उत्तर दिया- उस समय तुम्हारा नाम "यक्षु" था। तुम घूमना ज्यादा पसन्द किया करते थे। कान्धार देश तुम्हें घूमना ज्यादा पसन्द था। वहाँ के पहाड़, नदी आदि देखने में अधिक दिलचस्पी थी, इसीलिए तुम अब भी कश्मीर और अफगानिस्तान का प्राकृतिक सौन्दर्य अधिक पसन्द करते हो। कुछ समय पहले तुम कश्मीर घूमने गये थे। उस भू-भाग पर तुम पहले घूम चुके हो, इसलिये तुम्हें वह जगह बहुत पसन्द आयी थी। पूर्व काल में तुम्हारे द्वारा योग का मार्गदर्शन करना भी बड़ा अड़ियल जैसा था, उसी तरह का असर आज भी तुम पर है। तुम जिस पर प्रसन्न हो जाओ, उसे अध्यात्म में सब कुछ देने को तैयार हो जाते हो। पूर्व काल के तुम्हारे मित्र अभी भी इस लोक (तपलोक) में हैं"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैंने भी उस आवाज से किसी प्रकार का प्रश्न नहीं किया।

इस अनुभव में बोलने वाला मेरे सामने प्रकट नहीं हुआ, सिर्फ आवाज ही सुनाई दे रही थी। मैंने भी उसे सामने प्रकट होने के लिए नहीं कहा था। ये सत्य है कश्मीर और अफगानिस्तान के पहाड़ी क्षेत्र मुझे अब भी पसन्द है क्योंकि प्राकृतिक सौन्दर्य मुझे बहुत अच्छा लगता है। जब मैं सन् 2012 में कश्मीर घूमने गया था तब मैंने उस समय मेरे साथ घूमने वाले साधक को बताया था- पूर्व काल में मैंने ये सभी क्षेत्र घूमे हुए है। उस समय मैं कई बार कान्धार गया था।

चित्ताकाश

ये अनुभव 9 अगस्त को ध्यानावस्था में आया। कुछ समय से हमारी साधना चित्ताकाश के अन्तर्गत चल रही है। अनुभव में देखा करता हूँ- मैं आकाश में चला जा रहा हूँ, चारों ओर सर्वत्र आकाश ही विद्यमान है। कभी मैं अपने आप को आकाश में ही लेटा हुआ हूँ, ऐसा देखता हूँ। मैं अनुभव में देखता हूँ- मैं आकाश में लेटा हुआ हूँ, उस समय मुझे आकाश तत्व का परमाणु भी दिखाई दे रहा था। आकाश तत्व का एक ही परमाणु होता है। आकाश तत्व के परमाणु का स्वरूप पानी की बूँद की तरह का होता है। आकाश तत्व का एक ही परमाणु होने के कारण सबसे सूक्ष्म तथा सबसे ज्यादा व्यापक होता है। अन्य

चारों तत्वों (वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी तत्व) के परमाणु क्रमशः अधिक घनत्व वाले होते जाते हैं। अन्त में पृथ्वी तत्व में इतने ज्यादा परमाणु होते है कि वह ठोसता को प्राप्त हो जाता है।

वैसे इस समय मेरी अवस्था अहंकार के अन्तिम छोर पर है, पर मेरी गति चित्ताकाश तक है। इसलिए कभी चित्ताकाश के अनुभव आते हैं अर्थात गति और स्थिति का अन्तर है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान के प्रकाश से चित्त धीरे-धीरे अभ्यासानुसार शुद्ध होता रहता है। चित्त को इतना शुद्ध होना चाहिए कि जीव अपने स्वरूप को चित्त पर देख सके। जीव जब अपने वास्तविक स्वरूप का दर्शन चित्त पर देख लेगा अथवा जब उसे वास्तविक स्वरूप का भान हो जायेगा तब जीव का जीवत्व नष्ट हो जायेगा। फिर जीव अपने मूल स्वरूप (आत्मा) में स्थित हो जायेगा अर्थात जीव और चित्त की शुद्धता जब समान रूप से हो जायेगी, तब जीव को अपने स्वरूप का भान हो जायेगा। फिर चित्त को बनाने वाले गुण अपने मूल स्वरूप (परा-प्रकृति) में स्थित हो जायेंगे तब चित्त का स्वरूप नष्ट हो जायेगा, फिर जीव अपने आत्म स्वरूप में स्थित हो जायेगा।

चित्त को शुद्ध होने के लिए स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक समान शुद्धि होनी चाहिए, इसीलिये अभ्यासी आरोही-अवरोही क्रम में शुद्धि के लिये कई वर्षों तक अभ्यास करता रहता है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी की अवस्था कभी चित्त पर होती है तो कभी स्थूलता में आ जाती है। ऐसा तब तक चलता रहता है जब तक चित्त समान रूप से शुद्ध नहीं हो जाता है।

कुम्भक के समय

यह अनुभव 9 अगस्त को शाम के समय प्राणायाम करते समय ध्यानावस्था में आया। मैं ध्यान करने के पश्चात प्राणायाम कर रहा था, तभी मुझे आँखे बन्द किये हुए ही बाँये पैर के घुटने से नीचे का भाग दिखाई देने लगा। मैं आँखे बन्द करके प्राणायाम कर रहा था, पैर के घुटने के नीचे पिंडली के अन्दर की हड्डी दिखाई देने लगी। उस हड्डी के अन्दर का भाग भी दिखाई दे रहा था, उस हड्डी के अन्दर काला-काला पदार्थ भरा हुआ था। उस काले-काले पदार्थ को गौरपूर्वक देखने पर ऐसा लग रहा था- मानो काले पदार्थ की परत बहुत कठोर है। यह काले पदार्थ की परत धीरे-धीरे टूटने लगी। ऐसा लग रहा था- काले पदार्थ की परत टूट कर अदृश्य होती जा रही थी, वह स्थान पोला (खोखला) होता जा रहा है। कुछ क्षणों बाद लगभग एक फीट लम्बी हड्डी के अन्दर का काला पदार्थ टूट-टूट कर अदृश्य होकर हड्डी खोखली

हो गयी। फिर हड्डी की परत भी टूटना शुरु हो गयी। हड्डी की परत भी काले पदार्थ के द्वारा बनी हुई है। यही क्रिया कुछ समय तक धीरे-धीरे चलती रही, हड्डी की परत टूट-टूट कर अदृश्य होती जा रही थी, कुछ समय बाद लगभग एक फीट हड्डी टूट-टूट कर अदृश्य हो गयी। हड्डी टूटते समय किसी प्रकार की अनुभूति नहीं हो रही थी, सिर्फ टूटते और अदृश्य होते हुए दिखाई दे रही थी। अनुभव में ऐसा लग रहा था- हड्डी और हड्डी के अन्दर भरा काला पदार्थ एक ही जैसे पदार्थ से बना हुआ है। वह पदार्थ काली मिट्टी जैसा है, मैं कठोरता से प्राणायाम का अभ्यास कर रहा था।

कुछ समय बाद मुझे दिखाई दिया - हमारे शरीर के अन्दर पीठ पर सीधा खड़ा हुआ पाइप-सा है, इस पाइप के अन्दर काला पदार्थ भरा हुआ है। जब मैं कुम्भक करता हूँ अन्दर भरा हुआ काला पदार्थ नीचे की ओर जाने लगता था। थोड़े समय तक कुम्भक करने पर ही, वह पाइपनुमा जगह के अन्दर वाला भाग काफी खाली हो गया था। उसी समय मैं समझ गया था- यह हमारे रीढ़ की हड्डी है, जो पाइपनुमा सी दिख रही है। वैसे रीढ़ की हड्डी पाइपनुमा सी नहीं होती है, बल्कि टुकड़े-टुकड़े रूप में जुड़ी सी होती है। आन्तरिक कुम्भक करते समय रीढ़ के अन्दर का भाग दिखाई दे रहा था। रीढ़ के अन्दर भरा हुआ काला पदार्थ पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं हुआ था, बल्कि नीचे की ओर थोड़ा सा काला पदार्थ अभी भी विद्यमान था। अनुभव के अन्त में रीढ़ पोला (खोखला) सी हो गयी थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अभी तक प्राणायाम करते समय दिखाई देता था कि नाड़ियो में शुद्धता आती है, मगर अबकी बार प्राणायाम करते समय दिखाई दिया- हमारे शरीर में स्थित हड्डियों में शुद्धता आ रही थी अर्थात आन्तरिक कुम्भक के समय हड्डियाँ और हड्डियों के अन्दर भरा काला पदार्थ शुद्ध हो रहा था। काले रंग का पदार्थ जो हड्डियों के अन्दर भरा है और जिस काले पदार्थ से हड्डियाँ बनी है वह तमोगुण ही है। कुम्भक करते समय जब रीढ़ शुद्ध हो रही थी तब रीढ़ के अन्दर की सरंचना दिखाई दे रही थी। रीढ़ में दो-तीन छिद्र से दिखाई दिये थे, शायद यहीं से शरीर के लिए नाड़ियाँ निकलती होगी। रीढ़ के अन्दर भी कुछ विशेष तरह की बनावट थी। यह सब सूक्ष्म रूप में दिखाई दे रहा था। आध्यात्मिक मार्ग में आन्तरिक कुम्भक का महत्व बहुत है। इसीलिये मैं मार्गदर्शन के समय साधकों को आन्तरिक कुम्भक का महत्व समझाया करता था।

अहंकार के अंतिम क्षेत्र की ओर

यह अनुभव 20 अगस्त को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- प्रकाश चारों ओर दूर-दूर तक फैला हुआ है। मैं पश्चिम दिशा की ओर तेज गति से जाने लगा, सामने का रास्ता साफ-सुथरा सड़क जैसा था। मैं पैरों द्वारा चले बिना ही अपनी इच्छा शक्ति द्वारा तीव्र गति से आगे की ओर चला जा रहा था। सामने की ओर विशेष प्रकार की सुरंग जैसी जगह का मुहाना दिखाई दिया। मैं तीव्र गति से उस मुहाने के अन्दर प्रवेश कर गया। वह सुरंगनुमा जगह अन्दर से गोलाकार व सीधी थी। ऐसा लगता था बहुत बड़े गोल पाइपनुमा जगह के अन्दर चला जा रहा हूँ। उसके अन्दर की गोलाकार दीवारें मिट्टी की बनी है। इन मिट्टी की दीवारों से हल्का-हल्का प्रकाश निकल रहा है। तभी मैंने सामने की ओर देखा, आगे का मार्ग बन्द है। आगे काला सा पदार्थ भरा हुआ था। फिर मैं अपनी संकल्प शक्ति के द्वारा उस काले पदार्थ को पीछे की ओर ढकेलता जा रहा था। वह काला पदार्थ पीछे की ओर हटता जा रहा था मैं आगे की ओर बढ़ता जा रहा था। कुछ समय तक इसी प्रकार अन्दर की ओर प्रवेश करता रहा। फिर हमारी गति आगे जाने के लिए अपने आप रुक गयी, क्योंकि आगे का मार्ग रुका हुआ था वही काला पदार्थ आगे का मार्ग रोके हुए था। मैंने संकल्प शक्ति से खूब जोर लगाया, मगर आगे का मार्ग नहीं खुला। फिर मैं संकल्प शक्ति के द्वारा उस सुरंगनुमा जगह से बाहर निकल आया। जब मैं बाहर निकल कर उस सुरंगनुमा जगह की ओर देखा तो आश्चर्यचकित हो गया क्योंकि अन्दर की तरफ जिस जगह पर मार्ग रुका हुआ था, वह जगह बाहर से देखने पर दिखाई दी- वह क्षेत्र एक नाग की पूँछ थी- अर्थात पूँछ वाला क्षेत्र था। अन्दर से जिस जगह पर अवरोध था अर्थात आगे की ओर नहीं जा पाया था, वह जगह बाहर से देखने पर दिखाई दिया- वह क्षेत्र नाग के गुदा द्वार का क्षेत्र था।फिर भी बाहर खड़े होकर मैंने संकल्प किया- अन्दर का वह क्षेत्र खुल जाये, मगर वह क्षेत्र अन्दर से नहीं खुला, क्योंकि बाहर से खड़े होकर अन्दर का क्षेत्र दिखाई दे रहा था। जब मैं उस क्षेत्र को खोलने के लिए जोर से संकल्प करता था, तब उस नाग की पूँछ हिलने लगती थी, मगर अन्दर का मार्ग नहीं खुलता था। फिर मैंने अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा नाग की उस पूँछ को काट दिया। उस समय उसकी पूँछ तो कट कर अलग हो गयी, मगर कुछ क्षणों में ही उस नाग की पूँछ उसी जगह फिर जुड़ गयी, यह क्रिया अपने आप हुई थी। मैं समझ गया अब मैं इस विषय पर कुछ भी नहीं कर पाऊँगा। अनुभव में मैं पूँछ की ओर देख रहा था, तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैं पश्चिम दिशा की ओर जा रहा हूँ, इसका अर्थ है- मैं उस समय संसार की ओर जा रहा हूँ अर्थात सृष्टि उन्मुख हुआ निम्नमुखी हो गया हूँ। इसका कारण है-मैं कुछ साधकों का मार्गदर्शन

कर रहा हूँ। मार्गदर्शन करना अज्ञानता और संसार के अंतर्गत आता है। सुरंगनुमा जगह के अन्दर तीव्रता से चला जा रहा हूँ, इसका अर्थ है- चित्त पर जब गुणों के परिणाम स्वरूप तमोगुण की मात्रा बढ़ती है तब तमोगुणी अहंकार बहिर्मुख होने लगता है। इसी तमोगुणी अहंकार के द्वारा सृष्टि का सृजन व संसार में व्यवहार होता है। अहंकार दो भागों में बँट जाता है, एक- ग्राह्य रूप में, दो- ग्रहण रूप में। ग्राह्य और ग्रहण रूप में अहंकार का व्यवहार चलता रहता है। पहले मेरी आध्यात्मिक अवस्था चित्त के अंतर्गत चल रही थी, ऋतम्भरा-प्रज्ञा द्वारा चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैला हुआ था, यह अवस्था ईश्वर उन्मुख की होती है लेकिन जीवों का (मनुष्यों) कल्याण करने के लिये, ईश्वर की ओर जाने का मार्ग छोड़कर संसार का मार्ग अपना लिया, यह मार्ग अज्ञानता से युक्त होता है। यह अनुभव में दिखाई दे रहा था।

अध्यात्म में अहंकार काले नाग के रूप में अभ्यासियों को दिखाई देता है अर्थात अनुभव में दिखाई देने वाला नाग अहंकार का प्रतीक है। मैं सुरंगनुमा जगह के अन्दर तीव्रगति से प्रवेश करता जा रहा हूँ ऐसा दिखाई दे रहा है। इसका अर्थ है- मैं अहंकार के क्षेत्र में प्रवेश करता जा रहा हूँ। तमोगुणी पदार्थ साधकों के तमोगुणी कर्माशय और उनके चित्त की मलिनता है, यह मलिनता मुझे योगबल से हटानी पड़ रही है अथवा नष्ट करनी पड़ रही है। यही साधकों के तमोगुणी कर्म व उनके चित्त की मलिनता काले पदार्थ के रूप में मेरा मार्ग अवरुद्ध कर रही थी।

अनुभव के अन्त में आगे का मार्ग प्रशस्त नहीं हुआ अर्थात मार्ग नहीं खुला। इसका अर्थ है- साधकों के कुछ कर्म जल तत्त्व से सम्बंधित होते हैं अथवा गन्दे विचारों से युक्त होते हैं, ऐसे कर्म भी शक्तिपात करते समय आ जाते हैं। ये कर्म बहुत बलिष्ठ होते हैं इसलिए जल्दी से हटाए नहीं जा सकते हैं। ऐसे कर्मों को गहरी समाधि में जाकर अथवा कई दिनों तक अभ्यास करने के बाद धीरे-धीरे थोड़े-थोड़े हटाए जाते हैं अथवा योगाग्नि के द्वारा जलाने पड़ते हैं। कभी-कभी ऐसा भी हुआ है-, साधकों के कुछ ऐसे गन्दे कर्म हमारे अन्दर आ गये, जिन्हें नष्ट नहीं किया जा सकता था, तब योगबल से उन कर्मों को उन्ही साधकों के पास फेंक दिये जिनके वह कर्म थे। क्योंकि मेरा स्वभाव है मैं शक्तिपात के द्वारा साधकों के कर्मों को हटाता हुआ आगे का मार्ग प्रशस्त कर देता हूँ। जो कर्म अभी साधकों को कई वर्षों तक भोगने थे, उन कर्मों को मैं धारण कर लेता हूँ, कुछ जला देता हूँ। इससे प्रकृति की व्यवस्था में गड़बड़ी आ जाती है तब प्रकृति नाराज होती है तथा दिव्य शक्तियाँ भी नाराज होती है। ये नाराजगी किसी न किसी रूप में सहनी पड़ती है।

अनुभव में जिस जगह मार्ग रुक गया था, उस जगह पर गन्दे व क्लेशात्मक कर्म साधकों के भरे हुए है, इसलिये अनुभव में उस क्षेत्र से निकल कर बाहर खड़ा हो गया। ऐसा योगबल के द्वारा सम्भव हो सका। बाहर से दृश्य देखते ही सब कुछ स्पष्ट दिखाई देने लगा। अहंकार को कभी भी योगबल के द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता है और न ही उसे काटा जा सकता है। इसीलिये उसकी पूँछ अपने आप फिर जुड़ गयी। इस अनुभव का अर्थ है- जीवों का कल्याण करने के लिये मैं अहंकार की अवस्था को प्राप्त हुआ मार्गदर्शन करने में लगा हुआ हूँ।

अहंकार का स्वरूप

यह अनुभव 22 अगस्त को आया। मैं चुपचाप बैठा हुआ था। मेरी आँखे बन्द थी तब मुझे दिखाई दिया- मैं अन्दर से नाग की पूँछ वाले क्षेत्र के अन्दर खड़ा हूँ। नाग की पूँछ इधर-उधर की ओर हिल रही है। ऐसा लगा था मानो नाग अपनी पूँछ हिला रहा हो। मैं नाग के अन्दर खड़ा हुआ था। बाहर से भी नाग का स्वरूप दिखाई दे रहा था अर्थात मैं उस नाग को अन्दर खड़े होकर उसका शरीर अन्दर और बाहर दोनों तरफ का देख सकता था। मैंने देखा- नाग के बाहर की ओर से उसके काले शरीर के ऊपर सफेद रंग के गोलाकार छल्ले जैसे बने थे, ये सफेद छल्ले चौड़ी पट्टीदार थे। ये दृश्य मैं देख रहा था तभी मैं बोल पड़ा- देखो यह अहंकार है जो पहले नाग के रूप में दिखाई दे चुका है। जब मुझे लगभग 14 साल पहले दिखाया गया था- जीव ईश्वर के शरीर से कैसे प्रकट होता है, फिर संसार में जन्म लेने के लिए किस प्रकार चल देता है? उस समय चित्त पर सीधे व्यास रेखा के रूप में विद्यमान था। इसका मुहँ और पूँछ का आखिरी सिरा पानी के अन्दर नीचे की ओर किये डूबा था।

सिर्फ ईश्वर से प्रेम करो

यह अनुभव अर्थात जानकारी 29 अगस्त को दी गयी। मैं सुबह ध्यानावस्था में बैठा हुआ था, तभी मुझे उन साधकों की याद आ गयी, जिन साधकों का मैं मार्गदर्शन करता था। मैं साधकों के विषय में सोच रहा था, उसी समय मुझे अपने अन्तःकरण से आवाज सुनाई दी- "इन सभी साधकों का त्याग कर अब सिर्फ ईश्वर से प्रेम करो, उसी से प्रेम करते रहो। अन्त में ईश्वर के धाम आ जाना, अब बहुत समय तक

तुम्हें भूलोक पर नहीं रहना है"। इस ध्वनि को सुनने के बाद मैं ईश्वर की याद में खो गया। फिर कब गहरा ध्यान लग गया मुझे मालूम नहीं हुआ। कुछ समय बाद मेरा ध्यान टूट गया।

अब मैं सोच रहा हूँ- मैं अपना ज्यादातर समय ईश्वर की याद में अन्तर्मुखी होकर व्यतीत करूँगा। जिन साधकों को मैं योग का अभ्यास करना सिखाता हूँ, उनके साथ मेरा कब तक सम्बन्ध रहेगा मुझे मालूम नहीं है। इतना अवश्य मालूम है- स्थूल शरीर त्यागने के कुछ समय पूर्व ही सभी से दूरी बढ़ जायेगी, अथवा बहुत से साधक मुझे छोड़ कर चले जायेगे या मैं साधकों को छोड़ दूँगा।

आगे का मार्ग तय करो

यह जानकारी 10 सितम्बर को शाम के समय ध्यानावस्था में दी गयी। मुझे ध्यान के समय आकाश से आवाज सुनाई दी- "योगी पुत्र! अभी तक जो कुछ तुम्हारे साथ समाज के लोगों द्वारा व्यवहार किया गया है उसे यहीं पर छोड़ दो, अब आगे का मार्ग तय करो। जिसने तुम्हारे साथ जो कुछ किया है उस मनुष्य को अवश्य ही अपना कर्म भोगना होगा। इसका चिन्तन करना छोड़ो, अब आगे के मार्ग के विषय में सोचो, आपको आगे का मार्ग तय करना है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैं समझ गया मुझसे ऐसे ही मिलते-जुलते शब्द बार-बार क्यों कहे जाते है।

मुझे बार-बार समझाया जा रहा है- मैं साधकों का मार्गदर्शन करना बंद कर दूँ अथवा साधकों का त्याग कर दूँ। जिस किसी व्यक्ति ने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया है, मैं उन व्यक्तियों को माफ कर दूँ अथवा उनके विषय में चिन्तन करना छोड़ दूँ और आगे का मार्ग तय करना शुरु कर दूँ, अर्थात ईश्वर उन्मुख होकर ईश्वर प्राप्ति में निरन्तरता बनाये रखूँ। मैं जीवों के कल्याण के लिये अपना मार्ग त्याग कर साधकों का कल्याण करने में लग जाता हूँ इसीलिये मुझसे ऐसे शब्द कहे जाते है।

सत्य तो यही है कि मुझसे जो कहा जाता है, मुझे वैसा ही करना चाहिए। क्योंकि मैंने देखा है- बहुत से ऐसे भी साधक है, उनकी आध्यात्मिक योग्यता नहीं होती है और न ही संयम का पालन करते है, अभ्यास भी सन्तोषजनक नहीं करते हैं, फिर भी मैं प्रकृति के नियमों पर ध्यान न देकर साधकों को शक्तिपात कर आगे की अवस्था प्राप्त करा देता हूँ। इसके बाद भी कुछ मुझसे झूठ बोलते है, मुझे धोखा भी देते है, तथा अभद्र व्यवहार भी करते रहते है। इसलिए मुझे आकाशवाणी के द्वारा व दिव्य शक्तियों के द्वारा समझाया जाता है।

सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई

यह अनुभव 23 सितम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मुझे ध्यानावस्था में आकाशवाणी सुनाई दी- "देखो, सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई है?" मैं आवाज की ओर सामने देखने लगा जिधर से आकाश से आवाज सुनाई दी थी। तभी मुझे सामने की ओर दिखाई दिया- एक अत्यन्त पारदर्शी मानव आकार हमारे सामने की ओर खड़ा हुआ है। चारों ओर ऊपर नीचे सर्वत्र स्वच्छ निर्मल आकाश है। वह पारदर्शी मानव आकार मुझसे बोला- "देखो, ये तीन केन्द्र है आकर्षण-विकर्षण के"। फिर हाथ के द्वारा छूकर उन तीनों केन्द्रों की ओर इशारा किया। ये तीनों केन्द्र अलग-अलग आपस में निश्चित दूरी पर स्थित थे। फिर वह मानव आकार बोला- "इन तीनों केन्द्रों में आपस में जब आकर्षण-विकर्षण होता है तब गति उत्पन्न होती है, गति उत्पन्न होने के साथ ही भयंकर विस्फोट होता है, विस्फोट से प्रकाश उत्पन्न होता है। गति, विस्फोट और प्रकाश तीनों एक साथ उत्पन्न होते है। परन्तु इन तीनों में (गति, विस्फोट और प्रकाश) बहुत ही अल्प समय का अन्तर होता है। इसी समय काल (समय) की उत्पत्ति होती है"। इसके बाद मानव आकार अदृश्य हो गया। फिर मेरा अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- वह पारदर्शी मानव आकार मेरा ही स्वरूप था। वह मुझे सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में समझा रहा था। उन तीनों केन्द्रों को अगर रेखा के द्वारा आपस में जोड़ दिया जाय तो एक त्रिभुज का रूप बन जायेगा। ये तीनों शक्ति केन्द्र इस सृष्टि को प्रभावित करते रहते है। ये अनुभव अथवा सम्पूर्ण दृश्य निर्मल स्वच्छ आकाश के अन्तर्गत आया था। विज्ञान के द्वारा इन तीनों केन्द्रों को नहीं जाना जा सकता है, सिर्फ ज्ञान के द्वारा ही जाना जा सकता है। इस अनुभव में यह भी बताया गया कि काल (समय) की उत्पत्ति भी इसी समय होती है।

श्रीमद्भागवत पुराण में एक जगह उल्लेख मिलता है। मायापति भगवान् ने एक से बहुत होने की इच्छा होने की इच्छा पर अपनी माया से अपने स्वरूप में स्वयं प्राप्त काल, कर्म और स्वभाव को स्वीकार कर लिया। भगवान् की शक्ति से ही काल ने तीनों गुणों में क्षोभ उत्पन्न कर दिया, स्वभाव ने उन्हें रूपान्तरित कर दिया और कर्म ने महत्तत्त्व को जन्म दिया।

अनुभव में दिखाई देने वाले तीनों केंद्रों को अगर आपस में रेखा द्वारा जोड़ दिया जाये, तो त्रिभुज का स्वरूप बन जायेगा। मूलाधार चक्र में भी त्रिभुज विद्यमान रहता है। कठोर अभ्यास करने वाले श्रेष्ठ

साधकों की ध्यानावस्था में यह त्रिभुज दिखाई देता है। इस त्रिभुज के मध्य में शिवलिंग में कुण्डलिनी शक्ति साढ़े-तीन चक्कर लगाये हुए सोई हुई रहती है।

भागवत पुराण में बताया गया- काल ने ही तीनों गुणों में क्षोभ उत्पन्न कर दिया। यहाँ पर काल शायद अव्यक्त में विद्यमान होने को बताया गया है। मैंने अनुभव में लिखा है कि महाविस्फोट के समय काल की उत्पत्ति होती है। गुणों में क्षोभ, परिणामी गुणों में होता है। अपरा-प्रकृति में गुण परिणामी अवस्था में रहते है।

कुण्डलिनी शक्ति ने पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति को छिन्न भिन्न कर दिया

यह अनुभव 15 सितम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- स्वच्छ अंतरिक्ष में काले रंग का शिवलिंग विद्यमान था। मैं उस शिवलिंग को देख रहा था, तभी सुनहली नागिन प्रकट होकर शिवलिंग के ऊपरी भाग पर अपना मुँह रख दिया। उस नागिन का मुझे सिर्फ मुँह दिखाई दे रहा था। नागिन अपने मुँह से शिवलिंग पर दबाव दे रही थी। मैं टकटकी लगाकर इस क्रिया को देख रहा था तथा सोचने लगा- "यह नागिन क्या कर रही है"? नागिन मुँह से दबाव देकर शिवलिंग को हिलाने का प्रयास कर रही थी ऐसा मुझे लगा। फिर मात्र कुछ पलों में शिवलिंग टूट गया। वह खड़े आकार में फटकर कई टुकड़ो में बट गया। शिवलिंग काले रंग के पदार्थ से बना हुआ था। ऐसा लग रहा था वह काला पदार्थ कोयले जैसा था। अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी, फिर अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- शिवलिंग के विषय में मैं अपने अनुभवों में लगभग 14 साल पहले लिख चुका हूँ, जब तत्वज्ञान प्राप्त होने की शुरुआत हुई थी। शिवलिंग अपरा-प्रकृति का स्वरूप होता है क्योंकि पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति अण्डाकार रूप में होती है। लिंग का अर्थ होता है- व्यक्त रूप में। इसलिये अपरा-प्रकृति का एक नाम लिंग भी (व्यक्त रूप में) है। इसी तरह परा-प्रकृति का नाम अलिंग भी है। इस परा-प्रकृति को अव्यक्त भी कहते है, अपरा-प्रकृति को व्यक्त कहते है। शिव का अर्थ है- ऐसा कल्याणकारी देवता जो कण-कण में व्याप्त हो। इसलिये उस पिण्ड को शिवलिंग नाम से जाना जाता है।

अपरा-प्रकृति का एक स्वरूप पिण्ड रूप में होता है, इसी अपरा-प्रकृति का दूसरा स्वरूप सुन्दर स्त्री के रूप में भी होता है। मैंने अपने अनुभवों में अपरा-प्रकृति के स्त्री स्वरूप का वर्णन प्रकृति देवी अथवा माता कहकर किया है।

कुण्डलिनी शक्ति स्वयं शक्तिस्वरूपा है। यह साधकों को अतिसुन्दर स्त्री के रूप में और सुनहली नागिन के रूप में भी दिखाई देती है। अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति सुनहली नागिन के स्वरूप में थी। उसने अपने मुँह से दबाव देकर पिण्डरूपी (शिवलिंग) अपरा-प्रकृति को तोड़ कर छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में परिवर्तित कर दिया है, क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति अपरा-प्रकृति के सम्पूर्ण क्षेत्र में शक्ति रूप से सर्वत्र विद्यमान रहती है। अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति ने मुँह से दबाव देकर उस पिण्ड को छिन्न-भिन्न कर दिया। इसका अर्थ है- भविष्य में अपरा-प्रकृति अभ्यास के द्वारा नष्ट हुए के समान हो जायेगी, मगर अन्य जीवों के लिए अपरा-प्रकृति उपस्थित रहेगी, क्योंकि अन्य जीवों के चित्त में कर्माशय भोगने लिए अभी विद्यमान है।

हमारे लिए जब परा-प्रकृति का अवतरण चित्त पर जैसे-जैसे होगा, वैसे-वैसे अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जाएगी। अन्त में एक समय ऐसा आयेगा, जब अपरा-प्रकृति शुद्ध हो-होकर अपने स्वरूप से मेरे लिए नष्ट हुए के समान हो जायेगी। फिर मेरे लिए सर्वत्र परा-प्रकृति का स्वरूप उपस्थित हो जाएगा।

रीढ़ की हड्डी

यह अनुभव 27 सितम्बर की शाम को आँखे बन्द होने पर जाग्रत अवस्था में आया। अपनी कुटिया के चबूतरे के ऊपर मैं आँखे बन्द किये हुए लेटा था। तभी हमारे सिर के पीछे की ओर जोर से वायु की आवाज आयी। लेटे हुए ही मुझे दिव्य दृष्टि के द्वारा सिर के पीछे की ओर का दृश्य दिखाई देने लगा। पश्चिम दिशा की ओर से वायु के ऊपर रखा हुआ माँस से निर्मित मानव आकार आया। उस मानव आकार को वायु ने जोरदार ढंग से उछाल कर हमारे सिर के पीछे की ओर फेंक दिया। जो चीज फेंकी गयी थी, वह विचित्र ढंग का मनुष्य का शरीर था। उस शरीर में रीढ़ की हड्डी पर हल्का सा माँस लिपटा हुआ था। रीढ़ के ऊपरी भाग पर माँस के लोथड़े का बना मनुष्य के सिर जैसा अविकसित सिर लगा हुआ था। वहीं से माँस के बने अविकसित दो हाथ छोटे-छोटे से लगे थे। रीढ़ के निचले भाग पर अविकसित दो छोटे-छोटे पैर लगे थे। हाथों और पैरों में हड्डियाँ नहीं थी सिर्फ माँस पिण्ड के जैसे थे। इस दृश्य को देखकर मैं चौंक पड़ा, क्योंकि थोड़ी दूरी पर वायु तत्व खड़े रूप में विद्यमान था। सामने की ओर मानव जैसे आकार वाला पिण्ड पड़ा हुआ था। मैंने अपनी दृष्टि मानव पिण्ड पर स्थिर की। दृष्टि स्थिर होते ही मानव आकार के सिर, हाथ और पैर अदृश्य हो गये, अब सिर्फ उस जगह रीढ़ की हड्डी ही शेष रह गयी थी। मुझे स्पष्ट दिखाई दे

रहा था- रीढ़ जैसी सीधी आकार में एक ही हड्डी पड़ी हुई थी। फर्क यह था- रीढ़ में टुकड़े-टुकड़े ढेर सारे जुड़े होते है तभी रीढ़ बनती है, यह सीधी हड्डी स्पष्ट रूप से थी। उस हड्डी में सिर्फ नाममात्र का माँस चिपका हुआ था, मैं यही देख रहा था। पहले हमारे देखते ही सिर, हाथ और पैर अदृश्य हो गये थे। मगर अब भी रीढ़ की हड्डी पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ रहा था। कुछ समय तक यही देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव ध्यानावस्था में नहीं आया, बल्कि सिर्फ आँखे बन्द किये हुए मैं कुटिया के चबूतरे पर लेटा हुआ था, तब अनुभव आया था। अनुभव में सूक्ष्म शरीर की शुद्धता दिखाई गयी है। सूक्ष्म शरीर में सूक्ष्म रूप से सिर्फ रीढ़ की हड्डी वाला क्षेत्र रह गया है और सम्पूर्ण शरीर शुद्ध हो चुका है। इस अनुभव में रीढ़ की हड्डी पर अभी शुद्धता का असर इतना नहीं हुआ है कि उसका स्वरूप ही नष्ट हो जाये। इसलिये स्पष्ट होता है अभी कुछ समय और लगेगा। वर्तमान समय में मैं दूसरों की भी अशुद्धता धारण कर लेता हूँ ऐसा मार्गदर्शन करते समय होता है। मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर का मुख्य अंग रीढ़ की हड्डी ही होती है। रीढ़ की हड्डी के सहारे ही मनुष्य का सम्पूर्ण शरीर सधा रहता है तथा इसी रीढ़ के अन्दर से नाड़ियों का समूह निकल कर सम्पूर्ण शरीर में जाल के समान फैला रहता है।

इसकी (रीढ़ का) शुद्धता का प्रभाव चित्त की शुद्धता पर भी पड़ेगा। जब तमोगुणी अहंकार पूर्ण रूप से शुद्ध हो जायेगा, चित्त की शुद्धता भी पराकाष्ठा तक पहुँच जायेगी अर्थात चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र फैल जायेगा और चित्त स्फटिक मणि के समान शुद्ध हो जायेगा। परा-प्रकृति का अवतरण पूर्ण रूप से होने वाला होगा और निरुद्धावस्था की स्थिरता लम्बी अवधि तक हो जायेगी। तब इस रीढ़ का स्वरूप नष्ट या अदृश्य हो जायेगा। अनुभव में तो शुद्धता दिखेगी, लेकिन वास्तविक शुद्धता शरीर त्यागते समय होगी।

महाविस्फोट

यह अनुभव 6 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। मुझे समाधि अवस्था में जोर से आवाज सुनाई दी, इस आवाज के कारण हमारी समाधि भंग हो गयी। मैं आँखे बन्द किये हुए सोचने लगा- यह भयंकर आवाज कहाँ से आयी है? तभी मुझे आवाज सुनाई दी- योगी, यह विस्फोट नहीं महाविस्फोट की आवाज सुनाई दी है। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला, सिर्फ चुप रहा। दुबारा फिर आवाज सुनाई दी- देखो, यह विस्फोट

नहीं महाविस्फोट था। इस महाविस्फोट का होना अतिआवश्यक था। इस महाविस्फोट से तुम्हारे अन्दर भारी परिवर्तन आयेगा। इस परिवर्तन का होना बहुत जरुरी है क्योंकि इस परिवर्तन स्वरूप तुम्हें परम शान्ति की प्राप्ति होनी सम्भव हो सकेगी।

अर्थ- ध्यानावस्था के समय में मुझे जोर से विस्फोट की आवाज सुनाई दी थी। इस आवाज से हमारी समाधि भंग हो गयी थी मगर मैं आवाज के अर्थ के विषय में जान नहीं सका। आवाज ने मुझे महाविस्फोट के विषय में बताया है। महाविस्फोट सिर्फ दो बार ही होता है:- एक- जब अपरा-प्रकृति की सृष्टि का समय आता है, दूसरा- जब अपरा-प्रकृति का महाप्रलय का समय आता है। तब अपरा-प्रकृति सब कुछ अपने अन्दर समेट कर स्वयं बीज रूप में परा-प्रकृति के अन्दर विद्यमान हो जाती है। शायद उस आवाज का इशारा प्रलय उन्मुख की ओर को होगा। सम्पूर्ण ईर्ष्या, मोह, अज्ञानता के नाश होने पर अभ्यासी को परम शान्ति की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 25 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। ध्यान के समय मुझे आकाश में अत्यन्त तेजस्वी ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी। पहले जब ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी थी, तब हमारी दृष्टि नीचे की ओर थी। अबकी बार ऋतम्भरा-प्रज्ञा को देखते समय हमारी दृष्टि सामने की ओर थी अर्थात ऋतम्भरा-प्रज्ञा पहले की अपेक्षा आकाश में ऊपर की ओर थी। जैसे सूर्य उगने के बाद ऊपर की ओर आकाश में चढ़ता है, इसी प्रकार ऋतम्भरा-प्रज्ञा ऊपर की ओर चढ़ती हुई दिखाई देती है। इससे स्पष्ट होता है कि अभ्यासी की अवस्था आगे की ओर जा रही है। अबकी बार जब ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी थी, तब मात्र कुछ सेकण्ड के लिए दिखाई दी थी। वैसे ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन मात्र कुछ क्षणों का ही होता है। इस अनुभव में ऋतम्भरा-प्रज्ञा बहुत ही तेजस्वी दिखाई दी थी। फिर 29 अक्टूबर को भी ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी थी।

अर्थ- चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रकट होने से चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैलता है। इससे चित्त पर स्थित मलिनता, जड़ता और अज्ञानता का नाश होता है, जिससे चित्त पर शुद्धता की मात्रा बढ़ती है।

साधक की तरह नहीं ब्रह्म के समान जिओ

यह जानकारी मुझे 28 अक्टूबर को ध्यानावस्था में दी गयी। ध्यानावस्था में मुझे सुनाई दिया- "साधक की तरह नहीं ब्रह्म के समान जिओ।" यह आवाज सुनकर मेरा ध्यान टूट सा गया, मगर आँखे बन्द किये रहा। आवाज द्वारा कहे गये शब्दों को सुनकर मैं मुस्कुराने लगा क्योंकि मैं इन शब्दों का अर्थ समझ रहा था।

अर्थ- अभी तक हमारे जीने का तरीका कुछ ऐसा था, जैसे साधक अपना जीवन जिया करते हैं। इसका कारण यह है- मैं सदैव सत्य का अनुसरण करता हूँ, दूसरा मुझे देख कर वह भी सत्य का अनुसरण करे। समझाने का तरीका साधकों के जैसा था। ये शब्द मुझे ब्रह्मज्ञानी होने के कारण कहे गये हैं, अर्थात तत्वज्ञानी हो अर्थात ब्रह्मज्ञानी हो, ब्रह्मज्ञानियों की भाँति जीवन जियो। जिसने ब्रह्म को जान लिया वह ब्रह्म के समान हो जाता है, ऐसा कहा जाता है।

मेरा जीवन जीने का तरीका थोड़ा सा भिन्न है। मैं अपना जीवन परोपकार में, साधकों के मार्गदर्शन में अर्थात अज्ञानता में जी रहा हूँ। कभी-कभी समाज का कल्याण करते-करते निम्न अवस्था को प्राप्त हो जाता हूँ, इसीलिए शायद मुझसे ऐसे शब्द कहे गये।

तुम किसी की प्रकृति को बदल नहीं सकते

यह बात मुझे नवम्बर के प्रथम सप्ताह में बताई गयी थी। मैं गहरा ध्यान कर रहा था तब मुझे जोर से आवाज सुनाई दी- "योगी तुम चाहे जितना प्रयास कर लो, किसी की प्रकृति को नहीं बदल सकते हो, क्योंकि मनुष्य की प्रकृति उसके कर्मानुसार ही होती है। जब तक कर्मों का नाश नहीं होगा, तब तक हर किसी की प्रकृति वैसी ही बनी रहती है।" जब ये शब्द कहे जा रहे थे तब मेरा ध्यान गहरे ध्यान से हटकर हल्का ध्यान हो गया था। आवाज द्वारा जो कहा गया वह स्पष्ट सुनाई दे रहा था।

त्रेता युग का अनुभव

यह अनुभव 15 नवम्बर को आया था। मैंने ध्यानावस्था में देखा- दो नवयुवक किम्प पुरुष खड़े हुए थे। दोनों नवयुवक हाथ जोड़े हुए थे। उनके सामने ऊँचे सिंहासन पर एक पुरुष बैठा हुआ था। मैं उसके बगल में खड़ा हुआ था, यह सब दृश्य देख रहा था। हमारी दृष्टि उन दोनों हाथ जोड़े नवयुवकों पर टिकी हुई थी। सिंहासन पर बैठा हुआ पुरुष बोला- "तुमने अंजन प्रदेश में प्रवेश करने की आज्ञा ली थी?" उत्तर में उन दोनों युवकों ने पहले "नहीं" में सिर हिलाया। फिर कुछ क्षणों बाद दोनों युवक बोले- "नहीं"। मैं उन युवकों को लगातार देखे जा रहा था। सामने ऊँचे सिंहासन पर बैठा पुरुष जो पूछ रहा था, वह मुझे स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा था।

अर्थ- किम्प पुरुष बन्दर के समान मुख वाले पुरुष होते हैं। ऐसे किम्प पुरुषों का वर्णन आध्यात्मिक पुस्तकों में मिलता है। किम्प पुरुष की जाति त्रेता युग में बहुत पायी जाती थी। ये किम्प पुरुष मनुष्य की अपेक्षा बहुत ही शक्तिशाली होते थे। सिंहासन पर बैठे पुरुष को मैं स्पष्ट रूप से नहीं देख पाया था, जबकि मैं वहीं पर खड़ा था। वे दोनों नवयुवक हाथ जोड़े खड़े थे, उनकी उम्र लगभग 15-16 वर्ष रही होगी। त्रेता युग में अंजन प्रदेश के राजा केसरी थे, वे हनुमान जी के पिताजी भी थे। इस दृश्य को मुझे क्यों दिखाया गया, यह मैं लिखना नहीं चाहता हूँ।

सूखा बाँस

यह अनुभव 23 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया था। मैंने देखा- मैं अपने दाहिने हाथ में एक सूखा बाँस लिये था। मैंने उस बाँस को दूर फेंक दिया। मैं बाँस को देख कर कह रहा हूँ- "यही संसार का स्वरूप है।" उसकी हर गाँठ से डालियाँ निकली हुई थीं। वह डालियाँ भी पूरी तरह सूखी हुई थीं।

अर्थ- सूखा बाँस संसार का प्रतीक है। जिस प्रकार सूखे बाँस में बाहर की तरफ किसी प्रकार का रस नहीं होता है, उसी प्रकार अन्दर की ओर भी किसी प्रकार का रस नहीं होता है अर्थात अन्दर और बाहर दोनों तरफ नीरस ही नीरस है। इसी प्रकार ज्ञान की दृष्टि से देखने पर संसार अन्दर और बाहर से नीरस ही है। इसीलिए सम्पूर्ण संसार त्यागने के योग्य ही है। अनुभव में मैं बाँस को फेंक देता हूँ, अर्थात

भविष्य में मैं इस संसार को त्याग दूँगा। साधकों का मार्गदर्शन करने के कारण अनुभव में मैं बाँस को पकड़े हुए था, मगर बाद में फेंक दिया।

कुण्डलिनी और सिंहासन

यह अनुभव मुझे 23 नवम्बर को रात्रि 10 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- चारों ओर सर्वत्र आकाश है। आकाश निर्मल स्वच्छ है। आकाश में एक सुनहली नागिन इधर-उधर रेंग रही है। इसे देखते ही मैं चौंक पड़ा क्योंकि उस नागिन का शरीर तपे हुए सोने से बना हुआ था तथा नागिन का शरीर चमक रहा था। इससे दिखाई देने पर ऐसा लगता था यह नागिन दिव्य प्रकाशित शरीर वाली है। यह नागिन बड़े आराम से आकाश में रेंग रही थी। तभी नीचे की ओर से ऊपर की ओर आता हुआ विशालकाय सिंहासन दिखाई दिया। सिंहासन धीरे-धीरे ऊपर की ओर आ रहा था। सिंहासन भी ऐसा दिखाई दे रहा था मानो ये भी तपे हुए सोने का बना हुआ है। इस सिंहासन में चमक थी। नागिन के शरीर का रंग व चमक और सिंहासन का रंग व चमक बिलकुल एक जैसी थी। सिंहासन धीरे-धीरे ऊपर आकर सामने ठहर गया। अब मैं अपने सामने सोने का बना हुआ सिंहासन और नागिन को देख रहा था तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में सर्वत्र आकाश फैला हुआ है, यह मेरा ही चित्ताकाश है। यह कुण्डलिनी शक्ति हमारे ही चित्ताकाश में इधर-उधर रेंग रही है। सोने का बना हुआ सिंहासन नीचे से ऊपर आकर हमारे सामने ठहर गया। सिंहासन का सुनहरा रंग व चमक, कुण्डलिनी शक्ति का रंग व चमक बिलकुल एक जैसा था। अनुभव में उस सिंहासन पर कोई नहीं बैठा था। ऐसा लग रहा था मानो कुण्डलिनी शक्ति ही इस सिंहासन पर बैठेगी। ऐसा दिखाई दे रहा था कुण्डलिनी शक्ति ही इस क्षेत्र की (चित्ताकाश) स्वामिनी है। अनुभव देखने में बहुत अच्छा लग रहा था।

उल्टा वृक्ष

यह अनुभव 26 नवम्बर को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- खड़े आकार में अण्डाकार क्षेत्र है। यह अण्डाकार क्षेत्र में अन्दर की तरफ बिलकुल स्वच्छ पारदर्शी सा दिखाई दे रहा है। इस अण्डाकार क्षेत्र के ऊपरी भाग में एक बड़ा सा छिद्र है। इसी छिद्र में एक वृक्ष उल्टा लटका हुआ है।

छिद्र के अन्दर अर्थात अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर सम्पूर्ण वृक्ष (तना, शाखायें) समाया हुआ है। मगर उस वृक्ष की जड़ें ऊपर स्थित छिद्र से बाहर ऊपर की ओर हैं अर्थात उसकी जड़े अण्डाकार क्षेत्र से बाहर ऊपर की ओर फैली हुई हैं। यह वृक्ष बड़ा विचित्र सा दिखाई दे रहा था। उसी समय मुझे अपना होश आने लगा और मेरा ध्यान टूट गया। फिर मैं अपने आसन पर बैठे हुए ही आँखे बन्द करके ॐ (ओम्) मंत्र का जाप करने लगा। मंत्र जाप करते समय मुझे दिखाई दिया- मेरे द्वारा मंत्र जाप के प्रभाव से वृक्ष नीचे की ओर आने लगा। उस वृक्ष की जड़े जो अण्डाकार क्षेत्र से ऊपर की ओर बाहर निकली थीं, वह जड़ें भी अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर आ गयीं। उसी समय वृक्ष नीचे की ओर आकर अण्डाकार क्षेत्र के सहित मेरे शरीर के अन्दर सिर के ऊपरी भाग से प्रवेश करके शरीर के अन्दर अदृश्य हो गया। अदृश्य होते ही मुझे अनुभूति हुई कि यह उल्टा वृक्ष मेरे शरीर के अन्दर विद्यमान है। इस वृक्ष की जड़े हमारे सिर के ऊपरी भाग में फैली हुई हैं। थोड़ी देर तक मैं मंत्र जाप करता रहा, फिर मंत्र जाप करना बन्द कर दिया।

अर्थ- गीता के 15वें अध्याय के पहले श्लोक में इस वृक्ष का वर्णन मिलता है। अण्डाकार क्षेत्र हमारा ही चित्त है तथा अपरा-प्रकृति का स्वरूप भी इसी प्रकार अण्डाकार ही होता है। गीता के पंद्रहवें अध्याय का पहला श्लोक इस प्रकार है-

"ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥"

इसका अर्थ है- इस श्लोक में संसार की तुलना उल्टे पीपल के वृक्ष से की गयी है। श्री कृष्ण जी कहते हैं- इस संसार रूपी अविनाशी वृक्ष की जड़े ऊपर (परमात्मा में) और शाखायें नीचे (सांसारिक भोगों में) फैली हुई हैं और वेद इसके पत्ते हैं। इस मायावी जगत को, जो इसके मूल सहित समझ जाता है वही सच्चा ज्ञानी है।

यह श्लोक यह सन्देश देता है कि हमें इस नश्वर संसार रूपी वृक्ष से मोह तोड़कर इसकी जड़ अर्थात ईश्वर की प्राप्ति और ज्ञान की ओर बढ़ना चाहिये।

अगली अवस्था के लिए

यह जानकारी मुझे 27 नवम्बर को प्राणायाम और जाप करते समय दी गयी। मैं कठोर प्राणायाम करके जाप कर रहा था, तभी ध्वनि सुनाई दी- "अब अगली अवस्था के लिये आगे बढ़ो, ताकि अगली अवस्था प्राप्त हो सके। साधकों के प्रति आसक्ति छोड़ दो, मार्गदर्शन करने की आवश्यकता नहीं है, साधकों को स्वयं अभ्यास करने दो। आप उनकी चिन्ता न करें।"

अर्थ- इस अनुभव में मुझे जानकारी दी गयी- अगली अवस्था प्राप्त करने का प्रयास करो। साधकों के प्रति आसक्ति और मार्गदर्शन करना छोड़ने के लिए कहा गया है। मुझे यह जानकारी नहीं दी गयी- अगली अवस्था में क्या प्राप्त होने वाला है। मैंने उस अवस्था के विषय में कुछ भी नहीं पूछा था।

भ्रान्ति

यह जानकारी मुझे 29 नवम्बर को दोपहर बाद दी गयी थी। मुझे ध्यानावस्था में बताया गया- यहाँ सिर्फ भ्रान्ति है, भ्रान्ति के सिवाय और कुछ भी नहीं है क्योंकी संसार का स्वरूप ही भ्रान्ति वाला है। इसीलिए संसार को भ्रम रूपी कहा गया है। तुम तत्त्वज्ञानी होकर भी इस भ्रम रूपी संसार में अपना कार्य कर रहे हो अर्थात साधकों का मार्गदर्शन कर रहे हो। सदैव परोपकार करने की इच्छा से युक्त रहे हो, यही तुम्हारी श्रेष्ठता है। अब अपना यह कार्य समाप्त करने की सोचो और आगे की ओर बढ़ो"।

ये शब्द सुनने के बाद हमारे अन्दर विशेष प्रकार का परिवर्तन आने लगा। वृत्तियाँ स्थिर रहने लगी। अब मैं बहुत समय तक चुपचाप बैठा रहने लगा।

परम शान्ति का जागरण

यह अनुभव 4 दिसम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने निर्मल स्वच्छ आकाश में एक स्त्री लेटी हुई सो रही है। जैसे ही मेरी दृष्टि उसके ऊपर पड़ी, उसने झटके के साथ अपनी आँखे खोल दी, फिर मुझे आँखे फाड़-फाड़ कर देखने लगी। मैं भी उसे देख कर चौंक पड़ा और सोचने लगा- यह स्त्री कौन है जो अभी-अभी जागी है? वह स्त्री देखने में बहुत सुन्दर दिखाई दे रही थी। अपने मन के

अन्दर सोचने लगा- "यह स्त्री कितनी सुन्दर लग रही है"। मैंने संकल्प करके पूछा- यह स्त्री कौन है? उसी समय आकाश से आवाज आयी- "यह स्त्री तुम्हारी परम शान्ति का स्वरूप है। तुम्हारी परम शान्ति जाग गयी है, कुछ समय बाद तुम परम शान्ति की अनुभूति करोगे"। कुछ समय के लिये शान्ति छा गयी। फिर कुछ समय बाद आकाश से आवाज आयी- "तुम्हारे लिये संसार का नाश हो गया है अर्थात यह संसार तुम्हारे लिये नष्ट हुए के समान हो गया है। संसार के विषयों का चिन्तन करने की आवश्यकता नहीं है"।

अर्थ- अनुभव में अत्यन्त निर्मल आकाश में बहुत सुन्दर स्त्री सो रही थी। मेरे देखते ही वह स्त्री जाग गयी। वह स्त्री मुझे आँखे फाड़-फाड़ कर देख रही थी। उसके चेहरे पर पूर्ण रूप से शान्ति का भाव था। मैं उसकी सुन्दरता देखे जा रहा था तथा मन के अन्दर सोच रहा था- यह सुन्दर स्त्री कौन है? तब मुझे बताया गया "यह परम शान्ति का स्वरूप है"। साधकों! परम शान्ति अभ्यासी को तब प्राप्त होती है जब उसके अन्दर से ईर्ष्या, द्वेष, लोभ, मोह और अज्ञानता के संस्कार पूर्ण से समाप्त हो जाते है। उस समय अभ्यासी का चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी हो जाता है। यह अवस्था भविष्य में प्राप्त होगी। यह अवस्था अभ्यास के द्वारा क्रमशः धीरे-धीरे प्राप्त होती है। अभी तो मैं साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। यह मार्गदर्शन करना अज्ञानता के अन्तर्गत आता है।

सन् 2015

सुरंगनुमा जगह से बाहर आया

यह अनुभव 25 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। मैं सुरंगनुमा जगह के अन्दर आगे की ओर बढ़ता जा रहा हूँ। अन्त में यह सुरंगनुमा जगह संकरी सी हो गयी थी, पर मैं आगे की ओर बढ़ता रहा। अन्त में सुरंग नुमा जगह खुली हुई थी, मैं खुली हुई सुरंग नुमा जगह के मुहाने पर खड़ा हो गया। तभी मैंने देखा- मैं हल्के नीले चमकदार रंग के आकाश में खड़ा हूँ। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में सुरंग नुमा जगह खुली हुई थी, जबकि पहले अनुभवों में सुरंग नुमा जगह बन्द मिलती थी। यह सुरंग नुमा क्षेत्र "अहंकार का क्षेत्र" है। अनुभव में सुरंग नुमा जगह के अन्दर आगे की ओर जाते हुए अनुभूति होती थी। बाहर से देखने पर दिखाई देता था, वह किसी नाग के शरीर के अन्दर आगे की ओर चला जा रहा है। अध्यात्म में नाग अहंकार का प्रतीक होता है, इसलिए अनुभव में ऐसा प्रतीत होता था कि वह नाग के शरीर के अन्दर आगे की ओर चला जा रहा है। चित्त का पहला विकार अहंकार ही होता है। आगे की अवस्था चित्त से सम्बंधित होगी।

अभी मुझे समाज में जीवों का (साधकों) कल्याण करना है ऐसी अवस्था में फिर से मेरा पतन हो जायेगा। जब मैं अभ्यास करना शुरु कर दूँगा तब फिर से मुझे उच्चावस्था प्राप्त हो जायेगी। इसके अतिरिक्त मेरे चित्त की शुद्धता के लिये आरोही-अवरोही क्रम के द्वारा चित्त से लेकर स्थूल तक फिर स्थूल से लेकर चित्त तक कई बार शुद्धता का क्रम चलता रहेगा, ऐसे क्रम में कभी उच्चावस्था तो कभी निम्नावस्था उपस्थित हो जाती है। ऐसी जानकारी के लिए गुरू का होना अतिआवश्यक है। उस गुरू की आध्यात्मिक योग्यता पूर्ण रूप से तत्वज्ञान प्राप्त वाली होना चाहिए, जिसने अभ्यास के द्वारा यह ज्ञान प्राप्त कर लिया हो। ऐसा गुरू इस पृथ्वी पर कहाँ मिलेगा, मुझे मालूम नहीं है।

वर्तमान समय में मेरा कोई गुरू नहीं है। अब मुझे गुरू की आवश्यकता भी नहीं है। मैं स्वयं अपने आप में पूर्ण हूँ। ऐसी अवस्था में अभ्यासियों को भ्रम न हो जाय कि उच्चावस्था के बाद निम्नावस्था क्यों उपस्थित हो गयी है, इसलिये आपके सामने यह जानकारी बताई गई है। सिर्फ शब्दों से समझाने वाले

समाज में बहुत से गुरू मिल जायेंगे, अभ्यासी गुरू ढूढ़ने पर भी नहीं मिलेंगे। पृथ्वी पर ऐसे गुरूओं की संख्या न के बराबर होती है।

मरने के बाद

यह अनुभव 1 फरवरी को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं स्थूल शरीर को त्याग कर प्रकाशमान आकाश में ऊपर की ओर स्थित हो गया हूँ, मैं बहुत प्रसन्न हूँ। फिर मैं नीचे की ओर दृष्टि करके पृथ्वी की ओर देखने लगा- पृथ्वी पर मनुष्यों की हलचल और उनके द्वारा किये गये व्यवहार पर टकटकी लगाए हुए हूँ अर्थात पृथ्वी पर मनुष्य जो व्यवहार अपने जीवन में कर रहे थे, वह मैं ऊपर बैठे प्रकाशमान आकाश से देख रहा था। मुझे इस बात की बहुत प्रसन्नता थी, जब मैं मर कर प्रकाशमान जगह में स्थित हुआ था तब मैं बहुत प्रसन्न हुआ। पृथ्वी पर जब तक मनुष्य रहता है तब बहुत दु:खी रहता है। शरीर त्यागने के पश्चात दु:खों का अन्त हो जाता है।

अर्थ- मुझे इस अनुभव में दिखाया गया- मनुष्य जब तक पृथ्वी पर रहता है, तब तक बहुत दु:खी रहता है। मुझे शरीर त्यागने के पश्चात किसी प्रकार का दु:ख नहीं रहेगा अर्थात सभी प्रकार के दु:खों का अन्त हो जायेगा। ऐसा सिर्फ उच्च कोटी के योगियों के लिये तथा तत्वज्ञानियों के लिए होता है। लोभ, लालच, माया, मोह में आसक्त संसारी मनुष्यों को कर्मानुसार दण्ड, मृत्यु के बाद भी दीर्घकाल तक मिलता रहता है।

समय से पहले

यह जानकारी 2 फरवरी को मुझे ध्यानावस्था में दी गयी। ध्यान के समय आकाश से आवाज सुनाई दी- "समय से पहले और आवश्यकता से अधिक मिली हुई वस्तु का उचित महत्व नहीं होता है"। अनुभव में ये शब्द मुझसे इसलिए कहे गये क्योंकी मैं सभी साधकों को आवश्यकता से अधिक आध्यात्मिक योग्यता दे दिया करता हूँ। ये साधक उसका महत्व नहीं समझ पा रहे है।

ज्यादातर साधकों की योग्यता न होने पर भी उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत कर देता था। जो योग्यता कई वर्षों के अभ्यास के बाद प्राप्त होनी होती है अथवा वर्तमान जन्म में नहीं प्राप्त कर सकते थे,

उसे भी मैंने कुछ समय में ही दे दी है। ऐसे बहुत से साधक अपने रास्ते से भटक गये क्योंकी कुछ साधक मुझसे ही अभद्रता का व्यवहार करने लगे अथवा मुझे ही छोड़ कर चले गये। आजकल परोपकार या कल्याण का जमाना नहीं रह गया है क्योंकि साधक इतना स्वार्थी हो गया है कि वो मुझसे ही झूठ बोलने लगता है और धोखा भी देने लगता है। ऐसे साधकों के लिए प्रकृति की व्यवस्था में व सिद्धान्त में बहुत ही सुन्दर पुरस्कार की व्यवस्था है। मैं अपना कार्य करता रहता हूँ अर्थात कल्याण का कार्य करता रहता हूँ। अब साधकों के कर्मानुसार प्रकृति अपनी व्यवस्था करेगी। इस विषय पर चिन्तन करने वाला मैं कौन होता हूँ। इसीलिये इस अनुभव में मुझे ये जानकारी दी गयी थी।

सहस्त्रार से टपकता हुआ पदार्थ

यह अनुभव 11 फरवरी को आया। ध्यानावस्था में देखा- मुझे अपना सम्पूर्ण मस्तिष्क दिखाई देने लगा। इस मस्तिष्क के सबसे ऊपरी हिस्से पर अलग से थोड़ा क्षेत्र है। यह क्षेत्र विशेष प्रकार का है। यह विशेष प्रकार का क्षेत्र सिर्फ उच्च श्रेणी के योगियों का विकसित होता है जिस योगी का अंतिम जन्म होता है। इस विशेष प्रकार के क्षेत्र से, विशेष प्रकार का द्रव्य टपक रहा था। टपक कर नीचे गिरने वाला द्रव्य सम्पूर्ण मस्तिष्क में व्याप्त हो रहा था। यह द्रव्य एक-एक बूँद धीरे-धीरे टपक रहा था।

अर्थ- अनुभव में जो द्रव्य टपकता हुआ दिखाई दे रहा है वह क्षेत्र सहस्त्रार के अंतर्गत आता है। फिर वह द्रव्य मस्तिष्क के ऊपर गिरकर सम्पूर्ण मस्तिष्क के अन्दर व्याप्त हो जाता है। यह द्रव्य सिर्फ उसी के मस्तिष्क पर गिरकर व्याप्त हो सकता है जिसका सहस्त्रार चक्र खुला हुआ है और पूर्ण रूप से विकसित भी हो चुका है। अविकसित सहस्त्रार चक्र वाले योगी के शरीर में यह क्रिया नहीं हो सकती है।

मैंने अपनी पुस्तक "योग कैसे करें" में लिखा हुआ है- जब साधक का कण्ठ-चक्र खुल जाता है तब सिर के ऊपरी भाग से गाढ़ा तरल पदार्थ टपकता हुआ ध्यान में दिखाई देता है तथा इस गाढ़े तरल पदार्थ का स्वाद मीठा होता है जैसे शहद मीठा होता है, इसी प्रकार का स्वाद इस गाढ़े तरल पदार्थ का होता है। कभी-कभी इस तरल पदार्थ की बूँदें जब गले के अन्दर गिरती है तब गले के अन्दर शहद जैसा मीठा सा लगता है, यह मीठापन कुछ घण्टों तक बना रहता है। मैं साधकों को यह बताना चाहता हूँ कि यह गाढ़ा तरल पदार्थ जिसकी कभी-कभी बूँदें गले के अन्दर भी गिर जाती है, यह सहस्त्रार चक्र वाला

तरल पदार्थ नहीं है। सहस्त्रार से टपकने वाले तरल पदार्थ की अनुभूति सिर्फ वही अभ्यासी कर सकता है अथवा देख सकता है जिसका सहस्त्रार चक्र खुला हुआ है।

लक्ष्य ब्रह्म

यह अनुभव 27 जनवरी को आया था, उस समय यह अनुभव लिख नहीं पाया था। मैंने ध्यानावस्था में देखा- हमारे नाभि के क्षेत्र से तीर निकल कर सामने थोड़ी दूरी पर स्थित प्रकाश के अन्दर घुसते जा रहे थे। ये तीर नाभि के क्षेत्र से निकल कर तीव्र गति से अर्थात नाभि के क्षेत्र से तीव्र गति से तीर निकल कर सामने थोड़ी दूरी पर स्थित प्रकाश के अन्दर प्रवेश करते जा रहे थे। तीरों का प्रहार प्रकाश पर हो रहा था। प्रकाश मुझसे थोड़ी दूरी (लगभग 2 मीटर) पर स्थित था।

अर्थ- अनुभव में तीर हमारे नाभि क्षेत्र के अन्दर से प्रकट हो रहे थे। प्रकाश का अर्थ इस अनुभव में ब्रह्म से है। अर्थात उन सभी तीरों का लक्ष्य निर्गुण ब्रह्म था। वह तीर ब्रह्म का भेदन कर रहे थे। अनुभव का अर्थ है- "हमारा लक्ष्य निर्गुण ब्रह्म ही है" तथा अनुभव में मैं ब्रह्म का भेदन भी कर रहा हूँ अर्थात ब्रह्म को भेद रहा हूँ। ब्रह्म को प्राप्त करना ही हमारा लक्ष्य है।

रजनीश जी (ओशो)

सायंकाल 7 बजे 2 मार्च को मेरी रजनीश जी से बात हुई। सच तो यह है मुझे यह नहीं कहना चाहिये कि रजनीश जी से बात हुई, बल्कि मुझे कहना चाहिए कि उन्होंने मुझसे बहुत कुछ शिक्षा के रूप में कहा, मैं उनको सुनता रहा। रजनीश जी की वही जानी-पहचानी आवाज, आवाज में आकर्षण, क्या जादू है उनकी आवाज में। वह बोले- **"हीरा जब तक तराशा न जाय, तब तक वह कोयले जैसा ही रहता है। हीरा जब तराश दिया जाय, तब वह स्वच्छ निर्मल हो जाता है, उसमें चमक आ जाती है। इसलिये उसे तराशने की जरुरत है। तुम निश्चय ही उसे तराश सकते हो, तुम्हारे अन्दर वो माहिरता है, तुम इस कार्य में निपुण हो। तुम जिसे तराशो वह हीरा न बन सके, ऐसा हो ही नहीं सकता है। वह चमकदार हीरा बनने के योग्य है। अगर उसे जरूरत है तो वह है तुम्हारी। अगर तुमने उस पर अपनी माहिरता का प्रयोग नहीं किया, तो वह अंधेरी गलियों में खो जायेगी, ऐसा**

निश्चित है। तुम जरा उसकी परिस्थितियाँ भी तो देखो, उसकी परिस्थितियाँ कैसी हैं? जब तुम युवाओं को योग का अभ्यास कराते हो, तो मुझे अच्छा लगता है। युवाओं को जाग्रत करने का कार्य निश्चय ही बहुत अच्छा है। यही युवा देश की शक्ति बनते है। युवा शक्तिशाली, तो देश शक्तिशाली है, देश शक्तिशाली, तो हमारा धर्म शक्तिशाली है। इसीलिए युवाओं को शक्तिशाली बनाओ। इससे समाज को तुम से योग सीखने का अवसर मिलेगा। तुम बार-बार कहते हो, हमारा कार्यकाल समाप्त हो गया। मैं तुम से कहता हूँ- अपना कार्यकाल बढ़ाओ। समाज जागरुक होगा, समाज को योग का लाभ मिलेगा। ऐसी योग्यता, ऐसा हुनर वाला योगी समाज में हमेशा नहीं आते है। अगर कभी आते भी है, तो कुछ समाज कल्याण में अपना बहुमूल्य समय थोड़ा बहुत देते भी है। मगर ज्यादातर अपने आप को ऐसे छुपाये रहते है जैसे शेर अपने आप को गुफा के अन्दर छुपाये रहता है। इसीलिए योगी तुम अपना कार्यकाल मत समाप्त करो। यदि तुम हमारे प्रत्यक्ष होते (भूलोक पर) तो अवश्य ही तुम्हें अपने गले लगा लेता।"

रजनीश जी ने मुझसे बहुत सी बातें कही, लिखते समय जो बातें याद रही, मैंने उन्ही शब्दों को लिखा है।

मुझे याद आ रहा है- आज से लगभग तीन वर्ष पहले हमारी और रजनीश जी की बात हुई थी। बात लगभग 40 मिनट तक हुई थी, उन बातों को मैं यहाँ पर नहीं लिख रहा हूँ। उन बातों के कुछ अंश मैंने लिख रखे है। उस समय भी यही कह रहे थे- **"आप योग का मार्गदर्शन समाज में क्यों नहीं करते हो? आपको मार्गदर्शन करना चाहिये, आप उच्च योग्यता वाले योगी है।"** उस समय मैंने उनकी बातों पर ज्यादा गौर नहीं किया।

पशुत्व का नष्ट होना

यह अनुभव मार्च के प्रथम सप्ताह में आया था। मैं आँखे बन्द किये हुए मंत्र का जाप कर रहा था। मुझे अपने सिर का ऊपरी भाग दिखाई देने लगा। मैं मंत्र भी जाप कर रहा था और सिर का ऊपरी भाग (बाहरी ओर वाला) भी देख रहा था। कुछ क्षणों बाद ऐसा लगा- मेरे सिर के अन्दर से ऊपर की ओर को कुछ निकलता हुआ आ रहा है। मैंने अपनी दृष्टि उसी स्थान पर स्थिर कर दी तथा सोचने लगा- सिर के अन्दर से बाहर ऊपरी ओर को कुछ निकलता आ रहा है। कुछ क्षणों बाद स्पष्ट हो गया- सिर के ऊपर एक

मोटा सींग ऊपर की ओर धीरे-धीरे निकलता आ रहा है। मैं जैसे-जैसे मंत्र का जाप करता था वैसे-वैसे सींग ऊपर की ओर धीरे-धीरे आ रहा था। फिर हमारे सिर के ऊपर बाहर की ओर से हल्का सा गड्ढेनुमा स्थान दिखाई दिया। उस स्थान पर हल्की सी कालिमा विद्यमान थी। तभी कुछ क्षणों में दिखाई दिया- एक नहीं दो सींग प्रकट होने लगे। दोनों सींगों में आपस में थोड़ी सी दूरी थी। फिर स्पष्ट हो गया- मैं किसी बैलनुमा पशु के सिर का ऊपरी भाग देख रहा हूँ। मंत्र अब भी लयबद्ध तरीके से जाप कर रहा था। दृश्य और स्पष्ट हुआ तो दिखाई दिया- किसी बैलनुमा पशु के दोनों सींग व सींग जिस जगह जुड़े होते है, वह स्थान सिर से उखड़ कर ऊपर आ गया। हमारे सिर के ऊपर गड्ढेनुमा स्थान से थोड़ा ऊपर उठ कर, फिर एक ओर जाकर गहराई में गिर गया। अब सिर का ऊपरी भाग पहले जैसा सही दिखाई देने लगा। मैंने मंत्र जाप करना बन्द कर दिया तथा अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- मंत्र जाप करते समय अनुभव में सिर के ऊपर दो सींग व सींगों से जुड़ा हुआ क्षेत्र अर्थात बैलनुमा पशु का सिर दिखाई दिया। जीव को जब तक तत्त्वज्ञान की प्राप्ति नहीं होती है तब तक उसे पशु की संज्ञा दी जाती है क्योंकी उसके चित्त पर अज्ञानता विद्यमान रहती है। अज्ञानता के कारण पशुता उसके अन्तःकरण में रहती है, इसीलिए तब तक उसे पशु की संज्ञा दी जाती है। एक नाम भगवान शंकर के लिये प्रयोग किया जाता है अथवा उन्हें उस नाम से सम्बोधित किया जाता है, वह नाम है "पशुपतिनाथ"। पशुपतिनाथ का अर्थ है जीवों का स्वामी अर्थात जीव के अन्दर अज्ञानता विद्यमान रहने के कारण, उसको पशु शब्द की संज्ञा दी गयी है। अज्ञानता के कारण पशुता जैसा व्यवहार किया करता है। ज्ञान प्राप्त होने पर जीव अपने निज स्वरूप अर्थात चेतन तत्व (आत्मा) में स्थित हो जाता है।

जीवात्म (जीव) ईश्वर का ही अंश है। मैंने अपनी पुस्तक तत्त्वज्ञान में इसका स्पष्ट उल्लेख किया है। जीव जो चित्त, अहंकार और मन से जुड़कर शरीर धारण करता है, फिर अपने पूर्व कर्मों के अनुसार सुख-दु:ख को भोगता है क्योंकि अहंकार के कारण उसके अन्दर मैं की भावना आ जाती है, फिर उसे अपने होने का बोध कराती है। आत्मा और जीवात्मा में अन्तर है। आत्मा विशुद्ध और शाश्वत है, जबकि जीवात्मा अज्ञान के बन्धन में बँधा हुआ महसूस होने वाला आत्म-स्वरूप ही है। जीव (जीवात्मा) का जब संसार के प्रति अज्ञान व तृष्णा जब मिट जाता है तब वह पुनः अपने स्वरूप (चेतन तत्व) में स्थित हो जाता है अर्थात मुक्त हो जाता है।

पशुता का अर्थ है- पशुओं जैसा व्यवहार, स्वभाव या अमानवीय आचरण होना आदि। जो बुद्धिहीनता, क्रूरता और संवेदनहीनता को दर्शाती है। यह एक नकारात्मक भाववाचक संज्ञा है, जो मनुष्य

के विवेकहीन और हिंसक कार्यों को इंगित करती है। जैसे सहानुभूति का अभाव या अत्यधिक स्वार्थी होना आदि।

जब कोई इंसान विवेक और दया का त्याग कर दूसरों को नुकसान पहुँचाता है, तो इसे क्रूरता अर्थात जानवरपन या निर्दयतापूर्ण स्वभाव कहते है। असंवेदनशीलता का होना पशुवत आचरण को दर्शाती है। ऐसी पशुता से मुक्ति ही मनुष्य की वास्तविक मनुष्यता मानी गई है।

किसी जानवर की प्रकृति से, उसकी क्रूरता से और अमानवीय आचरण आदि ये शब्द किसी व्यक्ति के व्यवहार से, आचरण से उसके संस्कारों को दर्शाता है। जानवर बुद्धिहीन चेतना वाला होता है, किन्तु मनुष्य विवेकशील और ज्ञानी होते हुए भी जानवरों जैसा व्यवहार करें, तो उसे पशुता ही कहा जाता है। दूसरे प्रकार से उदाहरण दिया जा सकता है- किसी दूसरे की वस्तु को बिना हक के ले लेना, बिना हक के खा जाना, बिना हक के दूसरे की सम्पत्ति को अर्जित करने का विचार करना आदि। जैसे पशु बिना हक के किसी के भी खेत चर लेता है, वह कहीं भी मुँह डाल देता है, बिना मतलब किसी को भी सींग मार देता है। ऐसे बहुत से उदाहरण है।

कभी-कभी योगमर्ग में बैल वायुतत्व का प्रतीक होता है। अभ्यसी अनुभव में देखता है- कोई मनुष्य बैलगाड़ी को लिए चला जा रहा है। बैलगाड़ी में कुछ रखा हुआ है अथवा बैलगाड़ी में कुछ भी नहीं रखा है। अभ्यासी का अभ्यास जब और बढ़ता है, तब उसे दिखाई देता है- गाड़ी का स्वरूप बदलने लगा है अर्थात बैलगाड़ी नष्ट होने लगती है, बैलों का रूप भी बदलने लगता है और अन्त में कुछ वर्षों में गाड़ी भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है। बैलों का स्वरूप भी धीरे-धीरे बदल कर कमजोर हो-होकर नष्ट सा हो जाता है। अन्त में जैसा इस अनुभव में दिखाया गया इस प्रकार नष्ट हुए के समान हो जाता है। वायु तत्व की सीमाओं से पार हो जाता है। इस अवस्था में अज्ञानता मूल से नष्ट हो जाती है तथा जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल जाता है।

सृष्टि के समय अपरा-प्रकृति आकाश तत्व में अधिष्ठित होकर वायु तत्व के द्वारा अपना सृजन करती है अर्थात सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सृजन वायु तत्व के द्वारा हुआ है। इस अनुभव में दिखाई दे रहा है- मैं वायु तत्व के प्रभाव से मुक्त हो चुका हूँ। हमारे लिए संसार का स्वरूप नष्ट हुए के समान हो गया है। अब मुझे शान्त हो जाना चाहिए। यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी।

जन्म मृत्यु का चक्र मूल से उखड़ गया

यह अनुभव 12 मार्च की सुबह मंत्र जाप करते समय आया। ध्यान करने के पश्चात मैं मंत्र जाप करने लगा। मंत्र जाप करते समय मुझे अपने सिर का ऊपरी क्षेत्र, बाहरी ओर का दिखाई देने लगा। ऐसा लग रहा था- सिर के ऊपर मध्य भाग में लकड़ी की बनी हुई चिकनी सी मोटी कीलनुमा कोई चीज घुसी हुई है। यह दृश्य देख कर मुझे आश्चर्य हुआ- यह कैसी मोटी कीलनुमा लकड़ी की बनी हुई चीज है जो सिर के ऊपर से सिर के अन्दर घुसी हुई है। लगभग 2½ से 3 इंच लम्बा कीलनुमा भाग ऊपर की ओर निकला हुआ है। इस लकड़ी का ऊपरी भाग जो सिर के ऊपर की ओर को निकला था, वह जल सा गया था। गौर करने पर दिखाई दिया- सिर के ऊपर निकली हुई लकड़ी तो कुम्हार के चाक का निचला भाग है। इसी लकड़ी की बनी हुई धुरी पर चाक घूमा करता है अर्थात यह तो कुम्हार के चाक का निचला भाग है। अब हमारी समझ में आ गया। चाक जो गोल पहिया जैसा होता है, जिस पर मिट्टी रखकर बर्तन बनाये जाते है, वह तो है ही नहीं। सिर्फ उस चाक की धुरी ही है और वह भी जलकर बेकार सी हो गयी है। इस धुरी पर अब चाक रख कर घुमाया ही नहीं जा सकता है। सिर के ऊपर विद्यमान चाक की धुरी के आस पास का क्षेत्र मैं गौरपूर्वक देख रहा था कि हमारे सिर के ऊपर चाक की धुरी विद्यमान है। मैं यह दृश्य देख रहा था और मंत्र भी बोले जा रहा था। सम्पूर्ण दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था। तभी कुछ क्षणों में दिखाई दिया- चाक की धुरी जिस क्षेत्र में विद्यमान है, उसके आस-पास का क्षेत्र उखड़ कर घूमने लगा तथा कुछ क्षणों बाद वह क्षेत्र (जो गोलाकार रूप में घूम रहा था) ऊपर की ओर उठने लगा। ऐसा लग रहा था- मानो सिर की ऊपरी परत उखड़ गयी है। इस उखड़ी हुई गोलाकार परत के नीचे मध्य भाग से एक लोहे की पतली सी सरियानुमा राड़ लगी है। वह राड़ हमारे सिर के अन्दर से नीचे की ओर शरीर में लगभग एक फीट लम्बी घुसी हुई है। वह राड़ भी उखड़ कर ऊपर की ओर निकल कर, फिर एक ओर को जाकर नीचे की ओर अनन्त गहराई में गिरती हुई दिखाई दी। अब मुझे अपना शरीर ही नहीं दिखाई देने लगा। बस इतना दिखाई दिया था मानो मेरा शरीर काली सी मिट्टी का बना पिण्ड था। वह टूट-टूटकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बदल कर आकाश में बिखर गया और उसका मलबा (काली मिट्टी का) भी अदृश्य हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली सिर के ऊपर स्थित चाक की धुरी हमारे जीवन चक्र (जन्म, जीवन और मृत्यु का चक्र) की धुरी थी। वह कुम्हार के चाक की धुरी की तरह दिखाई दे रही थी। कुम्हार का चाक इसी धुरी पर स्थित होकर गति करता है, फिर चाक पर मिट्टी रख कर वह अपने बर्तन बनाता है। अनुभव में धुरी जली हुई दिखाई दे रही थी अर्थात चाक अब उस धुरी पर रखकर चलाया नहीं (घुमाया

नहीं) जा सकता है क्योंकि धुरी अब जलकर बेकार हो चुकी है। वह धुरी अपने मूल स्थान से आधार समेत उखड़ कर अलग हो गयी। अनुभव में धुरी के नीचे लोहे का सरिया सा लगा हुआ था, वह भी उखड़ कर अलग हो गया। यह सरिया मेरी ही अज्ञानता और अविद्या का प्रतीक है, वह भी उखड़ कर अलग हो गया। मैंने अपनी पुस्तक तत्वज्ञान में अनुभव में लिखा है- लोहे की साफ़्टीन में पुली बँधी हुई है उस साफ़्टीन को एक इंजन चला रहा है अर्थात घुमा रहा है, उस साफ़्टीन में लगी पुली के द्वारा अन्य कल-पुर्जे चलाकर कार्य किया जा रहा है। वह साफ़्टीन का स्वरूप घट कर इस अनुभव में छोटे से सरिये के रूप में दिखाया गया है। अब इस अनुभव में चाक की धुरी, उसका आस पास का क्षेत्र व नीचे सरिया के रूप में आधार जो अज्ञानता की मूल जड़ के रूप में है, सब कुछ उखड़ कर अपने स्वरूप से नष्ट हो गया। अर्थात मेरा जन्म, जीवन, मृत्यु का चक्र ही समाप्त हो गया। इसकी जो मूल जड़ अज्ञानता होती है वह भी नष्ट हुए के समान हो गयी है। यह अवस्था मुझे कुछ समय बाद प्राप्त होगी।

मार्गदर्शन का इतिश्री

यह जानकारी 13 मार्च को दी गयी थी। आज मैं किसी कारण से थोड़ा सा चिन्तित था। फिर मैं ध्यान करने के लिए बैठ गया और सोचने लगा- अब किसी को मार्गदर्शन न करूँ, मार्गदर्शन करने में बहुत परेशानियाँ आ रही थी। ऐसा अपने मन के अन्दर सोच रहा था- तभी ज्ञान के द्वारा मुझे आवाज सुनाई दी, ज्ञान ने मुझे बताया- मार्गदर्शन का अब इतिश्री हो गया है, मार्गदर्शन करने का समय अब समाप्त हो गया है। अब आप चाहें तो शांत रहकर एक स्थान पर रह सकते हैं। अब आपको किसी प्रकार के आध्यात्मिक कार्य करने की कोई आवश्यकता नहीं है।" मैं आवाज को बड़े आराम से सुन रहा था, फिर ध्वनि आनी बन्द हो गयी।

कुछ क्षणों बाद फिर आकाश से ध्वनि आनी शुरु हो गयी- **"योगी पुत्र, आपका मार्गदर्शन करने का कार्यकाल अवश्य समाप्त हो चुका है, मगर अभी कुछ समय तक और मार्गदर्शन कीजिए। अभी आपको और मार्गदर्शन करना है, आपके द्वारा अभी और कार्य होने शेष है, ऐसे कार्य करने के लिये आप ही उपयुक्त है। ऐसे कार्यों को करने के बाद ही आपको पूर्ण रूप से परिपक्वता आयेगी"।** मैं समझ गया ये शब्द प्रकृति के द्वारा कहे गये है। उसी समय हमारे द्वारा भविष्य

में किये जाने वाले कार्यों की झलक भी दिखाई गयी। हो सकता है मुझे यही कार्य भविष्य में करने की बात कही गयी हो। फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया।

अर्थ- पहले मुझे अपने ज्ञान ने साधकों का मार्गदर्शन करने के लिए मना कर दिया और एक जगह पर शान्त होकर रहने के लिये बताया। कुछ समय बाद मुझे प्रकृति ने साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये कहा और कुछ कार्य करने के लिये भी बताया। और क्या कार्य करने होंगे, यह नहीं बताया। यह कार्य भविष्य में मालूम होंगे। और प्रकृति ने यह भी बताया- उन कार्यों को करने से आपके अन्दर परिपक्वता आयेगी। मैं अंतिम अवस्था तक आ गया हूँ। जब मैं साधकों का मार्गदर्शन करूँगा तब फिर अज्ञानता में आना पड़ेगा।

मनुष्य दो प्रकार के

16 मार्च को सुबह 9:30 बजे हमारी आँखे अपने आप बन्द होने लगी। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि शायद मुझे ध्यान करना चाहिये। मैं अपना कार्य बन्द करके ध्यान करने के लिये बैठ गया। तभी मुझे मेरे ज्ञान ने बताया- "संसार में मनुष्य दो प्रकार के होते है। **एक-** जिन मनुष्यों के चित्त में सत्वगुण का प्रभाव ज्यादा होता है, ऐसे सत्वगुणी संस्कारों से युक्त चित्त वाला मनुष्य सदैव धर्म से युक्त होकर अच्छे कार्यों को करता है। ऐसे कार्यों को करने वाले मनुष्य को समाज में लाभ, प्रसन्नता व सहायता मिलती है क्योंकि ऐसा व्यक्ति सदैव समाज के हित में कार्य करता है। ऐसे मनुष्यों की गिनती उच्च श्रेणी में आती है अर्थात उच्च श्रेणी के मनुष्य कहे जाते है। **दो-** जिन मनुष्यों के चित्त में तमोगुण की मात्रा ज्यादा होती है, उसका चित्त सदैव मलिन रहता है, ऐसे तमोगुणी चित्त वाला मनुष्य सदैव अधर्म से युक्त होकर कार्यों को करता रहता है। ऐसे मनुष्य वर्तमान में बहुत मिलेंगे। ऐसे मनुष्य निम्न श्रेणी वाले कहे जाते है क्योंकि निम्न श्रेणी वाले मनुष्य सदैव समाज में किसी न किसी प्रकार से लोगों को कष्ट पहुँचाते रहते है। इसलिए तुम्हें किसी प्रकार का दु:ख नहीं होना चाहिए कि तुम्हारे साथ किसने कैसा व्यवहार किया है, सिर्फ चुप रहो और शांत हो जाओ। तुम्हें आगे बढ़ना है, आगे बढ़ो। यहाँ पर ठहरना नहीं है और न ही यहाँ पर उलझे रहना है"।

सर्वे दुखाय सर्वे सुखाय

यह जानकारी मुझे 29 अप्रैल को ध्यानावस्था में दी गयी। मैं ध्यान कर रहा था तभी यह आवाज सुनाई दी। आकाश से आवाज आयी- "सर्वे दुखाय सर्वे सुखाय"

सर्वे दुखाय- संसारी पुरुष सदैव दु:खी रहते है वह सभी को दु:ख बाँटते रहते है।

सर्वे सुखाय- योगी पुरुष सुखी रहते है वो सदैव सभी को सुख बाँटते रहते है।

साधक छोड़ कर चले जायेंगे

यह अनुभव मुझे 11 मई को ध्यानावस्था में आया। मुझे ध्यान में आवाज सुनाई दी- "साधक तुम्हें छोड़ कर चले जायेंगे, ये तुम्हारा बहुत समय तक साथ नहीं देगें।" यह आवाज हमारे ही अन्तःकरण से आयी थी।

मुझे मालूम है- भविष्य में बहुत से साधक मुझे छोड़ कर चले जायेंगे अथवा मैं साधकों को छोड़ दूँगा, ऐसा कुछ वर्षों बाद होगा।

हनुमान जी

आज 11 मई को सुबह ध्यानावस्था में मेरी और हनुमान जी से बातें हुई। मैंने हनुमान जी से पूछा- "आप मुझे छोड़ कर चले गये थे जब से उसे योग सिखाना शुरू किया"। तभी आवाज आयी- "योगी, मैं तुम्हारे शरीर के अन्दर स्थित हूँ, वह लडकी हमारी माँ के समान है"। पहले मेरी और हनुमान जी की बहुत बनती थी। आपस में दोनों के बहुत प्रेम था।

आवश्यक जानकारी

प्रिय पाठको! आपने जो हमारे अनुभव यहाँ तक पढ़े है। उन अनुभवों को पढ़कर समझ लिया होगा कि मुझे अब शांत होकर एक स्थान पर रहना चाहिये। ऐसा मुझे स्वयं ज्ञान ने बताया मगर प्रकृति

(अपरा) द्वारा कहा गया- अभी आप साधकों का और मार्गदर्शन कीजिये। कुछ और भी कार्य करने है। यह नहीं बताया गया किस प्रकार के कार्य करने है। इससे आपको परिपक्वता प्राप्त होगी। जब मैं साधकों का मार्गदर्शन करूँगा तब मुझे अपनी वर्तमान अवस्था से नीचे आना पड़ेगा, क्योंकि साधकों का मार्गदर्शन करना अज्ञानता के अंतर्गत आता है अर्थात मार्गदर्शन करते समय अज्ञानता की अवस्था प्राप्त हो जायेगी। अब पतन में स्थित होकर संसार में व्यवहार करना होगा। इसके अतिरिक्त जो मैंने कठोर अभ्यास के द्वारा योगबल कमाया है वह योगबल भी शक्तिपात करते समय क्षीण हुआ करेगा। उसके बदले में साधकों के चित्त पर स्थित मलिनता और तमोगुणी गन्दे कर्मों को धारण करना होगा।

ज्ञान के द्वारा बताया गया मार्ग निश्चय ही श्रेष्ठ है- कि मुझे श्रेष्ठ अवस्था प्राप्त हो गयी है। अब शान्त होकर एक स्थान पर रहूँ, इससे मुझे सांसारिक व्यवहार भी नहीं करना पड़ेगा। मगर अपरा-प्रकृति की इच्छा है- मैं साधकों का मार्गदर्शन करूँ। अब यही निश्चित किया है- जीवों के कल्याण के लिये अगर मुझे पतन में आना पड़े और साधकों का कल्याण करना पड़े तो अवश्य कल्याण करूँगा।

मुझे ज्ञान के द्वारा अपना भविष्य दिखाई दे रहा है। पतन की अवस्था में रहकर साधकों की गन्दगी, चित्त की मलिनता व अधर्मी कर्मों को वहन करना पड़ेगा तथा साधकों का दुर्व्यवहार और उनका स्वार्थ सहना पड़ेगा। इसके बदले में उन साधकों को अपने योगबल पर वह योग्यता प्रदान करूँगा जो उन्हें अभ्यास के द्वारा भी वर्तमान जन्म में प्राप्त नहीं होनी है, उनके अन्दर दिव्यता भी प्रदान करनी होगी। ऐसा सब कुछ शायद तब तक चलेगा जब तक मैं संसार का वास्तविक स्वरूप भली भाँति जान नहीं लूँगा। संसार की वास्तविकता का भलीभाँति ज्ञान हो जाने पर अपने आप धीरे-धीरे सब कुछ छूट जायेगा।

पाठको! इसको कहते है योगियों का स्वभाव। संसार का कल्याण करने के लिए स्वयं को पतन में उतार लेते है। यह पतन ज्ञानियों के लिये कीचड़ के समान है। इसके अतिरिक्त सांसारिक कष्टों को सहते हुए प्रतिकूल परिस्थितियों में कठोर अभ्यास के द्वारा प्राप्त योगबल को उन अभ्यासियों को देना होगा। ऐसे साधक नकारात्मक विचारों से युक्त, स्वार्थ उनके अन्दर भरा होगा, संयमी भी नहीं होंगे, बिना अभ्यास के ही आध्यात्मिक अवस्था व दिव्यता प्राप्त हो जाय, ऐसी सोच वाले होंगे। सब कुछ जानते हुए भी ईमानदारी से साधकों को अपना समझते हुए उन्हें मार्गदर्शन करना होगा। चलो, जो ईश्वर इच्छा, उसे जो अच्छा लगे, उसी में मेरी प्रसन्नता। भले ही कुछ वर्षों के लिए मैं समाज के काम आया।

तमोगुणी अहंकार में दिव्यता का प्रवेश

यह अनुभव 6 मई को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने विस्तृत क्षेत्र में प्रकाश पुंज विद्यमान है। उसका स्वरूप धीरे-धीरे गोलाकार रूप में छोटे आकार वाला हो गया। वह गोलाकार प्रकाश पुंज गोलाकार रूप में घूमता हुआ एक ओर जाने लगा। जिस ओर प्रकाश पुंज गोलाकार गति करता हुआ जा रहा था, उसी दिशा में नाग की पूँछ दिखाई देने लगी। उस नाग की पूँछ का रंग हल्का सफेद सा था जबकि नाग की पूँछ का रंग तो काला ही होता है। प्रकाश पुंज गोलाकार घूमता हुआ नाग की पूँछ के पास पहुँच गया, फिर प्रकाश पुंज नाग की पूँछ के अंतिम भाग में धीरे-धीरे समा गया। मैं नाग की पूँछ का अन्तिम भाग देख रहा था और सोचने लगा- इतना बड़ा प्रकाश पुंज गोलाकार गति करता हुआ नाग की पूँछ के बिलकुल छोटे से अन्तिम भाग में कैसे समा गया, क्योंकि नाग की पूँछ का अन्तिम भाग बिलकुल छोटा सा था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- काले नाग की पूँछ तमोगुणी अहंकार का प्रतीक है। बड़े आकार वाला प्रकाश पुंज धीरे-धीरे पूँछ के आखिरी भाग में कुछ क्षणों में प्रवेश कर गया। यह क्रिया मेरे लिये बहुत अच्छी बात हुई, क्योंकि इस प्रकाश पुंज का प्रभाव हमारे तमोगुणी अहंकार पर पड़ेगा। इसके फलस्वरूप मेरे अहंकार के अन्दर सत्वगुण की मात्रा बढ़ेगी और तमोगुण की मात्रा घटेगी अर्थात अहंकार पर सत्वगुण का प्रभाव पड़ेगा। इससे अहंकार में सत्वगुण की व्यापकता ज्यादा होगी। इसका प्रभाव हमारे मन और बुद्धि पर भी पड़ेगा। मेरे अन्दर श्रेष्ठता भी और ज्यादा आयेगी।

सम्मान प्राप्त होगा

यह अनुभव सुबह ध्यानावस्था में 18 मई को आया। ध्यानावस्था में मैं सामने की ओर देख रहा था, सामने थोड़ी दूरी पर नीचे की ओर से ऊपर की ओर आती हुई वस्तु दिखाई दी। वह वस्तु धीरे-धीरे ऊपर आ रही थी। थोड़ी ऊपर आने पर स्पष्ट रूप से उसका स्वरूप दिखाई दिया। वह सोने का बना हुआ बहुत सुन्दर मुकुट था। उस स्वर्ण मुकुट के नीचे स्वच्छ पानी थोड़े से क्षेत्र में विद्यमान था। मैं उस स्वर्ण मुकुट को देख रहा था तभी मुकुट मेरी ओर आने लगा। मेरे पास आकर वह मुकुट मेरे सिर के ऊपर रख गया। मुकुट के सिर के ऊपर रखते ही अपने आप दृश्य बदल गया। दूर-दूर तक स्वच्छ बर्फ के पहाड़ दिखाई देने लगे। कुछ क्षणों में बर्फ के पहाड़ टूट-टूटकर गिरने लगे। जैसे ही बर्फ के पहाड़ टूट-टूटकर गिरते

थे वह बर्फ तुरन्त पानी के रूप में परिवर्तित हो जाती थी, बस यही क्रिया हो रही थी। कुछ क्षणों में दूर-दूर तक सर्वत्र पानी ही पानी दिखाई देने लगा।

अर्थ- सोने का बना मुकुट का अर्थ है- भविष्य में मुझे संसार में सम्मान मिलेगा। सर्वत्र पानी ही पानी उपस्थित हो गया- हमारे चित्त पर सत्वगुणी वृत्तियाँ प्रकट हो गयी हैं। यही वृत्तियाँ इस समाज में साधकों के कल्याण के लिये कार्य करेंगी। अब जो भी कार्य अध्यात्म से सम्बंधित होगा, वह कार्य इस रूप में सौंप दिया गया।

तमोगुणी अहंकार को फाड़ डाला

यह अनुभव सुबह ध्यानावस्था में 18 मई को आया। मैंने देखा- मेरे सामने बहुत बड़े आकार में नाग का मुँह खुला हुआ दिखाई दे रहा है। उस मुँह के अन्दर मनुष्यों के समान जीभ है। जीभ के अग्रभाग पर ऊपर की ओर उठा हुआ काँटा विद्यमान है। वह काँटा बहुत मजबूत दिखाई दे रहा था। उस काँटे का ऊपरी भाग अन्दर की ओर मुड़ा हुआ था। मैंने इच्छा शक्ति से उस काँटे को तोड़ना चाहा, मगर वह नहीं टूटा। धीरे-धीरे काँटे का स्वरूप बदलने लगा, वह आकार में छोटा होने लगा। मैं पल भर के लिए ठहर कर सोचने लगा- यह काँटा कैसे टूटेगा? तभी उस काँटे का अग्रभाग जीभ की ओर मुड़ने लगा फिर उसकी जीभ के अन्दर समा गया। मैंने नाग के निचले जबड़े को पैर के नीचे दबाया और ऊपरी जबड़े को हाथों से पकड़ा। दोनों हाथों से जोर लगाकर नाग को बीच से फाड़ने लगा। नाग का शरीर बीच से फटता हुआ दो भागों में बटता जा रहा था। नाग का शरीर फटकर दो भागों में बँट गया, फटे हुए दोनों भागों को एक ओर दूर फेंक दिया। नाग का पूँछ वाला भाग नहीं फटा था। नाग का शरीर गुदा-द्वार तक ही फटकर दो भागों में अलग हो गया था। पूँछ वाला भाग पहले जैसा बना रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- नाग हमारे ही अहंकार का स्वरूप है। जीभ में स्थित काँटे का अर्थ है- हमारे बोलने का तरीका थोड़ा कठोर है। जीभ के अन्दर वह काँटा समा गया- मेरे बोलने का तरीका बदलेगा। नाग को फाड़ कर दो भागो में बाँट दिया अर्थात दो भागों में अलग-अलग कर दिया। अहंकार कभी नष्ट नहीं होता है, सिर्फ नष्ट हुए के समान हो जाता है, अब अहंकार का प्रभाव कम हो जायेगा।

संसार का स्वरूप

यह अनुभव 19 मई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने की ओर खड़े आकार में छोटी सी लोहे की साफ़्टीन है। इस साफ़्टीन के ऊपरी सिरे पर लोहे की पुली कसी हुई है। यह पुली अपने आप जोर से घूम रही है। साफ़्टीन का निचला सिरा नीचे की ओर स्थित चकिया के ऊपरी पाट के मध्य भाग में फँसा हुआ है, इस कारण चकिया का ऊपरी पाट जोर से घूम रहा है। चकिया का साइज बहुत बड़ा है। साफ़्टीन के ऊपर कसी हुई पुली का साइज भी बहुत बड़ा है। वह पुली क्लॉक-वाइज घूम रही है। पुली अपने आप घूम रही है उसे घुमाने के लिए मोटर अथवा इंजन आदि नहीं है। चकिया और पुली के चारों ओर गोलाकार रूप में लोहे की चद्दर से बनी हुई दीवार है। ताकि चकिया द्वारा पीसा गया अनाज का आटा लोहे की चद्दर से बनी दीवार के अन्दर ही गिरता रहे। उस समय चकिया में कुछ भी नहीं पीसा जा रहा था उसका ऊपरी पाट खाली घूम रहा था। चकिया के चारों ओर आटा पड़ा हुआ था। उसी समय चकिया का ऊपरी पाट उखड़ कर अलग हो गया। चकिया का निचला पाट हमारे पास आने लगा। साफ़्टीन के ऊपरी सिरे पर कसी पुली अदृश्य हो गयी। फिर चकिया का निचला पाट धीरे-धीरे अदृश्य हो गया। उस स्थान पर अब समतल क्षेत्र प्रकट हो गया। साफ़्टीन झाड़ू की सींक के समान पतली हो गयी। झाड़ू की सींक के समान पतली साफ़्टीन एक जगह स्थिर नहीं थी बल्कि उसका निचला भाग भूमि पर इधर-उधर हो रहा था। साफ़्टीन की इस क्रिया से भूमि पर निशान बन रहा था। फिर साफ़्टीन भी अदृश्य हो गयी। फिर मैं उसी समतल क्षेत्र पर बैठ गया। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली साफ़्टीन का अर्थ है- संसार का जीवन-चक्र अर्थात जन्म-आयु-मृत्यु के चक्र का प्रतीक है। जैसे कारखाने के सम्पूर्ण कल पुर्जे इंजन के द्वारा ही चलते है। एक बड़ी सी साफ़्टीन में कई पुली कसी होती है। इस साफ़्टीन की एक पुली को पट्टे द्वारा इंजन घुमाता है फिर साफ़्टीन घूमने लगती है। साथ में साफ़्टीन में कसी हुई सभी पुलियाँ भी घूमती है। इन पुलियों में चढ़े पट्टों द्वारा अन्य कलपुर्जे चलाकर कार्य किया जाता है अर्थात इंजन द्वारा साफ़्टीन चलाई जाती है। फिर साफ़्टीन में कसी हुई कई पुलियों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के अन्य कार्य किये जाते है। जैसे चकिया से अनाज का पीसना, धान से चावल निकालने वाली मशीन चलाना, तेल निकालने वाली मशीन चलाना आदि। ये सब कुछ साफ़्टीन (लोहे का मोटा रॉड नुमा जिस पर कई पुली कसी होती है) के चलने अर्थात घूमने से विभिन्न कार्य सम्पन्न होते है।

अनुभव में साफ़्टीन अपने आप घूम रही है। जबकि साफ़्टीन इंजन या मोटर द्वारा घुमाई जाती है। साफ़्टीन द्वारा चकिया घूम रही है, चकिया द्वारा अनाज पीसा जाता है। अनुभव में चकिया खाली चल रही है अर्थात कुछ भी नहीं पीसा जा रहा है। अनाज कर्माशयों का प्रतीक होता है। अनुभव से स्पष्ट होता है- चित्त पर कर्माशय भोगने के लिये शेष नहीं रह गये है। कर्माशयों के शेष न रहने के कारण चकिया की कोई जरूरत ही नहीं रह गयी अर्थात अनाज अब नहीं पीसा जायेगा। इसलिये चकिया के पाट को घुमाने की कोई आवश्यकता नहीं रह गयी। अनुभव में दिखाया गया- चकिया, साफ़्टीन और साफ़्टीन के ऊपरी सिरे पर कसी हुई पुली आदि की आवश्यकता नहीं रह गयी, इसलिए इन सभी कल-पुर्जों का अपना स्वरूप नष्ट हो गया। ऐसा हमारे लिए हुआ है, अन्य अभ्यासियों के लिये अभी उपस्थित रहेंगे। इसका अर्थ है- वायु तत्व की सीमाओं से मैं परे होने वाला हूँ।

ब्रह्माण्ड-रूपी कारखाने को भगवान ब्रह्मा वायुतत्व के द्वारा चला रहे है। भगवान ब्रह्मा इस कारखाने के इंजीनियर है ऐसा समझ लिजिये। जिस प्रकार इंजन को चलाने के लिये पेट्रोल की जरुरत पड़ती है इसी तरह से इस कारखाने को वायुतत्व के द्वारा चलाया जाता है। अभ्यासी जब वायुतत्व की सीमाओं से परे हो जाता है तब उसके लिये वायुतत्व नष्ट हुए के समान हो जाता है। फिर ब्रह्माण्ड-रूपी कारखाना भी नष्ट हुए के समान हो जाता है। वही अनुभव में दिखाया गया है।

अनुभव में चकिया के आसपास कुछ आटा पड़ा हुआ है अर्थात मैं भविष्य में मार्गदर्शन करूँगा। मैं उस समतल भूमि पर बैठ गया अर्थात मेरा पतन हो गया, इसलिए भूमि पर बैठ गया हूँ। भविष्य में साधकों का मार्गदर्शन करूँगा, मैं पतन में आ गया हूँ। यह मार्गदर्शन अज्ञानता के अन्तर्गत आता है।

भगवान गौतम बुद्ध जी

यह अनुभव 26 जून को ध्यानावस्था में आया। मेरे अन्दर बड़ी बेचैनी सी हो रही थी कि मैं गौतम बुद्ध जी से बात करूँ। फिर ध्यानावस्था में मैंने गौतम बुद्ध जी से कहा- "प्रभू" मुझे आपकी बहुत याद आ रही है इसीलिए मैंने आपका स्मरण किया है। तभी गौतम बुद्ध जी की आवाज आयी, मैं उनकी आवाज को पहचान गया। वह मुझसे बोले- "मैं ही आपको प्रेरित कर रहा था कि आप मुझसे बात करें, इसीलिये आपके अन्दर बेचैनी सी हो रही थी"। मैं बोला- "प्रभू" आप हमसे क्यों बात करना चाहते थे? गौतम बुद्ध जी बोले- "मुझे कहना तो बहुत कुछ था मगर सिर्फ इतना ही कहूँगा- तुमने सभी साधकों को अभ्यास क्यों

नहीं करने दिया? बिना अभ्यास किये ही सभी साधकों को आध्यात्मिक योग्यता और दिव्यता दे दी, जबकि उन साधकों ने उचित अभ्यास भी नहीं किया है। बिना परिश्रम के दी हुई वस्तु का मूल्य नहीं समझा जाता है कि वह वस्तु कितनी मूल्यवान और दुर्लभ है"। उत्तर में मैं सिर्फ चुप रहा, मैं कुछ भी नहीं बोला। मेरा ध्यान टूट गया। मैं बाद में सोचने लगा- यह बात मुझे पहले बतायी जानी चाहिये थी, अब बताई जा रही है। फिर मैं बुद्ध जी के विषय में सोचने लगा।

सब कुछ मेरा

वर्तमान समय में मेरा मन थोड़ा सा उदास रहने लगा। अब मेरी इच्छा यहाँ रहने के लिए नहीं रह गयी। सोचा इस संसार में क्या रखा है सिर्फ नीरसता है, जहाँ देखो वहाँ अधर्म ही अधर्म है। फिर एक दिन (4 जुलाई को) ध्यानावस्था में मैंने ईश्वर से पूछा- "प्रभू" मुझे यहाँ भूलोक पर कब तक रहना पड़ेगा? अब मुझे यहाँ अच्छा नहीं लगता है। तभी आकाश से आवाज आयी- "अच्छे और बुरे का क्या सोचना, सब कुछ तो मेरा ही है। तुम्हारा तो सुख और दुःख से कुछ लेना-देना नहीं है, दुखी क्यों हो रहे हो"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैं भी गहरे ध्यान में चला गया। ध्यान टूटने के बाद ईश्वर द्वारा बोली गयी बातों को याद करने लगा।

अनुभव में मैं शान्त बैठा हुआ था। ध्यानावस्था में मैंने ईश्वर से पूछा था। उत्तर में मुझे ध्वनि सुनाई दी थी, कोई दृश्य दिखाई नहीं दिया था।

दुष्यंत और शकुंतला

यह अनुभव अगस्त माह के अंतिम दिनों का है। मैं अपनी आँखे बन्द किये हुए लेटा हुआ था, तभी मुझे दिखाई दिया- राजाओं के समान वेशभूषा वाला एक पुरुष खड़ा हुआ है। वह अपने हाथों में सुन्दर सी माला पकड़े हुए है। इसी प्रकार एक स्त्री उस पुरुष के सामने खड़ी हुई है उसके हाथों में सुन्दर सी फूलों की माला है। वह अपने सामने खड़े पुरुष को देख रही है। तभी पुरुष ने अपनी फूलों की माला उस स्त्री के गले में डाल दी, ऐसा ही उस स्त्री ने भी किया। वह स्त्री अपने हाथों में जो फूलों की माला लिये

खड़ी थी, राजाओं की भाँति उसके सामने खड़े पुरुष के गले में वह माला डाल दी। वह स्त्री बहुत ही सुन्दर थी, तभी हमारे मुँह से निकला- "यह तो दुष्यन्त और शकुन्तला है"। उसी समय मेरी आँखे खुल गयी।

इस अनुभव में दुष्यन्त और शकुन्तला की शादी का दृश्य था। इस प्रकार से शादी इन दोनों ने जंगल में की थी, क्योंकी शकुन्तला उस समय कण्व ऋषि के आश्रम में रहती थी, यह आश्रम जंगल में बना हुआ था। शादी के समय सिर्फ यही दोनों ही थे। मैंने दृश्य को देखकर- दुष्यन्त और शकुंतला को पहचान लिया। पूर्व काल में मैं इन्हें पहचानता था। मेरे आदर्श विश्वामित्र जी है, ये शकुन्तला विश्वामित्र जी की ही पुत्री है। इस विषय में मैं ज्यादा लिखना नहीं चाहता हूँ और लिखना उचित भी नहीं है क्योंकि आपका मस्तिष्क स्वीकार नहीं कर पायेगा। यह बात त्रेता युग की है।

हनुमान जी

यह अनुभव 7 सितम्बर को आया था। ध्यानावस्था में देखा- हनुमान जी 10-15 फीट गहरी जगह पर लेटे हुए सो रहे है। उनका शरीर बहुत छोटा सा था, ऐसा लग रहा था मानो वह 10-12 साल के लड़के के समान शरीर वाले है। मैं हनुमान जी को ऐसी अवस्था में देखकर सोचने लगा- हनुमान जी 10-15 फीट गहरे स्थान पर क्यों सो रहे है।

अर्थ- हनुमान जी की उत्पत्ति वायु तत्व की प्रधानता से होती है। वर्तमान समय में मैंने अभ्यास के द्वारा वायु तत्व की सीमाओं को पार कर रहा हूँ, इसलिये अनुभव में हनुमान जी का दृश्य ऐसा आ रहा है। वायु तत्व के प्रभाव से मैं परे हो रहा हूँ, इसलिए हनुमान जी अनुभव में सोते हुए दिखाई दे रहे है। अभी मुझे समाज का कल्याण करने के लिये मेरी आध्यात्मिक अवस्था नीचे आयेगी, तब वायु तत्व में मेरी अवस्था हो जायेगी।

भगवान श्री कृष्ण जी का सन्देश

यह अनुभव 4 नवम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं ईश्वर का स्मरण कर रहा हूँ। और उनसे कुछ पूछ भी रहा हूँ। फिर मैंने देखा- निर्मल स्वच्छ आकाश है, उस स्वच्छ आकाश में मानव जैसी आकृति बनने लगी। कुछ क्षणों बाद मैंने देखा- बहुत सुन्दर स्वरूप में भगवान श्री कृष्ण जी हमारे

सामने खड़े हुए है। आश्चर्य यह हुआ- भगवान श्री कृष्ण के नीचे, बिल्कुल वैसे ही स्वरूप वाले दुसरे श्री कृष्ण जी खड़े हुए है अर्थात श्री कृष्ण जी के ऊपर श्री कृष्ण जी खड़े हुए थे। शायद 5-6 श्री कृष्ण जी एक के ऊपर एक खड़े हुए दिखाई दे रहे थे। उसी समय मुझे ज्ञान ने बताया- आपको हर चक्र पर भगवान कृष्ण का दर्शन हो रहा है। मैं अपने सामने सबसे ऊपर वाले श्री कृष्ण जी से बात कर रहा था। भगवान श्री कृष्ण जी ने मुझसे कहा- "योगी, तुम अपना कार्य पूर्ण करके अपने लोक आ जाओ"। मैं बोला- "जी, अवश्य प्रभु"। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान श्री कृष्ण जी का सभी चक्रो में (सभी छः चक्रो में) दर्शन हो रहा था। सभी का स्वरूप एक जैसा ही था। इसका अर्थ है- भगवान श्री कृष्ण जी ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड में व शरीर रूपी पिण्ड में अर्थात सर्वत्र विद्यमान है। तथा उन्होंने सन्देश भी मुझे दिया है।

भगवान श्री राम जी का सन्देश

यह अनुभव 5 नवम्बर को शाम के समय आया। शाम के लगभग 6:30 बजे होंगे, तभी मुझे ऐसा लगा मानो मुझसे कोई सम्पर्क करना चाहता है। जब कोई सम्पर्क करना चाहता है तब हमारे सिर के अन्दर ऊपरी ओर विशेष प्रकार की क्रिया होती है। मैं समझ जाता हूँ कोई मुझसे सम्पर्क करना चाहता है। अब मेरे सिर के अन्दर क्रिया हो रही थी। मैं तैयार होकर शीघ्र ही ध्यान करने के लिये बैठ गया। कुछ क्षणों बाद स्पष्ट आवाज सुनाई देने लगी- "जहाँ तक मुझे याद आ रहा है आदिकाल से लेकर हमारी जो सभ्यता रही है उसमें निश्चय ही योगियों का उस सभ्यता में बहुत बड़ा सहयोग रहा है, श्रेष्ठ योगियों के मार्गदर्शन में सभ्यता आगे बढ़ी है। ऐसे श्रेष्ठ योगियों को मैंने कभी नहीं देखा और न ही सुना कि योगी दु:खी हुए हो, जैसा आप दु:खी हो जाते हो। आप निश्चय श्रेष्ठ योगियों की श्रेणी में आते है, आपको दु:खी होना शोभा नहीं देता है। यदि तुम्हारे साथ किसी ने दुर्व्यवहार किया है तो उसे उचित समय पर दण्ड अवश्य मिलेगा। मगर तुम्हारा दु:खी होना उचित नहीं है, संसार का स्वरूप ऐसा ही है। तुम्हारा कार्यकाल समाप्त हो चुका है, शेष समय समाप्त करके अपने लोक में आ जाओ। अब तुम्हें किसी प्रकार का दु:ख नहीं होना चाहिये। तुम्हें किसी प्रकार की जीवनयापन सम्बन्धी परेशानी नहीं आयेगी"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। कहा तो और भी गया, मगर जो याद रहा वो लिख दिया है।

मैं किसी कारण से दु:खी था। कुछ न कुछ भौतिक परेशानियाँ आती रहती है, तभी भगवान श्री राम जी ने मुझे समझाया। पहले क्षणिक देर के लिए दर्शन दिये फिर अदृश्य हो गये। उनकी आवाज आती रही, उस समय उनके दर्शन नहीं हो रहे थे। उनकी ये बात अच्छी लगी- अपना कार्यकाल समाप्त करके अपने लोक में आ जाओ। इसी प्रकार भगवान श्री कृष्ण जी ने भी ऐसा ही कहा है।

शरीर के अन्दर के अंग निकाल दिये

यह अनुभव 9 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सिर के अन्दर अशुद्धता भरी हुई है। मैंने उस अशुद्धता को निकालने का प्रयास किया, मगर अशुद्धता नहीं निकली। मैंने अपना दाहिना हाथ सिर के अन्दर घुसा दिया। सिर के अन्दर का मस्तिष्क पकड़ कर बाहर की ओर निकालने लगा। मेरी दाहिनी कनपटी खड़े आकार में फट गयी, अन्दर का मस्तिष्क बाहर निकल आया। हमारा सिर खोखला हो गया, मस्तिष्क हमारे दाहिनी ओर बाहर लटका हुआ था। फिर मैंने दाहिने हाथ से मस्तिष्क को पकड़ कर खींचा। हमारा स्थूल शरीर बाहरी ओर से नीचे की ओर फटने लगा। मस्तिष्क वाला भाग पकड़े हुए नीचे की ओर खींच रहा था। मेरी गर्दन नीचे की ओर फटती चली गयी।

अब मैं शरीर के अन्दर की नाड़ियाँ आदि पकड़ कर खींच रहा था। मेरा शरीर नीचे की ओर सीधा बड़े आराम से फटता जा रहा था। मैंने मस्तिष्क, गर्दन की नाड़ियाँ, सीने के अन्दर के अंग हृदय, लीवर और फेफड़ा आदि, दोनों हाथों की नाड़ियाँ आदि सब पकड़ कर खींच ली। पेट नीचे की ओर सीधा फटता जा रहा था, इसलिए आँते आदि सब बाहर निकल आयी। पहले दाहिने पैर के अन्दर का माँस नाड़ियाँ आदि निकाल लिया, फिर बाँये पैर के अन्दर का माँस नाड़ियाँ आदि निकाल लिया। पैरों के निचले वाला भाग एड़ी तक ही अन्दर का निकला, एड़ी और पंजों के अन्दर वाला भाग बहुत प्रयास करने के बावजूद भी नहीं निकला। उसके अन्दर काला-काला पदार्थ भरा हुआ था। अब हमारा शरीर पूरी तरह से खोखला हो चुका था। शरीर के अन्दर कुछ भी नहीं था। यह शरीर सीधा खड़े आकार में नीचे से ऊपर तक चिरा हुआ था। अन्दर का मलवा (अंग आदि) बाहर निकाल कर फेंक दिया था। अब एड़ी के अन्दर का भाग निकालने लगा। बड़ी मुश्किल से एड़ी व आधे पंजे के अन्दर का भाग ही निकाल पाया। बाहरी पंजे व उँगलियों के अन्दर का भाग नहीं निकाल पाया, उसी जगह से वैराग्यरूपी तलवार से आधा पंजा काट दिया। कुछ क्षणों बाद दूसरा पंजा जितना भाग काटा गया था वहाँ पुनः प्रकट हो गया था।

मैंने अपने शरीर के अन्दर के अंग आदि सब निकाल कर बाहर फेंक दिये। अब हमारा शरीर खोखला हो चुका था अर्थात शरीर खोल मात्र रह गया था। सम्पूर्ण अनुभव स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

अर्थ- मैंने शरीर के अन्दर के सम्पूर्ण अंग, नाड़ियाँ, माँस आदि निकाल कर बाहर फेंक दिया। इसका अर्थ है- स्थूल जगत से पूर्ण रूप से आसक्ति समाप्त हो जायेगी। यह भौतिक जगत नष्ट हुए के समान हो जायेगा। अनुभव में शरीर फटा हुआ खोखला मात्र रह गया है। इस संसार में जीवन जीने के लिये व्यवहार होता रहेगा यह संसार में भोगाभाष जैसा होगा। यह अध्यात्म की उच्चावस्था को दर्शा रहा है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 13 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- पूर्व दिशा की ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा प्रकट हो गयी। ऋतम्भरा-प्रज्ञा कुछ क्षणों के लिए दिखाई दी। तभी सम्पूर्ण अंतरिक्ष में सफेद भाप जैसी प्रकट होकर फैलने लगी। फिर उसने धीरे-धीरे ऋतम्भरा-प्रज्ञा को भी ढकना शुरु कर दिया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन बहुत दिनों बाद हुआ है। इस ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश सम्पूर्ण चित्त पर फैलता है, इससे चित्त पर शुद्धता की मात्रा बढ़ती रहती है। आकाश में जो सफेद रंग की भाप जैसी सर्वत्र फैल रही थी, यह सत्वगुण की मात्रा चित्त पर बढ़ रही थी। सत्वगुण का स्वरूप कभी-कभी इसी रूप में दिखाई देता है।

सर्वत्र व्यापकम्

मैं 22 दिसम्बर को शाम के समय ध्यान कर रहा था। तभी हमे आवाज सुनाई दी- "अभी कुछ समय बाद तुम्हें कुछ बताया जायेगा तुम वैसा ही करना"। इन शब्दों को सुनकर मैं चौंक गया और सोचने लगा- ऐसा मुझे क्या बताया जायेगा।? कुछ समय बाद मैं ध्यान की गहराई में चला गया। मैं ध्यान कर रहा था तभी मुझे अन्तःकरण में धीमी सी आवाज सुनाई दी। फिर यह आवाज धीरे-धीरे बाहर की ओर आने लगी। अब आवाज तेज हो गयी,। आवाज मुझसे कह रही थी- "आप बोलो, सर्वत्र व्यापकम्"। मैं बोलने लगा- "सर्वत्र- व्यापकम्"। फिर थोड़ी देर में कहने लगा- "ऊँ सर्वत्र व्यापकम्"। अब मैं मुँह से तीव्र गति से

आवाज निकाल कर बोलने में लगा हुआ था। कुछ समय बाद अन्दर से आवाज फिर आयी- "अतिशीघ्रम् सर्वत्र व्यापकम्"। मैं यही शब्द जोर-जोर से बोल रहा था- "ऊँ अतिशीघ्रम् सर्वत्र व्यापकम्"। ये शब्द लगभग आधा घण्टा तक जाप करता रहा, फिर हमारे मुँह से आवाज निकलनी बन्द हो गयी। मैं शान्त होकर बैठ गया।

अर्थ- अतिशीघ्रम् सर्वत्र व्यापकम् का अर्थ है- "अत्यन्त तीव्र गति से सर्वत्र व्याप्त हो जाऊँ"। आमतौर पर ऐसे वाक्य किसी ऐसी ऊर्जा का वर्णन करने में उपयोग किये जाते है, जो बिना समय गंवाए सम्पूर्ण स्थान में फैल जाती है। यह किसी चीज को सर्वव्यापी होने की व्यवस्था को दर्शाती है। वास्तव में ये शब्द हमारे लिये ही है- "मैं अतिशीघ्र सर्वत्र व्यापक हो जाऊँ"।

सत्यम् ब्रुयात् प्रियम् ब्रुयात्

यह जानकारी मुझे ध्यानावस्था में 26 दिसम्बर को दी गयी। मैं ध्यानावस्था में ज्ञानी पुरुषों के विषय में सोच रहा था। तभी हमारे सहस्त्रार चक्र के अन्दर से आवाज आयी- "सत्यम् ब्रुयात् प्रियम् ब्रुयात्"। ये शब्द सुनने के बाद मैं इन शब्दों के विषय में सोचने लगा। मुझे इन शब्दों का अर्थ मालूम था। इसका अर्थ होता है- "सत्य बोलना चाहिये और वह सत्य प्रिय होना चाहिये। लेकिन कड़वा सत्य नहीं बोलना चाहिये"।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 25 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- पूर्व और दक्षिण दिशा के मध्य में अत्यन्त तेजस्वी ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई देने लगी। ऐसा लगता था- मानो प्रज्ञा अभी थोड़ी देर पहले ही प्रकट हुई है। मगर उसका स्वरूप ग्रीष्मकाल के दोपहर के सूर्य के समान (उदाहरण के लिये) है। आकाश स्वच्छ निर्मल था। जब मैं ऋतम्भरा-प्रज्ञा को देख रहा था तब उसका प्रकाश हमारे चेहरे पर भी पड़ रहा था।

सन् 2016

शांति की ओर

यह अनुभूति 24 जनवरी को महसूस हुई। सुबह के समय हमारे अन्तःकरण में बहुत बड़ा बदलाव महसूस हो रहा था। मुझे महसूस हो रहा था- "मैं शांत हूँ, एक विशेष प्रकार के आनन्द में डूबा हुआ हूँ"। कुछ समय बाद मेरे अन्तःकरण की अवस्था बदल गयी। मैं कुछ साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ उनमें से कुछ साधक सही दिशा की ओर जा रहे है, मगर कुछ साधक ऐसा समझते है मानो मुझे उनकी जरूरत है। कुछ साधक तो हमारे पास सिर्फ स्वार्थ के लिये ही आये है, जब उनका स्वार्थ पूरा नहीं हुआ तब वो हमारी निन्दा करने लगे। मैंने इस समाज के व्यवहार को समझ लिया है अब मेरे समझ में आ गया है कि संसार का स्वरूप कैसा है।

मैंने साधकों का मार्गदर्शन करना सीमित कर दिया है। धीरे-धीरे मार्गदर्शन करना बन्द कर दूँगा। शायद मुझे मार्गदर्शन नहीं करना चाहिये।

शेषनाग का स्वरूप

यह अनुभव 1 फरवरी को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने दिखाई देने वाले सम्पूर्ण क्षेत्र में अत्यन्त विशालकाय पाँच फनों वाला हल्के नीले रंग का नाग फन उठाये खड़ा था। ऐसा लग रहा था- पाँच फनों वाला हल्के नीले रंग का नाग हल्के नीले रंग के पानी के ऊपर विद्यमान है। वह नाग अपने शरीर की अण्डाकार रूप में कुण्डली मारे हुए था। नाग के फन अत्यन्त विशाल थे। वे फन सम्पूर्ण आकाश में फैले थे। उसका शरीर जो कुण्डली मारे था उस शरीर की मोटाई मोटे पेड़ के तने की मोटाई के बराबर थी। सम्पूर्ण क्षेत्र हल्के चमकीले नीले रंग का था। नाग का रंग और पानी का रंग भी चमकीले हल्के नीले रंग का था। उसके सभी पाँचों फन मुझे देख रहे थे। मुझे यह दृश्य (अनुभव) मात्र कुछ क्षणों तक ही दिखाई दिया था।

अर्थ- यह सम्पूर्ण दृश्य कारण जगत का था इसीलिये हल्के नीले चमकीले रंग का दृश्य सर्वत्र था। शेषनाग का स्वरूप व पानी का रंग भी हल्का चमकीला नीले रंग का था। शेषनाग की कुण्डली गोलाकार नहीं थी, बल्कि अण्डाकार रूप में थी। जहाँ तक मैं जानता हूँ शेषनाग का वास्तविक रंग सफेद है मगर इस अनुभव में उनके स्वरूप का रंग चमकीला हल्का नीला था। शेषनाग भगवान नारायण की शैया के रूप में सदैव प्रस्तुत रहते हैं। इस अनुभव में भगवान शेषनाग का दर्शन पहली बार ही हुआ है।

भगवान विष्णु जी

यह अनुभव 23 मार्च को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- हमारे चित्त के अन्दर भगवान विष्णु चतुर्भुज रूप में खड़े हुए है। भगवान विष्णु जी सम्पूर्ण चित्त के अन्दर व्याप्त है। कुछ क्षणों तक मैं उनका दर्शन करता रहा, फिर भगवान विष्णु जी अदृश्य हो गये। अनुभव भी समाप्त हो गया।

हमारे इष्ट भगवान शंकर जी है। मैं सदैव उन्हीं को भजता रहता हूँ। भगवान विष्णु जी मुझे बहुत सुन्दर लगते है, मैं उन्हें पसन्द भी करता हूँ। मगर हमारे इष्ट भगवान शंकर ही मुझे अत्यंत प्रिय है। मगर भगवान विष्णु का दर्शन हमारे अंतःकरण में हुआ है।

सात स्वर्ण कलश

यह अनुभव 10 अप्रैल का है। मैंने ध्यानावस्था में देखा- सामने नीचे की ओर एक बहुत सुन्दर बड़ा सा हवन कुण्ड है। उस हवन कुण्ड में पानी भरा हुआ है। इसी पानी के अन्दर से ऊपर की ओर बहुत सुन्दर नक्काशीदार स्वर्ण से बने हुए कलश ऊपर की ओर निकलने लगे। वे स्वर्ण कलश एक के ऊपर एक रखे थे। इन स्वर्ण कलशों की गिनती सात थी। वह सातों स्वर्ण-कलश ऊपर की ओर उठकर सामने आकाश में स्थित हो गये। मैं इन स्वर्ण कलशों को टकटकी लगाकर देख रहा था तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले सातों स्वर्ण कलश हमारे शरीर में स्थित सातों चक्रों के प्रतीक हैं। ये स्वर्ण कलश सुन्दर नक्काशी से युक्त चमकदार थे। इसका अर्थ- हमारे शरीर में स्थित सातों चक्र

विकसित होकर अत्यंत स्वच्छ हो चुके है। इसी कारण स्वर्ण कलश हल्के प्रकाश से युक्त होकर चमक रहे हैं।

शक्ति चाहिये

यह अनुभव 10 अप्रैल का है। मुझसे ध्यानावस्था में पूछा गया- "क्या आपको विशेष प्रकार की शक्ति चाहिये"? इन शब्दों को सुनने के बाद कुछ क्षणों तक सोचता रहा, फिर मैंने उत्तर दिया- "मुझे किसी भी प्रकार की शक्ति नहीं चाहिये"। फिर मुझसे दुबारा कुछ भी नहीं पूछा गया। मैं गहरे ध्यान में चला गया, लगभग तीन घण्टे के आस-पास गहरा ध्यान लगा, फिर मैंने अपनी आँखे खोल दी। जो मुझसे पूछा गया था, उस विषय में सोचने लगा।

अर्थ- सन् 1995-1996 में मुझे कुण्डलिनी शक्ति का वरदान मिला था। वह वरदान अत्यन्त शक्तिशाली था। इस वरदान के द्वारा मैंने तीन-चार साधकों को लाभ पहुँचाया था। मात्र कुछ ही क्षणों में कुण्डलिनी शक्ति का वरदान प्रयोग करके, उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत करके, फिर उर्ध्व करता हुआ ब्रह्मरंध्र द्वार तक पहुँचा दिया था। कुछ महीने बाद मैंने वह वरदान कुण्डलिनी शक्ति को वापस कर दिया था।

इस अनुभव में शायद इसी प्रकार की शक्ति देने के लिये कहा गया था, मगर मैं ऐसी दिव्य शक्तियों को लेकर क्या करूँगा। इसलिए मैंने किसी भी प्रकार की शक्ति लेने से इन्कार कर दिया। वैसे इस प्रकार की शक्तियाँ बहुत जल्दी आध्यात्मिक कार्य कर देती हैं।

बैलगाड़ी बिना बैल के

मैंने यह अनुभव 20 जून को ध्यानावस्था में देखा। मैं पैदल ही दक्षिण दिशा की ओर चला जा रहा था। बैलगाड़ी वाला रास्ता बहुत ही संकरा था। सिर्फ एक बैलगाड़ी ही उस संकरे रास्ते पर जा सकती थी। मैंने सामने की ओर देखा- एक बैलगाड़ी उल्टे ढंग से (उसका पीछे का भाग मेरी ओर था) चली आ रही थी। उस बैलगाड़ी में बैल नहीं जुते थे, और उस बैलगाड़ी में किसी प्रकार का कोई सामान भी नहीं था। बैलगाड़ी का अग्रभाग जिसमें बैल जुते होते है (जो सीधी लकड़ी बैलों के कंधों पर रखी होती है उसी के

सहारे गाड़ी को खींचते है) वह भाग ऊपर की ओर उठा हुआ था, अर्थात बैलगाड़ी पीछे की ओर बिना बैलों के चल रही थी। वह हमारी ओर आ रही थी। तभी दाहिनी ओर पहिये के पास बड़ा सा पत्थर आ गया। बैलगाड़ी उस पत्थर पर चढ़कर निकलने का प्रयास कर रही थी, मगर वह पत्थर के ऊपर चढ़ नहीं पा रही थी। फिर एक तरफ से होकर बैलगाड़ी हमारी ओर आने लगी। बैलगाड़ी हमारे पास आकर दाहिनी ओर को उलट गयी, गाड़ी के पहिये ऊपर की ओर हो गये। यह दृश्य देख कर मैं आश्चर्यचकित हो गया। फिर मैं बाँयी ओर होते हुए एक ओर से आगे की ओर चला गया। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली बैलगाड़ी हमारा ही शरीर है। बैलगाड़ी में बैल नहीं जुते है, बैल का अर्थ- वायु तत्व का प्रतीक होता है। वर्तमान समय में मैं वायु तत्व से परे हो रहा हूँ। वायु तत्व हमारे लिये नष्ट हुए के समान हो रही है। वायु तत्व का ही दूसरा स्वरूप प्राण तत्व होता है वह भी अभ्यास के द्वारा नष्ट हुए के समान हो रहा है। इसलिये बैलगाड़ी में बैल जुते हुए दिखाई नहीं दे रहे है। बैलगाड़ी उल्टे तरीके से चली आ रही है अर्थात प्रलय उन्मुख गति कर रही है। गाड़ी उलट गयी अर्थात बैलगाड़ी नष्ट हुए के समान हो गयी क्योंकि उससे किसी प्रकार के कार्य नहीं किये जा सकते हैं। बैलगाड़ी में किसी प्रकार का कोई भी सामान नहीं रखा था अर्थात हमारे अन्तःकरण में किसी प्रकार के कोई संस्कार विद्यमान नहीं है। हमारा अन्तःकरण संस्कारों से रहित हो चुका है। मैं दक्षिण दिशा की ओर जा रहा था अर्थात मैं संसार की ओर उन्मुख हुआ चला जा रहा हूँ।

730 दिन

यह अनुभव सुबह ध्यानावस्था में आया। 17 जून को ध्यान में देखा- मैंने सामने की ओर आकाश को देखा, सामने की ओर आकाश में 730 लिखा हुआ था। उसी समय आकाश से आवाज आयी- "हे योगी, 730 दिनों तक अभी और मार्गदर्शन करो"। आवाज सुनकर मैं बोला- "नहीं, मैं मार्गदर्शन इतनों दिनों तक नहीं करूँगा" । मैंने अपना ध्यान तोड़ दिया और अपने आसन से उठकर चल दिया। मैं फिर बोला- अब मैं 730 दिनों तक साधकों का मार्गदर्शन नहीं करूँगा। ध्यान में दिया गया यह सन्देश मुझे अच्छा नहीं लगा।

तुम्हारी बागडोर हमारे हाथों में है

यह जानकारी मुझे एक जून को दी गयी थी। मैं कुछ कारणों से चिंतित-सा हो रहा था तभी मुझे ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी- "तुम्हारी जिन्दगी की बागडोर हमारे हाथों में है। इस संसार में सदैव निडर होकर रहना"। इसके बाद फिर आवाज नहीं आयी।

यह आवाज हमारे ही अन्तःकरण से आ रही थी। यह आवाज ईश्वर की ओर से निर्देशन कर रही थी। कुछ समय पहले अनुभव में भगवान विष्णु जी का दर्शन हुआ था। वह हमारे सम्पूर्ण अन्तःकरण में खड़े हुए स्वरूप में व्याप्त थे। इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि ये शब्द भगवान विष्णु जी के ही थे क्योंकि हमारे अन्तःकरण में हृदयगुफा के अन्दर भगवान विष्णु जी ही निवास करते हैं।

काली देवी प्रलय उन्मुख

यह अनुभव सितम्बर माह के तीसरे सप्ताह में आया। कुछ कारणों से मैं थोड़ा चिंतित-सा था। रात्रि का समय था, लगभग 10:00 बजा होगा। हमारी आँखे अपने आप बन्द हो गयी, मेरा ध्यान लगने लगा। तब मैंने देखा- आकाश में सांवले रंग की स्त्री खड़ी हुई थी। उसके बाँये हाथ में लम्बा त्रिशूल सा है, दाँये हाथ में डमरु पकड़े हुए थी, डमरु वाला हाथ ऊपर की ओर उठा हुआ था। ऐसा लग रहा था- मानो अभी-अभी डमरु बजाने वाली है। वह स्त्री मुझे देख रही थी। उस स्त्री का पेट पिचका हुआ था, जैसे कम उम्र की लड़कियों का पेट पिचका होता है। उसकी नाभि स्पष्ट दिखाई दे रही थी। वह विचित्र से कपड़े पहने हुए थी। ऐसा लग रहा था, मानो वह क्रोध में थी।

अर्थ- यह स्त्री काली देवी थी। जब प्रलय का समय आता है तब वह ऐसा विकराल स्वरूप धारण करती है अनुभव में दिखाई दिया, माता काली देवी अपने दाँये हाथ में डमरु पकड़े हुए हाथ को ऊपर उठाए हुए है। इस मुद्रा से भाषित होता है मानों सृष्टि का प्रलय करने वाली है अर्थात उनकी मुद्रा प्रलय उन्मुख है। इसका अर्थ होता है- भविष्य में संसार हमारे लिए नष्ट हुए के समान हो जाएगा। यह अवस्था हमें भविष्य में प्राप्त होगी।

सन् 2017

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव सुबह ध्यानावस्था में 7 जनवरी को आया। मैं जिस जगह पर खड़ा हुआ हूँ, वहाँ से क्षितिज 10-12 मीटर की दूरी पर था। सम्पूर्ण आकाश और भूमि 12-13 मीटर अर्धव्यास के क्षितिज में विद्यमान थी। हमारे सामने क्षितिज से थोड़ा पहले ऋतम्भरा-प्रज्ञा विद्यमान थी। इसका स्वरूप उगते हुए सूर्य के समान था। भूमि का रंग भी सुर्ख लाल था, जैसे आग की बनी हो। इस अनुभव में ऋतम्भरा-प्रज्ञा आकाश में गति नहीं कर रही थी, ऐसी लग रहा था।

13 जनवरी को भी ध्यानावस्था में सुबह के समय पश्चिम दिशा की ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा अस्त होने की ओर जा रही है। जैसे पश्चिम दिशा की ओर सूर्य अस्त होता है उसी प्रकार ऋतम्भरा-प्रज्ञा भी अस्त होने वाली है ऐसा अनुभव में दिखाई दे रहा था।

कुण्डलिनी शक्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त

यह अनुभव 14 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान में मैंने देखा- हमारे सामने एक स्त्री लाल साड़ी पहने हुए खड़ी है। वह स्त्री बहुत ही सुन्दर है। वह अपने शरीर पर ढेर सारे स्वर्ण आभूषण पहने हुए है। मैं उस स्त्री को देख रहा था तभी उसके शरीर से एक सुनहरा सा नाग प्रकट हो गया। यह सुनहरा नाग उसके शरीर के अन्दर से प्रकट होकर (निकलकर) आया था। यह सुनहरा नाग लगभग एक फीट बाहर आ गया था। वह अपना फन चौड़ा किये हुए फन को हवा में लहरा रहा था। तभी उस स्त्री के शरीर से तीन-चार नाग अन्दर से बाहर की ओर एक-डेढ़ फीट निकल आये। वे सभी नाग अपना-अपना फन चौड़ा करके हवा में लहराने लगे। उस सुन्दर स्त्री के पेट, सीना और पीठ वाले भाग से ढेरों नाग निकल आये और अपना-अपना फन चौड़ा करके हवा में लहराने लगे। उस स्त्री के गर्दन से ऊपर का स्वरूप स्पष्ट दिखाई दे रहा था। गर्दन से नीचे और कमर से ऊपर शरीर पर ढेरों सुनहले नाग प्रकट हो-होकर अपना फन हवा में लहरा रहे थे। ये सभी नाग उस स्त्री के अंग ही थे। सभी नागों के शरीर की लम्बाई एक-डेढ़ फीट ही थी। सभी नागों का शरीर सामान्य भौतिक नागों के समान ही था। नागों का पेट और पूँछ वाला भाग नहीं

था, क्योंकि सभी नाग उस सुन्दर स्त्री के शरीर से मात्र एक-डेढ़ फीट ही बाहर निकल आये थे। उस स्त्री के दोनों हाथों ने भी नागों का स्वरूप धारण कर लिया था। जैसे किसी मनुष्य के हाथ और उसके शरीर के अंग होते है उसी प्रकार उस स्त्री के सभी अंग नाग के रूप में बदल गये थे। ऐसी सुन्दर स्त्री अपने जीवनकाल में पहली बार देखी है। मैंने किसी भी पुस्तक या शास्त्रों में इस प्रकार की स्त्री का वर्णन नहीं पढ़ा है।

अर्थ- यह सुन्दर दिखने वाली स्त्री कुण्डलिनी शक्ति ही है। वह स्त्री के शरीर में और अनंत सुनहरी नागिनों के रूप में भी दिखाई दे रही थी तथा इस स्वरूप में वह स्त्री भी है और सुनहरी नागिन के रूप में भी थी अर्थात अभ्यासियों को कुण्डलिनी शक्ति सुन्दर स्त्री के रूप में और सुनहरी नागिन के रूप में (दोनों रूपों में) दिखाई देती है। इसका मूल निवास सहस्त्रार चक्र में होने के कारण शक्तिरूप में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में और समस्त प्राणियों के अन्दर अपने अग्नि तत्व वाले स्वरूप से विद्यमान रहती है।

अपने आपको प्रणाम

यह अनुभव 15 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मैं अपने आप को कह रहा हूँ- "हे योगी राज, मैं आपको प्रणाम करता हूँ" । ये शब्द कहने के बाद मैं झुक कर अपने आप को प्रणाम करता हूँ। कुछ समय तक मैं यही क्रिया करता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

ये अनुभव बड़ा आश्चर्यजनक था। मैं अपने को ही योगी राज कहता हूँ, फिर प्रणाम भी अपने आप को करता हूँ। वैसे इस अनुभव का अर्थ गूढ़ है अर्थात पूर्णता जैसा दर्शा रहा है। जबकि अभी मैं पूर्ण नहीं हुआ हूँ, ऐसी अवस्था भविष्य में कुछ वर्षों बाद आयेगी।

शिविरों के कारण चित्त मलिन हुआ

मुझे वर्ष 2017 में बहुत अनुभव आये मगर उन अनुभवों को नहीं लिखा, मात्र कुछ ही अनुभव लिखे। इस वर्ष 2017 में बहुत से शिविर किये। उन शिविरों में बहुत से साधकों पर शक्तिपात किया। इन साधकों की मलिनता व कर्म मुझे धारण करना पड़ता था। मंत्र जाप के समय और ध्यान के समय भी बहुत

से साधकों की मलिनता हमारे चित्त पर आ जाती थी। कुछ साधक बहुत ही मलिन चित्त वाले तथा नकारात्मक विचारों वाले आते थे। उनका प्रभाव हमारे चित्त पर पड़ता था।

सन् 2017 फरवरी में बाँदीकुई राजस्थान, अप्रैल 2017 में दिल्ली में, 2-3 सितम्बर 2017 यमुना नगर (हरियाणा) में, 22 सितम्बर 2017 में रेल कोच फैक्ट्री कपूरथला पंजाब में, दुबारा 19 अक्टूबर 2017 में RCF कपूरथला पंजाब मे, 24 अक्टूबर 2017 दिल्ली में। इन शिविरों में हमारा चित्त खूब मलिन हो गया, क्योंकि मार्गदर्शन करने का हमारा तरीका ही ऐसा था।

शिवछिद्र का खुलना

यह अनुभव 9 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मुझे अंधकार ही अंधकार दिखाई दे रहा था। थोड़ी देर के लिए ध्यान तो अच्छा लगा, मगर बाद में मन शान्त नहीं हुआ। मैंने ध्यान को तोड़ दिया, फिर सोचने लगा- मेरे अन्दर साधकों की कितनी गन्दगी चढ़ गयी है, अर्थात चित्त पर मलिनता का भण्डार हो गया है। मैं विभिन्न तरीकों से दिन भर मलिनता को साफ करता रहा।

दूसरे दिन सुबह पौने चार बजे ध्यान करने के लिए बैठ गया, तब मैं इस अंधकार (तमोगुण) को हटाने के लिए सिद्ध मंत्र का प्रयोग करने लगा। सिद्ध मंत्र का प्रयोग करते हुए मात्र कुछ समय ही बीता था, तभी ऐसा लगा- मानो काले रंग की चट्टानें टूटने लगी, ऐसी क्रिया कुछ समय तक होती रही। मंत्र पर मंत्र बोले जा रहा था क्योंकि मैं देख रहा था- तमोगुण टूटने लगा है, मुझे सफलता अवश्य मिलेगी। तमोगुण अदृश्य भी होता जा रहा था। मेरे द्वारा बोले गये मंत्र में वेग भी था। उसी समय एक विशाल चट्टान टूटते ही एक बहुत बड़ा छिद्र हो गया। यह छिद्र एक मीटर व्यास से ज्यादा था। इस गोलाकार छिद्र के उस पार बहुत तेजस्वी उजला प्रकाश दिखाई देने लगा। यह प्रकाश विलक्षणता से युक्त था, ऐसा प्रकाश मैंने अपने साधनाकाल में नहीं देखा था। अब मैं छिद्र के उस पार का प्रकाश देखने में लगा हुआ था, क्योंकि वह प्रकाश बहुत सुन्दर था। अब हमारे चित्त पर प्रसन्नता फैली हुई थी। मैं उस छिद्र को और उस पार का प्रकाश देखकर खूब प्रसन्न हो रहा था। उस प्रकाश के स्वरूप का वर्णन नहीं कर सकता हूँ क्योंकि हमारे पास उस प्रकाश का वर्णन करने लिये शब्द ही नहीं है। मैं काले पदार्थ से बनी दीवारनुमा मोटी परत को भी देख रहा था। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया। मैं अनुभव का अर्थ समझ रहा था इसलिए अति प्रसन्न हो रहा था।

अर्थ- कुछ शिविरों के कारण हमारा चित्त अत्यन्त मलिन हो गया था। उसको निकालने के लिये तथा नष्ट करने लिये मुझे गुप्त सिद्ध मंत्रों का प्रयोग करना पड़ा, क्योंकि सामान्य तौर पर तमोगुण नष्ट हो रहा था अथवा तमोगुण से चित्त को स्वच्छ करने के लिये बहुत दिनों का अभ्यास लग जाता, इसलिये सिद्ध मंत्र का प्रयोग करने से अतिशीघ्र कामयाबी मिल गयी। सिर्फ कामयाबी ही नहीं मिली बल्कि अगली अवस्था भी प्राप्त हो गयी।

सिद्ध मंत्र का प्रयोग करने से तमोगुण की परत हट गयी और शिवछिद्र भी खुल गया। यह शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान होता है। अनुभव में शिवछिद्र के चारों ओर तमोगुण की काली परत दीवार के समान होती है। अभ्यासी के कई वर्षों तक कठोर अभ्यास के द्वारा और जीवों का कल्याण करने पर अपरा-प्रकृति का आवरण छिन्न-भिन्न हो जाता है। छिद्र के उस पार परा-प्रकृति का क्षेत्र है।

परा-प्रकृति का अवतरण और शिवछिद्र

यह अनुभव 10 दिसम्बर को आया। सुबह ध्यानावस्था में पहले की भाँति वही प्रकाश आता हुआ दिखाई दिया। मैं अपनी ओर आते हुए प्रकाश को गौरपूर्वक देख रहा था। यह प्रकाश उसी बड़े से छिद्र के उस पार से, छिद्र के अन्दर से हमारी ओर आ रहा था। मुझे वह शिवछिद्र अपने नजदीक दिखाई दे रहा था। ऐसा लग रहा था यह शिवछिद्र कोयले के समान काली मोटी दीवार के मध्य में है। शिवछिद्र के उस पार बहुत ही तेजस्वी प्रकाश विद्यमान था, क्योंकि उस पार का क्षेत्र परा-प्रकृति का है। मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था उस पार का प्रकाश छिद्र द्वारा मेरी ओर आ रहा था। यह प्रक्रिया धीरे-धीरे हो रही थी। अर्थात परा-प्रकृति की विशुद्धता मेरी ओर आ रही है। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में शिवछिद्र द्वारा उस पार का विशुद्ध प्रकाश मेरी ओर अर्थात मेरे चित्त पर आ रहा था। इसे परा-प्रकृति का अवतरण कहते है, क्योंकि परा-प्रकृति के क्षेत्र से उसका विशुद्ध प्रकाश मेरी अर्थात मेरे चित्त पर आ रहा है। जितना परा-प्रकृति का हमारे चित्त पर अवतरण होगा, उतनी हमारी अपरा-प्रकृति में (चित्त में) शुद्धता आयेगी। जितना चित्त शुद्ध होगा, उतनी ही चित्त में सूक्ष्मता और व्यापकता आयेगी। इसलिये परा-प्रकृति का चित्त पर (अपरा-प्रकृति में) अवतरण होना अति आवश्यक

है। यह क्रिया धीरे-धीरे अभ्यास के द्वारा वर्षों तक चलती है। इसका प्रभाव अपरा-प्रकृति के आवरण पर भी पड़ता है।

हे श्रेष्ठ पुरुष

यह जानकारी 11 दिसम्बर को सुबह ध्यानावस्था में मिली। मैं ध्यान कर रहा था, तभी मुझे आकाश से पुरुष की आवाज सुनाई दी। उस आवाज ने कहा- "हे श्रेष्ठ पुरुष, अब शान्त हो जाये"। मैं कुछ नहीं बोला, सिर्फ उत्तर में चुप रहा। कुछ क्षणों बाद फिर आवाज आयी- "हे श्रेष्ठ पुरुष, अब आप शान्त हो जाये"। उत्तर में मैं सिर्फ चुप रहा। इसी प्रकार एक बार फिर आवाज आयी थी। कुल मिलाकर मुझसे तीन बार कहा गया था। वह आवाज पुरुष की थी, दूसरे शब्दो में आकाशवाणी के द्वारा ये वाक्य तीन बार सुनाई दिये थे।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे श्रेष्ठ पुरुष कहा गया, इसका अर्थ है- हमारा अभ्यास शिवछिद्र के अंतर्गत चलने लगा है तथा परा-प्रकृति का अवतरण होना शुरु हो गया है। यही हमारी श्रेष्ठता की पहचान है क्योंकि भविष्य में परा-प्रकृति में (ईश्वर के लोक में) स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात जाना तय है। भविष्य में परम शान्ति भी मिलनी निश्चित है।

कुण्डलिनी शक्ति

यह अनुभव 15 दिसम्बर को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मैं क्षितिजनुमा जगह के अन्दर का सम्पूर्ण भाग देख रहा हूँ। भूमि पर सम्पूर्ण गोलाकार भाग में (वृत्ताकार भाग का किनारा) एक सुनहला नाग अपने शरीर का एक चक्कर लगाये हुए अपने फन को ऊपर की ओर उठाये हुये बैठा था।

अर्थ- क्षितिज के अन्दर की गोलाकार भूमि अर्थात मेरा ही चित्त है, (अपरा-प्रकृति) ऊपर चित्ताकाश है। कुण्डलिनी शक्ति सम्पूर्ण चित्त का एक चक्कर लगाए हुए बैठी है। अर्थात कुण्डलिनी शक्ति हमारे सम्पूर्ण चित्त में व्याप्त हो रही है।

परा-प्रकृति का अवतरण

यह अनुभव 16 दिसम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। पहले की तरह एक-डेढ़ मीटर व्यास वाला शिवछिद्र दिखाई दिया। इस शिवछिद्र के उस पार परा-प्रकृति के क्षेत्र वाला प्रकाश, जो विलक्षणता को लिये हुए था, वह मैं देख रहा था तथा उस सुन्दर प्रकाश की विलक्षणता के विषय में सोच रहा था, क्योंकि ऐसा प्रकाश अपरा-प्रकृति के अन्दर कभी नहीं दिखाई दिया है। परा-प्रकृति के क्षेत्र में विद्यमान प्रकाश विशुद्धता को प्राप्त होता है, अपरा-प्रकृति के क्षेत्र में विद्यमान प्रकाश शुद्धता को प्राप्त होता है। इसका कारण गुणों की अवस्था है। शिवछिद्र के उस पार का प्रकाश छिद्र द्वारा हमारी ओर धीरे-धीरे आने लगा। कुछ क्षणों बाद वह प्रकाश हमारे पास आकर चारों ओर फैलने लगा, जैसे कोहरा फैलने लगता है। मैं उस प्रकाश के अन्दर विद्यमान था। प्रकाश धीरे-धीरे फैल रहा था। फिर हमारी समाधि टूट गयी।

अर्थ- परा-प्रकृति के क्षेत्र में विद्यमान प्रकाश सत्वगुण की विशुद्धता के कारण विलक्षणता को लिये हुए रहता है। इसका शब्दों से वर्णन नहीं किया जा सकता है, अभ्यास के द्वारा प्रत्यक्ष होने पर जाना जा सकता है। परा-प्रकृति का प्रकाश शिवछिद्र द्वारा मेरी ओर आ रहा है और हमारे चारों ओर फैलने लगा अर्थात हमारे चित्त पर परा-प्रकृति का अवतरण होता रहा। दूसरे शब्दो में- परा-प्रकृति का अवतरण शिवछिद्र द्वारा अपरा-प्रकृति में होता रहा। परा-प्रकृति का अवतरण जितना अपरा-प्रकृति में होगा, उतनी ही अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जाएगी। अपरा-प्रकृति का शुद्ध होना अतिआवश्यक है। जब तक अपरा-प्रकृति पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं होगी, तब तक मोक्ष की अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती है अर्थात सम्भव नहीं है। इसी प्रकार अभ्यास के द्वारा परा-प्रकृति का अवतरण कराना अति आवश्यक होता है ताकि अशुद्ध प्रकृति (अपरा-प्रकृति) शुद्ध हो सके।

सत्वगुणी अहंकार

यह अनुभव 16 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मुझे चित्त की सम्पूर्ण भूमि दिखाई दे रही थी। भूमि से लगभग एक मीटर ऊपर आकाश में, सफेद रंग का नाग प्रकट होकर नीचे भूमि पर आ गया, फिर भूमि पर तीव्रता से इधर-उधर गति करने लगा। मैं यह दृश्य देखकर हँसने लगा। नाग बहुत सुन्दर, स्वच्छ, सफेद व प्रकाशित सा था।

अर्थ- मेरे चित्त पर परा-प्रकृति का अवतरण होना शुरु हो गया है, इसलिये सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य होता हुआ दिखाई दे रहा था, जबकि अभी अपरा-प्रकृति का आवरण विद्यमान है। यह आवरण तमोगुण की अधिक मात्रा के प्रभाव से युक्त होता है, इसलिये हमारे चित्त पर तमोगुण का प्रभाव अभी शेष रहेगा। धीरे-धीरे अभ्यास द्वारा अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जायेगी। इसलिये तमोगुणी अहंकार का भी प्रभाव रहेगा अर्थात अभ्यासानुसार चित्त की अवस्था बदलती रहेगी।

तुम अपराधी जैसे हो

यह शब्द मुझसे 14 दिसम्बर को ध्यानावस्था में कहे गये। मैं कुछ शब्दो को यहाँ पर लिख रहा हूँ- मैंने ध्यानावस्था में कुछ शब्द सुने, यह शब्द स्वयं अपने आप प्रकाश के अन्दर से प्रकट हो रहे थे। मुझसे कहा गया- "तुम अपराधी जैसे हो"। उस समय मैं गहरे ध्यान में था, ये शब्द सुनते ही मेरा ध्यान हल्का होने लगा। ये शब्द सुनकर मेरे अन्तःकरण में प्रश्न प्रकट हुआ, मैं बोला- "क्या"। फिर प्रकाश के अन्दर से आवाज आयी- "तुम अपराधी जैसे हो"। मैं बोला- "मैंने क्या किया है?" फिर आवाज आयी- "साधक अयोग्य होते हुए भी तुमने साधकों का कण्ठचक्र और ब्रह्मरंध्र खोला है। पहले अभ्यास करके साधकों को योग्य तो हो जाने देते, मगर तुमने शक्ति का प्रयोग करके यह कार्य कर दिया। तुमने प्रकृति के नियमों का उल्लंघन किया है। ऐसा न समझो, तुमसे पहले अन्य योगी शक्तिशाली नहीं हुए है, पूर्वकाल में तुमसे भी अधिक शक्तिशाली योगी हो चुके हैं मगर उन्होंने ऐसा कार्य नहीं किया है, इसलिये तुम अपराधी जैसे हो"। उत्तर में मैं बोला- "मैंने व्यक्तिगत रूप से किसी प्रकार के स्वार्थ के कारण ऐसा नहीं किया है, मैंने सिर्फ कल्याण भाव से ऐसा किया है ताकि साधकों का कल्याण हो जाये। वह साधक अब मेरे सम्पर्क में रहे अथवा न रहे, मेरे लिए दोनों अवस्थायें समान है"। प्रकाश से फिर आवाज आयी- "इस प्रकार के कार्यों को करने से प्रकृति की व्यवस्था में गड़बड़ी होती है, तुम्हें ऐसे कार्य नहीं करने चाहिए। साधकों को अभ्यास करने देते, फिर उचित अवस्था में मार्गदर्शन अथवा सहायता कर देते"। उत्तर में मैं बोला- "अब कोशिश करूँगा, ऐसा न करूँ"। फिर मेरा ध्यान टूट गया।

अर्थ- ऐसा मुझे इसलिए कहा गया, क्योंकि मार्गदर्शन करते समय साधकों पर शक्तिपात करके उनकी कुण्डलिनी समय से पूर्व ही जाग्रत करके उर्ध्व कर देता हूँ। जबकि उनकी कुण्डलिनी जागरण का समय नहीं आया होता है। इसी प्रकार साधकों का कण्ठचक्र खोल देता हूँ और ब्रह्मरंध्र भी खोल देता हूँ।

जबकि किसी भी साधक का उचित अभ्यास नहीं हुआ होता है कि उनकी कुण्डलिनी जागरण का समय आ गया हो। कण्ठचक्र तो साधक अपने अभ्यास के बल पर खोल पाने में असमर्थ जैसे ही रहते अथवा अगले जन्म में कण्ठचक्र खोल पाते। ब्रह्मरंध्र विरले साधक ही खोल पाते। मैं ज्यादातर सभी साधकों की कुण्डलिनी जाग्रत करके, कुछ दिनों में ही कण्ठचक्र खोल देता हूँ। इसीलिये मुझसे ये शब्द ध्यानावस्था में कहे गये थे। समाज में बहुत से साधक भ्रम में जीवन जी रहे है कि उनकी अमुक अवस्था है।

मंत्र दिया गया

मैं समाज के व्यवहार से थोड़ा दुखी सा बैठा हुआ था। यह समाज अकारण ही निन्दा करता रहता है। मैं कुर्सी पर आँखे बन्द किये हुए चुपचाप बैठा हुआ था, तभी आकाश से आवाज आयी- अब तुम इस मंत्र का जाप करो, यह मंत्र बहुत ही शक्तिशाली है- "----------"। उसी समय मेरे अन्तःकरण से आवाज आने लगी, मैं इसी मंत्र का जाप करने लगा। कुछ दिनों तक लगातार इस मंत्र का जाप किया। यह मंत्र मैं यहाँ पर नहीं लिख रहा हूँ, ऐसे मंत्र योग्यतानुसार साधकों को दिव्य शक्तियाँ प्रदान करती है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन

25 दिसम्बर को ध्यानावस्था में ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी थी। सुबह 4:30 बजे ध्यानावस्था में देखा- पूर्व दिशा की ओर तेज प्रकाश फैला हुआ है। आकाश बहुत तेज प्रकाशित हो रहा है, उसी प्रकाश में ऋतम्भरा-प्रज्ञा बहुत तेज प्रकाशित दिखाई दे रही थी। अबकी बार सबसे अधिक प्रकाशित दिखाई दी थी। ऐसा शायद इसलिए होगा- परा-प्रकृति का अवतरण हमारे अन्दर हो रहा है, हमारे लिए अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जा रही है।

सन् 2018

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 4 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। मुझे आकाश में ऊपर की ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी। अबकी बार ऋतम्भरा-प्रज्ञा का स्वरूप उतना तेजस्वी नहीं था जितनी तेजस्वी पहले दिखाई देती थी। शायद ऐसी इसलिए दिखाई दी- मैं सांसारिक कार्यों को करके आया हूँ, इसलिए ऋतम्भरा-प्रज्ञा उतनी तेजस्विनी नहीं है जितनी तेजस्वी पहले होती थी।

मैं चोटी के ऊपर खड़ा हो गया

यह अनुभव 23 जनवरी का है। सुबह ध्यानावस्था में देखा- मैं एक फीट चौड़े मार्ग पर मात्र एक मीटर के लगभग चला था, तभी रुक गया। मैंने देखा- आगे मार्ग ही नहीं था। फिर मैंने इधर-उधर देखा तो आश्चर्यचकित हो गया, क्योंकि मैं पर्वत की चोटी पर खड़ा था, नीचे की ओर भूमि ही नहीं दिखाई दे रही थी। ऐसा लगा मैं आकाश में खड़ा हूँ। जब मैंने अपने पैरों की ओर देखा, तब दिखाई दे रहा था- मैं पर्वत की पतली सी बहुत ऊँची चोटी के ऊपर खड़ा हूँ। यह देखकर ऐसा लग रहा था कि अब मैं न ही पीछे की ओर लौट सकता था और न ही नीचे की ओर उतर सकता था, क्योंकि उस चोटी की बनावट ही ऐसी थी। अब मैं खड़ा हुआ चारों ओर आकाश को देख रहा था।

अर्थ- अनुभव में पर्वत की सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा हूँ। इसका अर्थ है- योग में मुझे सर्वोच्च अवस्था प्राप्त हुई है। इस अवस्था से मेरा पतन नहीं हो सकता है, ऐसा अनुभव का अर्थ निकल रहा है। क्योंकि पर्वत की चोटी से नीचे नहीं उतर सकता था अर्थात योग की उच्चावस्था से नीचे नहीं आ सकता हूँ, भले ही साधकों का मार्गदर्शन करते समय मेरी अवस्था थोड़ी नीचे आ जाय। नीचे की अवस्था में स्थित हुए बिना मार्गदर्शन नहीं किया जा सकता है। साधकों का मार्गदर्शन समाप्त होते ही पुनः अपनी उच्चावस्था को प्राप्त हो जाऊँगा।

तत्वज्ञानी सांसारिक कार्य करते समय कुछ समय के लिए चित्त की निचली अवस्था में स्थित होकर अपना कार्य करते हैं, फिर अपनी ज्ञान की उच्च अवस्था में स्थित हो जाते हैं। ऐसे ही संसार में कल्याण भाव से साधकों का मार्गदर्शन करते रहते हैं, फिर अपनी अवस्था में (जीवन्मुक्त अवस्था) स्थित हो जाते हैं।

परा-प्रकृति का अवतरण और शिवछिद्र

यह अनुभव 24 जनवरी को आया। ध्यानावस्था में मैंने देखा- हमारे सिर के ऊपर अन्तरिक्ष में एक बड़ा सा छिद्र है। छिद्र के उस पार परा-प्रकृति के क्षेत्र में प्रकाश भरा हुआ है। यह प्रकाश अत्यन्त स्वच्छ, सफेद रंग का तेजस्वी है। शिवछिद्र को गौरपूर्वक देखते समय दिखाई दे रहा था- शिवछिद्र के परत की (दीवार की मोटाई) मोटाई लगभग ढाई-तीन फीट होगी। यह दीवार या परत काले पदार्थ से बनी हुई थी। अर्थात परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के बीच की दीवार (आवरण) ढाई-तीन फीट मोटी काले पदार्थ से निर्मित हुई दिखाई दे रही थी।

2- दो-तीन दिन बाद मुझे दिखाई दिया- यह शिवछिद्र हमारे सिर के ऊपर स्थित है, शिवछिद्र के उस पार का प्रकाश नीचे की ओर आ रहा है। फिर कुछ क्षणों बाद दिखाई दिया- वह प्रकाश ऊपर से आकर हमारे पास आ गया, उसी समय हमारी समाधि भंग हो गयी।

3- कुछ दिनों बाद समाधि अवस्था में देखा- वह शिवछिद्र हमारे सामने है। शिवछिद्र की परत भी पहले से पतली हो गयी है। शिवछिद्र के उस पार से प्रकाश आकर हमारे शरीर के अन्दर भरने (समाने) लगा। यह प्रकाश पहले सीने (वक्षस्थल) के क्षेत्र से अन्दर की ओर समाने लगा, फिर सम्पूर्ण शरीर में धीरे-धीरे व्याप्त होने लगा।

कुछ दिनों से ध्यानावस्था में परा-प्रकृति का अवतरण होना अक्सर दिखाई देने लगा है। मैंने परा-प्रकृति के अवतरण के विषय में संक्षेप में लिखा है। इस अवस्था में मैं अभ्यास किया करता था। पहले ये शिवछिद्र हमारे सिर के ऊपर अंतरिक्ष में दिखाई देता था, फिर यह शिवछिद्र हमारे सिर के पास दिखाई देने लगा, अन्त में यह शिवछिद्र सामने की ओर दिखाई देने लगा।

परा-प्रकृति का अवतरण होना अभ्यासी के लिए अतिआवश्यक है। इससे अपरा-प्रकृति शुद्ध होती है। जितना अवतरण परा-प्रकृति का होता जायेगा, उतना ही अपरा-प्रकृति का शुद्धिकरण होगा। अन्त में शुद्ध हो-होकर पूर्ण शुद्धि के समय, अपरा-प्रकृति का आवरण भी धीरे-धीरे शुद्ध होता रहता है। तब उस आवरण का स्वरूप धीरे-धीरे पतला सा होता जायेगा। इसके साथ ही अपरा-प्रकृति का आवरण व अपरा-प्रकृति का आयतन भी छोटा होता जायेगा। अभ्यासी का चित्त शुद्ध हो-होकर उसके अन्दर सूक्ष्मता और व्यापकता भी बढ़ती जायेगी।

चित्त की शुद्धता के साथ चित्त की भूमि का भी शुद्धिकरण होना शुरु होने लगेगा। चित्त की भूमि के स्वरूप का, परा-प्रकृति के अवतरण के कारण शुद्धिकरण हो रहा होता है। इसके साथ-साथ ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा भी चित्त की भूमि पर ज्ञान का प्रकाश फैलता है तब चित्त पर स्थित अज्ञानता भी जड़ से समाप्त हो रही होती है। ऐसी अवस्था में चित्त की भूमि प्रकाशित होने लगती है। उसके अन्दर दिव्यता व प्रकाशित होने के कारण, अभ्यासी द्वारा किये गये किसी भी प्रकार के कार्यों के संस्कार चित्त की भूमि पर नहीं पड़ते है क्योंकि चित्त की भूमि ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित रहती है। ये सभी प्रक्रियायें चित्त पर धीरे-धीरे अभ्यासानुसार ही चलती रहती है। ऐसी अवस्था में इंद्रियाँ, मन, बुद्धि आदि में भी सात्विकता बढ़ती रहती है, इससे अभ्यासी के स्वभाव में धीरे-धीरे परिवर्तन आना शुरु होने लगता है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी का चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी होता रहता है।

चित्त स्फटिक मणि के समान

यह अनुभव जनवरी के अंतिम दिनों में आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- हमारे सामने स्वच्छ निर्मल आकाश दिखाई दे रहा है। कुछ क्षणों बाद मुझे सामने की ओर मणि के समान चमकता हुआ घड़ा दिखाई दिया। ऐसा लग रहा था मानो मणि का बना हुआ घड़ा है। वह अपने आप थोड़ा-सा ऊपर की ओर उठा, फिर वह ऊपर आकाश में स्थिर हो गया। कुछ क्षणों के बाद शिवछिद्र द्वारा अन्दर की ओर प्रकाश आने लगा। वह प्रकाश जो परा-प्रकृति से आया था, घड़े के अन्दर प्रवेश करने लगा। कुछ क्षणों बाद सम्पूर्ण घड़ा प्रकाश से भर गया। वह घड़ा मणि के समान अत्यन्त निर्मल था, इसलिए दूर से ही दिखाई दे रहा था कि घड़ा प्रकाश से भर गया है। फिर कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला घड़ा हमारे ही चित्त का प्रतीक है। कभी-कभी अपरा-प्रकृति का स्वरूप भी घड़े के स्वरूप में दिखाई देता है अथवा अण्डाकार क्षेत्र के रूप में भी दिखाई देती है। परा-प्रकृति के अवतरण के कारण चित्त (घड़ा) मणि के समान अत्यन्त स्वच्छ निर्मल दिखाई दे रहा है।

शिव और शक्ति

यह अनुभव 22 जून को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने की ओर चित्त की भूमि क्लॉक वाइज घूम रही थी। कुछ क्षणों में भूमि के मध्य में हल्के काले रंग का शिवलिंग प्रकट होने लगा। यह शिवलिंग कुछ ही समय में ऊपर की ओर निकल कर डेढ़-दो फीट ऊँचा हो गया। जिस पदार्थ से शिवलिंग बना हुआ था, उसी पदार्थ का बना हुआ एक नाग शिवलिंग के ऊपर लिपटा हुआ था अर्थात नाग शिवलिंग को पूर्ण रूप से लपेटे हुए था। तभी आकाशवाणी हुई- "जहाँ शिवलिंग विद्यमान है वहाँ शक्ति भी विद्यमान रहती है"। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे बताया जा रहा है- शिव और शक्ति एक साथ रहते है। तथा मुझे अनुभव में दिखाया जा रहा है- मेरे चित्त में शिव और शक्ति दोनों एक साथ विराजमान है। ऐसा तभी दिखाई देता है, जब चित्त की शुद्धता चरम सीमा पर होती है। चित्त का निर्माण अपरा-प्रकृति द्वारा हुआ है, इसलिए सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति में कारण अवस्था से लेकर स्थूल अवस्था तक एवं चित्त से लेकर स्थूल तक शिव और शक्ति सर्वत्र विद्यमान रहते है। ऐसा ही अनुभव में भी दिखाया जा रहा है। ऐसा वही प्रत्यक्ष कर सकता है, जिस अभ्यासी के चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो चुका है, और प्रज्ञा के प्रकाश में अज्ञानता मूल रूप से समाप्त हो चुकी है। ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण चित्त पर फैल गया है और कई बार परा-प्रकृति का भी अवतरण अभ्यासी के अंतःकरण में हो चुका है। चित्त की शुद्धता पर ही शिव-शक्ति का दर्शन अभ्यासी के चित्त पर होता है।

चित्ताकाश

यह अनुभव 25 जून को आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं आकाश में खड़ा हूँ। जिस स्थान पर खड़ा हूँ, मेरे पैरों के नीचे पैर के तलवे के बराबर मिट्टी की बनी हुई चट्टान सी है। चारों ओर सर्वत्र आकाश ही

आकाश है, सम्पूर्ण दृश्य में भूमि का अस्तित्व नहीं है। मैं आकाश में आगे की ओर चलने लगा। मैं आकाश में चारों ओर ऊपर-नीचे विचरण करने लगा। फिर मुझे दिखाई दिया- मैं अण्डाकार पारदर्शी आवरण के अन्दर बन्द हूँ, आवरण अत्यन्त पतली सी पारदर्शी झिल्ली सी है। मुझे ऐसा लग रहा था- मैं बड़ी सी बॉल के अन्दर विद्यमान हूँ, उसके अन्दर सिर्फ आकाश ही आकाश है, मैं उस आकाश में घूम रहा हूँ।

अर्थ- यह गोलाकार (थोड़ा सा अण्डाकार रूप में) पारदर्शी आवरणनुमा जगह अपरा-प्रकृति का ही क्षेत्र है। आवरण के अन्दर का क्षेत्र चित्ताकाश भी कहा जाता है, क्योंकि अपरा-प्रकृति के द्वारा ही उसी के समान चित्ताकाश का निर्माण हुआ है। फिर अपरा-प्रकृति और चित्ताकाश (चित्त) अपना-अपना अलग-अलग अस्तित्व रखते है। अपरा-प्रकृति से चित्त भिन्न है। इसी प्रकार असंख्य जीवों के चित्त एक होते हुए भी अलग-अलग अस्तित्व रखते है। जीवों के चित्त आपस में एक-दूसरे में विलीन नहीं होते है। इसका मुख्य कारण है- सभी जीवों के कर्म अलग-अलग होते हैं, कर्मों की भिन्नता के कारण सभी के चित्त अलग रहते है। इसी प्रकार अपरा-प्रकृति अलग है और जीव का चित्त अलग है। जीवन्मुक्त पुरुष के लिये अपरा-प्रकृति नष्ट हुए के समान हो जाती है, मगर दूसरे जीवों के लिए अपरा-प्रकृति उपस्थित रहती है।

अनुभव में दिखाई देने वाला आवरण अपरा-प्रकृति का आवरण है। यही आवरण पहले अनुभव में काले पदार्थ से बनी हुई दीवार सी दिखाई देती है, इसी दीवार या आवरण के अन्दर शिवछिद्र विद्यमान है। अनुभव में मैं चित्ताकाश में विचरण कर रहा हूँ।

हनुमान जी

यह अनुभव 9 जुलाई को आया। ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर से हमारी ओर को एक मानव आकृति चली आ रही है। जब वह मानव आकृति थोड़ी सी नजदीक आयी तब स्पष्ट दिखाई देने लगी, ये मानव आकृति हनुमान जी थे। मैं बोला- "प्रभु आप"! आप का बहुत दिनों बाद दर्शन हुआ हैं, तब तक वह मेरे और नजदीक आ गये। मैं उनका स्वरूप देखकर चौंक पड़ा, और फिर मैं बोला- प्रभु, आप तो जड़ रूप में है, आप जड़ रूप में मुझे क्यों दिखाई दे रहे हैं? क्योंकि हनुमान जी मूर्ति स्वरूप में थे इसलिए किसी प्रकार का उत्तर नहीं मिला। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में पहले हनुमान जी जीवित शरीर में थे और मेरी ओर आ रहे थे। मेरे नजदीक मूर्ति रूप में परिवर्तित हो गये। इसका अर्थ है- मैं वायु तत्व की सीमाओं से पार होने वाला हूँ अर्थात वायु तत्व की सीमाएँ हमारे लिए समाप्त होने वाली है। हनुमान जी का प्राकट्य वायु तत्व की प्रधानता से हुआ है, इसलिए वह जड़ रूप में व पत्थर के रूप में परिवर्तित हो गये थे। अपरा-प्रकृति अपना सृजन कार्य आकाश तत्व में अधिष्ठित होकर वायु तत्व से करती है। पहले अनुभव में हनुमान जी एक कम आयु के लड़के के स्वरूप में भूमि के निचले क्षेत्र में सो रहे थे। उस समय मैं वायु तत्व की सीमाओं से पार हो रहा था।

शिवत्व का अर्थ

मुझे याद आ रहा है कई वर्ष हो गये मुझसे पूछा गया था- क्या आपको शिवत्व की पदवी दी जानी चाहिए? उस समय मैंने क्या उत्तर दिया था यह मुझे याद नहीं है। इस विषय में मैंने अपनी तीसरी पुस्तक 'तत्वज्ञान' में लिखा हुआ है।

शिवत्व का अर्थ है- "शिव जैसी अवस्था को प्राप्त करना"। आत्मा का परमात्मा (शिव) के साथ एकत्व स्थापित करना। यह ध्यान एवं चेतना की सर्वोच्च अवस्था को दर्शाता है। शिवत्व को अक्सर दिव्यत्व कहा जाता है, जहाँ व्यक्ति का मन, शरीर, और अहंकार का बोध समाप्त हो जाता है और केवल आनन्द व समाधि शेष रहती है। एक अर्थ यह भी है- खुद कष्ट सहकर भी दूसरों का कल्याण करना, यह जीवों के कल्याण के लिए संकल्प है। परम ज्ञान की प्राप्ति भी है। यह भ्रम से ऊपर उठ कर ज्ञान से उज्ज्वल होने की अवस्था है। जब व्यक्ति में मैं (अहंकार) का अन्त हो जाता है और पूर्णतः शिव के सार (सत्य, शिव, सुन्दर) में विलीन हो जाता है तब उसे शिवत्व की पदवी मिलती है। स्वयं को पहचानना और अपने स्वरूप (आत्मा) को निराकार शिव के साथ एकाकार कर लेना, शिवत्व है।

ऐसा कल्याणकारी देवता, जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में (अपरा-प्रकृति में) कण-कण में व्याप्त हो, ऐसे कल्याणकारी देवता के साथ एकाकार होना। ऐसा तभी हो सकता है जब अभ्यासी के अन्दर शरीर का भाव, मन और मैं (अहंकार) का भाव मिट जाता है, तब चित्त अत्यंत निर्मल व प्रकाशित सा हो जाता है फिर शिव के साथ एकाकार कर लेना शिवत्व है।

शिवत्व की पदवी दी गयी

18 नवम्बर को हमारा शिविर रायवाला (देहरादून) में हो रहा था। आज शिविर का आखिरी दिन था। मुझे शिविर के सभी साधकों पर शक्तिपात करना था, सभी साधकों पर शक्तिपात करना मुश्किल कार्य था। मुझे ध्यानावस्था में बताया गया- "तुम्हें शिवत्व की पदवी प्रदान की जा रही है"। अब आप सभी साधकों पर शक्तिपात कर सकते हैं, आपको किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं होगी। मैंने सोचा- जब मुझे यह पदवी प्रदान कर दी गयी है, अब मुझे शक्ति का प्रयोग साधकों पर किस प्रकार से करना चाहिये, मुझे मालूम नहीं है। तभी हमारे अन्दर बहुत जोर से वेग उत्पन्न होने लगा, मेरा शरीर हल्का कम्पन करने लगा। दोनों हाथों की विशेष प्रकार की मुद्रा बन गयी, मेरे अन्दर तीव्रता से शक्ति का संचार होने लगा।

अब मैंने साधकों पर शक्तिपात करना शुरु कर दिया। पहले मैंने साधकों पर तीन बार शक्तिपात करना शुरु किया, मगर मुझे बताया गया- सिर्फ एक बार ही शक्तिपात करें, तीन बार शक्तिपात करने की आवश्यकता नहीं है। एक बार शक्तिपात करने पर ही साधक के अन्दर ढेर सारी शक्ति (योगबल) प्रवेश कर रही थी। कुछ समय में ही मैंने सभी साधकों पर शक्तिपात कर दिया।

अबकी बार शक्तिपात करने में मुझे बिल्कुल थकान नहीं आयी, मैं अपने शरीर के अन्दर ताजगी महसूस कर रहा था। मुझे लग रहा था, अगर एक हजार साधक और होते, तो उन पर भी शक्तिपात कर देता। अब मुझे तीन-तीन बार शक्तिपात करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। आश्चर्य की बात यह थी, अबकी बार जो नये साधक आये थे, उनमे से बहुतों की कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होकर उर्ध्व हो गयी थी। कुछ साधक नशीले पदार्थों का सेवन करने वाले भी आये थे, उन्हें भी शक्तिपात की अच्छी तरह से अनुभूति हुई थी तथा अनुभव भी आये थे। अबकी बार मैंने अनुभूति की- हमारी संकल्प शक्ति बहुत ज्यादा बढ़ गयी है। अब मैं किसी भी साधक को किसी भी प्रकार का आध्यात्मिक लाभ पहुँचा सकता हूँ।

कुण्डलिनी शक्ति मेरे सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त

यह अनुभव 18 नवम्बर 2018 को आया। रायवाला देहरादून में मेरा चौथा शिविर चल रहा था। यह अनुभव मात्र आँखे बन्द करने के बाद आया। चौथे शिविर के अंतिम दिन मैं साधकों पर शक्तिपात कर रहा था। शक्तिपात साधकों पर सिर्फ एक बार ही अँगूठे के द्वारा कर रहा था। मैं बार-बार कुण्डलिनी

शक्ति से प्रार्थना करता था- "माता, इस साधक का कल्याण करो, यह अच्छा साधक बने"। मुझे कुण्डलिनी शक्ति द्वारा जानकारी दी गयी- "आप एक बार शक्तिपात करें। मेरी कृपा उन सभी साधकों पर होगी, जिस पर आप कृपा कर रहे हो"।

उसी समय मैंने देखने का प्रयास किया- मेरे द्वारा शक्तिपात किये गये साधकों पर क्या कृपा हो रही है। मैं उस समय खड़ा हुआ था, खड़े हुए ही मैंने अपनी आँखें बन्द कर ली। मैंने देखा- मेरे शरीर के ऊपर चारों ओर बहुत मोटा नाग अपने शरीर से चक्कर लगाये हुए है, उसका बड़ा सा फन मेरे सिर के ऊपर उठा हुआ है, मुझे मेरा स्थूल शरीर नहीं दिखाई दे रहा था। यह दृश्य सिर्फ आँखे बन्द करने के बाद आया था, उस समय मैं खड़ा हुआ था। मैं समझ गया था कुण्डलिनी शक्ति मेरे सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है, उसी के द्वारा सम्पूर्ण कार्य किये जा रहे है। मैं फिर शक्तिपात करने लगा।

सन् 2019

कुण्डलिनी शक्ति

यह अनुभव 2 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। सर्वत्र प्रकाशित आकाश विद्यमान था। सामने की ओर थोड़ा नीचे की ओर गोलाकार रूप वाली चित्त की भूमि पर एक सुनहरी नागिन लेटी हुई थी, फिर वह फन ऊपर की ओर उठाकर जोर-जोर से फुफकार मारने लगी। ऐसा लग रहा था मानों सम्पूर्ण चित्त पर उसी का राज है, वह चित्त की स्वामिनी है। कुछ समय तक यह दृश्य देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। इस अनुभव में कुण्डलिनी सुनहरी नागिन के रूप में बहुत सुन्दर लग रही थी।

अर्थ- ऐसा दृश्य इसलिये दिखाई दिया क्योंकि वर्तमान समय में शिविर में मार्गदर्शन करते समय मैं कुण्डलिनी शक्ति की कृपा के कारण ही इतना ज्यादा शक्तिपात कर पाता हूँ। कुण्डलिनी शक्ति के द्वारा ही शक्ति सम्बंधित समस्त आध्यात्मिक कार्य कर पाता हूँ। मेरे सम्पूर्ण चित्त पर कुण्डलिनी शक्ति का ही प्रभाव विद्यमान है।

भगवान गणेश जी

यह अनुभव 5 जनवरी को आया। सुबह ध्यानावस्था में देखा- मैं सामने की ओर दूर आकाश को देख रहा था, कुछ क्षणों बाद सामने की ओर से मिट्टी की बनी छोटी सी चट्टान हमारी ओर आती हुई दिखाई दी। जब वह मिट्टी की चट्टान हमारे पास आ गयी, तब स्पष्ट दिखाई दिया- यह मिट्टी की चट्टान साधारण सी मिट्टी की परत है। मैं उस मिट्टी के परत के अन्दर चला गया, क्योंकि उस मिट्टी की परत के अन्दर गुफा जैसी बहुत बड़ी जगह थी। मैं इसी गुफानुमा जगह के अन्दर चला गया। उस गुफानुमा जगह के अन्दर से अर्थात सामने की ओर से भगवान गणेश जी की विशाल आकार में जीवित सी मूर्ति मेरी ओर आ रही थी। यह मूर्ति सामने आकर थोड़ी दूरी पर आकर रुक गयी। कुछ क्षणों बाद गणेश जी की मूर्ति का पेट फट गया, फटे हुए पेट के अन्दर से सूखी मिट्टी ही मिट्टी निकल पड़ी। वह मिट्टी निकल कर बाहर फैल गयी। गणेश जी का मूर्तिरूपी शरीर नष्ट सा हो गया। अब उसके चेहरे व पसलियों का मात्र थोड़ा सा

आकार मात्र रह गया था, मैं समझ गया भगवान गणेश जी का अस्तित्व समाप्त सा हो गया है। अभी पूर्ण रूप से उनका अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ है क्योंकि अभी उनका चेहरा और पसलियों का थोड़ा सा अस्तित्व है।

अर्थ- अनुभव में गणेश जी एक मिट्टी की परत के अन्दर दिखाई दिये थे। उनका शरीर जिन्दा मूर्ति के समान दिखाई दे रहा था अर्थात जड़ रूप वाला दिखाई दे रहा था। जब हमारे पास आये तब उनका शरीर (मूर्ति वाला) का पेट फट गया, अर्थात नष्ट हुए के समान होने लगा। उनके पेट के अन्दर से ढेर सारी सूखी मिट्टी निकल पड़ी, क्योंकि उनका शरीर जड़ स्वरूप वाला दिखाई दे रहा था। पेट से सम्पूर्ण मिट्टी निकलने के बाद शेष शरीर चेहरा और पसलियों के नाम मात्र स्वरूप रह गया था। इसका अर्थ है- अभी गणेश जी पूर्ण रूप से नष्ट हुए के समान नहीं हुए है, अभी नाम मात्र का उनका स्वरूप विद्यमान है। भगवान गणेश जी वायु तत्व की प्रधानता से अपना स्वरूप धारण करते है। अभी हमारे चित्त में वायु तत्व का अंश क्रियाशील है इसीलिये गणेश जी अंश रूप में विद्यमान है। ये भगवान गणेश आदिपुरुष है।

साधकों का मार्गदर्शन करने पर मुझे नीचे अर्थात पतन में आना पड़ेगा, तभी मैं मार्गदर्शन कर पाऊँगा। उस समय अज्ञानता की अवस्था उपस्थित हो जायेगी।

कलिंग का राजा

यह अनुभव 6 जनवरी को आया। मेरा गहरा ध्यान लगा हुआ था। गहरे ध्यान में मुझे कुछ आवाज सुनाई दी, मगर मैं समझ नहीं पाया कि क्या आवाज आ रही है? फिर मैंने आवाज की ओर ध्यान दिया, तब स्पष्ट सुनाई दिया- कोई मनुष्य कुछ कह रहा है। फिर मैंने उस मनुष्य से पूछा- "आप कौन है और आप क्या कह रहे है"? वह मनुष्य बोला- "मैं कलिंग का राजा हूँ, प्रकृति ने मुझे धोखा दिया है"। फिर मैंने सोचा- "कलिंग का राजा"। मगर कलिंग राज्य तो बहुत समय पहले था। मुझे याद आया, बहुत पहले सन् 1995 में मैंने प्रकृति देवी से पूछा- "क्या मेरे समान और भी किसी योगी ने ऐसे कार्य किये हैं?" प्रकृति देवी ने मुझे उत्तर दिया- "2500 वर्ष पूर्व एक योगी ने इसी प्रकार सांसारिक कार्य किये थे, वह कलिंग का राजा था"।

अर्थ- उस व्यक्ति ने अपना नाम नहीं बताया था, सिर्फ इतना बताया था वह कलिंग का राजा था। उसने बताया था- "प्रकृति ने उसे धोखा दिया है"। पूर्व काल में उसने प्रकृति के कुछ सांसारिक कार्य किये थे, ऐसे कार्य अत्यन्त गुप्त होते हैं।

मैंने सन् 1995 में प्रकृति द्वारा बताए हुए कुछ कार्य किये थे, मगर जब मुझे मालूम हुआ कि प्रकृति मुझे धोखा दे रही है, तब मैं बहुत दुखी हुआ। उस समय प्रकृति से मेरा झगड़ा भी हुआ था, फिर कुछ दिनों तक बहुत कष्ट भोगना पड़ा था, मगर तबसे प्रकृति देवी के प्रति मेरी आसक्ति समाप्त सी होने लगी थी। मुझे प्रकृति देवी के विषय में मालूम हो चुका था। इस कलिंग के राजा के बाद प्रकृति देवी ने प्रकृति के कार्य करने के लिये मुझे सौंपा था। मैं सूक्ष्म और स्थूल दोनों प्रकार के कार्यों को करने लगा था। ऐसे कार्य बहुत ही शक्तिशाली साधक ही कर सकता है। जब प्रकृति देवी का झूठ पकड़ा गया तब मुझे प्रकृति देवी से चिढ़ हो गयी थी। पहले मेरी और प्रकृति देवी की बहुत बनती थी, मैं प्रकृति देवी से बहुत प्रेम करता था, फिर मैंने सभी प्रकार के कार्यों को करने से इंकार कर दिया। अब प्रकृति देवी मेरा क्या बिगाड़ सकती है? फिर भी अब प्रकृति देवी के कहने पर साधकों का मार्गदर्शन करना स्वीकार कर लिया था।

वर्तमान में उड़ीसा राज्य को ही पहले कलिंग कहा करते थे। लगभग 2500 वर्ष पूर्व एक राजा ऐसा हो चुका है उसे अध्यात्म बहुत प्रिय था, इसका विवरण थोड़ा सा इतिहास में मिलता है। अगर यह वही राजा है तो निश्चय ही वह उच्च श्रेणी का साधक भी था। सम्भवत: इसका लगाव जैन धर्म अथवा बौद्ध धर्म से था। ये मैं सही ढंग से नहीं बता सकता हूँ ये राजा किस धर्म को मानता था। इतिहास के अनुसार ये जैन धर्म को अपनाये हुए था। प्रकृति देवी इसी राजा से कार्य लेती थी। मैं इस राजा के विषय में ज्यादा नहीं लिख सकता हूँ क्योंकि प्रकृति देवी की मनाही आ जाती है। इसी राजा ने अनुभव में बताया था- "प्रकृति देवी ने मुझे धोखा दिया है"। अब मैं इस प्रकृति देवी से नहीं डरता हूँ, यह हमारे लिये नष्ट हुए के समान हो चुकी है, इसलिए ये मेरा कुछ कर भी नहीं सकती है। मैंने ज्ञान के द्वारा भली भाँति जान लिया है।

सहस्त्रार चक्र के ऊपर दो और चक्र

यह अनुभव 17 मार्च को सुबह ध्यानावस्था में देखा। मैंने देखा- सहस्त्रदल कमल की सम्पूर्ण पंखुड़ियाँ खिली हुई है, वह पंखुड़ियाँ सम्पूर्ण आकाश में फैली हुई है। इसके कुछ क्षणों बाद देखा- मेरे सिर के ऊपरी भाग में सहस्त्रार के ऊपर दो विकसित कमल के फूल है। ये दोनों विकसित कमल के फूल, एक फूल के ऊपर दूसरा फूल विद्यमान है। मैं यह दृश्य देखकर अचम्भित सा हुआ, क्योंकि एक फूल के ऊपर दूसरा फूल था अर्थात मेरे सिर के ऊपर एक छोटी सी कमल नाल (डण्डी) के ऊपर एक फूल की पूर्ण रूप से सभी पंखुड़ियाँ खिली हुई है। फिर इस फूल के मध्य भाग से ऊपर की ओर एक और कमल नाल (डण्डी) निकली हुई है, उस कमल नाल (डण्डी) के ऊपर एक फूल पूर्ण रूप से विकसित है अर्थात इस फूल की सभी पंखुड़ियाँ खुली हुई है। ये दोनों फूल स्वच्छ आकाश में दिखाई दे रहे थे। आकाश में सम्पूर्ण क्षेत्र में प्रकाश फैला हुआ था।

मैंने दोनों फूलों की पंखुड़ियाँ भी गिनी थी। ऊपर वाले फूल की कुल पंखुड़िया आठ थी, तथा नीचे वाले फूल की पंखुड़ियाँ बारह या सोलह थी।

अर्थ- सहस्त्रार चक्र हमारा पूर्ण रूप से पहले ही विकसित हो चुका था। सहस्त्रदल कमल अपरा-प्रकृति में ज्ञान का आयतन है। वह कुछ वर्ष पहले विकसित हो चुका था। आज पहली बार ये दोनों फूल, जो एक के ऊपर एक स्थित थे, विकसित हुए दिखाई दिये। कुछ योगियों ने इन विकसित फूलों को चक्रों का नाम दिया है। सहस्त्रार चक्र के ऊपर दो चक्र होते है, वही विकसित हुए दिखाई दे रहे थे। इस अवस्था में अब अभ्यासी को पूर्ण कह दिया जाता है। वैसे अभ्यासी को अभी और भी थोड़ी साधना करनी होती है, इसके कुछ समय बाद ही शरीर को त्याग कर परा-प्रकृति में गमन करता है।

अप्रैल 2019 फरवरी 2020 तक के अनुभव नहीं लिखे

सन् 2020

दिव्य स्त्री-पुरुष व सिंहासन

यह अनुभव मार्च के प्रथम सप्ताह में आया। मैं ध्यानावस्था में देख रहा था- चबूतरेनुमा ऊँचे स्थान पर बहुत सुन्दर नक्काशीदार, स्वर्ण निर्मित, विशाल स्वरूप में एक सिंहासन विद्यमान है। उसी चबूतरेनुमा ऊँचे स्थान पर ही स्त्री और पुरुष दोनों सिंहासन की ओर चले जा रहे हैं। इन दोनों की पीठ मेरी ओर थी। इन दोनों स्त्री और पुरुष से सिंहासन की दूरी मात्र 2-3 मीटर थी। ये दोनों स्त्री-पुरुष आपस में कमर में हाथ डाले हुए थे, उनका शरीर मनुष्य के समान नहीं था। ऐसा लगता था मानो उनका शरीर तपे हुए सोने के समान बना हुआ है। दोनों के शरीर से प्रकाश की हल्की सी चमक निकल रही थी, ऐसा लगता था मानो इनकी उम्र 18-20 वर्ष की होगी। पुरुष की पीठ दिखाई दे रही थी, वह पुरुषों वाली धोती पहने हुए था, पीठ पर कपड़े का चौड़ा सा पट्टानुमा कपड़ा था। स्त्री साड़ी पहने हुई थी, उसका भी पीठ वाला थोड़ा सा शरीर का भाग दिखाई दे रहा था, दोनों के शरीर एक जैसे सुनहरे कपड़े थे। स्त्री-पुरुष के कपड़े हल्के से सुनहरे रंग के दिव्यता को प्राप्त थे। उनका स्वरूप इतना सुन्दर था कि मैं इनके स्वरूप को देखकर आकर्षित सा हो गया था। अनुभव मात्र कुछ ही क्षणों का रहा होगा। मैं इस अनुभव को बहुत समय तक भूल नहीं सका, मैं उन्हें देख कर मुस्करा रहा था।

अर्थ- यह अनुभव आकाश में दिखाई दे रहा था। आकाश स्वप्रकाशित सा था। सत्य तो यह है- अनुभव में तपे हुए सोने जैसे शरीर वाला पुरुष मैं ही हूँ, उस समय साथ में तपे हुए सोने के शरीर वाली स्त्री संगिनी के रूप में कुण्डलिनी शक्ति ही है। सिंहासन का अर्थ है- इस मार्ग में परिपक्वता प्राप्त हो जाने पर राजाओं के समान पदवी प्राप्त कर पाऊँगा। गौर करे अनुभव में स्त्री और पुरुष सिंहासन की ओर जा रहे है, अभी सिंहासन पर बैठे हुए नहीं दिखाई दिये। अर्थात अभी कुछ समय तक और कठोर अभ्यास करके उस सिंहासन पर बैठे हुए दिखाई दूँगा। यह अवस्था कुछ समय बाद प्राप्त होगी।

मैं अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर

यह अनुभव अप्रैल माह के प्रथम सप्ताह में आया। मैं विशाल अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर हूँ। ऐसा लगता है अण्डाकार क्षेत्र का आवरण तपे हुए सोने से बना हुआ है। मैं इस आवरण के अन्दर एक सिरे के किनारे पर खड़ा हुआ हूँ। मेरी दृष्टि उस अण्डाकार क्षेत्र के दूसरी ओर को है, इस सिरे के अन्तिम छोर पर थोड़ा सा उठा हुआ क्षेत्र है। ऐसा लग रहा था मानो उस उठे हुए भाग पर (चबूतरेनुमा क्षेत्र पर) आसननुमा जगह है, वहीं पर चबूतरेनुमा जगह से पहले एक छोटा सा दरवाजा है। मैं उसी दरवाजे को देख रहा था, तभी दरवाजे के अन्दर और बाहर की ओर से पानी की पतली धार मेरी ओर आने लगी। मैं देख रहा था पानी मेरी ओर आ रहा है। जब पानी मेरे पास पहुँचने वाला था, तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में अण्डाकार क्षेत्र की आवरण की दीवारें तपे हुए सोने की बनी हुई थी। उस क्षेत्र में पूर्ण रूप से शांति सी थी। अनुभव में मेरी ओर बहता हुआ पानी आ रहा था, यह मेरे लिये अशुभ सा है। इसका अर्थ है- पानी के रूप में संसार का स्वरूप है, इसे भोग कर नष्ट करना होगा। हो सकता है- साधकों का मार्गदर्शन करना है, उसका स्वरूप बहते हुए पानी के रूप में दिखाई दे रहा है। वह पानी रूपी संसार मेरे पास आ गया है। यह अनुभव देखने में अच्छा नहीं लग रहा था।

आटे को छानना

यह अनुभव 10 अप्रैल को आया था। मैं अनुभव में आटे को चलनी (छलनी) में छान रहा हूँ, अब चलनी में आटा नहीं रह गया है तथा नीचे भी आटा नहीं गिर रहा है। चलनी के अन्दर गेहूँ के दो-तीन दाने रह गये थे। चलनी के नीचे की ओर गिरा हुआ आटा भी अदृश्य हो गया है अर्थात चलनी में और चलनी के नीचे आटा नहीं है, सिर्फ गेहूँ के दो-तीन दाने चलनी के अन्दर विद्यमान है।

अर्थ- अनुभव में चलनी में आटा नहीं रह गया, चलनी के नीचे गिरा हुआ आटा भी अदृश्य हो गया है। इसका अर्थ है- अब निष्काम भाव से भी कर्म करने के लिये शेष नहीं रह गया है। निष्काम भाव से किये गये कर्मों के चित्त पर संस्कार नहीं बनते है। चलनी में जो गेहूँ के दाने है, उन दानों को भोग कर नष्ट करना होगा। मगर अब निष्काम भाव से किये गये कर्मों के कर्माशय नहीं बनते है, ऐसे कर्म करते ही उसका अस्तित्व (आटे का) समाप्त हो जाता है।

जब तक चित्त में अज्ञानता विद्यमान रहती है तब तक किये गये कर्मों के कर्माशय बनते रहते है। जब चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश फैल जाता है, तब उसके द्वारा किये गये कर्मों का कर्माशय नहीं बनता है, क्योंकि उसके चित्त पर ज्ञान का प्रकाश विद्यमान होता है। इस अवस्था में अज्ञान मूल से नष्ट हो जाता है। ऐसा अभ्यासी ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी रहता है। कोई संसारी व्यक्ति यह नहीं कह सकता है मैं निष्काम भाव से कर्म कर रहा हूँ अथवा करता हूँ। क्योंकि उसके चित्त पर अज्ञानता विद्यमान रहती है।

संसारी व्यक्ति सोच सकता है- अमुक कर्मों का फल नहीं चाहिये, मगर उसके द्वारा किये गये कर्मों के फल अवश्य बनेंगे। क्योंकि ऐसा वह स्थूलता में रहकर सोच रहा है। निष्काम भाव से कर्म करने के लिये उसे स्थूल से लेकर चित्त तक विकास करना होगा। इसके बाद उसके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होना जरूरी है क्योंकि ऋतम्भरा-प्रज्ञा अज्ञानता की विरोधी होती है। कई वर्षों के अभ्यास के बाद ही अज्ञानता नष्ट हो पाती है तब उसकी जीवन्मुक्त अवस्था आ जायेगी।

कुण्डलिनी से मेरा रिश्ता

यह अनुभव 19 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मुझे अनुभूति हो रही थी कि मेरे शरीर से बाहरी आवरण अलग होता जा रहा है अर्थात शरीर का आवरण अलग सा होता जा रहा है। तभी मैंने देखा- मेरे सामने सीधा डण्डे के आकार में एक नाग खड़ा हुआ है, नाग का मुँह सीधा ऊपर की ओर था। उस नाग का बाहरी आवरण अलग सा होने लगा। उसी समय नाग के मुँह के अन्दर से ऊपर की ओर एक बहुत सुन्दर स्त्री निकलने लगी। मैं उस स्त्री को देखकर आश्चर्य चकित हो रहा था, क्योंकि नाग के अन्दर से अद्वितीय सुन्दर स्त्री धीरे-धीरे बाहर की ओर आ रही थी। उस स्त्री का कमर से ऊपर का शरीर ऊपर की ओर बाहर आ गया था। तभी मेरे मुँह से आवाज निकल पड़ी- "माता कुण्डलिनी आप"। माता कुण्डलिनी शक्ति मेरी ओर देखती हुई मुस्कराने लगी। वह नाग (नागिन) निर्जीव सा डण्डे की भाँति लगभग डेढ़ मीटर ऊँचा सीधा खड़ा हुआ था। कुछ क्षणों बाद कुण्डलिनी शक्ति का स्त्री वाला स्वरूप नागिन के अन्दर से बाहर आ गया। माता कुण्डलिनी शक्ति आकाश में खड़ी हुई थी। मैं उनके सामने ध्यान मुद्रा में बैठा हुआ था। फिर माता कुण्डलिनी शक्ति पैरों से बिना चले अपने आप मेरे पास आ गयी। उनके पैरों के पंजे मेरे सिर की ऊँचाई से भी ऊँचे (ऊपर) थे। माता कुण्डलिनी शक्ति ने आगे बढ़कर अपने दोनों

पैर मेरे सीने (वक्षस्थल) के अन्दर प्रवेश कर दिये, फिर उनका सुन्दर शरीर मेरे शरीर के अन्दर धीरे-धीरे प्रवेश करने लगा। मैं बोला- "माता, आप तो मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश कर रही है"। तभी माता कुण्डलिनी शक्ति का सम्पूर्ण शरीर मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश कर गया अर्थात मेरे सिर के अन्दर माता कुण्डलिनी शक्ति का सिर और मेरे पैरों के अन्दर उनके पैर समा गये (विद्यमान हो गये)। आश्चर्यचकित होकर मैं बोला- "माता, आप तो मेरे शरीर के अन्दर व्याप्त हो गयी है"। मेरे शरीर के अन्दर से माता कुण्डलिनी शक्ति की आवाज आयी- "अब मैं तुम्हारी माता नहीं हूँ, तुम्हारी संगिनी हूँ"। ये शब्द सुनकर मैं सन्नाटे में आ गया।

कुछ क्षणों बाद मैं बोला- "आप तो हमारी माता है, आप मेरी संगिनी कैसे हो सकती है? माता कुण्डलिनी बोली- "सत्य तो यही है कि मैं तुम्हारी संगिनी हूँ। जब तुम्हें मेरी जरुरत पड़े, तब मुझे याद कर लेना"। उत्तर में मैं बोला- "आपको याद अवश्य करूँगा, मगर माता के रूप में याद करूँगा"। तब माता कुण्डलिनी शक्ति बोली- "ठीक है, संगिनी के रूप में मुझे हृदय में याद करना, माता के रूप में मुझे मस्तिष्क में याद करना"। मैं बोला- "यह तरीका अच्छा है, मगर माता जब तक मैं मनुष्य रूप में भूलोक पर रहूँ, तब तक मैं आपको माता के रूप में ही याद किया करूँगा"। उत्तर में माता कुण्डलिनी शक्ति बोली- "जैसी तुम्हारी इच्छा"। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव हमारी जिन्दगी का बहुत ही महत्वपूर्ण अनुभव है। अनुभव की शुरुआत में ऐसा लगा मानो मेरे शरीर का ही बाहरी आवरण निकल सा रहा है, मगर तभी यह क्रिया मैं सामने की ओर नागिन के शरीर पर देख रहा था।

अर्थात बाहर दिखाई देने वाली नागिन मेरे शरीर के अन्दर समाई हुई है। फिर स्त्री रूप में कुण्डलिनी शक्ति बाहर आयी और मेरे शरीर में समा गयी। यह अनुभव दर्शा रहा है- मेरे अन्दर कुण्डलिनी शक्ति संगिनी के रूप में विद्यमान है। जीव की संगिनी कुण्डलिनी शक्ति उसके साथ सदैव रहती है। जब जीव संसार से पूर्ण रूप से आसक्ति को त्याग कर और अपना आन्तरिक विकास करके जीवत्व को त्याग देता है, तब वह इसी प्रकार संगिनी के रूप में उसके साथ रहती है।

यह अनुभव पूर्णता को दर्शा रहा है, क्योंकि मैंने अपना आन्तरिक विकास पूर्ण कर लिया है। मेरी संगिनी मेरे साथ है। ऐसा स्वयं माता कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे बताया था। ऐसी अवस्था को प्राप्त हुआ अभ्यासी जीव से जीवेश्वर बन जाता है। मगर कलयुग के कारण मर्यादित सीमाएँ होती हैं। ऐसा अभ्यासी

कलयुग के कारण अपनी दिव्य शक्तियों का भौतिक जगत में अधिक प्रयोग नहीं कर सकता है, क्योंकि कलियुग अधर्मी होने के कारण अवरोधक है।

मेरा विमान

यह अनुभव 29 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- चारों ओर हल्का प्रकाश है मगर उस प्रकाश में स्पष्ट दिखाई दे रहा था। तभी मेरी दृष्टि नीचे की ओर को गयी, नीचे की ओर को भूमि दिखाई दे रही थी। उस समय मुझे ऐसा लगा मानो भूमि के अन्दर से कुछ ऊपर की ओर निकल कर आ रहा है। कुछ क्षणों बाद भूमि के अन्दर से ऊपर की ओर एक विमान सा निकल आया, यह विमान धीरे-धीरे स्पष्ट दिखाई देने लगा। विमान एकदम स्वच्छ, सुन्दर और स्पष्ट सामने उपस्थित दिखाई दे रहा था। तभी आकाश से आवाज आयी- "यह विमान आपके लिये है"। मैंने उस आवाज से पूछा- "इसका आकार तो बहुत छोटा है, दूसरा कोई इसमें बैठ नहीं पायेगा"। फिर आवाज आयी- "आपकी इच्छानुसार इसका आकार भी बढ़ जायेगा"। फिर मैं अपने अन्दर सोचने लगा- "इस विमान में 5-7 व्यक्ति आराम से बैठ सकते हैं"।

अर्थ- इस अनुभव में नीचे की ओर भूमि से सोने का बना हुआ विमान ऊपर की ओर आकर सामने रुक गया। फिर मुझसे कहा गया- यह विमान आपका है और आपकी इच्छा शक्ति से चलेगा। आपकी इच्छानुसार इस विमान का आकार भी छोटा-बड़ा हो जायेगा। इसका अर्थ है- मुझे सम्मान दिया गया है।

भगवान शंकर जी खम्भे के रूप में

यह अनुभव 29 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैं देख रहा था- मुझे सामने की ओर भूमि दिखाई दे रही थी, कुछ क्षणों में भूमि की ऊपरी सतह पर कुछ हलचल सी होने लगी। मैं उस हलचल वाले क्षेत्र को देख रहा था तभी भूमि की ऊपरी सतह पर विशाल आकार में लम्बा खम्बा (लट्ठा सा) दिखाई देने लगा। यह खम्बा लम्बे आकार में भूमि पर पड़ा हुआ था। फिर उस खम्बे का एक सिरा अपने आप ऊपर की ओर उठने लगा, कुछ क्षणों में वह भूमि पर सीधा खड़ा हो गया। अब ऐसा लग रहा था मानो बहुत

ऊँचा काफी मोटे आकार में खम्बा खड़ा हुआ है। मैं इस खम्बे को देख रहा था, खम्बा धीरे-धीरे भगवान शंकर के रूप में परिवर्तित हो गया। अब मैं अपने सामने भगवान शंकर को देख रहा था। उनके सिर पर बालों का बँधा हुआ जूड़ा बहुत ही सुन्दर लग रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस खम्बे जैसे आकार के स्वरूप के विषय में शास्त्रो में बहुत जगह वर्णन मिलता है। इसे ब्रह्माण्ड का स्वरूप भी कहते है। इसे भगवान शंकर का स्वरूप भी कहा जाता है। इस भूमि को अपरा-प्रकृति का स्वरूप भी कहा जाता है। इसीलिए कहा जाता है- भगवान शंकर इस अपरा-प्रकृति के कण-कण में विद्यमान रहते हैं।

मैं कमल के फूल के ऊपर बैठ गया

यह अनुभव 30 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- पारदर्शी बहुत बड़ा कमल का फूल अनन्त पंखुडियों वाला खिला हुआ है। यह फूल सम्पूर्ण आकाश में समाया हुआ है। इस फूल के ऊपर कमल डण्डी छोटी सी दिखाई देने लगी। इस कमल डण्डी के ऊपर एक फूल खुली हुई पंखुडियो वाला अर्थात विकसित फूल विद्यमान था। इस फूल के ऊपर मध्य भाग से एक और कमल डण्डी ऊपर की ओर निकली हुई थी। इस कमल डण्डी के ऊपर भी एक विकसित फूल लगा हुआ (विद्यमान) था। अर्थात् मुझे प्रकाशित आकाश में एक बार में एक के ऊपर दूसरा फिर उसके ऊपर तीसरा फूल दिखाई दे रहा था अब मैं एक बार में तीन पूर्ण रूप से विकसित फूल देख रहा था मैं कुछ क्षणों तक उन तीनों फूलों को देख रहा था, फिर मैं अपने आप सबसे ऊपर वाले फूल के ऊपर बैठ गया। उसके बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मुझे बहुत बड़े आकार में पारदर्शी कमल का पूर्ण विकसित फूल दिखाई दे रहा था, यह फूल अनन्त पंखुड़ियों वाला (सहस्त्रदल) सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त था। यह फूल सहस्त्रदल कमल वाला था। इस सहस्त्रदल के ऊपर क्रमशः दो फूल एक के ऊपर दूसरा विद्यमान था। ये फूल छोटे-छोटे थे मगर पूर्ण रूप से विकसित थे। ऊपर वाले फूल की आठ पंखुड़ियाँ थीं, बीच वाले फूल की 12 (बारह) पंखुड़ियाँ थीं क्योंकि मैंने इन दोनों फूलों की पंखुडियाँ गिनी हुई थी। फिर मैं सबसे ऊपर वाले फूल के ऊपर अपने आप बैठ गया। ऊपर बैठने का अर्थ होता है- उन सभी फूलों की सूक्ष्म अवस्था से ऊपर उठकर उनका स्वामी बन गया।

सहस्त्रार चक्र के ऊपर भी चक्र माने गये है। ये चक्र उच्च आध्यात्मिक अवस्थाएँ या सूक्ष्म ऊर्जा-केन्द्र माने गये हैं, जो विशेषकर सहज योग दर्शन में मान्य है। मुख्य रूप से इन्हें बिन्दु, अर्ध बिन्दु, वलय और निज नामक अवस्थाओं के रूप में जाना जाता है। ये दिव्य चेतना, परम शान्ति और निरुद्ध समाधि के सूचक है। बिन्दु सर्वोच्च चेतना का केन्द्र है। वलय- यह ब्रह्माण्डीय ऊर्जा का एक गोलाकार वलय है। निज- आत्मस्थिति और ईश्वर से एकाकार होने की सर्वोच्च अवस्था है। इन अवस्थाओं को प्राप्त हुआ अभ्यासी परम आनन्द अवस्था को प्राप्त करता है। सहस्त्रार से ऊपर के चक्र चेतना के उच्चतम स्तरों का प्रतिनिधित्व करते है, जहाँ ध्यान की गहराइयों में आत्मा का परमात्मा से मिलन होता है।

कुछ अनुभव

ध्यानावस्था में छोटे-छोटे कुछ अनुभव आये, ये अनुभव मात्र कुछ सेकण्ड के होते थे। उन अनुभवो को मैं अति संक्षेप में लिखने का प्रयास कर रहा हूँ:-

1- यह अनुभव अप्रैल के अंतिम दिन आया। चारों ओर प्रकाश विद्यमान था उस प्रकाश में नीचे की ओर भूमि दिखाई दी। मैं भूमि को देख रहा था तभी आकाश से आवाज आयी- "यह भूमि अहंकार की अवस्था है, इसी अहंकार के द्वारा सम्पूर्ण कार्य होते है। इसी कारण चित्त का निर्माण होता है"। यह सत्य है अपरा-प्रकृति के सम्पूर्ण कार्य या व्यवहार अहंकार के द्वारा ही होते हैं।

2- मुझे अनुभव में बताया गया- "ये संसार है। इस संसार का स्वभाव ही यही है- झूठ बोलना, कपट और धोखा देना"।

3- अनुभव में एक स्त्री ने प्रसव मेरे सामने ही कर दिया। प्रसव होते हुए मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। यह दृश्य देखने के बाद हडबड़ाहट में मेरी आँखे खुल गयी।

4- ध्यानावस्था में सुनाई दिया- "सभी कलाओं के विषय में जानो"।

5- ध्यानावस्था में चित्त कुँए के रूप में दिखाई दिया। चित्त का यह स्वरूप उस समय का था, जब मैं ब्रह्म से अलग हुआ था।

मैं अपनी इच्छानुसार मर सकता हूँ

यह अनुभव और अनुभूति 4 जुलाई को हुई। मैंने ध्यान में देखा- मेरा सूक्ष्म शरीर अत्यन्त पारदर्शी है, तभी मेरे सूक्ष्म शरीर से धीरे-धीरे सम्पर्क अलग होने लगा। फिर मुझे अनुभूति होने लगी अगर सूक्ष्म शरीर से मेरा थोड़ा सा सम्पर्क और टूटा, तो मेरी मृत्यु हो जायेगी, क्योंकि सूक्ष्म शरीर से सम्पर्क टूट जायेगा। उसी समय मैं बोल पड़ा- "हाँ मैं मर सकता हूँ"। मैं प्रसन्न हो रहा था, मुझे मरने का तरीका मालूम हो गया है। मुझे अनुभव में बताया गया- मैं कैसे अपने स्थूल शरीर को त्याग सकता हूँ। मैं बहुत प्रसन्न था क्योंकि मैं बड़े आराम से इच्छा मात्र से इस शरीर को त्याग सकता हूँ। यह अनुभूति 4 जुलाई रात्रि 10:05 पर हुई थी। मुझे मालूम नहीं है- हर मनुष्य मरने से क्यों डरता है, क्योंकि मृत्यु के बाद आगे का मार्ग तय हो जाता है।

भूलोक पर

यह अनुभव 6 जुलाई को आया। सुबह मंत्र जाप करते समय अन्दर से आवाज आयी- "अब भूलोक पर ज्यादा रहना आवश्यक नहीं है"। इस आवाज को सुनकर मैं चुप हो गया। मैंने जाप करना बन्द कर दिया, और इन शब्दों के विषय में सोचने लगा क्योंकि इस प्रकार के मिलते-जुलते शब्द कई बार कहे गये है।

अग्नि नहीं आकाश बनो

यह अनुभव 11 जुलाई को आया। सुबह ध्यानावस्था में देखा- निर्मल आकाश से जोरदार कड़कती हुई आवाज आयी- "विशुद्धता और अशुद्धता के विषय में कभी चिंतन किया"। मैं यह आवाज सुनकर चौंक पड़ा, क्योंकि यह आवाज मेरे इष्टदेव की थी। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला। मेरे इष्टदेव की फिर आवाज आयी- "पक्षियों में और पशुओं में कभी समानता देखी है। इन दोनों जातियों में कभी भी समानता नहीं देखने को मिलेगी। सभी पक्षियों का स्वभाव अलग-अलग होता है, इसी प्रकार पशुओं में भी स्वभाव की समानता नहीं मिलेगी, फिर तुम मनुष्यों के अन्दर समान रूप से स्वभाव की इच्छा क्यों रखते हो"। मैं ये शब्द गौरपूर्वक चुपचाप सुनता जा रहा था। प्रभु की आवाज फिर आयी- "उस व्यक्ति से समान स्वभाव

की इच्छा क्यों रखते हो? कभी उसकी श्रद्धा के विषय में सोचा, तुम अपने तर्क से उसके विषय में सोचते हो"। "योगी तुम अग्नि नहीं आकाश बनो"। मैं बोला- "प्रभु, अग्नि का स्वभाव होता है वह सभी को समान रूप से देखती है, चाहे घास हो, किसान की फसलें हो, छोटे-बड़े पेड़ पौधे हो, क्यों न ये जीवित या मृत हो। सभी को अपनी दाहिका शक्ति से समान रूप से जलाकर भस्म कर देती है। मेरा यह स्वभाव मेरे लिये कवच का कार्य करता है। ज्यादातर समाज वाले भ्रमित रहते हैं, इससे मुझे जीवन जीने में और अभ्यास करने में सरलता मिलती है"।

मेरे इष्टदेव की फिर आवाज आयी- "इस अग्नि का स्वभाव वाला स्वरूप त्याग दीजिये, आकाश का स्वभाव वाला बनने का प्रयास कीजिये। आकाश में सभी को धारण करने की क्षमता होती है, इसलिये सभी को धारण करने की क्षमता वाला बनिये। तुमने अपने आदर्श से कुछ नहीं सीखा। वे चाहते तो इच्छा मात्र से राक्षसों का नाश कर सकते थे, मगर फिर भी उन्होंने ऐसा नहीं किया। धैर्यता दिखाई। मुझे देखो, विष्णु को देखो और शिक्षा लो कि मैंने और विष्णु ने क्या किया। प्रकृति के नियमों का सम्मान करो"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी, मैं गहरे ध्यान में चला गया।

ये शब्द मेरे इष्ट भगवान शंकर जी ने कहे थे। लिखते समय जो शब्द याद रहे, वे लिख दिये, शेष शब्द भूल गया। मेरे स्वभाव से कुछ दिव्य शक्तियाँ नाराज रहती है, कारण ये है मार्गदर्शन करते समय मैं प्रकृति के नियमों को नहीं मानता हूँ। साधक में पात्रता हो अथवा न हो मैं समान रूप से कल्याण कर देता हूँ। इसी को मुझे समझाया जा रहा था। मेरे कुछ साधक अभद्र भी थे, उन्हें भी अध्यात्म में आगे बढ़ा देता था।

मार्गदर्शन नहीं करूँगा

यह अनुभव 22 जुलाई को आया। ध्यानावस्था में देखा- मैंने एक स्त्री के सामने अपने सिर पर रखा वजन फेंक दिया। वजन फेंकते समय यह नहीं देखा कि सिर पर क्या रखा हुआ है। मगर जब वह वजन सामने फेंक दिया तब देखा वह लाल रंग की मणि के समान कोई वस्तु है, क्योंकि वह मणि के समान वस्तु सामने पड़ी हुई थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली स्त्री, जिसके सामने वह मणि जैसी वस्तु फेंक दी थी, वह अपरा-प्रकृति है। सिर पर रखी वस्तु मणि के समान है अर्थात प्रकृति की इच्छा थी मैं साधकों का

मार्गदर्शन करूँ जबकि मेरे ज्ञान ने पहले ही मना कर दिया था कि अब तुम्हें किसी प्रकार का सांसारिक कार्य करने की आवश्यकता नहीं है। मैंने समाज के कल्याण के लिये साधकों का मार्गदर्शन करना स्वीकार कर लिया। इस कारण मुझे अज्ञानता में आना पड़ा तथा साधकों के चित्त की मलिनता व कर्माशयों को ग्रहण करना पड़ा। यही साधकों की जिम्मेदारी का बोझ मेरे सिर पर रखा था, वह उस स्त्री के सामने फेंक दिया। भले ही वह बोझा एक मणि के समान हो, मगर योगी के लिये यह बोझा ही है। मणि का अर्थ होता है- यश, कीर्ति, सम्मान आदि। ज्ञानी पुरुष के लिये ऐसे कार्य अज्ञानता के अन्तर्गत आते हैं। तत्त्वज्ञानी पुरुष के लिए यश, कीर्ति और सम्मान शरीर के मैल के समान है। संसारी पुरुष जो लोभ-मोह और अज्ञानता में रहता है, उसके लिये यश, कीर्ति और सम्मान आदि में श्रेष्ठता दिखाई देती है। जबकि यह सब पतन का कारण बनते है, फिर भी इसे प्रसन्नता से स्वीकार कर लेता है।

जाल से बाहर आना

एक सूक्ष्म शरीर जाल के अन्दर लेटा हुआ है। जाल की चौड़ाई 2 फीट के लगभग रही होगी और लम्बाई 6-7 फीट रही होगी। तभी आकाश से आवाज आयी- "आपको जाल से बाहर आ जाना चाहिए, जाल आपको प्रभावित नहीं कर सकता है"। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- वर्तमान समय में समाज के कल्याण हेतु साधकों का आध्यात्मिक मार्गदर्शन कर रहा हूँ। साधकों को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें प्रेरित करता रहता हूँ, मेरे लिए यही बंधन (जाल) हैं, क्योंकि साधकों का शुभचिंतक हूँ। अब मुझ पर सांसारिक बन्धन कुछ भी प्रभाव नहीं डाल सकते हैं, क्योंकि मैं स्वयं बन्धन में बँधता हूँ और इच्छानुसार बंधन से बाहर भी आ जाता हूँ क्योंकि मैं तत्वज्ञान से युक्त हूँ। सभी प्रकार के बंधनों से मुक्त हूँ। बंधन तो संसारियों को बंधन में बाँधता है। वह अपनी इच्छा से बन्धन मुक्त नहीं हो सकता है क्योंकि उसके चित्त पर अज्ञानता की जड़े विद्यमान रहती है। अभी उसके चित्त पर लोभ, मोह, अज्ञान और तमोगुणी अहंकार का मैं पन है।

सरस्वती देवी का सन्देश

यह अनुभव 19 सितम्बर को आया। ध्यानावस्था में माता सरस्वती जी ने कहा- "संसार में जीवन जीने के लिये सदैव बीच का रास्ता अपनाना चाहिये"।

साधकों! अपने जीवन में सदैव सत्य पर अड़ा रहता हूँ इसलिए मुझे कई बार परेशानियों का सामना करना पड़ा। शायद इसीलिये माता सरस्वती ने मुझे ध्यान के माध्यम से शिक्षा दी है।

संताप मिट जायेगा

यह जानकारी मुझे 23 सितम्बर को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझे ध्यान करते समय आकाश से आवाज सुनाई दी- "कुछ समय बाद आपका संताप मिट जायेगा, फिर आप प्रसन्नता में होंगे"।

वर्तमान में मैं कुछ कारणों से मानसिक रूप से कुछ दु:ख की अनुभूति कर रहा था। यह अध्यात्म से सम्बन्धित सामाजिक परेशानी थी, शायद इसीलिये मुझसे ये शब्द कहे गये है।

मार्गदर्शन करना बन्द कर दीजिए

यह सन्देश मुझे ध्यानावस्था में 25 सितम्बर को दिया गया था। ध्यानावस्था में मुझे सुनाई दिया- "अब आप मार्गदर्शन करना बन्द कर दीजिए। इसके साथ आप शक्तिपात करना बन्द कर दीजिए, नहीं तो आप को कलंकित जीवन जीना पड़ेगा, क्या कलंकित जीवन जीना पसन्द करोगे?" मैं उत्तर में बोला- "मैं मार्गदर्शन करना बन्द कर दूँगा। योगी हूँ इसलिए कलंकित जीवन जीना पसन्द नहीं करूँगा। इससे अन्य योगी लज्जित होंगे और उन्हें दु:ख भी होगा"।

मुझे दिसम्बर 2018 में ही मार्गदर्शन बन्द करने के लिए कहा गया था। मैंने इस सन्देश पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। शिविर करता रहा, यह बात दिव्य शक्तियों को अच्छी नहीं लगी, इसलिए मुझसे ध्यानावस्था में ऐसे शब्द कई बार कहे गये थे। मैंने भी यही निर्णय किया कि अब शिविर नहीं करूँगा, मगर कुछ साधकों के कहने पर शिविर करने को तैयार हो जाता हूँ।

माता प्रकृति देवी का सन्देश

यह सन्देश अक्टूबर के दूसरे सप्ताह में दिया गया था। ध्यानावस्था में माता प्रकृति देवी ने मुझसे कहा- "बेटा, मेरा आँचल बहुत बड़ा है। अपना शेष कार्य समाप्त करके मेरे आंचल में आ जाओ"।

माता प्रकृति द्वारा कहे गये शब्दों का अर्थ बहुत ही गूढ़ है अर्थात भूलोक का कार्य समाप्त करके फिर अपनी साधना पूर्ण करके आ जाइये। मुझे अन्त में कठोर साधना करनी पड़ेगी, फिर अपने लोक वापस चला जाऊँगा।

भगवान श्री कृष्ण जी

यह अनुभव अक्टूबर माह के दूसरे सप्ताह में आया। सुबह ध्यानावस्था में देखा- "बहुत ही पारदर्शी रूप में एक मानव आकृति मेरे सामने प्रकट हो गयी। गौरपूर्वक देखने पर समझ में आ गया, ये तो भगवान श्री कृष्ण जी हैं, मैं उनके दर्शन करके मुस्कराने लगा"। भगवान श्री कृष्ण जी ने कहा- "बेटा, जो तुम्हारी माता प्रकृति देवी कहती है, उसे मान लिजिये"। मैं बोला- "जी, प्रभु जी"। अनुभव समाप्त हो गया। प्रकृति का कहना है- साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द कर दीजिए।

शिवलिंगों का प्रकट होना

यह अनुभव 20 अक्टूबर को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- "मैं बैठा हुआ हूँ ,चारों तरफ सर्वत्र आकाश दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों बाद हमारे शरीर के अन्दर से शिवलिंग प्रकट होकर बाहर की ओर निकलने लगे, उन शिवलिंगों का रंग हल्का काला सा था। शिवलिंग मेरे शरीर से प्रकट होकर दूर चले जा रहे थे, इसलिए मैं शिवलिंगों की गिनती नहीं कर पाया कि कितने शिवलिंग हमारे शरीर से प्रकट होकर दूर चले गये"।

कुछ क्षणों तक यह क्रिया होती रही, फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी और अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- इस अनुभव का अर्थ है- शिवलिंग का शरीर से प्रकट होना आध्यात्मिक रूप से भगवान शिव की असीम ऊर्जा, चेतना और ब्रह्माण्डीय निराकार स्वरूप (निराकार ब्रह्म) का प्रतीक माना जाता है। पुराणों के अनुसार यह दिव्य शक्ति परम कल्याणकारी सृजन और आत्मा का परमात्मा से मिलन का द्योतक है।

शिवलिंग शिव के निराकार, आदि-अनादि, शून्य और अनंत स्वरूप का प्रतीक है। 'लिंग' शब्द का अर्थ- स्वरूप या चिन्ह होता है। शिवलिंग का अनुभव ध्यान में प्रकाश और ऊर्जा के स्तंभ के रूप में होता है जो मन को शान्त करता है। यह पुरुष (शिव) और प्रकृति (शक्ति) के मिलन का प्रतीक है, जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को दर्शाते हैं।

परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के बीच

यह अनुभव 29 अक्टूबर को आया। ध्यानावस्था में देखा- सम्पूर्ण आकाश में काला पदार्थ व्याप्त है, तभी वह काला पदार्थ क्लॉक वाइज घूमने लगा। कुछ क्षणों तक वह काला पदार्थ क्लॉक वाइज गति करता रहा, फिर वह सम्पूर्ण काला पदार्थ मध्य क्षेत्र में कीलनुमा स्वरूप वाला बन गया। यह कीलनुमा स्वरूप बिलकुल वैसा ही था जो चकिया के मध्य में लगती है। उसी समय आकाश से आवाज आयी- "यही परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के मध्य क्षेत्र में स्थित है, जैसे- चकिया के दो पाटों के बीच में लोहे की कील होती है। स्थिर पाट परा-प्रकृति का प्रतीक है, गतिमान पाट अपरा-प्रकृति का प्रतीक है"।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे बताया गया है। जिस प्रकार अनाज पीसने वाली चकिया के मध्य में लोहे की कील होती है, इसी कील के द्वारा चकिया का ऊपरी पाट गतिमान रहता है। उसी प्रकार तमोगुण (अज्ञानता) द्वारा अपरा-प्रकृति जीवों के लिए गतिवान रहती है। जिस जीव की अज्ञानता मूल से समाप्त हो जाती है, उसके लिए अपरा-प्रकृति नष्ट हुए के समान हो जाती है। मगर अन्य जीवों के लिये अपरा-प्रकृति पहले की भाँति उपस्थित रहती है।

सन् 2021

मेरा शरीर मिट्टी का बना हुआ

यह अनुभव 18 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- मेरा शरीर मिट्टी का बना हुआ है। उस मिट्टी के शरीर में तीन आवरण हैं। यह मिट्टी धीरे-धीरे ढह रही है, इस कारण शरीर नष्ट हो रहा है। ऐसा लग रहा था- ये तीनों आवरण धीरे-धीरे अलग हो रहे हैं।

लगभग दो माह पहले अनुभव आया था। मैं ध्यानावस्था में अपना स्थूल शरीर बैठा हुआ देख रहा था। तभी मेरे शरीर का अगला भाग मिट्टी रूप में परिवर्तित होकर ढह गया। अब मेरी पीठ वाला भाग बचा था। मैं मुस्कुरा रहा था कि मेरे शरीर का अगला भाग मिट्टी बन कर ढह गया है। फिर थोड़ी देर में पीठ वाला भाग भी मिट्टी बन कर ढह गया। अब सिर्फ रीढ़ की हड्डी शेष बची हुई थी। रीढ़ भी ऐसी लग रही थी जैसे उसकी ऊपरी परत समाप्त हो चुकी है, उसका भी स्वरूप बदल चुका है। मैं सोचने लगा- कुछ समय बाद रीढ़ का भी अस्तित्व समाप्त हो जायेगा।

इस सम्पूर्ण अनुभव में मुझे अपना भान हो रहा था और अनुभव भी देख रहा था। अब सिर्फ रीढ़ का अस्तित्व रह गया था। शेष अपना शरीर नष्ट हुआ देख रहा था। रीढ़ भी कुछ दिनों बाद समाप्त हो जायेगी।

अभी 18 जनवरी को आये अनुभव में दिखाई दिया- मेरा शरीर मिट्टी का बना हुआ है। इस शरीर में तीन आवरण (खोल) हैं, धीरे-धीरे यह भी नष्ट हो रहे हैं।

मंत्र एक विज्ञान

यह जानकारी मुझे 22 जनवरी को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझे बताया गया- 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र जाप करने से सिर से लेकर (सिर के ऊपरी भाग ब्रह्मरंध्र के क्षेत्र से) पैर के तलवे तक शरीर के अन्दर कम्पन होता है और खिंचाव भी होता है। यह अनुभूति मैंने स्वयं की है, इसी प्रकार उच्च कोटि के योगियों

को अनुभूति होती है। मनुष्य का शरीर रूपी छोटा पिण्ड और ब्रह्माण्ड रूपी बड़ा पिण्ड, दोनों छोटे-बड़े पिण्डों का आपस में तारतम्य होता है। इसलिये शरीर का विकास होने पर ब्रह्माण्ड का भी विकास होता है।

शक्ति मंत्र के विषय में

मेरा स्वभाव है- मैं शक्ति मंत्र का जाप बहुत करता हूँ तथा साधकों को भी इस मंत्र का जाप करने के लिए कहता हूँ। क्योंकि शक्ति मंत्र का जाप करने पर सिर के ऊपरी क्षेत्र ब्रह्मरंध्र के अन्दर व बाहर के आस पास के क्षेत्र में कम्पन होता है और मूलाधार चक्र में ऊपर की ओर खिंचाव होता है। इसकी अनुभूति साधकों को खूब होती है। बहुत बार इसकी अनुभूति मैंने भी की है। इसीलिए यह मंत्र कुण्डलिनी जागरण में सहायक है। इस मंत्र को लयबद्ध तरीके से बोलना चाहिये, तभी इसके जाप का उचित लाभ मिलता है। यह शक्ति मंत्र इस प्रकार बोलना चाहिये। "ॐ शिव शक्ति ॐ"।

आध्यात्मिक सुख का त्याग करो

यह सन्देश 3 फरवरी को मुझे ध्यान में दिया गया। मैं सिर्फ आँखे बन्द किये हुए था, तब मुझसे कहा गया- "तुमने साँसारिक सुख का त्याग कर दिया है, अब आध्यात्मिक सुख का त्याग करो"।

मैं अब भी शिविर करता रहता हूँ, जबकि मुझे दिसम्बर 2018 तक ही शिविर करने की आज्ञा दी गयी थी। इसलिये ध्यानावस्था में मुझे फिर से कहा गया है-"अब आध्यात्मिक सुख का त्याग करो"।

विशुद्धता और अशुद्धता

05 अप्रैल को ध्यानावस्था में भगवान शंकर ने मुझसे कहा- "योगी, विशुद्धता और अशुद्धता का चिन्तन करो"।

अर्थ- विशुद्धता अर्थात परा-प्रकृति। अशुद्धता अर्थात अपरा-प्रकृति। अर्थात परा और अपरा का चिन्तन करो। परा-प्रकृति में पूर्ण सत्य का प्रभाव रहता है। अपरा-प्रकृति के स्वभाव में असत्य की मात्रा ज्यादा रहती है, इस असत्य के बिना सृष्टि के कार्य नहीं हो सकते है।

परम शान्ति

यह जानकारी मुझे 15 अप्रैल को ध्यानावस्था में दी गयी- "यह संसार तुम्हारा नहीं है। परम शान्ति में विद्यमान हो जाओ, कुछ समय तक ही तुम्हें भूलोक पर रहना है"।

विश्व विजयी बनो

यह जानकारी मुझे 23 अप्रैल को रात्रि 10:30 बजे ध्यानावस्था में दी गयी- "विश्वविजयी बनो, सम्पूर्ण विश्व तुम्हारा सम्मान करेगा, परम शान्ति को प्राप्त करो"। ये आवाज आकाश से आयी थी।

हे ज्ञानी पुरुष

यह सन्देश 3 मई को आया था। मुझे ध्यानावस्था में सन्देश दिया गया- "हे ज्ञानी पुरुष, इस विकृति युक्त संसार का त्याग करो। परम शान्ति की ओर बढ़ो, ताकि अपने लोक में गमन कर सको"। इस प्रकार के सन्देश मुझे अक्सर ध्यानावस्था में बहुत सुनाई दिया करते थे।

कठोर निर्णय लो

भगवान शंकर ने 14 मई को ध्यानावस्था में थोड़ी-सी कठोर आवाज में मुझसे कहा- "जीवन जीने के लिए कठोर निर्णय लेना अति आवश्यक होता है। तुम जिस पर प्रसन्न हो गये, उसी पर कृपा कर दी, इसलिए तुम्हारे बहुत से साधक अभद्र हो गये हैं। अगर तुमने उन्हें अभ्यास करने दिया होता तो उन्हें उस योग्यता के महत्व को समझा होता"।

मेरी उम्र बढ़ा दी गयी

मुझे 15 नवम्बर को ध्यानावस्था में बताया गया- "आपकी उम्र बढ़ा दी गयी है। आपको दिसम्बर 2018 तक मार्गदर्शन के लिये कहा गया था। आपने प्रकृति के नियमों को नहीं माना है, आगे मार्गदर्शन और शिविर करते रहे। आप दिव्य शक्तियों की भी बात नहीं मानते हैं।"

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

29 दिसम्बर को ध्यानावस्था में- पूर्व दिशा की ओर क्षणिक देर के लिए ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी, ऋतम्भरा-प्रज्ञा का स्वरूप छोटा सा था। 30 दिसम्बर को आकाश में नीचे की ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा क्षणिक देर के लिए दिखाई दी।

सन् 2022

मेरा शरीर

ध्यानावस्था में मुझे मेरा शरीर दिखाई दिया। यह शरीर विशेष प्रकार के पदार्थों से बना हुआ था, उसके अन्दर तेज प्रकाश भरा हुआ था। रीढ़ की हड्डी बिलकुल पतली सी दिखाई दे रही थी।

अर्थ- रीढ़ की हड्डी का अस्तित्व समाप्त होना चाहिये था। रीढ़ की हड्डी समाप्त होते ही मेरे साथ कुछ घटनाऐं घट सकती हैं तथा कठोर अभ्यास भी करना होगा, संसार के सभी प्रकार के पदार्थों से आसक्ति को त्यागना होगा। वर्तमान समय में मैं साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। जब मैं मार्गदर्शन करना बन्द कर दूँगा, फिर रीढ़ की हड्डी का अस्तित्व पूर्ण रूप से समाप्त हो जायेगा।

रथ का पहिया

यह अनुभव 1 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- "मैं सामने की ओर रथ का पहिया बड़े आकार में देख रहा था। फिर ऐसा लगा मानो रथ के पहिये को कोई बीच से फाड़ रहा है, उस पहिये को फाड़ कर दो भागों में बाँट रहा है।" कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

रथ के पहिये को फाड़ते हुए अनुभव में कोई नहीं दिखाई दे रहा था। ऐसा लग रहा था कोई अदृश्य रूप से पहिये को बीच से फाड़ रहा है।

अमृत कलश

यह अनुभव ध्यानावस्था में 3 जनवरी को आया। ध्यान में सामने की ओर आकाश में रखा हुआ स्वर्ण कलश दिखाई दिया। वह स्वर्ण से बना हुआ कलश मुझे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था, उस स्वर्ण कलश का मुँह बन्द था। मैंने अपनी इच्छाशक्ति से उस स्वर्ण कलश का मुँह खोलना चाहा, मगर उस कलश का मुँह नहीं खुला। मैंने आकाश की ओर मुँह करके पूछा- "इस स्वर्ण कलश के अन्दर क्या भरा

हुआ है"? उसी समय आकाश से आवाज आयी- "इस स्वर्ण कलश के अन्दर अमृत भरा हुआ है। जब तुम यहाँ आओगे, तब ये तुम्हें प्राप्त हो जायेगा।"

अर्थ- अमृत शब्द का शाब्दिक अर्थ- 'अमरता' है, जो संस्कृत के अ (नहीं) और मृत (मृत्यु) से बना है अर्थात "जो कभी न मरे या अविनाशी हो"। पुराणों के अनुसार यह देवताओं का दिव्य पेय है जिसे पीने से अमरता प्राप्त होती है। अध्यात्म के अनुसार अमृत का कोई अर्थ भौतिक वस्तु न होकर वह शाश्वत तत्व या रस है जो अविनाशी है, जिसका कभी नाश नहीं होता है।

कुण्डलिनी शक्ति की कृपा

यह अनुभव 3 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। मैं अनुभव में आकाश मार्ग से कहीं चला जा रहा हूँ। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मेरा पीछा कर रहा है, मैंने पीछे की ओर मुड़कर देखा। मेरे द्वारा पीछे की ओर देखते ही दिखाई दिया- एक बहुत बड़ी नागिन ने मेरी पीठ पर भयंकर फुँफकार मारी। उस नागिन का शरीर स्वर्ण के समान चमकते हुए पदार्थ से बना हुआ था। यह दृश्य देख कर मैं खड़ा हो गया क्योंकि सुनहरी नागिन के फुँफकार मारते ही मेरी पीठ के अन्दर से छोटी चारपाई जैसी कोई वस्तु निकल कर दूर भूमि पर जाकर गिर गयी। वह वस्तु अब भी मेरे सामने पड़ी थी। उस सुनहरी नागिन के शरीर से हल्का सा प्रकाश निकल रहा था। अब मैं सोचने लगा इतनी बड़ी नागिन कहाँ से आ गयी? फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- सुनहरी बड़ी सी नागिन कुण्डलिनी शक्ति का प्रतीक है। उसने पीछे से मेरी पीठ पर जोर से फूँफकार मारी थी। फुँफकार के मारने से पीठ के अन्दर से छोटी सी चारपाईनुमा कोई वस्तु निकल कर दूर भूमि पर जाकर गिर गयी। अब मेरी पीठ के अन्दर रीढ़ की हड्डी का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। छोटी सी चारपाईनुमा वस्तु को साधकों का मार्गदर्शन करके उसके स्वरूप को नष्ट कर दूँगा। कुण्डलिनी शक्ति की कृपा से मेरा शेष कर्म बाहर आ गया।

भगवान श्री हरि की कृपा

मंत्र जाप करते समय 6 जनवरी को यह अनुभव आया- मेरे सामने थोड़ी ऊँचाई पर भगवान श्री हरि दाहिने करवट के बल लेटे हुए थे। मैं उनके पैरों की ओर निचले स्थान पर अपने दोनों हाथों को जोड़े हुए खड़ा हुआ था। भगवान श्री हरि को देख कर मैं उनसे बोला- "प्रभु आप" । उत्तर में वह कुछ नहीं बोले। उन्होंने अपना दाहिना हाथ मेरी ओर को बढ़ाया, तभी उनकी तर्जनी उँगली से सुदर्शन चक्र निकल कर मेरी ओर आने लगा। सुदर्शन चक्र मेरे पास आकर उसने (चक्र) मेरी गर्दन काट दी। मेरी गर्दन कटते ही मेरा सिर सुदर्शन चक्र के ऊपर रख गया। अब चक्र भगवान श्री हरि की ओर जाने लगा। मेरा कटा हुआ सिर सुदर्शन चक्र के ऊपर रखा हुआ, श्री हरि जी के पास पहुँच कर उनके चरणों (पंजों) पर गिर गया। फिर चक्र पहले की भाँति उनके हाथ की उँगली के ऊपर आ गया। तभी मेरे अन्तःकरण से जोर से आवाज आयी- "अब तुम मेरी शरण में हो। तुम बहुत ज्यादा समय वहाँ नहीं रहोगे, मेरे पास आ जाओगे।" फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह सम्पूर्ण दृश्य हृदयगुफा के अन्दर का है। हृदयगुफा के अन्दर आखिरी क्षेत्र में ऊपर उठे हुए स्थान पर भगवान श्री हरि दाहिनी करवट के बल लेटे हुए थे। मैं उनके पैरों के पास निचली जगह पर हाथों को जोड़े हुए खड़ा था। उनके पैरों के पंजे मेरे सीने के निचले भाग के बराबर थे। उनके पैरों के पंजों से थोड़ी दूरी पर खड़ा था। सुदर्शन चक्र ने जब मेरी गर्दन काट दी, तो मेरा कटा हुआ सिर सुदर्शन पर रखा हुआ प्रभु के पैरों के पंजों के ऊपर गिर गया। मेरी गर्दन कटने के बाद का सारा दृश्य मैं थोड़ी दूर से स्पष्ट देख रहा था। सिर कटने के बाद भी मेरा शरीर हाथों को जोड़े हुए खड़ा हुआ था। मुझे मेरे अन्तःकरण से आवाज स्पष्ट सुनाई दे रही थी। इस अनुभव में सुदर्शन चक्र द्वारा गर्दन कटना अर्थात भगवान श्री हरि ने मेरे देहाभिमान को नष्ट कर दिया है।

हृदयगुफा का अर्थ है- इसका वर्णन उपनिषदों में विस्तार से मिल जायेगा। अध्यात्म में हृदयगुफा भौतिक हृदय नहीं है। बल्कि साधक के स्थित उस सूक्ष्म और गहरे स्थान का प्रतीक है, जहाँ परमात्मा या आत्मा का निवास माना जाता है। यह वह आंतरिक केन्द्र है जहाँ सर्वोच्च चेतना (ब्रह्म) विराजमान है। यह परम शान्ति का क्षेत्र है। अभ्यास द्वारा इस क्षेत्र में पहुँचकर अभ्यासी को परम शान्ति का अनुभव होता है।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा और भगवान शिव

यह अनुभव 12 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। मैं मकाननुमा इमारत (बिल्डिंग) के किसी मंजिल के बालकनी नुमा क्षेत्र पर खड़ा हूँ, मैं ऊपर वाली आखिरी मंजिल की ओर देख रहा हूँ। आकाश में ऋतम्भरा-प्रज्ञा की उपस्थिति भी है, ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश फैला हुआ है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा और मेरे बीच में किसी मनुष्य का सिर है। तभी भगवान शिव ने मुझे पीछे की ओर से, अपने दोनों हाथों से मेरी कमर पकड़ कर बच्चों के समान उठाकर सबसे ऊपरी मंजिल पर खड़ा कर दिया। फिर भगवान शिव मुझसे बोले- "अब अपना पतन नहीं करना"। उत्तर में मैं बोला- "प्रभु, अब अपना पतन नहीं करूँगा"। मेरे ऊपर भी ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश फैला हुआ था।

अर्थ- कई मंजिला इमारत ज्ञान की सात पायदान वाली इमारत है ऐसा कहा जाता है। मैं उस इमारत के छठवीं मंजिल पर खड़ा था। मेरे इष्टदेव ने मुझे उठाकर ज्ञान की सातवीं अर्थात आखिरी पायदान पर खड़ा कर दिया। भगवान शिव ने कहा- "अपना पतन मत करना"। मुझे बहुत पहले साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये रोका गया था, फिर भी मैं साधकों का मार्गदर्शन करता रहा। प्रकृति के नियमों के विरुद्ध साधकों को आगे की ओर बढ़ाता है। साधकों का मार्गदर्शन करने के लिये मुझे अज्ञानता में आना पड़ता है।

प्रभु के पैरों के दर्शन

यह अनुभव आँखे बंद करने पर दिखाई दिया। यह अनुभव 16 जनवरी को आया- मेरे बायीं ओर सीने के पास बड़े-बड़े पैरों वाला पुरुष खड़ा हुआ था। सुन्दर पैरों को पंजों से ऊपर की ओर देखना शुरू किया, मैं उनका शरीर का कमर का निचले भाग ही देख सका। वह सफ़ेद धोती पहने हुए थे। मैं उसी समय पहचान गया- ये भगवान श्री हरि के पैर हैं। उनके बगल में माता आदि-शक्ति के पैरों की आकृति दिखाई दी। मैंने उन दोनों को प्रणाम किया। अनुभव समाप्त हो गया। उन दोनों के पैरों की सुन्दरता बहुत अच्छी थी तथा विशाल आकार वाले पैर थे।

ॐ निजस्वरुपाय नम:

17 जनवरी शाम को ध्यान करते समय मुझसे कहा गया- "योगी पुत्र, अब तुम 'ॐ निजस्वरुपाय नम:' मंत्र का जाप किया करो"। मैंने उसी समय मंत्र का जाप करना शुरू कर दिया। मैं अपनी आँखे बन्द किये हुए था, जाप करते समय सिर के ऊपरी भाग में छिद्र होना शुरू हो गया। कुछ क्षणों में सिर के ऊपरी भाग में बड़ा सा छिद्र हो गया। उस छिद्र के द्वारा अन्दर का भाग दिखाई देने लगा। मैंने देखा- शरीर के अन्दर काला पदार्थ भरा हुआ था। जैसे-जैसे मैं मंत्र बोल रहा था, वैसे-वैसे ऊपर से नीचे की ओर काला पदार्थ नष्ट होता जाता था। शरीर के अन्दर का भाग खोखला होता जा रहा था। उस समय रीढ़ की हड्डी भी नहीं दिखाई दे रही थी। कुछ समय बाद कमर के पास रीढ़ का अंश दिखाई दिया। ऐसा लग रहा था मानो हड्डी के पतले-पतले टुकड़े मोटी रबड़ खण्ड में चिपके हुए हैं। मुझे लग रहा था अब मेरा शरीर नहीं रह गया है।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे 'ॐ निजस्वरुपाय नम:' मंत्र जाप करने के लिए कहा गया है। अब मैं भविष्य में इसी मंत्र का जाप किया करूँगा, अर्थात अपने स्वरूप को भजा करूँगा। अनुभव में जब मैंने इस मंत्र को भजना शुरु किया तभी सिर के ऊपरी भाग में एक छिद्र प्रकट हो गया और शरीर के अन्दर विद्यमान तमोगुण की मात्रा कम होने लगी।

विराट स्वरूप

मुझे 19 जनवरी को ध्यानावस्था में हल्के प्रकाश में सम्पूर्ण दृश्य दिखाई दिया। फिर मुझे गुफानुमा जगह दिखाई दी, उस गुफानुमा जगह के अन्दर ईश्वर का विराट स्वरूप दिखाई दिया। उस विराट स्वरूप को मैं गौरपूर्वक देख रहा था। उनके बहुत से हाथ थे, उन हाथों में अस्त्र-शस्त्र भी थे, विभिन्न तरह के कई सिर थे। उनका विशाल स्वरूप देखकर मुझे अच्छा लग रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

भगवान श्री हरि जी हृदय गुफा में

यह अनुभव 23 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। हृदय गुफा के अन्दर शेषनाग के ऊपर भगवान श्री हरि जी लेटे हुए दिखाई दिये। अन्दर से आवाज आयी- "मैं तुम्हारे हृदय में रहता हूँ"। जिस जगह पर श्री हरि जी लेटे हुए थे, उस स्थान पर पानी प्रकट हो गया। फिर कुछ क्षणों बाद सम्पूर्ण पानी सूख गया। जब पानी प्रकट हो गया था, तब भगवान श्री हरि जी पानी के ऊपर ही लेटे रहे अर्थात उनका शरीर पानी के ऊपर ही लेटा रहा, फिर वह अदृश्य हो गये।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान श्री हरि जी ने स्वयं ही कहा- "मैं तुम्हारे हृदय में रहता हूँ"। आध्यात्मिक दृष्टि में ये जगह जहाँ पर भगवान श्री हरि जी लेटे हुए थे, वह हृदयगुफा के नाम से जानी जाती है। वह जगह आकाश तत्व से सम्बंधित है।

आवरण का छिन्न-भिन्न होना

मैं सात मार्च को मंत्र जाप कर रहा था तभी यह अनुभव आया। मुझे दिखाई देने लगा- मेरे सिर के ऊपरी भाग में छिद्र हो गया है। मेरे शरीर के अन्दर का भाग दिखाई देने लगा, शरीर अन्दर से पूरी तरह से पोला था, शरीर के नाम पर सिर्फ बाहरी आवरण मात्र था। तभी बाहरी आवरण नीचे की ओर जाने लगा, फिर वह ज्यादा नीचे की ओर जाकर अदृश्य हो गया। अब मेरा शरीर ही नहीं रह गया था। मैं लगातार मंत्र उच्चारण करता जा रहा था। मेरी दृष्टि ऊपर की ओर हो गयी, तब ऐसा लगा मैं गोलाकार पिण्ड के अन्दर विद्यमान हूँ, इस पिण्ड के ऊपरी भाग में छिद्र है। मैं अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा उस पिण्ड से बाहर आ गया। वह पिण्ड अब मुझे अपने से नीचे की ओर दिखाई देने लगा। मैं जैसे-जैसे मंत्र बोल रहा था, वैसे-वैसे उस पिण्ड की ऊपरी परत में हलचल होने लगी, उस पिण्ड की परत टूट-टूट कर नीचे गिरने लगी।

अर्थ- इस अनुभव में मैं मंत्र जाप कर रहा हूँ। मुझे दिखाई दिया- मेरे शरीर का बाहरी आवरण नीचे की ओर जाकर अदृश्य हो गया। आवरण के अदृश्य होते ही मेरा शरीर भी अदृश्य हो गया। मुझे ऊपर की ओर दृष्टि करते ही दिखाई दिया- मैं किसी पिण्ड के अन्दर विद्यमान हूँ। उस पिण्ड से अपनी इच्छा शक्ति से बाहर आ गया। फिर इस पिण्ड का बाहरी आवरण धीरे-धीरे मंत्र के प्रभाव से छिन्न-भिन्न होने लगा। मैं बराबर मंत्र जाप कर रहा था। आवरण पूर्ण रूप से छिन्न भिन्न होता जा रहा था।

शिवलिंग स्फटिक मणि के समान

यह अनुभव मंत्र जाप के समय आया। 11 मार्च को मैंने देखा- मैं लगातार मंत्र जाप कर रहा था। सामने की ओर थोड़ा नीचे, किसी की दोनों हथेलियाँ आपस में मिली हुई अंजली (अंजुली) आकार में थी। उसी अंजली में हल्का काला सा छोटा शिवलिंग था। मैं मंत्र लगातार बोल रहा था और उसी शिवलिंग को एक टक टकटकी लगाये देख रहा था। कुछ क्षणों बाद उस शिवलिंग के मध्य भाग का स्वरूप बदलने लगा। शिवलिंग का मध्य भाग निर्मल होने लगा, तभी वह हथेलियाँ ऊपर की ओर मेरे मुँह के सामने आने लगी। मेरे मुँह के सामने थोड़ी दूरी पर हथेलियाँ स्थिर हो गयी। मैं शिवलिंग को देख रहा था, अब शिवलिंग के दाँये और बाँये ओर की साइड मात्र थोडी सी जगह काली सी रह गयी थी। सम्पूर्ण शिवलिंग अत्यन्त स्वच्छ स्फटिक मणि के समान हो गया था। शिवलिंग के अंदर मध्य भाग में भगवान शिव जी का स्वरूप विद्यमान था अर्थात शिवलिंग के अन्दर भगवान शिव जी विद्यमान (व्याप्त) थे। फिर शिवलिंग हमसे दूर व नीचे की ओर जाकर अदृश्य हो गया।

यह अनुभव भी 11 मार्च को मंत्र जाप करते समय आया। पहले लिखे अनुभव के बाद आया। पहले अनुभव में शिवलिंग हमसे दूर जाकर नीचे की ओर अदृश्य हो गया। कुछ समय बाद शिवलिंग पहले से थोडा बड़े आकार में स्फटिक मणि के समान स्वरूप में फिर प्रकट हो गया। उनके दोनों साइडों पर जो थोडी सी कालिमा थी, वह टूट-टूट कर टुकड़े-टुकड़े आकार में बिखर गयी। अब शिवलिंग पूर्ण रूप से स्फटिक मणि के समान स्वच्छ हो गया। फिर कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- पहले अनुभव में शिवलिंग के बायीं ओर और दायीं ओर थोड़े स्थान पर कालापन रह गया था। अबकी बार इस अनुभव में पहले वाला कालापन टूट-टूट कर टुकड़ों में बिखर गया, मैं इस प्रक्रिया को अनुभव में देख रहा था। अबकी बार इस अनुभव में शिवलिंग पूर्ण रूप से स्फटिक मणि के समान हो गया है। अब मेरा चित्त भी भविष्य में पूर्ण रूप से स्फटिक मणि के समान हो जायेगा। ऐसा भविष्य में होगा।

नार (बेल) से फल डण्ठल के स्थान से अलग हो गये

यह अनुभव भी 11 मार्च को मंत्र जाप करते समय दिखाई दिया- मेरे सिर के ऊपरी भाग पर कुछ दिखाई दे रहा था। मैंने अपनी दृष्टि उसी स्थान पर केन्द्रित कर दी। मैं लगातार मंत्र जाप कर रहा था। कुछ

क्षणों बाद देखा- सिर के सबसे ऊपरी स्थान पर दिखाई दे रहा था, किसी फल का डण्ठल सा है। फिर दिखाई दिया वह खरबूजे जैसे फल का डण्ठल है, वह अपनी बेल से अलग हो गया। मुझे अब खरबूजानुमा फल के डण्ठल का भाग दिखाई दे रहा था और डण्ठल के पास का क्षेत्र व फल भी दिख रहा था। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

मैं मंत्र बराबर जाप कर रहा था। कुछ क्षणों बाद फिर उसी स्थान पर दूसरा फल दिखाई दिया। उसमें ऐसा लग रहा था वह अपनी बेल से अभी-अभी अलग हुआ है। इस फल में डण्ठल नहीं था, डण्ठल बेल में ही लगा रहा होगा, मुझे वह स्थान दिखाई दे रहा था। इसी प्रकार मंत्र जाप करते समय तीन-चार फल अपनी बेल से लगे और अलग होते दिखाई दिये।

अर्थ- अनुभव में तीन-चार फल पक जाने के कारण अपने आप अपनी बेल से अलग हो गये। मृत्युंजय मंत्र का अर्थ इसी अनुभव से मिलता है। जैसे पका हुआ खरबूजा बेल से (बन्धन से) मुक्त हो जाता है वैसे ही हम भी मृत्यु और नश्वरता के भय से मुक्त होकर मोक्ष (अमृतत्व) को प्राप्त हो। मृत्युंजय मंत्र के दूसरी लाइन का अर्थ है जो अनुभव में बार-बार फल को बेल से टूटा हुआ अर्थात अलग हुआ दिखाया जा रहा था।

उल्टी गदा वाला स्थान

यह अनुभव 12 मार्च को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- बड़ी सी झाड़ू द्वारा सफाई की जा रही है, जगह बिलकुल स्वच्छ होती जा रही है। फिर स्पष्ट हुआ यह तो वही जगह है जो उल्टी गदा के समान ऊपर उठा हुआ क्षेत्र है। इस क्षेत्र के आसपास चारों ओर गहरी खाईनुमा जगह व उसमें अनन्त पेड़-पौधे थे। अब वहाँ पेड़-पौधे बिलकुल नहीं थे, बल्कि गहरी खाईनुमा जगह ऊपर की ओर समतल होती चली आ रही थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस प्रकार का अनुभव मैं पहले पुस्तक में लिख चुका हूँ। यह स्थान उल्टी गदा के समान ऊपर की ओर उठा हुआ क्षेत्र है, यह स्थान ईश्वर का क्षेत्र कहा जाता है। इस ऊपर की ओर उठे हुए क्षेत्र पर बैठने वाला पुरुष अपरा-प्रकृति का स्वामी होता है। ऊपर उठे हुए स्थान को शाश्वत भी कहते है। मैं पहले कुछ वर्षों पूर्व इस स्थान से नीचे आकर संसार के कल्याण के लिए कार्य करने में लग गया, इससे सैकड़ों मनुष्यों को आध्यात्मिक लाभ प्राप्त हुआ।

शरीर के अन्दर से रथ निकला

यह अनुभव 12 मार्च को मंत्र जाप करते समय आया। मैं कुर्सी पर बैठा हुआ मंत्र जाप कर रहा था। मंत्र जाप करते समय हमारी आँखे बन्द थी। मुझे दिखाई दिया- मेरे सिर का ऊपर वाला भाग फट गया। मैं दूर से देख रहा था हमारे शरीर के अन्दर कुछ भरा हुआ है, वह वस्तु ऊपर की ओर निकल रही थी। मैं गौरपूर्वक देख रहा था- मेरे शरीर के अन्दर से ऊपर की ओर क्या निकल रहा है? तभी धीरे-धीरे सिर के ऊपरी भाग से रथ निकलकर बाहर की ओर आ गया। वह रथ सूक्ष्म, सफेद रंग वाला और पारदर्शी जैसा था, उसमें एक घोड़ा जुता हुआ था। उस रथ को हाँकने वाला रथवान भी था, रथ आकाश में खड़ा हुआ दिखाई दे रहा था। मैं मंत्र बोलता जा रहा था तथा आँखे बन्द किये हुए रथ को भी देख रहा था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में शरीर से बाहर आने वाला रथ हमारे ही सूक्ष्म शरीर का प्रतीक है। रथ सूक्ष्म, सफेद व पारदर्शी जैसा है क्योंकि हमारा सूक्ष्म शरीर अत्यन्त सूक्ष्म, स्वच्छ और निर्मल हो चुका है। इसलिये वह पारदर्शी सा दिखाई दे रहा है।

ईगल की आँख

यह अनुभव 13 मार्च सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मुझे छोटी सी आँख बहुत ही तेजस्वी दिखाई दी। मैं लगातार टकटकी लगाकर उस तेजस्वी छोटी सी आँख को देख रहा था। तभी मुझे ईगल का मुँह भी दिखाई देने लगा, तब मुझे मालूम हुआ यह आँख ईगल की है। ईगल के मुँह का दाहिना भाग दिखाई दे रहा था, शेष शरीर दिखाई नहीं दे रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अध्यात्म में ईगल की आँख का अर्थ केवल तेज नजर ही नहीं, बल्कि उच्च चेतना, स्पष्ट दृष्टिकोण और दूरदर्शिता का प्रतीक है, जो जीवन को एक गहरे, सूक्ष्म और व्यापक दृष्टिकोण से देखने की क्षमता को दर्शाती है। मन में स्पष्ट होना, झूठ और सच के बीच का अंतर कर पाना, अपनी अंतरात्मा की आवाज को सुनना आदि इसका अर्थ है।

शिवछिद्र के अन्दर

यह अनुभव 15 मार्च सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं किसी बड़े से गोलाकार छिद्र को देख रहा हूँ। छिद्र के उस पार आकाश निर्मल स्वच्छ निखरा हुआ है। तभी अनुभूति हुई- मैं सुरंगनुमा छिद्र के अन्दर घुसा हुआ हूँ, ऐसा लगता है मैं उस पार निकलने का प्रयास कर रहा हूँ।

अर्थ- इस प्रकार सुरंगनुमा शिवछिद्र (जगह) 8 मार्च को भी दिखाई दिया था, उस समय वह सुरंगनुमा शिवछिद्र लम्बा सा दिखाई दे रहा था। परन्तु इस 15 मार्च वाले अनुभव में यह जगह अर्थात शिवछिद्र की लम्बाई उस पार निकलने के लिए कम हो गयी है। अब भविष्य में इसके विषय में और ज्यादा जानकारी मिलेगी।

शिवछिद्र सुरंगनुमा इसलिये दिखाई दे रहा है क्योंकि शिवछिद्र जिस दीवारनुमा जगह में बना हुआ है, उस छिद्र की दीवार की मोटाई बहुत अधिक है। यह शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में बना हुआ है। अपरा-प्रकृति के आवरण की दीवारों की मोटाई इतनी है, जितनी सुरंग की लम्बाई या शिवछिद्र की लम्बाई दिखाई दे रही है। अब मेरा अभ्यास इसी क्षेत्र पर चल रहा है, इस कारण अपरा-प्रकृति का आवरण पतला होता जायेगा, तब शिवछिद्र की लम्बाई भी कम होती जायेगी।

अपरा-प्रकृति का आवरण तमोगुणी अहंकार व अज्ञानता के कारण बनता है। जब तक मैं इस संसार को अपना समझता रहूँगा या सांसारिक पदार्थों के प्रति आसक्ति रहेगी, तब तक आवरण बना रहेगा। इसका कारण है- मैं अभी साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। जब तक मार्गदर्शन करना नहीं छोड़ूँगा, तब तक आवरण बना रहेगा। जैसे-जैसे प्रकृति के पदार्थों और सांसारिक कार्यों को त्यागता जाऊँगा, वैसे-वैसे आवरण पतला होता जायेगा। अब धीरे-धीरे सभी को त्यागना है।

राख का ढेर व कढ़ाई

यह अनुभव 16 मार्च को आया। मेरा बहुत अच्छा ध्यान लगा हुआ था। तब अनुभव में दिखाई दिया- मुझे बड़ी सी कढ़ाई दिखाई दे रही थी। मैंने अपनी दृष्टि कढ़ाई पर टिका दी, कढ़ाई के अन्दर कुछ भी नहीं था, कढ़ाई बिलकुल स्वच्छ थी, कढ़ाई चूल्हे से अलग रखी हुई थी। बाँयी ओर चूल्हा दिखाई

दिया। मैंने चूल्हे के अन्दर झाँक कर देखा- उसके अन्दर राख भरी हुई थी। ऐसा लगता था- इस चूल्हे का प्रयोग बहुत समय से नहीं किया गया है।

अर्थ- अनुभव का अर्थ यही है- कढ़ाई में भोजन बहुत समय से नहीं बनाया गया है। तभी कढ़ाई एक ओर तिरछी रखी हुई है तथा वह स्वच्छ भी है। चूल्हे के अन्दर राख भरी हुई है। राख का अर्थ है- चित्त पर किसी प्रकार के संस्कार नहीं रह गये, चित्त शान्त हो चुका है और उसके सम्पूर्ण भोग समाप्त हो चुके हैं।

प्रकृति को स्वच्छ किया जाना

प्रिय साधकों! यह अनुभव पढ़ने में थोड़ा विचलित करेगा, मगर शिक्षाप्रद होने के कारण इस अनुभव को लिख रहा हूँ। यह अनुभव 17 मार्च को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- एक पुरुष स्त्री के शरीर पर साबुन जैसा लगा रहा है। स्त्री पूर्ण रूप से नग्न अवस्था में है। स्त्री पुरुष का विरोध कर रही है, मगर पुरुष बलपूर्वक साबुन उसके शरीर पर रगड़ रहा है। स्त्री फर्श पर लेटी हुई है, पुरुष ने स्त्री को दबा रखा है, स्त्री छूटने का प्रयास कर रही है। मैं उस स्त्री को टकटकी लगाकर देख रहा हूँ क्योंकि पुरुष उस स्त्री के शरीर पर साबुन का झाग खूब रगड़ रहा है। फिर उस स्त्री के सीने के ऊपर बैठ गया। दोनों हाथों से स्त्री का पेट जोर-जोर से रगड़ रहा था। स्त्री का मुँह पुरुष के पीछे की ओर था। स्त्री फड़फड़ा रही थी, पुरुष अपना कार्य कर रहा था। यह स्त्री सामान्य स्त्रियों से पूर्णतः भिन्न थी। ऐसी विशेष प्रकार की स्त्रियाँ ध्यान में कई बार दिखाई दी थी, मगर उनके विषय में ज्यादा लिखना उचित नहीं समझा। अनुभव समाप्त हो गया। ऐसी स्त्री कुछ दिन पूर्व 9 मार्च को भी दिखाई दी थी।

अर्थ- अनुभव में पुरुष बलपूर्वक स्त्री के शरीर पर साबुन लगा रहा है अर्थात पुरुष स्त्री के शरीर को साबुन के द्वारा स्वछ करने का प्रयास कर रहा है मगर इस कार्य में स्त्री विरोध कर रही है। इस अनुभव में- पुरुष मेरे ही स्वरुप का प्रतीक है, स्त्री अपरा-प्रकृति के स्वरूप का प्रतीक है। साबुन मेरे द्वारा किया गया अभ्यास का प्रतीक है। अपरा-प्रकृति जितनी शुद्ध होती जाएगी, उतना ही उसका स्वरूप नष्ट हुए के समान होता जाएगा, इसीलिए अनुभव में वो स्त्री, पुरुष के उस कार्य का विरोध कर रही है। इस अनुभव से भाषित होता है- कुछ समय बाद हमारा चित्त (अपरा-प्रकृति) और स्वच्छ हो जायेगा।

रस्सा

18 मार्च को सुबह मैं मंत्र जाप कर रहा था। मंत्र जाप करते समय मुझे दिखाई दिया- मेरा सिर ऊपर से फटकर दो भागो में बँट गया। इसका ऊपरी आवरण बहुत ही पतला था। सिर के अन्दर के क्षेत्र में कोई वस्तु दिखाई देने लगी। वह वस्तु स्पष्ट दिखाई न देने के कारण, यह नहीं समझ सका, दिखाई देने वाली वस्तु क्या है। मैं लगातार मंत्र बोले जा रहा था। कुछ क्षणों बाद अन्दर का दृश्य स्पष्ट होने लगा, तब दिखाई दिया- सिर के अन्दर तह किया हुआ मोटा सा रस्सा है। तह किये हुए रस्से का एक सिरा ऊपर की ओर को निकलने लगा। कुछ क्षणों बाद पूर्ण रूप से रस्सा निकल आया, फिर वह रस्सा आकाश में जाकर अदृश्य हो गया। मेरा शरीर जो आवरण मात्र था, वह नीचे की ओर जाकर टुकड़े-टुकड़े होकर अदृश्य हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला रस्सा मोटा सा सफेद रंग का था। मैंने अपने पहले अनुभवो में कई बार इसी रस्से का कई बार वर्णन किया है- कि वह रस्सा आसमान में लटका हुआ था, मैं रस्से का निचला सिरा पकड़ कर उस पार चला गया। यह (रस्सा) अनुभवो में कई बार दिखाई दिया। इस रस्से के द्वारा मेरी कई बार सहायता हुई है। अब आज इस अनुभव में यह रस्सा मेरे शरीर से बाहर निकल कर ऊपर आकाश में जाकर अदृश्य हो गया। इस अनुभव से स्पष्ट होता है- अब भविष्य में मुझे इस रस्से की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि मेरी अवस्था ऐसी हो गयी है। मेरी वर्तमान साधना शिवछिद्र के अन्दर चल रही है। संसार में लिप्त होने के कारण मैं पतन में अर्थात अज्ञानता में आ जाता हूँ, क्योंकि साधकों के कल्याण के लिये कुछ मार्गदर्शन करना पड़ता है।

भूमि के अन्दर

यह अनुभव 18 मार्च को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं भूमि के अन्दर उपस्थित हूँ। मेरे सामने लगभग 4 इंच व्यास का सुरंगनुमा छिद्र से अत्यन्त स्वच्छ पानी निकलकर नीचे की ओर गिर रहा है। जो पानी गिर रहा है, वह पानी भी नीचे की ओर इसी प्रकार मोटे छिद्र के अन्दर जा रहा है। फिर गिरने वाला पानी बन्द हो गया। वह छिद्र भी सूख गया, मगर नीचे वाले छिद्र में, जिसमें पानी गिर रहा था, उसमें पानी अब भी भरा हुआ है। चारों तरफ की सम्पूर्ण मिट्टी में नमी दिखाई दे रही थी।

अर्थ- अनुभव में सम्पूर्ण दृश्य चित्त शुद्ध होने की प्रक्रिया के अन्तर्गत दिखाई दे रहा है। मैं पहले लिख चुका हूँ (पिछली पुस्तकों में) चित्त के छिद्रों में भी क्लेशात्मक कर्म भरे होते हैं, उसी का यह दृश्य है। यह शुद्धता आरोही-अवरोही क्रम में चल रही है, इसमें स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक शुद्धता समान रूप से होती रहती है। यह प्रक्रिया वर्षों तक चलती है। इसलिये ऊपर की अवस्था के बाद नीचे की अवस्था उपस्थित हो जाती है। यह प्रक्रिया आखिरी जन्म में अन्तिम समय पर होती है।

आवश्यक जानकारी

साधकों मैं जानकारी देना चाहता हूँ- अब से लेकर कुछ महीने तक मुझे अहंकार के विषय में, चित्त के विषय में, ऋतम्भरा के विषय में, शिवछिद्र के विषय में बहुत अनुभव आये। इन सबका कारण यह था- मैं साधकों का मार्गदर्शन करता हूँ तब मेरी निम्न अवस्था उपस्थित हो जाती है, यह अज्ञानता के अंतर्गत आता है। फिर मैं अभ्यास करने लगता हूँ तब उच्चतम अवस्था आ जाती है। यह क्रम चलता रहता है।

चित्त की शुद्धता के लिये तमोगुणी अहंकार को स्वच्छ करना होगा, इसका प्रभाव चित्त पर और प्रकृति के आवरण पर पड़ता है। प्रकृति के आवरण को भी धीरे-धीरे स्वच्छ करके नष्ट करना है। प्रकृति का आवरण नष्ट होते समय ही, परा-प्रकृति का अवतरण होता रहता है। परा-प्रकृति का अवतरण होना अति आवश्यक है, क्योंकि शिवछिद्र से उस पार की अवस्था तभी प्राप्त होगी।

चित्त को शुद्ध करने के लिये परिपक्व अवस्था प्राप्त हो, उसके लिये आरोही और अवरोही क्रम में चित्त की शुद्धता करनी होगी, क्योंकि चित्त ही क्रमशः अहंकार, पंचतन्मात्राएं, सूक्ष्म पंचभूत, स्थूल पंचभूत में और मन, सूक्ष्म दसों-इंद्रियों के रूप में व स्थूल दसों-इंद्रियों के रूप में परिवर्तित होता है। इसलिये स्थूल से लेकर चित्त तक, चित्त से लेकर स्थूल तक शुद्धिकरण होना अतिआवश्यक है। इसी शुद्धिकरण के अभ्यास से, अभ्यासी की अवस्थाओं का परिवर्तन होना शुरु हो जाता है। जब तक पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं होगा, तब तक उसे मोक्ष की अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती है।

अहंकार के विषय

मैं यहाँ जो लिख रहा हूँ, वह सिर्फ उन अभ्यासियों के लिये है, जिनका यह जन्म अर्थात वर्तमान जन्म आखिरी है और जिनके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हुए कई वर्ष हो गये है। ऐसे साधक या अभ्यासी इस भूलोक पर कितने होंगे, मुझे मालूम नहीं है। ऐसी योग्यता वाले साधक इस भूलोक पर विरले ही होंगे। इस अवस्था में अहंकार के भिन्न-भिन्न तरह के अनुभव आते है। जैसे- वह (अभ्यासी) नाग के शरीर के अन्दर आगे की ओर चला जा रहा है, उसे ऐसा लग रहा है मानो वह सुरंगनुमा जगह के अन्दर चला जा रहा है, इस प्रकार के अनुभव आयेंगे। कभी-कभी देखेगा- वह अत्यन्त तीव्र गति से सुरंगनुमा जगह में आगे चला जा रहा है, फिर वह अपने आप को देखेगा- वह दूर से बैठा हुआ नाग को देख रहा है, उसके सामने दूर नाग लेटा हुआ है। वह कुछ समय पहले उसी नाग के अन्दर था। इस प्रकार के अनुभव आयेंगे, इस प्रक्रिया से अहंकार शुद्ध होता रहता है।

सबसे अच्छी बात यह है- अभ्यासी को सदैव ईश्वर उन्मुख होकर अभ्यास करते रहना चाहिये। निरन्तरता को कभी टूटने नहीं देना चाहिये, निरन्तरता के टूटते ही अज्ञानता की अवस्था उपस्थित हो जाती है। ऐसी अवस्था में संसार के परोपकार से दूर हो जाना चाहिये। अगर ऐसा नहीं किया तो पतन की अवस्था में आकर संसार के कार्यों को कब तक करते रहोगे। मुझे देखो, मैं कई बार पतन की अवस्था को प्राप्त हो गया। दिव्य शक्तियों ने मुझे खूब रोका कि अब साधकों का मार्गदर्शन करना बंद कर दो, मगर मैंने उनकी बात नहीं मानी, तभी मैं बार-बार आगे बढ़ता हूँ फिर नीचे आ जाता हूँ।

मुझे अनुभव में ऋतम्भरा-प्रज्ञा अक्सर दिखाई देती है इससे अभ्यासी को लाभ मिलता है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य जितना ज्यादा होगा, उतना ही ज्यादा चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैलता है। इससे अज्ञान धीरे-धीरे नष्ट होने लगता है और ज्ञान बढ़ता रहता है।

अब मैं अहंकार सम्बंधित और ऋतम्भरा-प्रज्ञा से सम्बंधित अनुभवों को नहीं लिखूंगा, ताकि इस पुस्तक का लेख बहुत ज्यादा न हो। इस पुस्तक को मैं कम पन्ने वाली रखना चाहता हूँ क्योंकि इस अवस्था वाले अभ्यासी वर्तमान समय में बहुत ही कम पाये जाते हैं।

वायु तत्व, अग्नि तत्व, जल तत्व, पृथ्वी तत्व का आपस में तारतम्य

यह अनुभव तीन अप्रैल को ध्यानावस्था में आया- अनुभव में मैंने अपने आपको आकाश में उपस्थित पाया। सामने की ओर का दृश्य देख कर मैं चौंक पड़ा। सामने की ओर आकाश में चार बकरी के बच्चे गोलाकार रूप में बैठे हुए थे। इस गोलाकार क्षेत्र का व्यास 2 मीटर के लगभग रहा होगा। ये बकरी के चारों बच्चे एक ही जैसे स्वरूप वाले थे। ये चारों बच्चे शिशु रूप में ही थे, सभी बच्चों का रंग एकदम स्वच्छ सफेद था।

चारों बच्चे दुखी और उदास से थे। उनका मुँह नीचे की ओर लटका हुआ था तथा बच्चे बहुत कमजोर से थे। इन बकरी के बच्चों को देखकर मैं बोला- ये बच्चे तो मर जायेंगे। मुझे ऐसा लगा- एक दो-बार शायद इनके शरीर में हल्का सा कम्पन या झटका सा (जैसे बिजली का तार छू लेने पर झटका लगता है) लगा। फिर मुझे ये देखकर आश्चर्य हुआ- इन बकरी के बच्चों की नाभि से पतली सी सफेद स्वच्छ पारदर्शी नली लगभग ¼ इंच मोटी जुड़ी हुई है। इस नली का दूसरा सिरा दूसरे बच्चे की नाभि से जुड़ा हुआ था। फिर उस बच्चे की नाभि से नली निकल कर तीसरे बच्चे की नाभि से जुड़ा हुआ था फिर तीसरे बच्चे के नाभि से नली निकल कर चौथे बच्चे की नाभि से जुड़ी हुई थी। फिर चौथे बच्चे के नाभि से नली निकल कर पहले बच्चे की नाभि से जुड़ी हुई थी। अर्थात बकरी के चारों बच्चे पारदर्शी सफेद स्वच्छ नली के द्वारा नाभि क्षेत्र से आपस में जुड़े हुए थे। मुझे पारदर्शी नली का अन्दर का क्षेत्र स्पष्ट दिखाई दे रहा था। ऐसा लग रहा था- मानो बहुत ही शुद्ध पारदर्शी वायु इसके अन्दर भरी हुई है। यह दृश्य बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहा था। सम्पूर्ण दृश्य आकाश के अन्दर था। अनुभव समाप्त होने पर मेरी आँखे खुल गयी। फिर अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- मैं पहले भी अनुभवो में बता चुका हूँ कि बकरी का आध्यात्मिक अर्थ क्या होता है। अनुभव में दिखाई देने वाली बकरी अपरा-प्रकृति की प्रतीक है। अपरा-प्रकृति पाँच तत्वों द्वारा बनी हुई है। ये पाँचों तत्व इस प्रकार से है- 1. आकाश तत्व, 2. वायु तत्व, 3. अग्नि तत्व, 4. जल तत्व, 5. पृथ्वी तत्व। अनुभव में आकाश में बकरी के चार बच्चे दिखाई दे रहे थे, ये चारों बच्चे वायु तत्व, अग्नि तत्व, जल तत्व और पृथ्वी तत्व के प्रतीक थे। बकरी के सभी बच्चे स्वच्छ सफेद रंग के थे। सफेद रंग सत्वगुण का प्रतीक होता है। अर्थात रजोगुण और तमोगुण उनके अन्दर नहीं थे (वैसे तीनों गुण सदैव एक साथ रहते है)। अर्थात चारो तत्व शुद्धता को प्राप्त हो रहे थे। उनके स्वरूप को देखकर ऐसा लगता था कि बेचारे बच्चे मर जायेंगे अर्थात भविष्य में ये चारो पदार्थ मेरे लिए प्रभावी नहीं रहेंगे, नष्ट हुए के समान हो जायेंगे

अर्थात ये अवस्था इन चारो तत्वों से (अपरा-प्रकृति) परे हो जायेंगे। चारो बच्चों के नाभि क्षेत्र से एक नली निकल कर दूसरे की नाभि से जुड़ी हुई है। अर्थात इन तत्वों का आपस में सूक्ष्म रूप से तारतम्य सदैव बना रहता है। ऐसा लगता है नली के अन्दर अत्यन्त सूक्ष्म वायु विद्यमान है, अर्थात वायु तत्व से तारतम्य जुड़ा है। प्रत्यक्ष देखने पर चारों तत्वों में आपस में घनत्व स्तर पर भारी अन्तर है। तमोगुण की क्रमशः बहिर्मुखता बढ़ने पर, वायु तत्व से पृथ्वी तत्व तक आने पर चारो तत्वों में भारी अन्तर हो जाता है। प्रकृति आकाश तत्व में अधिष्ठित होकर वायु तत्व के द्वारा अपना सृजन करती है। सम्पूर्ण सृष्टि में किसी भी प्रकार की हलचल वायु तत्व के द्वारा ही होती है

अपरा-प्रकृति और चित्त

अप्रैल माह की 4 तारीख को यह अनुभव ध्यानावस्था में आया। मैं मंत्र जाप कर रहा था। मंत्र जाप करते-करते ध्यान लग गया। ध्यानावस्था में देखा- चित्त की भूमि क्लॉक वाइज घूम रही थी। मैं उस भूमि को क्लॉक वाइज घूमता हुआ देख रहा था। थोड़ी देर बाद कुछ और स्पष्ट हुआ, वह घूमती हुई भूमि चपटी रिंग के आकार वाली थी। यह रिंग के आकार वाली चपटी भूमि अपनी जगह पर क्लॉक वाइज घूम रही थी। और स्पष्ट होने पर दृश्य में दिखाई दिया- चौड़ा सा कुँआनुमा जगह है। यह चपटी रिंग के आकार की क्लॉक वाइज घूमने वाली भूमि उस कुँआनुमा जगह का ऊपरी किनारा है अर्थात बड़े कुँआनुमा जगह का ऊपरी किनारा क्लॉक वाइज घूम रहा था। उस कुँआनुमा जगह को देखकर मुझे कई वर्ष पूर्व आये अनुभव की याद आ गयी। उसमें भी आकाश में रिंग के आकार वाली जगह में आकाशगंगाएं विद्यमान थी। ये आकाशगंगा वाली जगह (रिंग के आकार वाली जगह) क्लॉक वाइज घूम रही थी। इस रिंग के आकार वाली चपटी जगह के नीचे दूसरी चपटी रिंग के आकार वाली जगह थी। वह जगह एन्टी-क्लॉक वाइज घूम रही थी इस रिंग के आकार वाली जगह के मध्य में गहरा सा चौड़ा कुँआनुमा जगह थी। इस कुँए में नीचे विशेष प्रकार का पदार्थ (गाढ़ा सा) भरा हुआ उबल सा रहा था, आदि।

इस अनुभव में जो आज दिखाई दिया- यह कुँआनुमा जगह चित्त का स्वरूप था। यह स्वरूप बिलकुल वैसा ही था, जब जीव सगुण-ब्रह्म से अलग होकर प्रकृति में भोग के लिए चल देता है। फिर कुँआनुमा जगह में दोनों हाथों को फैला कर पेट के बल कुँए (चित्त) के अन्दर कूद जाता है। आज फिर वही चित्त अनुभव में दिखाई दिया।

अर्थ- इस अनुभव में चित्त का स्वरूप स्पष्ट रूप से दिखाई दिया था। मनुष्य का शरीर रूपी पिण्ड और ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड में कोई अन्तर नहीं है, यह दिखाया गया है। कुछ वर्षों पूर्व अनुभव में दिखाया गया था ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड जिसमें आकाशगंगायें विद्यमान थी और आज के अनुभव में चित्त की घूमती हुई भूमि में कोई अन्तर नहीं था अर्थात शरीर रूपी पिण्ड और ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड में आपस में तारतम्य रहता है। दोनों पिण्डो में कोई अन्तर या भिन्नता नहीं है। ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड बड़े रूप में है तथा शरीर रूपी पिण्ड छोटे रूप में है।

मुझे याद आ रहा है जब पहले कुछ वर्षों पूर्व इसी प्रकार का अनुभव आया था, तब उस अनुभव में जो दोनों प्रकार की चपटी रिंग के आकार वाली प्लेटें क्लॉक वाइज और दूसरी चपटी रिंग आकार वाली प्लेट एन्टी-क्लॉक वाइज घूम रही थी अर्थात दोनों प्लेटें आपस में उल्टी दिशा में घूम रही थी। इन घूमती हुई प्लेटों से विशेष प्रकार की आवाज उत्पन्न हो रही थी। इस आवाज का उदाहरण स्थूल जगत की आवाज से नहीं दे सकता हूँ। फिर भी मैं इस आवाज के विषय में लिखूँगा- आवाज वायु तत्व के घर्षण जैसी थी। ऐसा लग रहा था- मानो घर-घर-घर-घर-घर या घर्र-घर्र-घर्र-घर्र जैसी आवाज आ रही थी।

ऊपर वाली प्लेट जो क्लॉक वाइज घूम रही थी, इसी चपटी प्लेट पर ढेरों आकाशगंगाएं विद्यमान थी। ये आकाशगंगाएं उसी कुँए जैसे क्षेत्र का चक्कर लगा रही थी। ये चक्कर क्लॉक वाइज था। इन आकाशगंगाओं में अनन्त ग्रह विद्यमान थे। इनकी गिनती नहीं की जा सकती है। अपनी पृथ्वी और सूर्य मण्डल कही भी दिखाई नहीं दे रहा था। आकाश गंगाओं की घूमने की गति बहुत ज्यादा थी। आकाश गंगाओं में ग्रह नष्ट होते रहते हैं। ग्रह का मटीरियल टूटकर अन्त में कुँए जैसे क्षेत्र में चला जाता है उसके अन्दर (कुँए जैसे क्षेत्र में) गाढ़ा सफेद जैसा पदार्थ खौलता सा रहता है। इसी गाढ़े पदार्थ से आकाश गंगाओं का निर्माण हुआ है। आकाशगंगाओं के निर्माण वाले मूल पदार्थ में किसी प्रकार का अभाव नहीं होता है।

मैं योगी हूँ इसलिये इस विषय में ज्यादा जानकारी नहीं ली। इसमें मेरी कोई दिलचस्पी भी नहीं है। फिर अपरा-प्रकृति ने कुछ अपने विषय में भेद खोला था आकाशगंगा में जो ग्रह विद्यमान है, उन ग्रहों का आपस में सूक्ष्म रूप से तारतम्य रहता है। आकाशगंगाओं में भारी तमोगुण का व्यापार रहता है उस अवस्था में तमोगुण प्रभावी रहता है। इस विषय में इस जगह पर बस इतना ही लिखना ठीक है। चाहूँ तो इस विषय में और भी लिख सकता हूँ मगर वह मेरा विषय नहीं है।

मेरा और साधकों का सूक्ष्म तारतम्य

यह अनुभव 4 अप्रैल 10:30 बजे आया। मैं ध्यान कर रहा था तब मुझे दिखाई दिया- मैं किसी स्थान पर खड़ा हुआ हूँ। मेरे दाहिने ओर बगल में जोर से विस्फोट जैसी आवाज आयी। मैंने अपने दाहिने ओर मुड़कर देखा जिधर से आवाज सुनाई दी थी। बगल वाला घर विस्फोट से गिर गया था। उसका मलवा इधर-उधर बिखर गया था, अब वहाँ पर चारों ओर सर्वत्र पानी ही पानी दिखाई दे रहा था। मैं सामने का दृश्य देखकर बोला- अरे, उस स्त्री को बचा लूँ, जिसका घर विस्फोट में टूट कर बिखर गया है। वह अपनी जान बचाने के लिये पानी में तैर रही थी। मैंने देखा- उस पानी के अन्दर पानी की धार बह रही थी। वह स्त्री पानी की धार में डूब सी रही थी। उसकी उम्र लगभग 50 वर्ष की होगी। मैं पानी की ऊपरी सतह से लगभग 2 मीटर ऊँचे आकाश में चलकर उस स्त्री के पास गया और उससे बोला- "डरो मत, मैं तुम्हे बचा लूँगा, आप अपना हाथ मुझे पकड़ा दो"। मगर मेरी बात उस स्त्री ने नहीं सुनी क्योंकि वह डूब सी रही थी और तैरती जा रही थी। मैं उस स्त्री से दो मीटर ऊपर खड़ा हुआ था फिर अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाया, ताकि मैं उसे निकाल सकूँ। वह स्त्री मेरी पकड़ में नहीं आयी। बस यही सब कर रहा था कि उस स्त्री का हाथ पकड़ में आ जाये, मगर वह स्त्री पकड़ में नहीं आयी। अब वह स्त्री मुझे नहीं दिखाई दे रही थी, शायद पानी में डूब गयी होगी। मैं पानी से दो मीटर ऊपर आकाश में इधर-उधर विचरण करने लगा।

मैंने देखा- उस पानी में बहुत से लोग अपनी जान बचाने के लिए तैर रहे थे। मैं लोगों की जान बचाने का प्रयास कर रहा था। चारों तरफ सर्वत्र पानी ही पानी था। मुझे लगा- कोई मेरा पैर पकड़ कर पीछे की ओर खींच रहा है। उसी समय मुझे पानी के मध्य में एक मोटा खम्बा (पिलर) दिखाई दिया, वह खम्बा पानी से ऊपर की ओर निकला हुआ था। मैंने उस खम्बे को पकड़ कर, खम्बे के एक तरफ अपना दाहिना पैर रख लिया अर्थात पानी के मध्य में खम्बे को पकड़ कर खम्बे के ऊपर खड़ा हो गया। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मेरा बाँया पैर नीचे की ओर खींच रहा है। मैंने अपने बाँये पैर की ओर देखा तो आश्चर्य चकित हुआ क्योंकि पैर की पिंडली के नीचे नाइलोन के तरह बारीक धागे (मकड़ी के जाले के समान पतले धागे) लिपटे हुए थे, उन सभी धागों का दूसरा सिरा पानी के अन्दर डूबा हुआ था। ऐसा लगता था- पानी के अन्दर इन नाइलोन के धागों में बोझा बँधा हुआ है वही बोझा मुझे पानी के अन्दर खींच रहा है। यह बोझा ही आकाश में स्वतन्त्र विचरण नहीं करने दे रहा है। मैंने उन मजबूत धागों को अपने पैर से छुटाने का प्रयास किया। मैं केवल अपने दाहिने पैर से पिलर पर खड़ा था, दाहिने हाथ से पिलर को पकड़े था, बाँया पैर पिलर से दूर था। बाँये हाथ से बाँये पैर के धागों को छुटाने का बहुत प्रयास किया, मगर धागों को नहीं

छुटा सका, क्योंकि सभी धागे आपस में उलझे हुए थे। सभी धागे नीचे की ओर पानी में खींचने का प्रयास कर रहे थे, मुझे ऐसा लगा- "इन धागों के कारण मेरा पैर कट जायेगा"। फिर मैंने नीचे की ओर पानी के अन्दर देखने का प्रयास किया- इन धागों के दूसरे सिरे पर क्या बँधा हुआ है। तब मैंने पानी के अन्दर देखा- धागों के दूसरे सिरे पर अलग-अलग धागों में साधक जुड़े हुए थे। ये वही साधक थे जिनका मैं मार्गदर्शन कर रहा हूँ या कर चुका हूँ। ये सभी साधक शिविरों में आये थे। मुझे समझते देर नहीं लगी कि इन सभी साधकों का सूक्ष्म तारतम्य मेरे बाँये पैर की पिंडली के नीचे नाइलोन के पतले धागे के समान सूक्ष्म धागों जैसे से बँधें हुए थे। साधक पानी के अन्दर क्रिया कलाप (व्यवहार) कर रहे थे। इन्ही साधकों का बोझा हमारे बाँये पैर को नीचे की ओर खींच रहे थे। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया और मेरी आँखे भी खुल गयी।

अर्थ- सर्वत्र चारों ओर पानी ही पानी है- यह पानी संसार का स्वरूप है। जो स्त्री पानी में तैर रही है, मैं उसे बचाने का प्रयास कर रहा हूँ। वह बाहर की ओर निकलना नहीं चाहती है फिर वह पानी की धार में बहकर अदृश्य हो गयी। इसका अर्थ है- मेरे द्वारा उस स्त्री को योग सिखाया गया। मैं उसे संसार से निकालना चाहता था मगर वह संसार से निकलना नहीं चाहती थी। फिर वह संसार में डूब गयी, शायद उसे संसार अच्छा लगता होगा। मेरे बहुत कहने पर भी उसने मेरी बात नहीं मानी। ऐसा उसके साथ भविष्य में अवश्य होगा।

जिन साधकों को मैंने योग सिखाया अथवा सिखा रहा हूँ, उन्ही साधकों का सूक्ष्म तारतम्य हमारे पैर की पिण्डली के नीचे भाग से जुड़ा हुआ है। साधक संसार में व्यवहार कर रहे है, मैं उन्हें योग के माध्यम से जीने का तरीका सिखा रहा हूँ मगर वह संसार में लिप्त है, उसका प्रभाव मुझ पर पड़ रहा है। वही अनुभूति मुझे हो रही है कि मेरा पैर नीचे की ओर संसार में खींचा जा रहा है। जितने साधकों को योग सिखाया है, वे सभी साधक अज्ञानता वश लोभ, मोह, इर्ष्या, द्वेष, लालच से आच्छादित संसार में व्यवहार कर रहे है। मैंने इन साधकों पर शक्तिपात किया, कुण्डलिनी ऊर्ध्व की, चक्र खोले, अन्य प्रकार की आध्यात्मिक सहायता की, इसी कारण सूक्ष्म तारतम्य के द्वारा उन साधकों का मुझसे जुड़ाव है। साधकों का तारतम्य मेरे पैर के निचले भाग से है, इसीलिये मेरे आध्यात्मिक मार्ग में ये अवरोध के रूप में है। भविष्य में ये तारतम्य मुझे तोड़ना पड़ेगा, ताकि मेरा मार्ग प्रशस्त हो। ये तारतम्य मेरे लिये बन्धन जैसा है, जैसा कि अनुभव में दिखाई दिया है। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया था। उस समय मेरा और साधकों का आपस का तारतम्य टूटा नहीं था बल्कि जुड़ा हुआ था।

चित्त की भूमि पर एन्टी-क्लॉक वाइज गति

यह अनुभव 6 अप्रैल को आया। मैंने देखा- सामने खड़े आकार में चित्त की भूमि एन्टी-क्लॉक वाइज घूम रही थी। उस समय मैं सोच रहा था- अबकी बार भूमि खड़े आकार में घूम रही है, वह भी एन्टी-क्लॉक वाइज घूम रही है। इस प्रकार घूमने का अर्थ होता है- भूमि प्रलय उन्मुख घूम रही है, क्योंकि बहुत समय से चित्त की भूमि क्लॉक-वाइज घूमती हुई दिखाई दे रही थी। ऐसा सदैव नहीं, कभी-कभी होता था तथा चित्त की भूमि सदैव पड़े आकार में सामने थोड़ा नीचे की ओर दिखाई देती थी।

अर्थ- एन्टी-क्लॉक वाइज भूमि घूमने का अर्थ है- चित्त की भूमि प्रलय उन्मुख घूम रही है अर्थात चित्त का बहाव प्रलय उन्मुख हो गया है।

मेरे आदर्श ब्रह्मर्षि विश्वामित्र जी

यह जानकारी मुझे 9 अप्रैल को दी गयी। सुबह 4 बजे ध्यानावस्था में मैंने अपने आदर्श से पूछा- "प्रभु, बहुत समय हो गया, मैंने आपसे बातें नहीं की है। क्या कृपया मुझे कुछ मार्गदर्शन करोगे"? मेरे आदर्श की आवाज आयी- "गहरे ध्यान का अभ्यास करने का प्रयास करो, लगभग एक माह बाद आपको कुछ प्राप्त होगा। वह जो प्राप्त होगा आपके शरीर के अन्दर समा जायेगा, इससे आपको लाभ मिलेगा।" फिर आवाज आनी बंद हो गयी और मैं गहरे ध्यान में चला गया। बहुत दिनों बाद आज मेरे आदर्श से मेरी बात हुई।

अर्थ- साधकों, बहुत से साधकों को मेरे आदर्श के विषय में जानकारी है कि मेरे आदर्श कौन है। मैं अपने आदर्श के कहने पर उनके अनुसार ही अनुसरण करता हूँ। जब मुझे कोई आध्यात्मिक परेशानी या अवरोध आता है तब मैं अपने आदर्श को याद करता हूँ, फिर मेरे आदर्श मेरे अवरोधों को दूर करने का तरीका बता देते है। मेरे आदर्श ब्रह्मर्षि विश्वामित्र जी है।

पाँच फनों वाले शेषनाग जी

यह अनुभव 17 अप्रैल को आया। हल्का सा प्रकाश विद्यमान है, मैं हृदयगुफा के अन्दर हूँ। इसी हल्के प्रकाश में कई फनों वाला नाग अपने फन ऊपर की ओर उठाये हुए दिखाई दिया, उसका मुँह मेरी ओर है। ऐसा लग रहा है मानो प्रकाश का बना हुआ है, इस नाग के पाँच मुँह (फन) है। वह मेरी ओर मुझे देख रहा है। यह दृश्य कुछ क्षणों के लिये ही दिखाई दिया।

अर्थ- यह अनुभव अंतःकरण में स्थित हृदयगुफा के अन्दर दिखाई दिया। इस अनुभव से पहले हृदयगुफा के अन्दर कुछ अनुभव दिखाई दिये थे। इसी हृदयगुफा के अन्दर श्री हरि और शेषनाग जी के दर्शन हुए थे। अबकी बार शेषनाग जी का स्वरूप प्रकाश का बना हुआ दिखाई दे रहा था।

आवश्यक जानकारी

प्रिय पाठको, मैं पहले भी लिख चुका हूँ- जीव को मोक्ष की प्राप्ति तभी होती है जब उसे वास्तविक स्वरूप का भान हो जाता है। ऐसा तभी होगा जब चित्त इतना शुद्ध हो जाये कि उसमें (चित्त में) अपने वास्तविक स्वरूप का दर्शन हो जाय। ऐसा तभी होगा जब जीव और चित्त की शुद्धि समान रूप से हो जायेगी। चित्त को इतना शुद्ध होने के लिये, स्थूल से लेकर चित्त तक फिर चित्त से लेकर स्थूल तक समान शुद्धि हो जाये। इसके लिये अभ्यासी की बार-बार आरोही और अवरोही क्रम की अवस्था उपस्थित हो जायेगी। ऐसी अवस्था में कभी उच्चावस्था तो कभी निम्नावस्था उपस्थित हो जायेगी ताकि स्थूल से लेकर चित्त तक और चित्त से लेकर स्थूल तक समान शुद्धि हो पाये। तभी अनुभवों में कभी उच्चावस्था के अनुभव आते है तो कुछ दिनों बाद निम्नावस्था के अनुभव आने लगते है। इस प्रक्रिया में समान शुद्धि धीरे-धीरे होने लगती है। अब फिर हमारी निम्नावस्था उपस्थित हो गयी है।

शिवछिद्र

यह अनुभव 18 अप्रैल को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं प्रकाशमान आकाश में बैठा हुआ हूँ। मैंने अपनी दृष्टि ऊपर की ओर की, तब मुझे दिखाई दिया- ऊपर की

ओर सूर्य के आकार के समान एक छिद्र है, मैं उस छिद्र को बड़े गौरपूर्वक देख रहा हूँ। यह एक पतली परत द्वारा ढका हुआ है। यह परत माँस जैसी वस्तु से बनी पतली मजबूत परत है। मैं उस परत को गौरपूर्वक गहराई से देख रहा हूँ, तब ऐसा लग रहा था कि इस परत में कुछ हलचल सी हो रही है। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में छिद्र बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रहा है, अभी तक इस छिद्र के उस पार का आकाश दिखाई देता था। छिद्र के उस पार का आकाश निर्मल और स्वच्छ था। अबकी बार छिद्र को नजदीक से देखा तो उस पार का दृश्य बिलकुल दिखाई नहीं दिया, बल्कि छिद्र पूर्ण रूप से बन्द था। ऐसा लग रहा था कि यह छिद्र चिकने माँस की मजबूत सी परत से ढका हुआ है। अभी और अभ्यास करने पर इस परत के विषय में और जानकारी मिलेगी। इतना अवश्य था उस बन्द परत में कुछ हलचल सी हो रही थी।

सूक्ष्म शरीर और मानव कंकाल

यह अनुभव 20 अप्रैल को आया था। मंत्र जाप करते समय मैंने देखा- जैसे-जैसे मैं मंत्र बोलता था उसी समय पैरों के पंजों के अग्रभाग अर्थात उँगलियों के क्षेत्र में माँसनुमा तमोगुण खिंचता हुआ (नुचता हुआ) पीछे की ओर आ रहा है। पैरों की उँगलियों का माँस खिंचता हुआ पीछे की ओर (पिंडलियों की ओर) चला गया। अब उँगलियों की जगह पतली-पतली बारीक सी हड्डियाँ दिखाई देने लगी। इसी प्रकार मंत्र के प्रभाव से धीरे-धीरे तमोगुण की परत (माँस जैसी) उखड़ती हुई पैर की पिंडलियों की ओर फिर कमर की ओर जा रही थी। मैं मंत्र जाप करता जा रहा था। कुछ समय बाद शरीर की तमोगुणी परत निकल गयी, अब सिर्फ मानव कंकाल रह गया था। यह सब कुछ अति सूक्ष्म रूप से हो रहा था। मुझे ऐसा लग रहा था, मानो मेरा शरीर हल्का होता जा रहा था।

अर्थ- मुझे अनुभव में दिखाई दिया मंत्र के प्रभाव से मेरे शरीर की ऊपरी परत उखड़ रही है। परन्तु ये सब हलचल मेरे चित्त पर हो रही थी अर्थात मेरा चित्त शुद्ध हो रहा था।

मानव कंकाल का तड़फना

ये अनुभव 20 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मुझे किसी मानव कंकाल के पैर के पंजे दिखाई दे रहे है। मैंने पैर के पंजों से ऊपर की ओर को कंकाल को देखना शुरू किया। उसके पैरों की हड्डियाँ फड़फड़ा रही थी। अब मैंने कमर से ऊपर सीने और सिर की ओर को देखा। कंकाल की छाती की कुछ हड्डियाँ टूटी सी दिखाई दे रही थी। कंकाल बुरी तरह से तड़फ रहा था। उसे देखकर मैं बोला- "यह तो मर रहा है, अब कुछ देर में मर जायेगा"। कुछ क्षणों तक उस मानव कंकाल को देखता रहा, उसे तड़फता देखकर मुझे दया सी आयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया। अनुभव समाप्त होने के बाद मैं सोच में पड़ गया, क्योंकि मुझे मालूम था यह कंकाल किसका है।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला कंकाल मेरा ही कंकाल है, यह कंकाल सूक्ष्म रूप वाला है। सूक्ष्म शरीर भी पंच भूतों से (सूक्ष्म पंच भूतों से) निर्मित होता है। सूक्ष्म पंचभूतों में भी तमोगुण विद्यमान रहता है। इसका प्रभाव हमारे ही चित्त पर पड़ेगा। इस अनुभव में मानव कंकाल का मरना दर्शा रहा है कि भविष्य में हमारा सूक्ष्म शरीर भी नष्ट हो जायेगा। वर्तमान में निम्नावस्था में हमारी शुद्धता चल रही है। यह आरोही क्रम के अंतर्गत शुद्धिकरण हो रहा है। अगला अनुभव हमारी उच्चावस्था का होगा। भविष्य में उच्चावस्था के अनुभव के बाद निम्नावस्था के अनुभव अवरोही क्रम में आयेंगे।

मैं शेषनाग ही हूँ

साधकों, कुछ समय से पाँच फनों वाला नाग अनुभव में अक्सर देखा करता था। यह नाग हल्का सा सफेद रंग का और तेजस्वी होता था तथा उसके मुँह की बनावट थोड़ी सी भिन्न होती है। उसका शरीर विशाल आकार वाला होता था तथा उसके फन लगभग 2 मीटर ऊँचे उठे रहते थे। मैं सोचा करता था ऐसा नाग भूलोक पर नहीं होता है। एक बार अनुभव में जनवरी 2022 में भगवान श्री हरि जी के दर्शन हुए, तब भगवान श्री हरि जी पाँच फनों वाले विशालकाय शरीर वाले नाग की शैया बनाए एक करवट के बल लेटे हुए थे। तब मैं समझ गया यह पाँच फनों वाले नाग शेषनाग जी ही है।

अब मेरे मन के अन्दर विचार आया- शेषनाग जी तो बहुत फनों वाले है, ऐसा मैंने पुस्तकों में पढ़ा हुआ है और चित्रों में भी देखा है, फिर ये मुझे पाँच फनों वाले ही क्यों दिखाई देते है? 20 अप्रैल को

ध्यानावस्था में मुझे शेषनाग जी के दर्शन हो गये। मैं ध्यान पर बैठा ही था तभी नाग का एक विशाल फन हवा में लहराता हुआ मेरे मुँह के सामने नजदीक दिखाई देने लगा। इस दृश्य को देखकर मैं चौंक सा गया, क्योंकि विशालकाय नाग का फन मुँह के सामने ही था। तभी मुझे सामने की ओर दिखाई दिया- मेरे सामने थोड़ी दूरी पर ढेरों फनों वाला नाग उपस्थित है, इसके बड़े-बड़े फन हवा में लहरा रहे हैं, उसी ढेरों फनों वाले नाग के पास से आवाज आयी- "मैं ही शेषनाग हूँ, मुझे देखो, मेरे ढेरों फनों को देखो।" पहले मैं थोड़ा सा हड़बड़ाया सा, फिर मैं बोला- "जी प्रभू", फिर आवाज आयी- "मैं शेषनाग ही हूँ, मैं तुम्हें पाँच मुँह वाला दिखाई देता था।" अब मैं शेषनाग को बड़े प्यार से देख कर मुस्कुरा रहा था। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अबकी बार शेषनाग जी कई फनों वाले दिखाई दिये। मगर अबकी बार शेषनाग जी के शरीर का रंग सफेद नहीं था, बल्कि अबकी बार प्रकाश से बने हुए थे। सच तो यह है शेषनाग जी कई मुँह वाले (कई फनों वाले) है। इसीलिए इनका एक नाम अनंत भी है।

हृदयगुफा के अन्दर शिवलिंग और पिलर

यह अनुभव 24 अप्रैल को रात्रि 11 बजे आया। मुझे अनुभव में पहले हृदयगुफा दिखाई दी। कुछ क्षणों बाद उसी हृदयगुफा के अन्दर जो आखिरी क्षेत्र में ऊँचा उठा हुआ क्षेत्र है, उसी के ऊपर छोटा सा शिवलिंग दिखाई दिया, उसी शिवलिंग के बगल में हल्का नीले रंग का चमकीला सा पिलर जैसा दिखाई दिया। पिलर की मोटाई लगभग 2 ½ फीट रही होगी और लम्बाई लगभग 2 फीट रही होगी। अथवा ऐसा समझ सकते है- वृक्ष का मोटा तना खड़े आकार में विद्यमान है। इससे पहले यही पिलर-सा 11 अप्रैल को अनुभव में दिखाई दिया था। अबकी बार अन्तर यह था- पिलर की मोटाई और लम्बाई पहले की अपेक्षा कम है, थोड़ा सा रंग में भी अन्तर था। इस दृश्य को देखते ही मैं समझ गया था अबकी बार पिलर का साइज और रंग में अन्तर था। पहले पिलर वाला अनुभव नहीं लिखा है।

अर्थ- यह अनुभव हृदयगुफा के अन्दर आया था, हृदयगुफा के अन्दर जो ऊँचा सा स्थान है, उसी स्थान पर यह दृश्य दिखाई दिया था। शिवलिंग व पिलर के साइज (मोटाई और ऊँचाई) में 11 अप्रैल के अनुभव की अपेक्षा छोटा स्वरूप वाला है। ऐसा इस कारण हुआ है इसी ऊँचे स्थान पर भगवान श्री हरि जी और शेषनाग जी का दर्शन हुआ था। इस अनुभव में मेरा सिर सुदर्शन चक्र द्वारा काट दिया गया था।

जिसके प्रभाव से अहम् भाव काफी कमजोर हो गया है। यह हृदयगुफा अध्यात्म के अनुसार हृदय में स्थित (स्थूल हृदय नहीं) सूक्ष्म स्थान है जहाँ आत्मा और ईश्वर का निवास माना जाता है। यह चेतना का केन्द्र है जो ध्यान और अंतर्ज्ञान के माध्यम से परमात्मा का अनुभव कराता है।

संसार का स्वरूप

यह जानकारी मुझे 26 अप्रैल को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझे बताया गया- "यह संसार दु:ख का दलदल है, इस दलदल से मुझे निकलना है। जो व्यक्ति इस दु:ख रूपी दलदल से निकल जाता है उसे आगे चलकर परम शान्ति की प्राप्ति होती है। तुम्हें परम शान्ति की प्राप्ति कर उसी में स्थित होना है"।

दुख अस्थायी

यह जानकारी भी 26 अप्रैल को दी गयी। ध्यानावस्था में मुझे बताया गया- "दु:ख कभी भी स्थायी नहीं होता है, वह अस्थायी है, इसलिए दु:ख को त्याग देना चाहिये, अथवा भोग लेना चाहिये। कभी भी दु:ख का चिन्तन नहीं करना चाहिए, क्योंकि दु:ख चिन्तन का विषय नहीं है, चिन्तन सिर्फ ईश्वर का करना चाहिये"।

संसार को समझ लिया है

आज 27 अप्रैल को ध्यानावस्था में कहा गया- "संसार को तुमने अच्छी तरह से देख लिया है और समझ लिया है, अब ईश्वर के मार्ग में आगे की ओर बढ़ो। ईश्वर के मार्ग में दु:ख नहीं होता है, क्योंकि सिर्फ ईश्वर का चिन्तन किया जाता है और शान्त रहा जाता है"।

चित्त की शुद्धता

यह अनुभव 29 अप्रैल को दोपहर 3-4 बजे आया। मैं मंत्र जाप कर रहा था, तब मुझे दिखाई दिया- चित्त की भूमि एन्टी-क्लॉक वाइज गति कर रही थी। फिर कुछ क्षणों बाद वह भूमि भँवरनुमा आकार वाली बन गयी। इस भँवरनुमा आकृति के मध्य में छोटा सा गड्ढा बन गया। मंत्र के प्रभाव से भूमि में विद्यमान तमोगुणी मिट्टी अदृश्य होने लगी। जिस जगह पर मिट्टी अदृश्य होती थी, वहाँ पर निर्मल नीला आकाश दिखाई देने लगता था। धीरे-धीरे यह प्रक्रिया बराबर हो रही थी। अब मुझे नीचे की ओर आकाश दिखाई देने लगा। फिर नीचे और साइडों की ओर भी आकाश दिखाई देने लगा, यही प्रक्रिया बराबर हो रही थी। फिर कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में चित्त की शुद्धता तेजी से हो रही थी अर्थात चित्त की भूमि नष्ट हो रही थी। जैसा ऊपर की ओर आकाश दिखाई दे रहा था, इसी प्रकार नीचे की ओर आकाश दिखाई दे रहा था। इस अनुभव में चित्त की भूमि नष्ट हो रही थी। भूमि के स्थान पर आकाश प्रकट हो रहा था अर्थात चित्त की भूमि नष्ट होने के बाद सर्वत्र चित्ताकाश का दर्शन होने लगा।

सिर की बाहरी दो परतें टूटकर उखड़ने लगी

यह अनुभव एक मई को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- मुझे मानव सिर का ऊपरी भाग दिखाई देने लगा, मैं गौरपूर्वक उस मानव सिर को देख रहा था। वह मानव सिर सामने थोड़ा नीचे की ओर था। मैंने देखा- कुछ क्षणों बाद सिर का ऊपरी भाग चटकने लगा। धीरे-धीरे सिर की ऊपरी परत चटकती जा रही थी। कुछ क्षणों बाद दिखाई दिया- सिर की ऊपरी परत, अण्डे की ऊपरी परत के समान पतली और कठोर है। जिस प्रकार उबले अण्डे की ऊपरी परत चटका कर अलग कर दी जाती है, उसी प्रकार वह पतली सी कठोर परत चटक-चटक कर अलग होती जा रही थी। कुछ समय बाद अन्दर की एक और परत भी चटकने लगी और अलग होती जा रही थी। अब मैं देख रहा था- सिर की दो परतें क्रमशः चटक-चटक कर अलग होती जा रही थी। फिर सिर के निचले भाग पर दोनों परतें क्रमशः चटक-चटक कर अलग होने लगी। इन दोनों परतों के अन्दर लुचलुचा-सा माँस दिखाई देने लगा। जैसे लीची का ऊपरी छिलका हटाने के बाद अन्दर का गूदा लुचलुचा सा दिखाई देता है। ठीक इसी प्रकार मानव सिर के

अन्दर का लुचलुचा माँस-सा दिखाई देने लगा। यही प्रक्रिया थोड़ी देर तक देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला मानव सिर मेरा ही सिर है। अनुभव में सिर की बाहरी दो परतें (दो आवरण) अभ्यास के द्वारा अलग हो गयी। अर्थात चित्त पर स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर से सम्बंधित मलिनता रूपी आवरण अलग हो रहे थे। एक प्रकार से यह चित्त की ही शुद्धि है। स्थूल शरीर की शुद्धि और सूक्ष्म शरीर की शुद्धि का प्रभाव चित्त पर ही पड़ता है क्योंकि चित्त ही बहिर्मुखी होकर सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर बनता है। इसलिये सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर की शुद्धता का प्रभाव चित्त पर पड़ता है। इस अनुभव की शुद्धता का प्रभाव चित्त पर पड़ेगा। पहले की अपेक्षा चित्त पर अधिक शुद्धता हो जायेगी। इस शुद्धता से चित्त की निर्मलता और व्यापकता भी बढ़ेगी।

कलियुग के सिर पर चार स्वर्ण कलश

यह अनुभव 1 मई सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने की ओर से बहुत ऊँचे कद वाला एक पुरुष चला आ रहा है। मैं गौरपूर्वक उस पुरुष को देख रहा था, उसके सिर पर बहुत बड़े आकार का कुछ रखा हुआ दिखाई दे रहा था। जब पुरुष मेरे कुछ और नजदीक आया, तब स्पष्ट हुआ, लगभग 10 फुट ऊँचा पुरुष अपने सिर पर चमचमाते हुए सोने का बहुत बड़ा थाल (परात) रखे हुए था। उस परात (थाली का बड़ा रूप) में चार स्वर्ण कलश बड़े-बड़े रखे थे। परात और कलशों का सोना हल्के प्रकाश से चमचमा रहा था अर्थात परात और कलश दिव्यता को प्राप्त थे। उन पात्रों से हल्का-हल्का प्रकाश सा निकल रहा था। जब वह पुरुष नजदीक आ गया, पहले मेरी दृष्टि उस पुरुष के सिर पर रखी परात (थाली का बड़ा रूप) पर रखे चारों स्वर्ण कलशों पर गयी। चारों स्वर्ण कलश एक समान बने हुए थे, उनकी बनावट में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं था।

अब पुरुष हमारे और नजदीक आ गया। मैंने उस पुरुष से पूछा- आप कौन है? उत्तर में वह पुरुष बोला- "मैं कलियुग हूँ।" फिर मुझे लगा जैसे यह कलियुग मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश कर जायेगा। मैं उस कलियुग से बोला- "आप मुझसे दूर रहिये।" फिर कलियुग मुझसे बोला- "मैं आपके शरीर में प्रवेश करूँगा, क्योंकि वर्तमान समय में सम्पूर्ण कर्म मेरे द्वारा ही किये जाते है। मुझे अपने अन्दर प्रवेश करने से न रोके।" फिर वह मेरे कमर से निचले भाग में प्रवेश कर गया। मेरे शरीर के अन्दर प्रवेश करने का तरीका

बड़ा विचित्र सा था। कलियुग अपना शरीर थोड़ा तिरछा करके पैरों में प्रवेश करने लगा। वह पूर्ण रूप से प्रवेश नहीं कर पाया था तभी मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- कलियुग का शरीर बहुत ही ऊँचा लगभग 10 फीट का रहा होगा। उसके शरीर का रंग काला सा था, उसने विचित्र से कपड़े पहने हुए थे, उसके सिर पर सोने से बनी हुई परात और परात पर चार कलश रखे थे। परात और कलश बहुत सुन्दर थे, उसका सोना बहुत ही चमक रहा था, सोने से प्रकाश निकल रहा था। ऐसा सोना भूलोक पर नहीं होता है, उस सोने में दिव्यता दिखाई दे रही थी। वह मेरे शरीर में प्रवेश कर गया है, इसका प्रभाव हमारे शरीर में क्या पड़ेगा, मैं नहीं समझ पा रहा हूँ। वह मेरे शरीर में कमर से निचले भाग में प्रवेश कर रहा था। वह पूर्ण रूप से प्रवेश नहीं कर पाया था, तभी अनुभव समाप्त हो गया था। कलियुग के शरीर की पोजीशन से लगता था कि वह मेरे शरीर में कमर के निचले भाग में ही प्रवेश करेगा। अब यह भी प्रश्न उठता है- यह कमर से निचले भाग में क्यों प्रवेश कर रहा था? उसने मेरे सम्पूर्ण शरीर में सीधे प्रवेश क्यों नहीं किया? इस विषय में शायद भविष्य में कुछ जानकारी मिल सके।

सनातन धर्म के अनुसार चार युग होते हैं:-1- सतयुग, 2- त्रेता युग, 3- द्वापर युग, 4- कलियुग। वर्तमान समय में कलियुग चल रहा है। दूसरे शब्दों में कहे तो वर्तमान समय में कलियुग ही सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी है। कलियुग में अधर्म बहुत होने के कारण इस युग को बहुत खराब कहते हैं क्योंकि ज्यादातर मनुष्य अधर्म को अपनाकर ही शरीर में व्यवहार करते रहते है। मैं ये कहूँगा- कलियुग योगियों के लिए सबसे अच्छा युग है, योग के अभ्यासी के कर्म शीघ्र नष्ट होने लगते है। चारों युग ब्रह्म के ही स्वरूप है इसलिए कलियुग खराब कैसे हो सकता है? इस अनुभव में स्वयं कलियुग मेरे अन्दर प्रवेश कर गया। उसके सिर पर चार स्वर्ण कलश रखे थे अर्थात् वह अपने साथ चार स्वर्ण कलश भी लाया था। ये चारो स्वर्ण कलश मेरे अन्दर ही प्रवेश कर गये है। मैं इन चारों स्वर्ण कलशों को धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का प्रतीक मानता हूँ।

भगवान नारायण और शेषनाग के विशाल स्वरूप के दर्शन

ये अनुभव 4 मई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं आँखे बन्द करके गहराई में जाने की कोशिश कर रहा था, तभी मुझे सामने की ओर दिखाई दिया- आकाश में तीव्रता के साथ भगवान शेषनाग जी का स्वरूप प्रकट हो गया, उनके प्रकट होते ही वायु की विशेष प्रकार की आवाज सुनाई दी। फिर शेषनाग जी

ऊपर की ओर फन उठाकर खड़े हो गये। शेषनाग के बहुत मुँह (फन) थे। उनके मुँह की गिनती नहीं की जा सकती थी, शेषनाग के फन की ऊँचाई 15-20 फीट रही होगी। उनके सभी फन एक-दो बार हवा में हल्के से लहराये। फिर शेषनाग के फनों के नीचे भगवान नारायण जी प्रकट हो गये, उनके शरीर की ऊँचाई 15 फीट से अधिक रही होगी। भगवान नारायण शेषनाग के फनों के नीचे खड़े हुए थे। उनके दाहिने हाथ में सुदर्शन चक्र था। सुदर्शन चक्र को वह ऊपर की ओर उठाए हुए थे। उनका शरीर हल्का चमकीला नीला था। उनकी पोजीशन देखकर लगता था जैसे वह कुछ करने की मुद्रा में थे। भगवान नारायण और शेषनाग जी निर्मल स्वच्छ आकाश में विद्यमान थे। उन दोनों का स्वरूप देखकर (भगवान नारायण और शेषनाग जी) मैं बहुत-बहुत प्रसन्न हो रहा था। सम्पूर्ण दृश्य मेरे सामने थोड़ा ऊपर की ओर दिखाई दे रहा था। तभी उसी तरफ की ओर से आवाज आयी- "तुम्हारे पेड़ की (अध्यात्म रूपी पेड़) की छाँव में सभी साधक बैठे हुए है। तुम ही उन्हें यहाँ तक लाये हो, तुमने ही इन्हें इस मार्ग में आगे चलना सिखाया है। अब अपने पेड़ की छाँव में इन्हें बैठे रहने दो। भविष्य में ये कभी न कभी मेरी ओर चलकर मेरे पास आयेंगे।" उत्तर में मैं बोला- "जी प्रभु, जैसी आपकी इच्छा"। फिर मैं कुछ नहीं बोला। उन दोनों के स्वरुपों का दर्शन कर रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में अत्यन्त स्वच्छ आकाश में ऊपर की ओर फन उठाए भगवान शेषनाग जी का स्वरूप दिखाई दे रहा था। इतने विशाल आकार वाले स्वरूप में मैंने कभी नहीं देखा था। शेषनाग जी के फनों की गिनती बहुत ज्यादा थी, मैं उनके फनों को गिन नहीं सकता था। मैं नहीं बता सकता हूँ कि उनके कितने फन थे? उनके फनों की ऊँचाई दो मंजिल के इमारत के समान थी। शेषनाग जी प्रकट होने के बाद उनके फन एक या दो बार धीरे से ऊपर की ओर लहराये थे। उसी समय वेग पूर्वक भगवान नारायण जी का प्राकट्य हुआ। भगवान नारायण शेषनाग जी के फनों के नीचे खड़े हुए थे। भगवान नारायण जी की खड़े होने की मुद्रा बड़ी विचित्र थी। उनके दाहिने हाथ में सुदर्शन चक्र था। वह सुदर्शन चक्र को ऊपर की ओर को उठाए हुए थे। उनका शरीर चमकीला हल्के नीले रंग का था, सिर पर मुकुट भी था। भगवान नारायण जी का इतना बड़ा शरीर मैंने कभी नहीं देखा था, इसीलिये अचम्भित हो रहा था। इन दोनों का निचले शरीर का क्षेत्र नहीं देख पा रहा था क्योंकि शरीर का निचला भाग आकाश में समाया था।

जो आवाज मुझे सुनाई दे रही थी, वह आवाज उन्हीं की ओर से आ रही थी, मगर वह बोल नहीं रहे थे। आवाज अपने आप प्रकट हो रही थी।

तेजस्वी मणि

यह अनुभव 6 मई को ध्यानावस्था में आया। ध्यान करते समय मैंने देखा- मेरी दृष्टि नीचे की ओर थी। नीचे की ओर मुझे हल्के नीले रंग का चमकदार आकाश दिखाई दे रहा था। मैंने देखा- बहुत नीचे गहराई में एक छोटे आकार में अत्यन्त तेजस्वी मणि चमक रही थी। उसकी प्रकाश किरणें बहुत तेजस्वी थी, उसकी तेजस्वी किरणें मेरे पास तक आ रही थी। उसकी प्रकाश किरणें चकाचौंध कर देने वाली थी। मैं अपने दाहिने हाथ की तर्जनी उँगली (अँगूठे के पास वाली उँगली) से इशारा करके बहुत गहराई में विद्यमान तेजस्वी मणि को इधर-उधर एन्टी-क्लॉक वाइज घुमा रहा था, ताकि उस तेजस्वी मणि का प्रकाश का प्रभाव सम्पूर्ण क्षेत्र में विद्यमान हो जाए। मुझे सिर्फ नीचे की ओर हल्का नीला प्रकाशित आकाश दिखाई दे रहा था। उस आकाश की गहराई में एक मणि विद्यमान थी, उसकी तेजस्विता आँखों को चकाचौंध कर रही थी। जब मैं हाथ की उँगली से इशारे करता था, तब इतनी गहराई में विद्यमान तेजस्वी मणि हाथ की उँगली के इशारे के अनुसार इधर-उधर हो रही थी।

अर्थ- अनुभव में नीचे की ओर भी चित्ताकाश दिखाई दे रहा था, उसी चित्ताकाश की गहराई में एक मणि चमक रही थी। उस मणि का प्रभाव चित्त की गहराई में सर्वत्र पड़ रहा था, ताकि चित्त शीघ्रता से निर्मल होने लगे। मैं अनुभव में उँगली के इशारे से चित्ताकाश में मणि का प्रकाश फैला रहा था।

भगवान श्री राम जी का दर्शन

यह अनुभव 11 मई को रात्रि 10 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने अपने सामने की ओर आकाश में सोने की बनी हुई बहुत ऊँची मीनारनुमा इमारत जैसी देखी। इस मीनारनुमा इमारत के अन्दर कई मंजिले थी, उसकी मोटी-मोटी दीवारें चमकते हुए सोने से बनी हुई थी। मैं भी आकाश में विद्यमान था। सर्वत्र चारों ओर आकाश ही आकाश था। मीनारनुमा इमारत का निचला भाग आकाश में समाया हुआ था, ऊपरी भाग दिखाई दे रहा था। ऊपरी भाग से नीचे के भाग में मुझे भगवान श्री राम जी खड़े हुए दिखाई दिये। उनका शरीर बलिष्ट जैसा था। वे राजाओं की वेशभूषा में खड़े हुए थे। उन्होने तीर-कमान धारण कर रखा था तथा हमारी ओर देख रहे थे। मेरी दृष्टि भी प्रभु श्री राम की ओर टिकी हुई थी। भगवान श्री राम जी बहुत सुन्दर दिखाई दे रहे थे। उस इमारत की दीवारें सुनहरे प्रकाश से चमक रही थी। कुछ क्षणों तक मैं प्रभु श्री

राम जी के सुन्दर स्वरूप को निहारता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया। भगवान श्री राम जी जिस मंजिल में खड़े हुए थे, वह पाँचवीं मंजिल थी। उस इमारत में कुल सात मंजिले थी।

अर्थ- यह अनुभव चित्ताकाश में आया था। मैं भी आकाश में विद्यमान था, इमारत और भगवान श्री राम जी भी आकाश में ही विद्यमान थे। अनुभव में सोने से बनी हुई ऊँची इमारत की दीवारें सोने से बनी हुई नक्कासीदार थी। वह मीनार ऐसी बनी हुई थी कि उसके अन्दर का दृश्य भी दिखाई दे रहा था। श्री राम जी सबसे ऊँची मंजिल से निचली मंजिल में (पाँचवीं मंजिल में) खड़े हुए थे। जिस जगह पर श्री राम जी खड़े हुए थे उस मंजिल के अन्दर का दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मेरे और श्री राम के बीच दीवार नहीं थी। भगवान श्री राम जी राजाओं की भाँति सोने के आभूषण पहने हुए थे। उन्होने धनुष-बाण को धारण कर रखा था। ऐसा लग रहा था मानो उनका दर्शन करता रहूँ।

सोने की बनी हुई नक्कासीदार सात मंजिल वाली इमारत ज्ञान के सात पायदान वाली इमारत है। भगवान श्री राम जी का दर्शन ज्ञान की पाँचवें पायदान वाली मंजिल पर हुआ था। अनुभव में स्पष्ट दिखाई दे रहा था भगवान श्री राम जी का स्वरूप दिव्यता से युक्त था, उनकी वेशभूषा राजाओं के भाँति थी। वैसे भगवान श्री राम जी भुलोक पर अयोध्या के राजा थे।

शिवछिद्र और शेषनाग जी

यह अनुभव 11 मई को आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं आकाश में विद्यमान हूँ, मैंने अपने बाँये ओर को दृष्टि की, तो मुझसे थोड़ी दूरी पर बहुत बड़ा सा शिवछिद्र जिसका व्यास 1-1½ मीटर लगभग रहा होगा दिखाई दिया। मैंने शिवछिद्र के उस पार का क्षेत्र देखने का प्रयास किया। फिर मुझे उस पार का दृश्य दिखाई देने लगा। शिवछिद्र के उस पार अत्यन्त विशाल स्वरूप में भगवान शेषनाग जी दिखाई देने लगे। उनके अनन्त मुँह (फन) थे, उनके फनों की गिनती नहीं की जा सकती थी। शेषनाग जी का शरीर पानी के ऊपर अण्डाकार रूप में कुण्डली मारे हुए था। उनके अनन्त मुँह (फन) आकाश में लहरा रहे थे। कुछ समय बाद वह शान्त हो गये। चारों तरफ पानी ही पानी भरा हुआ था। इस अनन्त जलाशय की कोई सीमाऐं नहीं दिखाई दे रही थी। उस अनन्त जलाशय में लहरें उठ रही थी। हमारी दृष्टि शेषनाग पर स्थिर हो गयी। वह विशाल स्वरूप में अपने फन ऊपर की ओर उठाये हुए दिखाई दे रहे थे। शेषनाग जी का रंग उजला सफेद था, और बहुत सुन्दर दिखाई दे रहे थे। अब शिवछिद्र को गौरपूर्वक देखने लगा। शिवछिद्र

काले रंग के पदार्थ से बना हुआ था। शिवछिद्र के अन्दर की लम्बाई मात्र एक मीटर रह गयी थी, जबकि पहले इसकी लम्बाई बहुत ज्यादा थी। शिवछिद्र का व्यास एक से डेढ़ मीटर रहा होगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में बहुत ही सुन्दर स्वरूप में भगवान शेषनाग का साक्षात्कार हो गया। शेषनाग जी का पहले अनुभवो में कई बार दर्शन हुआ था मगर इतने सुन्दर नहीं दिखाई दिये थे। उनके शरीर का रंग सफेद था और अनन्त फनों वाले थे। इस अनुभव में पहले दिखाई देने वाला शिवछिद्र अति नजदीक था। पहले अनुभवों में शिवछिद्र हमसे दूर व छोटा सा दिखाई देता था। अबकी बार शिवछिद्र हमारे नजदीक व बहुत बड़ा सा दिखाई दे रहा था। अबकी बार शिवछिद्र के उस पार क्षीर सागर का दृश्य दिखाई दिया। क्षीर सागर में सिर्फ शेषनाग जी ही अकेले दिखाई दिये थे। उस समय वहाँ पर भगवान नारायण जी दिखाई नहीं दिये थे, जबकि शेषनाग की शैया पर पहले भगवान नारायण जी दिखाई देते थे। इस अनुभव में भगवान शेषनाग जी का साक्षात्कार हुआ है।

पिसा हुआ आटा

यह अनुभव 14 मई को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मेरे सामने ढेर सारा पिसा हुआ स्वच्छ आटा बोरेनुमा किसी चीज में भरा हुआ दिखाई दिया। कुछ क्षणों तक मैं इस पिसे हुए आटे को देखता रहा, फिर मैं अपने आप बोल पड़ा- "यह भोगने के लिए आ गया", फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया। कुछ समय बाद फिर अनुभव आया- मेरे सामने जूट के बोरे में या जूट के बोरे के समान किसी चीज में पिसा हुआ स्वच्छ आटा रखा हुआ है। मैं उसे बड़े आराम से देख रहा हूँ। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में पिसा हुआ आटा दिखाई दे रहा है। पिसे हुए आटा का अर्थ पहले अनुभवो में लिख चुका हूँ। जिस प्रकार भुने हुए अनाज में कभी अंकुर नहीं निकलता है उसी प्रकार आटे में अंकुर नहीं निकलता है, ऐसे कर्म निष्काम भाव से कुछ समय तक किये जाते हैं।

देवर्षि नारद जी का सन्देश

यह सन्देश 14 मई को रात्रि के समय ध्यानावस्था में मिला। ध्यान में देखा- आकाश में ऊपर की ओर देवर्षि नारद जी खड़े हुए मेरी ओर देख रहे है। वह मेरी ओर देखकर मुस्कुरा रहे है। मैंने उन्हें देखते ही प्रणाम किया। नारद जी मुझसे बोले- "हे योगी पुत्र, अभी तुम्हें कुछ और समय तक पृथ्वी पर रहकर कठोर साधना करनी है। तुम्हें भूलोक पर बहुत ज्यादा समय नहीं रहना है। तुम्हें अभी कुछ और कार्य करना है, उन कार्यों की समाप्ति के बाद अपने लोक में आ जाना"। फिर नारद चुप हो गये, मैं उन्हें देख रहा था। उत्तर में मैं कुछ नहीं बोला, सिर्फ चुप रहा। आजकल मैं बहुत कठोर साधना कर रहा हूँ, शरीर दुबला पतला व कमजोर हो गया है, इसलिये मैंने अब अभ्यास करना कम कर दिया है। शायद इसी कारण मुझसे यह कहा गया होगा- अभी और कठोर साधना करो।

अर्थ- देवर्षि नारद का सन्देश अवश्य ही गूढ़ अर्थ वाला है। जीवन में पहली बार नारद जी ने मुझे सन्देश दिया है। कुछ दिन पहले मेरे आदर्श ने (विश्वामित्र जी) भी इसी प्रकार का सन्देश दिया था। साधकों! उच्च कोटि के साधकों को कभी-कभी दिव्य शक्तियाँ मार्गदर्शन करने लगती है। इसीलिये देवर्षि नारद जी ने अपनी कृपा की और इस प्रकार का सन्देश देकर मार्गदर्शन किया।

परम पिता का सन्देश

यह सन्देश 17 मई को सुबह ध्यानावस्था में दिया गया। ध्यानावस्था में मुझे सुनाई दिया- "अब और ज्यादा वहाँ रहने की कोशिश न करे, जैसा तुमसे कहा गया है वैसा करो"। मैं आकाश की ओर दृष्टि करके बोला- क्योंकि आवाज ऊपर आकाश की ओर से आयी थी- आप कौन है? आवाज ने उत्तर दिया- "मैं तुम्हारा परम पिता हूँ"। मैं परम पिता का शब्द सुनते ही चौंक पड़ा। फिर मैंने अपनी आँखे खोल दी, और चुपचाप बैठ गया।

अर्थ- यह सन्देश भगवान नारायण जी का था। भगवान नारायण जी के दाहिने वक्ष से जीव की उत्पत्ति होती है, इसलिये हम सब जीवों के परम पिता भगवान श्री नारायण जी ही है। इसी कारण उन्होंने अपने आप को परम पिता कहा है।

ईश्वरीय सत्ता

यह जानकारी मुझे 4 जून को रात्रि के समय ध्यानावस्था में दी गयी थी। ध्यान करते समय मुझसे कहा गया- "तुमने ईश्वरीय सत्ता का सम्मान नहीं किया है, इसलिये तुम्हारे साथ यह घटना घटी है।"

यहाँ पर जो ईश्वरीय सत्ता के सम्मान की बात है। इसका कारण है मुझे दिसम्बर 2018 तक मार्गदर्शन करने के लिये बताया गया था अर्थात मैं सिर्फ दिसम्बर 2018 तक ही साधकों का मार्गदर्शन कर सकता हूँ। मैं इसके बाद भी शिविर लेता रहा और साधकों का मार्गदर्शन करता रहा, साथ में साधकों की कुण्डलिनी जाग्रत करता रहा, चक्रों को खोलता रहा, जो प्रकृति के नियमों के विरुद्ध है।

भगवान श्री नारायण जी का दर्शन

अनुभव 8 जून को शाम के समय आया। ध्यानावस्था में देखा- प्रकाश फैला हुआ है, भगवान शेषनाग जी अपने सभी फनों को ऊपर उठाये हुए आकाश में विराजमान है। ऐसा लग रहा है भगवान शेषनाग जी के फन सम्पूर्ण आकाश में समाये हुए है। भगवान शेषनाग जी के फनों के नीचे, भगवान नारायण जी उनके (शेषनाग) शरीर की बनी शैया के ऊपर लेटे हुए है। यह अनुभव क्षणिक देर के लिये आया था। अबकी बार भगवान नारायण जी के दर्शन पहले की अपेक्षा बहुत सुन्दर हुए थे।

भगवान शेषनाग जी

यह अनुभव 8 जून को शाम के समय आया। अनुभव में देखा- भगवान शेषनाग जी ढेरों फनों से युक्त पानी के अन्दर से ऊपर की ओर आते हुए दिखाई दिये। मुझे ऐसा लग रहा था- वह एक फन से सफेद भाप जैसी बाहर को निकाल रहे थे, पानी हिलोरे मार रहा था। भगवान शेषनाग जी पूर्ण रूप से पानी के ऊपर नहीं आये थे, तभी अनुभव समाप्त हो गया था। इस अनुभव में भगवान शेषनाग जी के शरीर का कुछ भाग पानी के अन्दर था।

भगवान शेषनाग जी की स्तुति

8 जून की रात्रि के समय ध्यान में सुनाई दिया- "तुम भगवान शेषनाग जी का स्मरण करो और उनकी स्तुति भी करो।" कुछ समय बाद मैंने भगवान शेषनाग जी को स्मरण किया और उनकी स्तुति भी की। मैं उनका मंत्र नहीं जानता हूँ इसलिये मैं उन्हें मंत्र के द्वारा याद नहीं कर सका। कुछ समय तक विशेष प्रकार से याद करता रहा, फिर थक जाने के बाद ध्यान तोड़ कर सो गया।

तुम भगवान शेषनाग जी की शरण में हो

यह अनुभव 9 जून को सुबह ध्यान करते समय आया। ध्यान में सुनाई दिया- "तुम भगवान शेषनाग जी की शरण में हो"। आवाज सुनाई देने के बाद सामने की ओर देखा तो आश्चर्य हुआ। मेरा मुँह भगवान शेषनाग जी के शरीर से एक फिट की दूरी पर था। मैं उनके फन के नीचे खड़ा हुआ था। मैं भगवान शेषनाग जी के बहुत ज्यादा नजदीक था, इसलिए उनका शरीर पूर्ण रूप से नहीं देख सका। वह सफेद मटमैले रंग के थे। मुझे इस दर्शन के बाद खुशी हो रही थी। अनुभव समाप्त हो गया। ध्यान टूटने के बाद मैं भावुक हो गया, फिर मेरी आँखों से पानी आ गया।

यह भी शेषनाग जी का स्वरूप है

पहले लिखे अनुभव के बाद मुझे यह अनुभव आया। ध्यान में देखा- स्वच्छ साफ भूमि दिखाई दे रही है, ऊपर की ओर अत्यन्त निर्मल आकाश है। मेरे सामने और थोड़ी दूरी पर बहुत बड़ा नाग फन ऊपर की ओर उठाये हुए मेरी ओर देख रहा है, वह बिलकुल शान्त सा था। मैं उसे देख रहा था तभी आवाज आयी- "ये स्वरूप भी भगवान शेषनाग जी का है"। मैं आवाज सुनकर चौंका, क्योंकि यह नाग एक फन वाला हल्का काला सा बड़े आकार वाला (लगभग 10-15 फीट लम्बा) है। मैं ऐसा सोच रहा था तभी नाग के फन के नीचे के चौड़े से आकार वाले क्षेत्र पर प्रकाश प्रकट हो गया। प्रकाश को देखते ही मैं चौंक पड़ा, उस प्रकाश के क्षेत्र के अन्दर कई भुजाओं वाले देवता का स्वरूप प्रकट हो गया। प्रकाश इतना ज्यादा तेज था कि मैं देवताओं का स्वरूप देखकर समझ नहीं पा रहा था कि यह कौन से देवता है। मुझे उस प्रकाश में लगा कि ये भगवान वराह का स्वरूप है, फिर दो-तीन देवताओं को मैं समझ नहीं पाया कि

ये कौन से देवता हैं। क्योंकि उनका स्वरूप फिर मुझे समझ में आया- "यह विराट स्वरूप है"। फिर कुछ देवताओं के स्वरूप को नहीं पहचान सका क्योंकि उनका स्वरूप प्रकाश से बना हुआ था। बस इतना याद है- कई भुजाओं वाले कई देवताओं का दर्शन हुआ।

यह अनुभव बहुत ही आश्चर्य से युक्त था, क्योंकि नाग के अन्दर दिव्य शक्तियों के दर्शन हो रहे थे। शेषनाग के इस प्रकार के स्वरूप के विषय में कभी नहीं सुना था और न ही कभी पढ़ा था, जैसाकि अनुभव में बताया गया था।

महल की आखिरी दीवार और आकाश

यह अनुभव 19 जून को आया। उस समय मैं मंत्र जाप कर रहा था। अनुभव में ऐसा लगा- मैं किसी सुन्दर महल के अन्दर हूँ। फिर चलकर आगे की ओर बढ़ा, तब मुझे दिखाई दिया- मैं महल के आखिरी (पीछे वाली) दीवार के पास आ गया हूँ। फिर मुझे दिखाई दिया- सामने की ओर और ऊपर की ओर आकाश ही आकाश है। महल के नीचे की ओर गहराई तक आकाश दिखाई दे रहा था, ऐसा लग रहा था यह महल आकाश में ही स्थित है। सामने ऊपर की ओर और नीचे की ओर सभी जगह आकाश ही आकाश है, भूमि कही भी नहीं दिखाई दे रही थी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में चित्त की भूमि कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। यह महल आकाश में अर्थात मेरे चित्ताकाश में महल विद्यमान था। चित्त की भूमि का कहीं भी दिखाई नहीं देना हमारे लिये बहुत अच्छी बात है। इस अनुभव का अर्थ है- वर्तमान अनुभव के अनुसार वर्तमान में हमारी अवस्था चित्ताकाश के आखिरी क्षेत्र में है अर्थात मैं अपरा-प्रकृति के आवरण के पास हूँ।

बैलगाड़ी

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के दूसरे दिन 20 जून को आया। ध्यानावस्था में दूसरे दिन देखा- वही कल वाला महल था, महल के सबसे पीछे वाली दीवार के पास खड़ा था। मैं सामने की ओर नीचे का आकाश देख रहा था, तभी हमारे पास से एक बैलगाड़ी आकाश में नीचे की ओर गिरती हुई दिखाई

दी। बैलगाड़ी नीचे की ओर आकाश में मुझसे दूर चली जा रही थी। फिर बैलगाड़ी नीचे की ओर जाकर आकाश में ओझल हो गयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अब इस अनुभव में बैलगाड़ी नीचे की ओर आकाश में जाकर विलीन हो गयी। यह बैलगाड़ी खुद अभ्यासी के शरीर का प्रतीक है अर्थात अभ्यासी का शरीर आकाश की अनन्त गहराई में जाकर विलीन हो गया। अभ्यासी का शरीर (स्थूल) अब नष्ट हुए के समान हो गया है।

स्त्री के शरीर का बाहरी आवरण निकाला

यह अनुभव 21 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया- मेरे दाहिनी ओर बगल में सुन्दर स्त्री गोरे रंग की निर्वस्त्र लेटी हुई है। मैं उसके दाहिने कन्धे की, उसके शरीर पर चढ़ी मोटी पारदर्शी झिल्ली (आवरण) जोर लगाकर हाथों से फाड़-फाड़ कर अलग कर रहा हूँ। झिल्ली एकदम पारदर्शी और मोटी है। स्त्री के कन्धे से लेकर नाभि तक झिल्ली को हाथों का जोर लगाकर फाड़ता हुआ चला जा रहा था। स्त्री की आँखे बन्द थी, वह शान्त लेटी हुई थी, झिल्ली उसके शरीर पर मजबूती से चिपकी हुई थी। झिल्ली इतनी पारदर्शी थी कि वह स्त्री के शरीर पर दिखाई नहीं दे रही थी कि उसके ऊपर झिल्ली चढ़ी हुई है। फिर मैंने स्त्री के नाभि क्षेत्र से लेकर पैरों तक झिल्ली धीरे-धीरे निकाल दी। उसी समय स्त्री का शरीर खड़ा हो गया, मगर उसकी आँखे बन्द थी तथा ऐसा लगता था कि वह गहरी नींद में सो रही है। फिर मैंने दाहिने कन्धे से लेकर कलाई तक झिल्ली निकाल दी। अब उसके बाँये कन्धे से लेकर कलाई तक जोर लगाकर झिल्ली अलग करने लगा, इस हाथ की झिल्ली निकालते समय झिल्ली के साथ, जिस पदार्थ से उसका शरीर बना था, वह पदार्थ भी आवरण के साथ चिपक कर निकलने लगा। इससे उसके हाथ का स्वरूप विकृत सा होने लगा। कुछ समय बाद उसके शरीर का स्वरूप बिलकुल छोटा सा (डेढ़-दो फीट लम्बा) और विचित्र सा दिखाई देने लगा। कुछ क्षणों तक छोटा सा शरीर देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में पहले स्त्री बहुत सुन्दर दिखाई दे रही थी। फिर जब छोटे स्वरूप वाली हो गयी, तब उसका स्वरूप लड़की जैसा ही दिखने लगा। मगर वह सुन्दर नहीं दिखाई दे रही थी, अब वह मेरी ओर देख रही थी। वह स्त्री वस्त्र नहीं पहने थी और आँखे बन्द किये गहराई में थी। पारदर्शी आवरण दिखाई नहीं दे रहा था, उसे फाड़-फाड़ कर अलग कर रहा था। जब उसके सम्पूर्ण शरीर का आवरण (झिल्ली) अलग कर दिया, तब उस स्त्री का शरीर छोटा सा रह गया, फिर उसकी सुन्दरता नष्ट हो गयी थी। पहले स्त्री लेटी

हुई थी, फिर वह खड़ी हो गयी, तब उसका शरीर छोटा हो गया था। इस अनुभव का अर्थ है- अपरा-प्रकृति की आवरण रूपी अशुद्धता नष्ट होने पर उसका स्वरूप भी छोटा हो गया। यह स्त्री अपरा-प्रकृति का स्वरूप है।

पेड़ का सूखा तना

यह अनुभव 22 जून को शाम के समय आया। उस समय मैं मंत्र जाप कर रहा था तब मुझे दिखाई दिया- सामने पेड़ का सूखा हुआ तना खड़ा हुआ है, इसके मध्य भाग में आर-पार एक बड़ा सा छिद्र है। मैं उस छिद्र के अन्दर का भाग देख रहा हूँ। छिद्र का आकार बहुत बड़ा है, इसलिये दूसरे तरफ भी अर्थात छिद्र से उस पार का क्षेत्र दिखाई दे रहा है। तने के अन्दर का भाग सड़ सा गया है और खोखला भी हो चुका है। ऐसा लग रहा है यह तना बहुत ज्यादा समय तक खड़ा नहीं रह पायेगा अर्थात तना गिर जायेगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- हमारे द्वारा देखे जाने वाला सड़ा हुआ सूखा तना हमारे ही शरीर का प्रतीक है अर्थात हमारा शरीर नष्ट हुए के समान हो चुका है। बड़ा सा छिद्र उस सूखे तने में दिखाई दे रहा है, इसका अर्थ होता है- योग की दृष्टि में मेरा शरीर जर्जर और बेकार सा हो गया है।

स्वच्छ सफेद शिवलिंग

यह अनुभव 23 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। मेरा ध्यान गहरा लगा हुआ था- मैं सिर का ऊपरी भाग देख रहा था, वहाँ पर थोड़ी जगह पर प्रकाश फैला हुआ था। प्रकाश धीरे-धीरे कम होने लगा, सिर के ऊपरी भाग पर ऊपरी परत उखड़-उखड़ कर अलग हो चुकी थी, तब सिर के अन्दर का भाग दिखाई देने लगा। मैंने देखा- मेरे सिर के अन्दर स्वच्छ सफेद वस्तु विद्यमान थी। फिर शरीर की ऊपरी परत फटकर अलग हो गयी अर्थात शरीर का ऊपरी आवरण अलग हो गया था। मेरे शरीर के अन्दर अत्यन्त स्वच्छ सफेद शिवलिंग स्थित हुआ दिखाई देने लगा। मैं अपने सामने बहुत सुन्दर सफेद शिवलिंग को देख रहा था, मैं टकटकी लगा कर उस सुन्दर सफेद शिवलिंग को देख रहा था। शिवलिंग धीरे-धीरे छोटा हो-होकर अदृश्य हो गया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में शिवलिंग धीरे-धीरे छोटा हो होकर अदृश्य हो गया। शिवलिंग का स्वरूप अत्यंत स्वच्छ सफेद था। शिवलिंग हमारे ही चित्त के स्वरूप का प्रतीक है। शिवलिंग का रंग अत्यन्त स्वच्छ सफेद है अर्थात हमारे चित्त की शुद्धता बहुत बढ़ गयी है। फिर वह छोटा हो-होकर अदृश्य हो गया। शिवलिंग हमारे चित्त और अपरा-प्रकृति का स्वरूप होता है, इस अनुभव में शिवलिंग चित्त का स्वरूप है। भविष्य में चित्त शुद्ध हो होकर अपने वर्तमान स्वरूप को खो देगा, तब फिर चित्त अत्यन्त व्यापक होकर ईश्वर के चित्त में अंतर्मुखी हो जायेगा।

अण्डाकार क्षेत्र में नीचे की ओर छिद्र

यह अनुभव 23 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं किसी अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर विद्यमान हूँ, उसके अन्दर कुछ सफाई कर रहा हूँ। यह अण्डाकार क्षेत्र खडे आकार में था। मैंने इस क्षेत्र के अन्दर से नीचे की ओर बड़ा सा गोलाकार छिद्र देखा, उस छिद्र के उस पार निर्मल स्वच्छ प्रकाश दिखाई दे रहा था। यह छिद्र बिलकुल वैसा ही था जैसे कुछ दिन पहले सिर के ऊपर की ओर बड़ा सा छिद्र दिखाई दिया करता था, उस छिद्र के उस पार एक बार शेषनाग जी भी दिखाई दिये थे। इसी प्रकार अबकी बार अनुभव में नीचे की ओर छिद्र दिखाई दे रहा था। छिद्र अभी थोड़ी दूरी पर था, मगर हमारी दृष्टि उस पार टिकी हुई थी। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला अण्डाकार क्षेत्र मेरा ही चित्त है। इस अनुभव में मैं कुछ स्वच्छ कर रहा था अर्थात चित्त को स्वच्छ कर रहा था। मैं पहले लिख चुका हूँ इस अवस्था में अभ्यासी को आरोह-अवरोह क्रम में अपनी स्वच्छता करनी होती है। तब चित्त में इतनी स्वच्छता आ जाती है कि चित्त जीव को अपने स्वरूप का दर्शन करा पाता है, मोक्ष प्रप्ति के लिए ऐसा होना अति आवश्यक है।

आरोह-अवरोह क्रम में स्थूल से लेकर चित्त तक और चित्त से लेकर स्थूल तक समान रूप से स्वच्छता करनी पड़ती है। अनुभव में नीचे की ओर छिद्र द्वारा आकाश दिखाई दे रहा है, जैसे सिर के ऊपरी ओर विद्यमान छिद्र के द्वारा, ऊपर की ओर का आकाश दिखाई देता था, अब नीचे की ओर विद्यमान हुआ आकाश दिखाई दे रहा था।

अण्डाकार क्षेत्र जिसमे मैं विद्यमान हुआ सफाई कर रहा हूँ, इस अण्डाकार क्षेत्र में भी आकाश विद्यमान है। अनुभव में कभी शिवछिद्र सामने की ओर, और कभी ऊपर की ओर, इस अनुभव में नीचे

की ओर आकाश में दिखाई दे रहा है। सत्य तो यह है- परा-प्रकृति के क्षेत्र के अन्दर अनन्त अपरा-प्रकृतियाँ विद्यमान रहती है, उन्ही अपरा-प्रकृतियों में से एक अपरा-प्रकृति है जिसमे मैं जीवन जी रहा हूँ। हमारा कहने का अर्थ यह है- अपरा-प्रकृति के बाहर परा-प्रकृति विद्यमान है, अपरा-प्रकृति का आवरण के अन्दर अस्तित्व है। इसलिये अपरा-प्रकृति के बाहर सर्वत्र परा-प्रकृति का आकाश है। अपरा-प्रकृति के बाहर जाने के लिये अपने चित्त को शुद्ध करना होगा। शिवछिद्र के द्वारा शुरुआत में परा-प्रकृति का धीरे-धीरे अवतरण होगा, फिर इस अपरा-प्रकृति का आवरण धीरे-धीरे नष्ट हो जाने पर पूर्ण रूप से अपरा-प्रकृति में परा-प्रकृति का अवतरण हो जाता है। यह प्रक्रिया धीरे-धीरे अभ्यासानुसार वर्षों तक चलती है।

आग से सब कुछ जल गया

यह अनुभव 26 जून दोपहर को आया। मैंने देखा- भूमि पर चारों ओर आग लगी हुई है। भूमि पर दूर-दूर तक ऊँची घास खड़ी हुई है, यह घास सूखी हुई है। इस घास में आग लगी हुई है। आग बड़ी तेजी से आगे की ओर बढ़ती जा रही है। जो घास जल रही है उसके जल जाने के बाद उसकी थोड़ी सी राख बच जाती है, वह राख भूमि पर पड़ी हुई है। मैं देख रहा हूँ- आग बड़ी तेजी से आगे की ओर बढ़ती जा रही है और पीछे की ओर राख छोड़ती जा रही है। सर्वत्र सूखी घास ही घास है, किसी प्रकार के पेड़-पौधे नहीं है। फिर मैंने देखा- जिस जगह भूमि पर आग लगी हुई है, वह जगह गोलाकार पिण्ड है। आकाश के मध्य में पिण्ड स्थित है, इसी पिण्ड में आग लगी हुई है। अब इस पिण्ड की भूमि पर किसी प्रकार की घास या पेड़ नहीं है क्योंकि कुछ क्षणों में ही सब कुछ जलकर राख हो गया है। यह पिण्ड अपनी जगह पर गति करता हुआ दिखाई दे रहा है। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- आग से सम्पूर्ण घास आदि जलकर राख हो जाना अभ्यासी के लिए बहुत अच्छी बात है। इससे चित्त पर स्थित कर्माशय योगाग्नि के द्वारा जलकर नष्ट हो गए है। ये कर्माशय साधकों को मार्गदर्शन करते समय हमारे अन्तःकरण में प्रवेश कर जाते हैं। फिर कुछ कर्माशय योगाग्नि के द्वारा जल जाते हैं, कुछ शेष कर्माशयों को भोग कर नष्ट कर देता हूँ क्योंकि कुछ साधकों के कर्माशय बहुत गन्दे होते हैं। उन गन्दे कर्माशयों को मैं कभी-कभी उसी साधक के पास वापस कर देता हूँ, फिर अपने अभ्यास में लग जाता हूँ।

नाव मेरे पास आयी

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के बाद 26 जून को आया। जब उस अनुभव में सम्पूर्ण घास जलकर राख हो गयी। वह पिण्ड आकाश के मध्य में धीरे-धीरे अपनी जगह पर गति कर रहा था। मैंने देखा- तभी कुछ क्षणों बाद उस पिण्ड की सम्पूर्ण बाहरी सतह पर स्वच्छ पानी प्रकट हो गया अर्थात पिण्ड के बाहरी ओर सर्वत्र स्वच्छ पारदर्शी पानी भरा हुआ था। मुझे दिखाई दिया- मैं अपनी कुटिया के बाहर बैठा हुआ हूँ, कुटिया के बाहर भी पानी भरा हुआ है। उसी पानी में दूर से एक नाव कुटिया की ओर चली आ रही है, उस नाव में एक मनुष्य बैठा हुआ दिखाई दे रहा है, उसका चेहरा स्पष्ट नहीं दिख रहा है। वह नाव तेजी से चलकर हमारी कुटिया में आ गयी और अपने आप कुटिया के बरगद के पेड़ से नाव बाँध दी गयी। अनुभव देखते समय मैं चौंक पड़ा क्योंकि कुटिया में विद्यमान बरगद के पेड़ से नाव बाँध दी गयी, नाव को बाँधने वाला कोई नहीं था। मैंने झटके के साथ आँखे खोल दी, मगर तभी फिर आँखे बन्द कर ली, तब मुझे दिखाई दिया- कुटिया के क्षेत्र में सर्वत्र पानी भरा हुआ है। जिस जगह पर बरगद पर नाव बाँधी गयी थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला पिण्ड मेरे ही चित्त के स्वरूप का प्रतीक है। सम्पूर्ण चित्त पर पानी ही पानी भरा हुआ दिखाई दे रहा था। कुछ दिन पहले अनुभव में ढेर सारा आटा दिखाई दिया था। यह पानी उसी के स्वरूप का प्रतीक है जो निष्काम कर्म के द्वारा धीरे-धीरे कर्म नष्ट होता रहे गा क्योंकि मैं अभी साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। नाव ज्ञान के स्वरूप का प्रतीक है। नाव मेरी कुटिया के अन्दर खड़े बरगद के पेड़ से बाँध दी गयी। फिर नाव अदृश्य हो गयी थी। नदी रूपी संसार से ज्ञान रूपी नाव ही अभ्यसी को पार करा सकती है।

अण्डाकार आवरण टूटने लगा

यह अनुभव 26 जून को आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं किसी अण्डाकार आवरण के अन्दर बैठा हुआ हूँ। वहाँ पर कुछ साफ कर रहा हूँ। मेरी दृष्टि नीचे की ओर थी, तब मुझे दिखाई दिया- इस आवरण के मध्य भाग से दाहिने ओर का आवरण टूट गया। वहाँ से बाहर का आकाश दिखाई दे रहा था। वह आकाश नीचे की ओर को भी दिखाई दे रहा था अर्थात आवरण मध्य भाग से नीचे की ओर को टूटा हुआ था। उस टूटे हुए आवरण से बाहर का स्वच्छ निर्मल आकाश दिखाई दे रहा था। मैंने नीचे की ओर

देखा तो नीचे की ओर गोलाकार बड़ा छिद्र दिखाई दे रहा था। छिद्र से उस पार का आकाश दिखाई दे रहा रहा था अर्थात अण्डाकार के मध्य भाग का टूटा हुआ आवरण नीचे तक टूटा हुआ था। नीचे की ओर जो छिद्र था वहाँ तक टूटा हुआ क्षेत्र था।

अर्थ- कई अनुभवों में जो अण्डाकार क्षेत्र दिखाई देता था, वही अण्डाकार क्षेत्र इस अनुभव में दिखाई दिया था। इस अनुभव में मध्य भाग से आवरण थोड़ा सा नीचे की ओर को टूटा था। हमारे लिये यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। चित्त का आवरण (अपरा-प्रकृति का) टूट रहा था।

चकिया, शिवलिंग और घड़ा

यह अनुभव 10 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने की ओर भूमि से ऊपर आकाश में एक पुराना घड़ा दिखाई दिया, उसका मुँह ऊपर की ओर था। कुछ क्षणों बाद घड़े का मुँह नीचे की ओर होने लगा। घड़े का मुँह नीचे की ओर होते ही घड़े के अन्दर से तरल स्वच्छ पदार्थ पानी जैसा नीचे की ओर गिरने लगा। उसी समय घड़े के दाहिनी ओर एक बहुत पुरानी चकिया दिखायी देने लगी, अब वह किसी कार्य के लायक नहीं रह गयी थी। चकिया के ऊपर काला शिवलिंग विद्यमान था चकिया भी घड़े के बगल में आकाश में ही विद्यमान थी। तभी चकिया धीरे-धीरे तिरछी होकर पूरी तरह से उल्टी हो गयी अर्थात चकिया का ऊपरी भाग नीचे की ओर हो गया और निचला भाग ऊपर की ओर हो गया। शिवलिंग जो चकिया के ऊपर विद्यमान था वह अब चकिया के नीचे की ओर हो गया। तभी चकिया और शिवलिंग तेजी से नीचे की ओर आये फिर भूमि से टकरा कर चूर-चूर हो गये अर्थात चकिया और शिवलिंग भूमि से टकरा कर चूर-चूर हो गये (छोटे-छोटे टुकड़े हो गये)। आकाश में विद्यमान घड़े से पानी जैसा तरल पदार्थ गिरना बन्द हो गया। फिर घड़ा भी धीरे-धीरे चटकने लगा, कुछ देर में टूट कर उसके टुकड़े भूमि पर गिर गये। फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- इस अनुभव में आये चकिया, शिवलिंग और घड़े का अर्थ पहले ही अलग-अलग अनुभवों में बता चुका हूँ। चकिया में अनाज पीसा जाता है, इसका अर्थ है- चित्त पर स्थित कर्मों को भोगा जा रहा है अथवा निकट भविष्य में अभ्यासी अवश्य भोगेगा। चित्त पर स्थित कर्माशयों को जब अभ्यासी भोग रहा होता है तब उसे अनुभव में दिखाई देता है- चकिया में अनाज पीसा जा रहा है। शिवलिंग, चित्त और अपरा-प्रकृति का प्रतीक है, घड़ा भी चित्त के स्वरूप का प्रतीक है। अनुभव में चकिया, शिवलिंग और

घड़ा तीनों टूट कर नष्ट हो गये। अब हमारे लिये अपरा-प्रकृति और चित्त नष्ट हुए के समान हो गये हैं। चित्त में दो प्रकार के परिणाम होते है, 1- वाह्य परिणाम, 2- आन्तरिक परिणाम। **वाह्य परिणाम** - गुणों का परिणाम चित्त पर स्थित वृत्तियों में होता है, निरुधावस्था प्राप्त होने पर वाह्य परिणाम होना रुक जाता है। **आन्तरिक परिणाम** - चित्त पर वाह्य परिणाम बन्द हो जाने के बाद भी, गुणों का आन्तरिक परिणाम होता रहता है इस परिणाम के द्वारा चित्त स्वरूप से बना रहता है।

सिर्फ मैं हूँ और तुम हो

यह अनुभव 23 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- चारों ओर सर्वत्र आकाश ही आकाश है तभी दूर आकाश से आवाज आयी- "हे योगी पुत्र, अब तुम्हारे लिए इस संसार में कोई नहीं है, सिर्फ मैं हूँ और तुम हो, हमारे तुम्हारे बीच अब कोई नहीं है"। जिस ओर से ये आवाज आ रही थी वहाँ आकाश में ऐसा भाषित हो रहा था कि अत्यन्त पारदर्शी स्वरूप में भगवान श्री हरि जी खड़े हुए हैं। फिर मेरी आँखे खुल गयी।

अर्थ- अनुभव में जो शब्द सुनाई दे रहे थे ऐसा लग रहा था, मानो ये शब्द भगवान श्री हरि जी ही बोल रहे थे। मगर श्री हरि जी बोलते हुए नहीं दिखाई दे रहे थे। उनका स्वरूप सिर्फ भाषित हो रहा था। इस अनुभव में सुनाई देने वाले शब्द हमारे लिये बहुत महत्वपूर्ण है। किसी अभ्यासी के लिये इससे ज्यादा श्रेष्ठ और हो भी क्या सकता है, क्योंकि ये शब्द भगवान श्री हरि जी की ओर से आ रहे थे। इसका अर्थ है- मेरे और भगवान श्री हरि जी के बीच, जो संसार रूपी अहंकार की दीवार थी, वह नष्ट हो गयी है अथवा निकट भविष्य में नष्ट हो जायेगी। अब मेरे जीवन में सिर्फ ईश्वर ही है। संसार या संसार से सम्बंधित कोई पदार्थ नहीं है। अब मैं ईश्वर के बताए हुए शब्दों के अनुसार ही जीवन व्यतीत करने का प्रयास करूँगा।

युवा भगवान श्री कृष्ण जी के चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन

यह दर्शन आज 23 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में हुआ। मैंने अपनी कुटिया के बाहर कुर्सी पर बैठे हुए ध्यान करने के लिए आँखे बन्द ही की थी, तभी मैंने देखा- मेरे दाहिनी ओर लगभग एक मीटर की दूरी पर भगवान श्री कृष्ण जी युवा स्वरूप में चतुर्भुज स्वरूप धारण किये हुए खड़े थे। उनका सम्पूर्ण

स्वरूप स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उनके शरीर का रंग चमकीला हल्का नीला था, सिर पर सोने का मुकुट धारण किये हुए थे, उन्होनें चार भुजाऐं धारण की हुई थी, मगर मेरी दृष्टि दो भुजाओं की ओर ज्यादा थी जिस भुजा में गदा और सुदर्शन चक्र धारण किये हुए थे। सुदर्शन चक्र वाला हाथ ऊपर की ओर उठा हुआ था, तथा गदा वाला हाथ नीचे की ओर था। जब मैं भगवान श्री कृष्ण जी का ये चतुर्भुज स्वरूप देख रहा था, उस समय मुझे अपने स्थूल शरीर का भान हो रहा था, मेरी सिर्फ आँखे बन्द थी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि वह हमारे दाहिने ओर बगल में लगभग एक मीटर दूरी पर खड़े हुए थे। ऐसा लगता था वह हमारी कुटिया में रहते हैं क्योंकि वह हमारी कुटिया के क्षेत्र के अन्दर थे। तब मैं प्रसन्न होकर बोला- "प्रभु, मुझे चतुर्भुज स्वरूप में आपके दर्शन हो रहे है"। उस समय का दृश्य ऐसा था मानो वह मेरे साथ कुटिया में रहते हो, क्योंकि वह मेरी कुटिया के अन्दर बरामदे में खड़े थे। उस समय की प्रसन्नता का वर्णन मैं नहीं कर सकता हूँ। मैं पूरी तरह से जाग्रत अवस्था में था, सिर्फ हमारी आँखे बन्द थी।

15-16 जुलाई को ध्यानावस्था में मुझे निर्मल आकाश में अत्यन्त पारदर्शी भगवान श्री कृष्ण जी के बाल स्वरूप का दर्शन हुआ था। उस समय मैंने कहा था- "प्रभु, मुझे बाल स्वरूप का दर्शन हो रहा है"। कुछ क्षणों तक बाल स्वरूप दर्शन करता रहा, फिर मेरी आँखे खुल गयी।

अर्थ- यह अनुभव मेरी कुटिया के बरामदे में आया। मैं सिर्फ अपनी आँखे बन्द किए हुए कुर्सी पर बैठा हुआ था। मैं ध्यान की गहराई में नहीं गया था तभी ये अनुभव आया। ऐसा दिख रहा था- भगवान श्री कृष्ण जी हमारे बगल में खड़े थे। मुझे पहले भी कई बार भगवान श्री कृष्ण जी के दर्शन हो चुके है मगर इस बार का दर्शन कुछ विशेष प्रकार का था।

दिव्य श्वेत हाथी का दर्शन

यह अनुभव पहले ऊपर के अनुभव के बाद आया। मैंने देखा- मेरे सामने विशाल शरीर वाला श्वेत रंग का (सफेद रंग का) हाथी ऊपर की ओर सूँड़ उठाए हुए खड़ा था। वह अपनी सूँड़ ऊपर की ओर उठा कर पीठ की ओर झुकाए था। इस अवस्था में उस हाथी का मुँह खुला हुआ था। उसकी पीठ पर सुन्दर रंगीन मोटा कपड़ा बिछा हुआ था। वह बिछा हुआ मोटा कपड़ा पीठ के दोनों ओर पेट के नीचे तक लटका हुआ था। उस कपड़े में सुन्दर डिजाइन बनी हुई थी। यह कपड़ा राजाओं की भाँति डिजाइन वाला था। मैं हाथी के मुँह वाले भाग व सूँड़ पर टकटकी लगाए हुए देख रहा था। इसी अवस्था में हाथी कुछ देर

तक खड़ा रहा। यह हाथी देखने में दिव्यता को लिये हुए था क्योंकि उसके शरीर की बनावट व रंग से ऐसा दिखाई दे रहा था। इस अनुभव को देख कर मैं प्रसन्न हो रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला श्वेत हाथी का अर्थ बहुत अच्छा होता है। इस तरह के हाथी भूलोक पर नहीं पाये जाते है, यह हाथी दिव्यता से युक्त है। अब इस हाथी का अर्थ लिखता हूँ।

1- इस प्रकार के सफेद हाथी का अर्थ होता है- यश प्राप्त होना, प्रसिद्धि मिलना तथा सम्मान-सुख प्राप्त होने का प्रतीक है।

2- ऐसा हाथी श्रेष्ठ साधकों या योगियों को ही दिखाई देता है। ऐसे अभ्यासी को भविष्य में श्रेष्ठ अवस्था प्राप्ति होती है, उसका भविष्य उज्जवल होता है।

3- यदि गर्भवती स्त्री को ऐसा हाथी दिखाई दे, तो निश्चय ही जन्म लेने वाली जीवात्मा श्रेष्ठ कर्मों वाली होती है तथा उसके अन्दर दिव्यता का अंश होता है। इस अनुभव के बाद निश्चय हो गया कि निकट भविष्य में मुझे मेरे जीवन की श्रेष्ठता प्राप्त होगी।

धर्म ध्वज यान

यह अनुभव 10 अगस्त को ध्यान में आया। स्वच्छ प्रकाशित आकाश में दूर से एक यान चला आ रहा है, और पास आने पर सुन्दर यान के रूप में स्पष्ट दिखाई देने लगा। यह यान देवयान के समान दिखाई दे रहा था, इसमें एक व्यक्ति के बैठने का स्थान था। तभी आकाश से आवाज आयी- यह यान आपका है, इस यान का नाम धर्म-ध्वज है। उसी समय मेरी आँखे खुल गयी। मैं यान के विषय में सोचने लगा।

यान बहुत ही सुन्दर था। उसमें ऊपर की ओर छतरी भी विद्यमान थी। यह यान स्वप्रकाशित सा लग रहा था तथा चमक निकल रही थी।

मुकुट

यह अनुभव 18 अगस्त को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- आकाश में बहुत सुन्दर एक सोने का मुकुट है, उस सोने के मुकुट को दो हाथ पकड़े हुए है। दोनों हाथ मुकुट को पकड़े हुए मेरी ओर को आने लगे। मेरे पास मुकुट आकर फिर दोनों हाथ मुकुट को मेरे सिर पर रखने ही वाले थे, तभी मेरी आँखे अपने आप खुल गयी और ध्यान टूट गया। सोने से बना हुआ मुकुट राजाओं की भाँति था। अनुभव में मुकुट मेरे सिर पर रखा जाता, उससे पहले अनुभव टूट गया।

मार्ग की अंतिम सीमा

यह अनुभव 23 अक्टूबर को आया मैंने देखा- मैं तीव्रता से आगे की ओर चला जा रहा हूँ। यह मार्ग आकाश में बना हुआ है, मार्ग पूर्ण रूप से प्रकाशित है और बहुत ही स्वच्छ है। तभी मैंने सामने की ओर देखा तो आश्चर्य हुआ-मात्र थोड़ी दूरी के बाद मार्ग समाप्त हो गया था। आगे की ओर सिर्फ आकाश ही आकाश है, मार्ग का अन्त हो चुका था। फिर कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया। मुझे दिखाई देने वाला मार्ग ही तय करना है। शीघ्र ही मैं अपने मार्ग के अंतिम किनारे पर स्थित हो जाऊँगा।

सभी अधर्मी है

यह अनुभव ध्यानावस्था में 24 अक्टूबर को आया। मैंने देखा- सामने की ओर थोड़ा ऊँचाई पर भगवान बजरंग बली जी खड़े हुए है, मैं उनका स्पष्ट दर्शन कर रहा हूँ। तभी भगवान बजरंग बली जी ने मुझसे कहा- "इस संसार में सभी अधर्मी है"।

अर्थ- अनुभव में भगवान बजरंग बली जी ने सभी को अधर्मी कहा है। यह सत्य है कि इस संसार में सभी मनुष्य कहीं न कहीं न्यूनाधिक मात्रा में अधर्म में लिप्त रहते है। अगर किसी मनुष्य से पूछो- "क्या आप अधर्मी है?" तो उत्तर में वह मनुष्य निश्चय ही इन्कार कर देगा और कहेगा- मैं कभी भी अधर्म में लिप्त नहीं रहा हूँ और न ही वर्तमान समय में मैं ऐसा कोई भी कार्य करता हूँ जो अधर्म से सम्बंधित हो। जबकि मनुष्य शरीर का जन्म पाप और पुण्य से युक्त मिश्रित कर्मों द्वारा होता है। यह मनुष्य अपने जीवन में कभी

न कभी अपने कर्मों द्वारा अधर्म में लिप्त रहता है, क्योंकि पाप से युक्त कर्म उसके चित्त पर विद्यमान रहते हैं।

संसार तो बहता ही रहेगा

यह जानकारी 25 अक्टूबर को ध्यानावस्था में दी गयी। मैंने देखा- आकाश में थोड़ा ऊपर की ओर भगवान विष्णु जी चतुर्भुज रूप में सामने खड़े हुए मेरी ओर को मुस्कुरा रहे है। फिर भगवान विष्णु जी ने मुझसे कहा- "यह संसार बहता है बहता ही रहेगा, तुम अपनी वृत्तियों को रोको तो संसार रुक जायेगा"। भगवान विष्णु जी इतना कह कर अन्तर्ध्यान हो गये। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में भगवान विष्णु जी ने मुझे जो शिक्षा दी है, मैं अपने जीवन में उतारने का प्रयास करूँगा। संसार का स्वभाव है वह जैसा चल रहा है वैसा ही चलता रहेगा, उसे रोका नहीं जा सकता है, क्योंकी गुणों के परिणाम के प्रभाव के कारण ऐसा होता है। यदि आप अभ्यास के द्वारा अपनी वृत्तियों को निरुद्ध कर दो, तो उसके लिए संसार रुक जायेगा अर्थात ठहर जायेगा। अन्य जीवों के लिए संसार बहता रहेगा अर्थात क्रियाशील व परिणामी बना रहेगा।

त्याग करो

ये शब्द मुझसे 28 अक्टूबर को सुबह ध्यानावस्था में कहे गये। मुझे गहरे ध्यान में सुनाई दिया- "इस संसार का त्याग करो और आगे बढ़ो।" ये शब्द सुन कर मैं चुपचाप रहा, कुछ नहीं बोला, फिर गहरे ध्यान में चला गया।

अर्थ- इस प्रकार के शब्द ध्यानावस्था में पहले भी सुनाई दिये थे, मगर मैंने अभी पूर्ण रूप से संसार का त्याग नहीं किया है, इसलिए ध्यान में मुझे बार-बार कहा जा रहा है। मुझे पहले कहा गया था- आप जो साधकों का मार्गदर्शन करते है और शिविर लेते है, दिसम्बर 2018 तक बन्द कर दीजिये। मगर फिर भी मैं शिविर करता रहा, इसीलिये मुझसे कहा गया है- "इस संसार का त्याग कर दीजिये।"

कुण्डलिनी का स्वरूप व गति

यह अनुभव ध्यानावस्था में 10 दिसम्बर को आया। मैंने देखा- मैं अहंकार के अंतिम क्षेत्र की ओर खड़ा हूँ। यह क्षेत्र बहुत ही प्रकाश से युक्त है। ऐसा लग रहा है जैसे यहाँ पर प्रकाश भरा हुआ है। सामने की ओर से मेरी ओर एक सुनहरी नागिन चली आ रही है। मेरी ओर सुनहरी नागिन के आने का तरीका बहुत ही विचित्र है। उस नागिन का मुँह और पूँछ का भाग भूमि को स्पर्श कर रहा है, उसके शरीर का मध्य वाला भाग ऊपर की ओर उठा हुआ अर्थात उस सुनहरी नागिन का शरीर उल्टा यू के समान बना हुआ है। इसी आकार में उसका शरीर बना हुआ मेरी ओर आ रही है। इस दृश्य को देखकर मैं आश्चर्य चकित हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में अहंकार की आखिरी सीमा प्रकाश से युक्त है। उसी प्रकाशित क्षेत्र में कुण्डलिनी शक्ति नागिन के रूप में मेरी ओर चली आ रही है। मेरी ओर आने का तरीका कुण्डलिनी शक्ति का बहुत ही विचित्र है। उसका मुँह और पूँछ का आखिरी भाग निचली सतह को स्पर्श कर रहा है। उसका मध्य का शेष शरीर ऊपर की ओर उल्टा यू आकार में उठा हुआ था अर्थात कुण्डलिनी शक्ति की गति अब सामान्य नागिन की भाँति नहीं थी।

कुण्डलिनी शक्ति की गति रोक सकता हूँ

यह जानकारी मुझे 11 दिसम्बर को ध्यानावस्था में सुनाई दी। मैं गहरे ध्यान में था उसी समय आंतरिक्ष से आवाज आयी- "तुम महाकाल के पुत्र हो। कुण्डलिनी शक्ति की गति को रोक सकते हो, यह कार्य तुम पहले भी कर चुके हो"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- इस अनुभव में ध्यानावस्था में आवाज आयी- "तुम महाकाल के पुत्र हो, कुण्डलिनी को रोक सकते हो"। अर्थात मैं सगुण ब्रह्म का पुत्र हूँ। जो शक्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करती है वह शक्ति स्वरुपा है, उसकी गति को रोक सकते हो। क्योंकि मैंने कुण्डलिनी शक्ति की गति को कुछ समय पहले किसी अभ्यासी के शरीर में रोक दी थी। उस समय कुण्डलिनी शक्ति ऊपर की ओर गति कर रही थी। ऊपर की ओर गति करते समय बीच मार्ग में पकड़ कर आगे की ओर गति नहीं करने दी थी, कुछ क्षणों बाद मैंने उसे मुक्त कर दिया था। यह विधि मुझे मालूम है, यह बात सन् 1995 की है।

तुम जैसा कहोगे

यह अनुभव 11 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। ऊपर आकाश में स्थित नीले बिन्दु से आवाज आयी- "तुम जैसा कहोगे, मेरा स्वरूप वैसा ही उस साधक के शरीर के अन्दर स्थित हो जायेगा।" ये शब्द कुण्डलिनी शक्ति ने मुझसे कहे थे।

अर्थ- यह नीला बिन्दु कारण जगत से सम्बंधित है। कुण्डलिनी शक्ति ने मुझसे कहा- तुम जैसा कहोगे, मेरा स्वरूप (व्यापकता में) वैसा ही स्थित हो जायेगा। उदाहरण- अगर किसी की कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र द्वार तक जाती है। अगर मैं कह दूँ- हृदय चक्र तक ही जाना है इस शरीर में, तब कुण्डलिनी शक्ति साधक के शरीर में हृदय चक्र तक ही जायेगी, आगे की ओर गति नहीं करेगी। अर्थात कुण्डलिनी हृदय चक्र पर ही ठहर जायेगी।

कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे अपने विषय में समझाया

यह जानकारी मुझे ध्यानावस्था में कुण्डलिनी शक्ति ने दी। 11 दिसम्बर शाम के समय ध्यानावस्था में कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे समझाया- जब मैं वायुतत्व में अपना स्वरूप धारण करती हूँ तब मेरा स्वरूप इस तरह से साधक के शरीर में धीरे-धीरे व्यापक होता जाता है। साधक के अभ्यासानुसार ही वायुतत्व के रूप में व्यापक होती हूँ, तब मेरा फैलाव (व्यापकता) इस तरह का होता है। इस अवस्था में भी मेरी गति रोकी जा सकती है तथा मेरी व्यापकता को इस प्रकार से कम किया जा सकता है। मुझे इस विषय में और भी बातें बताई। सच तो यह है- कुण्डलिनी शक्ति ने मुझे अपने विषय में बहुत सारी बातें बतायी थी यहाँ पर उनका वर्णन करना उचित नहीं है। सामान्य साधकों को उन जानकारियों से किसी प्रकार का लाभ नहीं मिलेगा।

अर्थ- इस अनुभव में ध्यानावस्था में मुझे कुण्डलिनी ने समझाया। अगर वायु तत्व में भी कुण्डलिनी शक्ति स्थित हो जाय, तो भी उसकी अवस्था पीछे की ओर की जा सकती है क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति जब अग्नि तत्व वाले स्वरूप में रहती है, तब वह मूलाधार से लेकर ब्रह्मरन्ध्र द्वार होते हुए अनाहत चक्र तक गति करती है। यह उसकी पूर्ण यात्रा कही जाती है और साधक के सम्पूर्ण शरीर में

वायु तत्व के रूप में व्याप्त होने लगती है। साधक के शरीर में जब तक वायु तत्व वाला स्वरूप रहता है तब तक कुण्डलिनी शक्ति शरीर के अन्दर गति करती रहती है

ध्यानावस्था में कुण्डलिनी शक्ति ऊर्ध्व होकर ऊपर की ओर गति करती रहती है, फिर वापस मूलाधार चक्र में आकर स्थित हो जाती है। मगर जब बार-बार यात्रा करती रहती है तब उचित समय पर अपनी इस गति को बन्द करके स्थिर हो जाती है। फिर अग्नि तत्व वाले स्वरूप को त्याग कर वायु तत्व वाले स्वरूप को धारण कर लेती है। वायु तत्व वाले स्वरूप को धारण करने के बाद वह साधक के सम्पूर्ण शरीर में वायु रूप से व्याप्त होने लगती है।

जब तक साधक के शरीर में अग्नि तत्व वाला स्वरूप विद्यमान रहता है तब तक कुण्डलिनी शक्ति की गति को रोका जा सकता है। ऐसा सिर्फ तत्वज्ञानी योगी ही कर सकता है, मगर जब कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप वायु तत्व वाला हो जाता है और अभ्यासी के सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाता है, तब उसे मूलाधार में वापस नहीं लाया जा सकता है।

मुझे कुण्डलिनी शक्ति ने अच्छी तरह से समझाया- वायु तत्व से सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाने के बाद भी इस तरह से मुझे वापस लाया जा सकता है। मुझे कुण्डलिनी शक्ति ने समझाकर प्रैक्टिकल जैसा कराके समझाया। जो मुझे समझाया या दिखाया गया, उसका विवरण मैं यहाँ पर नहीं लिख सकता हूँ, यह ज्ञान सिर्फ तत्वज्ञानी को अंतिम अवस्था में दिया जाता है। ऐसा योगी बहुत से कार्यों में महारत हासिल कर लेता है क्योंकि बहुत सी जानकारियाँ उसे ज्ञान के द्वारा प्राप्त हो जाती है।

भगवान मृत्युन्जय जड़ स्वरूप में

यह अनुभव 11 दिसम्बर को शाम के समय आया। ध्यान में देखा- मैं आकाश में बैठा हुआ हूँ। मेरे सामने मृत्युंजय के रूप में भगवान शंकर की मूर्ति दिखाई दे रही थी। वह मूर्ति बहुत ही सुन्दर हल्के नीले रंग की थी, उस मूर्ति के आठ हाथ थे, चार हाथों से दो घड़े पकड़े हुए अपने सिर के ऊपर घड़े से पानी डाल रहे थे। वह मूर्ति सजीव जैसी लग रही थी ऐसा लग रहा था भगवान शंकर साक्षात् बैठे हुए है। तभी मूर्ति के अन्दर से आवाज आयी- "हे योगी, तुमसे जो कहा गया है उसे मानना चाहिये"। वह अपने सिर के ऊपर पानी जैसा तरल पदार्थ डाल रहे थे, वह तरल पदार्थ मूर्ति के अन्दर समा रहा था। वह तरल

पदार्थ मूर्ति से बाहर की ओर नहीं फैल रहा था। कुछ क्षणों बाद वह मूर्ति बीच से फट गयी। फिर भी घड़े से निकलने वाला पानी (तरल पदार्थ) मूर्ति के अन्दर समा रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान शंकर का मृत्युंजय के रूप में दर्शन हुआ है। उनका स्वरूप मनुष्यों या देवताओं के समान नहीं था, बल्कि वह मिट्टी की बनी सजीव मूर्ति जैसे दिखाई दे रहे थे। ध्यानावस्था में मृत्युंजय रूप में मूर्ति दिखाई दे रही थी। यह मूर्ति आठ भुजाओं वाली थी, चार भुजाओं द्वारा दो घड़े पकड़ कर अपने सिर के ऊपर तरल पदार्थ गिरा रहे थे। ये पानी जैसा तरल पदार्थ अमृत होता है ऐसा शास्त्रों में कहीं-कहीं वर्णन मिलता है अर्थात अमृत अपने सिर पर उड़ेल कर (डालकर) अपने आप में तृप्त होते रहते हैं। सम्पूर्ण तरल पदार्थ उसी मूर्ति के अन्दर समा रहा था, उसी समय मूर्ति के अन्दर से आवाज आयी- "हे योगी, तुमसे जो कहा जा रहा है उसे मानना चाहिये" अर्थात मुझसे कहा जा रहा है- संसार को मन से त्याग दो, साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द कर दो। मगर मैं अभी भी साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। इस अनुभव में भगवान मृत्युंजय जी जड़ रूप में दिखाई दे रहे थे, भगवान मृत्युंजय जी, भगवान शंकर जी का ही स्वरुप है।

भगवान श्री विष्णु जी का विशेष प्रकार से दर्शन

यह दर्शन 13 दिसम्बर को जाग्रत अवस्था में स्थूल आँखे खुली होने पर ही हुआ। सुबह के लगभग 8:00 बजे होगे। मैं ध्यान कर चुका था, अपनी आँखे खोले हुए बैठा था। सामने विशाल स्वरूप में हल्के नीले रंग के पारदर्शी स्वरूप में भगवान श्री विष्णु जी के कुछ क्षणों तक दर्शन होते रहे। उसी समय मेरे अंतःकरण से आवाज आयी- "तुम्हारा सन्ताप कुछ समय बाद समाप्त हो जायेगा।" तभी मैं चौंक पड़ा, मेरे चौंकते ही भगवान श्री विष्णु जी अदृश्य हो गये। इस अनुभव में एक बात आश्चर्यजनक थी कि मेरी स्थूल आँखे खुली हुई थी और मुझे स्थूल जगत भी दिखाई दे रहा था। उसी समय भगवान श्री विष्णु जी का विशाल स्वरूप का दर्शन हो रहा था। इस प्रकार का दिव्य दर्शन मैं कभी नहीं भूल पाऊँगा।

अर्थ- भगवान श्री विष्णु का जीवन में प्रत्यक्ष दर्शन हुआ, ऐसा पहली बार हुआ। उन्होंने अत्यन्त सुन्दर चतुर्भुज, विशाल स्वरूप धारण किया हुआ था। उनके शरीर का रंग हल्का नीला चमकीला सा था। मैं उनका सम्पूर्ण स्वरूप देख नहीं पा रहा था। उनके चेहरे से नाभि तक का शरीर ही देख पा रहा था। उनके स्वरूप को देखते समय हमारी स्थूल आँखे खुली हुई थी, इसलिये मुझे कमरा व कमरे की दीवारें, पर्दे

आदि भी दिखाई दे रहे थे। उनका शरीर कमरे व कमरे के बाहर तक दिखाई दे रहा था, क्योंकि उनका शरीर इतना विशाल था कि कमरा और कमरे के बाहर भी विद्यमान था अर्थात कमरे का दृश्य और श्री हरि जी का शरीर दोनों एक साथ ही दिख रहा था। कुछ क्षणों तक प्रभु को बिना पलक झपकाये देखता रहा। कुछ समय बाद प्रभु श्री विष्णु जी अदृश्य हो गये।

मुझे मालूम है प्रभु श्री विष्णु जी स्थूल शरीर धारण नहीं किये थे, फिर भी कमरे की दीवारे, पर्दे आदि स्थूल आँखो के द्वारा एक साथ दिखाई दे रहे थे। इसका सही अर्थ है- मुझे एक ही बार में स्थूल जगत और कारण जगत एक साथ दिखाई दे रहे थे, इसलिये मुझे एक ही बार में कमरे का दृश्य और प्रभु श्री विष्णु जी का स्वरूप दिखाई दे रहा था।

बहुत से भक्तों व साधकों को यही भ्रम हो जाता है। वो समझते है मुझे ईश्वर का दर्शन प्रत्यक्ष हो गया है अथवा ईश्वर ने मुझे प्रत्यक्ष दर्शन दिये है जबकि ऐसा नहीं होता है। स्थूल आँखो के साथ उसकी दिव्य दृष्टि भी क्षण भर के लिये क्रियाशील हो जाती है।

मैं मुक्त हो गया

यह अनुभव स्वप्नावस्था में सुबह 3:30 बजे आया। मैं अपने दाहिने हाथ में पतली सी सफेद रस्सी का एक सिरा पकड़े हुए हूँ। इसी रस्सी के दूसरे सिरे पर एक सफेद पक्षी रस्सी से बँधा हुआ लटक रहा है। मैं उस पक्षी की रस्सी को खोलने लगा, ताकि ये पक्षी मुक्त हो जाये। तभी पक्षी जोर से चिल्लाया और उसके अन्दर से आवाज आयी- "मेरी रस्सी मत खोलो, रस्सी बँधी रहने दो।" मगर मैंने ध्वनि की ओर ध्यान नहीं दिया, मैंने पक्षी की रस्सी खोल दी। पक्षी कराह रहा था फिर वह पक्षी उड़ गया। तभी मैं जोर से बोला- "अब मैं मुक्त हो गया हूँ"। उसी समय मेरी आँखे खुल गयी। मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- सफेद रस्सी बिलकुल पतली सी पेंसिल की मोटाई से भी कम थी। रस्सी का अर्थ है- अज्ञानता से युक्त बंधन। पक्षी का अर्थ है- जीवात्मा, जो अज्ञानतावश संसार से, सांसारिक पदार्थों से मोहित हो गया, इस कारण वह अज्ञानता के कारण बन्धन में बँध गया है। पक्षी के अन्दर से आवाज आयी- "मुझे बँधा रहने दो।" इसका अर्थ है- क्योंकि वह संसार को अपना समझ रहा है। वह अज्ञानतावश संसार को नहीं त्यागना चाहता है क्योंकि संसार को अपना समझ रहा है इसीलिये बन्धन में बँधा रहना चाहता है। पक्षी को रस्सी के बन्धन से मुक्त कर दिया। इसका अर्थ है- संसार के मोह और आसक्ति से मुक्त

कर दिया, अब वह संसार के प्रति आसक्ति और मोह से मुक्त हो चुका है इसीलिए पक्षी कुछ क्षणों बाद उड़ गया, इसका अर्थ है- अब वह बन्धन से मुक्त होकर स्वतंत्र हो गया। अर्थात मैं बंधनो से मुक्त हो गया हूँ। इसका प्रभाव कुछ समय बाद स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगेगा।

अस्मिता का आवरण निकाल रहा हूँ

यह अनुभव 28 दिसम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैं काले नाग का मुँह पकड़े हुए हूँ। मैं उसके मुँह की ऊपर की त्वचा अपने दाहिने हाथ से निकाल रहा हूँ, उसकी त्वचा बिलकुल पतली झिल्ली जैसी है। त्वचा पतली होने के कारण धीरे-धीरे थोड़ी-थोड़ी ही उधेड़ (निकाल) पा रहा हूँ। मैं बाँये हाथ से नाग के मुँह को पकड़े हुए हूँ, नाग का मुँह के अतिरिक्त, शेष शरीर नहीं है। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव मात्र कुछ समय का ही था। नाग का मुँह का अर्थ है- अस्मिता। उसका मुख अस्मिता का प्रतीक है क्योंकि नाग का शरीर ही नहीं है सिर्फ नाग का मुँह ही है। अस्मिता (नाग का मुँह) का आवरण निकाल रहा हूँ ताकि अस्मिता शुद्ध हो जाय। अभी अस्मिता के शुद्ध हो जाने पर उसका स्वरूप नष्ट हुए के समान हो जायेगा, तब चित्त अत्यन्त शुद्ध हो जायेगा। फिर सत्वगुणी अहंकार का प्रकट होने का समय हो जाता है।

संसार त्यागने के पश्चात

यह जानकारी 29 दिसम्बर को रात्रि के समय ध्यानावस्था में दी गयी। ध्यान के समय आकाश से आवाज सुनाई दी- "संसार त्यागने के पश्चात अपनी श्रेष्ठता में स्थित हो जाइये"। यहाँ पर संसार त्यागने का अर्थ है- अन्तःकरण से अर्थात मन से संसार का त्याग कर देना।

सन् 2023

तीन नेत्र वाली स्त्री

यह अनुभव 2 जनवरी को ध्यान में आया। मुझे दिखाई दिया- मेरे चेहरे के सामने अति नजदीक सांवले रंग की स्त्री का चेहरा था। वह बड़ी-बड़ी आँखे खोले हुए मुझे देख रही थी, उस स्त्री के तीनों नेत्र खुले हुए थे। उसके बड़े-बड़े खुले हुए नेत्रों को देखकर चौंक गया, उसी समय हमारा ध्यान टूट गया। फिर उस स्त्री के विषय में सोचने लगा- बड़ी-बड़ी आँखो वाली ये स्त्री कौन है? उसका चेहरा हमारे चेहरे से मात्र एक फीट की दूरी पर था।

अर्थ- यह स्त्री तमोगुण की सर्वोच्च देवी में से एक देवी थी, यह देवी काली देवी या चण्डी देवी में से एक देवी थी। इसी देवी ने मुझे सन् 1999 में स्तनपान कराया था, उन तीन देवियों में एक देवी यह भी थी। इसी देवी द्वारा स्तनपान कराते समय इसके दोनों स्तन सूख गये थे अर्थात इसी देवी द्वारा दिया गया ज्ञान अंत में पूर्ण हो गया था। वही देवी अपना दर्शन देकर शायद सन्देश दे रही है- "अपरा-प्रकृति के विषय में जो ज्ञान प्राप्त करना था वह पूर्ण हो गया, अब मन से इस संसार के प्रति आसक्ति त्याग दो"। इस देवी के विषय में मैंने अपनी पुस्तक 'योग कैसे करें' में अपना अनुभव लिखा है। यह अनुभव पुस्तक के अन्त में लिखा है।

अपरा-प्रकृति ही बन्धन में बँधती है और मुक्त होती है

यह अनुभव 3 जनवरी को स्वप्नावस्था में आया। मैंने देखा- चारों तरफ सुनसान है, दूर-दूर तक भूमि दिखाई दे रही है, मैं आगे की ओर चल दिया। कुछ समय बाद चलते समय देखा- मेरे दाहिनी ओर थोड़ी सी भूमि का क्षेत्र ऊपर की ओर उठा हुआ है। उस ऊपर की ओर उठे हुए स्थान पर एक स्त्री बैठी हुई है, उसने अपने गोद में एक पक्षी को पकड़ कर रखा हुआ है। इस दृश्य को देखकर मैं उस स्त्री को बोला- "तुमने इस पक्षी को क्यों पकड़ कर रखा है, इस पक्षी को छोड़ दो।" उत्तर में वह स्त्री बोली- "मैंने पक्षी को कहाँ पकड़ रखा है?" मैं बोला- "मैं देख रहा हूँ तुमने उस पक्षी को पकड़ कर गोद में रख लिया है, इसे छोड़ दो"। उस स्त्री ने मेरी बात को अनसुना कर दिया। मैं अपने मन के अन्दर सोचने लगा- अब ये स्त्री

पक्षी को मार डालेगी और खा जायेगी। फिर मैं वहाँ से चलने को हुआ तभी उस पक्षी की जोर से चिचियाने की आवाज आयी, मैं समझ गया इस स्त्री ने पक्षी का गला घोंट दिया है। मैं उस स्त्री से बोला- "पक्षियों को पकड़ कर मार कर खाती रहती है"। उत्तर में वह स्त्री मुझसे कुछ नहीं बोली, सिर्फ मेरी ओर टकटकी लगाकर देखती रही। फिर मैं वहाँ से चल दिया, मेरा अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में वह स्त्री अपरा-प्रकृति का स्वरूप है। पक्षी जीव का स्वरूप है, जीव प्रकृति की गोद में बैठा हुआ है। जीव चेतन तत्व होता हुआ भी अज्ञानतावश प्रकृति पर आसक्त हो रहा है इसीलिये वह प्रकृति की गोद में बैठा हुआ दिखाई दे रहा है। ऐसा उसकी आसक्ति के कारण है। अब वह पक्षी को मार डालेगी और खा जायेगी, अर्थात जीव का जीवत्व नष्ट हो जायेगा। उसका जीवत्व यही है- जीव का वास्तविक स्वरूप शुद्ध चेतन है जो ज्ञान से परिपूर्ण है, जो प्राणों के द्वारा जीता था, जीता है और प्राणों के द्वारा ही जियेगा, उसे जीवत्व कहते है। जीवत्व के कारण ही आत्मा कर्मो के बन्धन में बँधती है और संसार में बार-बार जन्म-मरण के चक्र में रहती है, फिर वह सुख और दु:ख का अनुभव करता है। फिर विवेक के द्वारा उच्च अवस्था तक पहुँचा जा सकता है। जब तक कर्मों से मुक्त नहीं होता है, तब तक जीवत्व बना रहता है।

जीव जब मैं पन से (अहंकार) यह समझता है सब कुछ मैं ही करने वाला हूँ और अज्ञानतावश अपरा-प्रकृति या सांसारिक पदार्थों को अपना समझने लगता है, यही जीवत्व है। जब विवेक के द्वारा चेतन और जड़ पदार्थ को अलग-अलग समझ लेता है और यही निरन्तरता बनी रहती है फिर निरुद्धावस्था में धीरे-धीरे संसार की वास्तविकता समझ लेता है। फिर जीव अपने जीवत्व को त्याग कर मूल स्वरूप (आत्मा) में स्थित हो जाता है। अर्थात अहंकार के कारण संसार को अपना समझना ही जीवत्व है, यही बंधन है, यही अज्ञान है, इससे मुक्त होना ही जीवत्व को त्यागना है।

सत्य तो यही है आत्मा नित्य मुक्त है। प्रकृति ही अपने आपको बंधन में बाँधती है और अपने आपको ही बन्धन से मुक्त करती है। क्योंकि तत्व दो ही है- 1- चेतन तत्व, जिसे निर्गुण ब्रह्म कहते है। 2- जड़ तत्व, जिसे प्रकृति कहते है।

सर्वोच्च स्थान पर

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के बाद 3 जनवरी को आया। मैंने अनुभव में देखा- मैं पिण्डाकार क्षेत्र के अन्दर स्थित गलियों में भटक रहा था। इसके बाद मैंने देखा- उन भूल-भुलैया वाली गलियों से अचानक निकल कर उस पिण्ड के सर्वोच्च स्थान पर खड़ा हो गया। मैंने अपने चारों ओर देखा तो चौंक पड़ा- मैं सबसे ऊँचे स्थान पर खड़ा था। सामने की ओर आकाश ही आकाश था, नीचे की ओर भी आकाश था। वह आकाश अत्यन्त शुद्ध और प्रकाशित था। जिस स्थान पर मैं खड़ा था उसके आगे भूमि ही नहीं थी। यदि मैं आगे की ओर कदम बढ़ाऊँ, तो भूमि छूट जायेगी, फिर मैं आकाश में खड़ा हो जाऊँगा। आकाश वाला दृश्य देख कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि मैं भूमि के आखिरी किनारे पर खड़ा हुआ था। चारों ओर विलक्षणता से युक्त प्रकाश फैला हुआ था।

फिर मैंने देखा- मुझसे दूर एक पुरुष चाबुक सा लिये खड़ा था। वह कुछ पुरुषों को मेरी ओर आने से रोक रहा था। शायद वह तीन-चार लोग थे जिन्हें रोक दिया था, वे सभी उस पुरुष से डर रहे थे। वह पुरुष मेरी ओर नहीं आया, दूर से ही लौट गया।

अर्थ- अनुभव में मैं सांसारिक गलियों में घूम रहा हूँ, फिर मैं अपने आप को सर्वोच्च स्थान पर खड़े हुए पाता हूँ, उस स्थान के चारों ओर आकाश ही आकाश विद्यमान है। इसका अर्थ है- मैं उस समय चित्त की आखिरी सीमा पर खड़ा हूँ। अनुभव में एक पुरुष चाबुक सा लेकर खड़ा है। इसका अर्थ है- यह पुरुष प्राकृतिक बन्धन का स्वरूप है। सभी जीव प्राकृतिक बन्धन में बँधे रहते है।

तीसरा नेत्र

यह अनुभव 4 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- मेरी दृष्टि सामने की ओर हुई। मुझे दिखाई दिया- मेरे तीसरे नेत्र से (दिव्य दृष्टि से) हल्के लाल रंग की चमकीली किरणें अत्यन्त तेजस्वी स्वरूप वाली निकल कर दूर तक जा रही है। यह देखकर मैं चौंक पड़ा और सोचने लगा- मेरे नेत्र से अर्थात मेरी दिव्य दृष्टि से अत्यन्त तेजस्वी किरणें निकल रही है।

अर्थ- ऐसा दृश्य अनुभव में आया- कि तीसरे नेत्र से अत्यंत तेजस्वी किरणें निकल रही है। अर्थात दिव्य दृष्टि से सूक्ष्म वस्तु देख लेने की सामर्थ्य होती है। यह दिव्य दृष्टि (तीसरा नेत्र) सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति

को देख सकने का सामर्थ्य रखती है। मगर यह तीसरा नेत्र अभ्यासी की योग्यता, शुद्धता के अनुसार तथा पूर्वजन्म के कर्मानुसार (आध्यात्मिक उन्नति) देख पाने में सामर्थवान होती है।

सातों चक्र जड़ स्वरूप और निम्नमुखी

यह अनुभव 7 जनवरी को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं अपने बाँये हाथ में सफेद रंग के तीन धागे से पकड़े हूँ। उन्ही तीनों धागों में उल्टे आकार में सात प्याले जैसे पिरोहे हुए है। ये सातों प्याले तीनों धागों में उल्टे रूप में लटके हुए हैं। उन सभी प्यालों का रंग हल्का कत्थई जैसा है। इन सातों प्यालों की आपस में दूरियाँ बराबर है अर्थात समान दूरी पर स्थित हैं। मैं इन सातों प्यालों को आश्चर्यचकित हुआ गौर पूर्वक देख रहा हूँ। मैं अपना बाँया हाथ थोड़ा ऊपर की ओर उठाए हुए उन सफेद चमकीले तीनों धागों को पकड़े हुए हूँ। सबसे ऊपर वाले प्याले नुमा पात्र में (सातवें में) बिलकुल थोड़े से क्षेत्र में कुछ हलचल सी हो रही है। नीचे की ओर लटके हुए अन्य सभी प्याले जैसे पात्र बिलकुल शांत व स्थिर है। मैं इस दृश्य को गौर पूर्वक देख रहा हूँ। यह दृश्य मुझे कुछ क्षणों तक ही दिखाई दिया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले सातों पात्र मिट्टी के बने हुए जैसे दिखाई दे रहे थे। ये सातों पात्र (प्यालों के समान) उल्टे लटके हुए थे, जैसे कटोरी उल्टी रख दी जाय। सभी पात्रों का पेंदी वाला भाग ऊपर की ओर था। सभी पात्रों के मध्य भाग में बहुत पतले-पतले तीन धागे से पिरोहे हुए थे। तीनों धागों का अर्थ है- तीन मुख्य नाड़ियाँ। इन नाड़ियों का नाम सुषुम्ना, इडा और पिंगला है। सातों प्याले जो उल्टे लटके हुए दिखाई दे रहे है, ये सातों चक्र है। ये सातों चक्र निम्नमुखी है अर्थात इनका मुँह नीचे की ओर (संसार की ओर) रहता है। ये जड़ रूप में इस प्रकार दिखाई दे रहे है। सबसे ऊपर वाले प्याले के कुछ क्षेत्र में हलचल सी हो रही है अर्थात मैं अभी संसार में व्यवहार कर रहा हूँ। ये सभी जड़ रूप में इसलिये दिखाई दे रहे है, जबकि अभ्यास के समय ये चक्र चेतन्य जैसे दिखाई देते हैं और अभ्यास से पहले ये सभी चक्र सुषुप्तावस्था में रहते हैं। इन सभी का साक्षात्कार हो जाने के कारण इनका वास्तविक स्वरूप (जड़ स्वरूप में) प्रकट हो जाता है। सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति स्वयं जड़ स्वरूप है। सुषुम्ना, इडा और पिंगला ये तीनों मुख्य नाड़ियाँ इन सातों चक्रो को स्पर्श करती हुई ऊपर की ओर जाती है, इसलिए नाड़ियों का प्रभाव इन चक्रों पर पड़ता है।

भगवान शेषनाग जी ने कहा

ये शब्द मुझसे 17 जनवरी को ध्यानावस्था में कहे गये। मैंने ध्यान करने के लिये आँखे बन्द ही की थी तभी भगवान शेषनाग जी के ढेरों फन मुझे दिखाई देने लगे। सिर्फ उनके ढ़ेरों फन दिखाई दे रहे थे, उनका शरीर दिखाई नहीं दे रहा था। उनके फन आकार में बहुत बड़े-बड़े थे। भगवान शेषनाग जी का रंग सफेद था, तभी भगवान शेषनाग जी ने मुझसे कहा- "बेटा इस संसार का त्याग कर दो, ये संसार तुम्हारे लिये अच्छा नहीं है"। फिर वह चुप हो गये। अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- शास्त्रों में वर्णन मिलता है- भगवान नारायण जी भगवान शेषनाग जी के शरीर की शैया बनाकर उसी पर लेटे रहते है। मुझे पहले भी कई बार भगवान शेषनाग जी के दर्शन हुए है। अबकी बार वह मुझे शिक्षा दे रहे है- "बेटा इस संसार का त्याग कर दो, ये संसार तुम्हारे लिए अच्छा नहीं है" अर्थात अपना शेष कार्य पूर्ण करके अपने लोक आ जाओ।

मूलाधार चक्र में आग की लपटें उठना

यह अनुभव 19 जनवरी शाम को आया। ध्यानावस्था में मैंने देखा- मूलाधार चक्र में आग की ऊँची-ऊँची लपटें उठ रही हैं। मूलाधार चक्र में बहुत बड़ा सा हवन कुण्ड है, उसी हवन कुण्ड से आग की ऊँची-ऊँची लपटें उठ रही है। आग की लपटें कुछ समय तक देखता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया, मेरी आँखें खुल गयी और बैठ गया सोचने लगा- मूलाधार चक्र में आग की लपटें अब क्यों उठ रही है?

ऊपर लिखे अनुभव के बाद मैं फिर आँखें बन्द करके बैठ गया- कुछ समय के बाद फिर से मुझे मूलाधार चक्र से आग की लपटें उठती हुई दिखाई दी, जैसा पहले अनुभव में दिखाई दिया था वैसा ही दृश्य दिखाई दिया।

अर्थ- वर्तमान समय में मेरी जो अवस्था है, ऐसी अवस्था में ऐसा अनुभव लगातार दो बार आने का अर्थ होता है- मूलाधार चक्र अत्यंत शुद्ध व पवित्र हो रहा है। मूलाधार चक्र का सम्बंध सांसारिक कार्यों से होता है, अर्थात संसार से सम्बंधित कार्यों में शुद्धता व पवित्रता होनी चाहिये, तभी संसार हमारे लिये नष्ट हुए के समान हो पायेगा और चित्त भी अत्यन्त निर्मल व सात्विक हो पायेगा। इस अनुभव से मुझे प्रसन्नता हुई क्योंकि ये शुद्धता आरोही-अवरोही क्रम के अनुसार हो रही है।

इनको त्यागो

ऊपर लिखे अनुभव के बाद बताया गया। मैं रात्रि 10:00 बजे शान्त बैठा हुआ था तभी ब्रह्मरंध्र के अन्दर वाले क्षेत्र से आवाज आयी- "यहाँ पर तुम्हारा कोई नहीं है, इन सभी का त्याग करो, इन सभी से लिप्तता को समाप्त कर दो, संसार की ओर ध्यान मत दो"।

ऐसे शब्द शायद इसलिये सुनाई दिये, क्योंकि अब भी मैं साधकों का शुभचिन्तक हूँ, इसलिये उनके प्रति कल्याण भाव से कार्य करता रहता हूँ।

मैं ब्रह्माण्ड का सबसे शक्तिशाली पुरुष बनू

यह संकल्प मैंने 24 जनवरी की रात्रि को किया था। मैंने संकल्प में कहा था- "इस ब्रह्माण्ड का सबसे शक्तिशाली पुरुष मैं बनू"। इस संकल्प को मैंने विधिपूर्वक किया था ताकि हमारा संकल्प सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो जाए। यह संकल्प करके मैं ध्यान करने लगा। कुछ समय बाद मुझे धीमी आवाज में सुनाई दिया- "इस संकल्प का क्या अर्थ है, किससे शक्तिशाली बनना चाहते हो, यह स्पष्ट नहीं हुआ"। मैं चुपचाप बना रहा, कुछ नहीं बोला, ध्यान की गहराई में चला गया।

अर्थ- ऐसा संकल्प मैंने दुखी होकर किया था, क्योंकि इस संसार में कमजोर व्यक्ति की कोई नहीं सुनता है। जो शक्तिशाली होता है उसी की सुनी जाती है। मेरे संकल्प का अर्थ यही है, मैंने प्रार्थना स्वरूप भगवान श्री हरि जी से कहा था- "इस ब्रह्माण्ड का सबसे शक्तिशाली पुरुष मैं बनूँ"। वैसे मुझे मृत्यु के पश्चात चंद्रशीश नामक शक्ति भी मिल जायेगी, जिसका स्वरूप तृतीया के चन्द्रमा के समान है, वह शक्ति से युक्त है।

सम्पूर्ण आकाश में विद्यमान तेजोमयी देवी के दर्शन

यह अनुभव ध्यानावस्था में 24 जनवरी को आया। मैं गहरे ध्यान में था- उस समय मुझे अपने सामने आकाश में पालथी लगाये हुए एक देवी दिखाई दी, उसके चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। प्रकाश की किरणें चारों ओर सम्पूर्ण आकाश में फैली हुई थीं। उस प्रकाश के मध्य में लाल साड़ी पहने,

सोने का मुकुट लगाये, कमल के फूल पर एक देवी बैठी हुई दिखाई दी। कुछ क्षणों तक मैं उस देवी का दर्शन करता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैं उस देवी के विषय में जान नहीं पाया कि वह कौन थी। उस समय मुझे ऐसा लग रहा था, जब मैं देवी का दर्शन कर रहा था मानो यही देवी सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने वाली है और शक्ति स्वरूपा है।

अर्थ- अनुभव के समय उस देवी को मैं नहीं पहचान पाया था, मगर 28 जनवरी को मुझे इस देवी के विषय में जानकारी मिल गयी। "इस देवी ने मुझे संग्रहात्मक शक्ति के विषय में बताया कि मैं संग्रहात्मक शक्ति को कैसे धारण कर सकता हूँ।" उस समय देवी ने मुझे बताया- "मैं आदिशक्ति का अंश हूँ"। इस देवी ने मुझे और भी कुछ बताया था, उसे यहाँ पर लिखना उचित नहीं है।

लाओ मंजीरे, बजाओ मंजीरे

मैं 27 जनवरी को सायंकाल मंत्र जाप कर रहा था। तभी हमारे अन्तःकरण से जोरदार आवाज सुनाई दी- "लाओ मंजीरे, बजाओ मंजीरे"। मैं इन शब्दों को सुनकर चौंक पड़ा- ये कैसे शब्द हैं जो अन्तःकरण से सुनाई दे रहे हैं। तभी फिर अन्तःकरण से आवाज आयी- "लाओ मंजीरे, बजाओ मंजीरे"। अब तुम्हारी जिन्दगी मंजीरे बजाने लायक हो गयी है। अब प्रसन्न रहिये। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

मंजीरे बजाने का अर्थ होता है- अब आप प्रसन्न रहिये। मगर जिस प्रकार से मुझसे कहा गया, मैं आश्चर्य में हूँ।

संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का अभ्यास कीजिए

ऊपर लिखी जानकारी के बाद मुझसे ये शब्द कहे गये- "आप संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का अभ्यास कीजिये इससे आपकी शक्ति बढ़ेगी और शक्तिशाली होंगे"। मैं क्षण भर के लिये सोच में पड़ गया- कि मैं संग्रहात्मक शक्ति को कैसे धारण कर सकता हूँ, यह शक्ति तो स्त्रियों के पास होती है, मैं तो पुरुष हूँ। फिर अन्तःकरण से आवाज आयी- "उस शक्ति को धारण करने के लिये आपको माता से जानकारी लेनी होगी"। मैं सोचने लगा- "माता, कौन सी माता से ऐसी जानकारी मिलेगी"। तभी मेरे अन्दर

उस तेजोमयी देवी के स्वरूप की छवि बन गयी, जो कुछ दिन पहले आकाश में कमल के फूल के ऊपर बैठी तेजोमयी देवी दिखाई दी थी। यह अनुभव 24 जनवरी को आया था।

संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का उपाय

यह जानकारी मुझे 28 जनवरी को सुबह दी गयी थी। ध्यानावस्था में मुझे बताया गया- "संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने के लिये उसी देवी से पूछना होगा"। तभी हमारी स्मृति में कुछ दिन पूर्व ध्यानावस्था में दिखाई देने वाली देवी का स्वरूप बन गया। मैंने उस देवी से पूछा- हे माता आप कौन हैं? उत्तर में वह देवी कुछ नहीं बोली, सिर्फ मुझे देखती रही। तभी मुझे मेरे अंतःकरण से आवाज आयी- "मैं आदिशक्ति का अंश हूँ"। मैं बोला- "माता, आप मुझे संग्रहात्मक शक्ति को धारण करने का उपाय बताये"। तब उस देवी ने बताया, माता बोली- "पहले मेरी स्तुति करो और प्रार्थना करो। फिर मैं तुम्हें प्राप्त हो जाऊँगी"। मैं उस देवी से बोला- "माता मैं कैसे आपकी स्तुति करूँ, उस स्तुति में आप से क्या कहूँ, फिर आपके लिए किन-किन शब्दों से प्रार्थना करूँ"। फिर देवी मुझसे बोली- "आप अपने शब्दों से मेरी स्तुति करें और प्रार्थना करें"। मैं बोला- "फिर आपको मैं कैसे धारण करूँगा, आप कुछ बताएं"? फिर वह देवी प्रसन्न मुद्रा में बोली- "मेरे प्रसन्न होने के बाद तुम मेरा स्मरण करोगे और मुझसे कहोगे- आप मेरे अमुक कार्य में सहयोग कीजिये, तब मैं तुम्हारे कार्य में सहयोग करूँगी, उस समय तुम मुझे धारण कर पाओगे। इन सब कार्यों को सम्पन्न करने के लिए कुछ समय तक विशेष तरह से अभ्यास करना पड़ेगा, उचित समय पर अन्य जानकारियाँ मिल जायेंगी"।

भगवान शंकर जी का आदेश शिवलिंग की स्थापना करो

आज 28 जनवरी 2023 है, शनिवार का दिन है, शाम के 7:30 बजे है। मैं अब जो लिखूँगा वह पूर्ण सत्य है। मैं शान्त बैठा हुआ था, उसी समय मुझे कुछ सुनाई देने लगा। मैंने मन को एकाग्र करके कुछ समझने का प्रयास किया, ये शब्द जो सुनाई दे रहे थे। वह भगवान शंकर जी के शब्द थे क्योंकि मैं उनकी आवाज को पहचानता हूँ तभी हल्की सी आकृति भगवान शंकर जी की बनने लगी। मैंने अपनी आँखे बन्द कर ली और उनसे बातें करने लगा। भगवान शंकर जी बोले- "तुम इस चबूतरे को अच्छा सा बना

लो, फिर सही ढंग से शिवलिंग स्थापना करो क्योंकि तुम इस पृथ्वी के परम श्रेष्ठ योगी हो, तुम्हारे द्वारा स्थापित शिवलिंग निश्चय ही पवित्रता से युक्त व श्रेष्ठ होगा। अब तुम बताओ- योगी पुत्र, क्या इस कार्य को करोगे, मेरे शिवलिंग वाले स्वरूप को स्थापित करोगे।" मैं अपने इष्ट देव का आदेश सुनकर भावुक हो गया, आँखों से आँसू आने लगे। फिर मैं हाथ जोड़ कर भगवान शंकर जी से बोला- "प्रभु, आपका आदेश का मैं अवश्य पालन करने का प्रयास करूँगा। आप मुझे आशीर्वाद दीजिए मैं इस कार्य को सफलता पूर्वक कर सकूँ"। भगवान शंकर जी बोले- "तुम इस कार्य को अवश्य कर पाओगे। वर्तमान में तुम्हें जो परेशानी हो रही है उसका कुछ अंश और शेष है, फिर तुम मुक्त होकर शेष जीवन व्यतीत करोगे"। फिर उनकी आवाज शान्त हो गयी।

मैंने सोचा- प्रभु से जो बातें हुई हैं कहीं भूल न जाऊँ इसलिये लिख लूँ। इसलिए भगवान शंकर जी से फिर प्रार्थना की- "आपने जो मुझे आदेश दिया वह फिर से बता दीजिये ताकि मैं लिख सकूँ"। भगवान शंकर जी ने पहले वाला आदेश फिर से दोहरा दिया। अन्त में मेरी परेशानी के विषय में थोड़ा सा विस्तार से बता दिया। भगवान शंकर जी पहले की भाँति मुझसे बोले- "तुम्हारा विरोधी अब वैसे भी दु:खी होकर सोच में पड़ गया है वो मुरझा गया है। तुम्हारे थोड़े से कुछ कर्म ओर शेष हैं उन्हें भोग कर मुक्त जीवन जिओगे। पूर्व काल में तुमने कुछ ऐसे कर्म किये थे जिनके कारण तुम्हें यह दु:ख उठाना पड़ा है। भगवान शंकर जी बोलते हुए कुछ क्षण रुक से गये। भगवान शंकर जी कुछ क्षणों बाद फिर बोले- "तुम्हे यह संसार पूर्ण रूप से त्यागना होगा। जब इस संसार को त्याग दोगे, फिर मुक्त जीवन जिओगे।"

ऋतम्भरा-प्रज्ञा की आकाश में चारों ओर गति

यह अनुभव 29 जनवरी को रात्रि 8:30 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- दूर-दूर तक स्वच्छ साफ भूमि दिखाई दे रही थी। भूमि पर किसी प्रकार की घास, फसल, पेड़-पौधे आदि नहीं थे सिर्फ सर्वत्र समतल भूमि दिखाई दे रही थी। ऐसा लग रहा था मानो जुताई की हुई भूमि पर पानी लगा दिया गया हो। सम्पूर्ण भूमि ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रकाश में सुन्दर सी दिखाई दे रही थी। आकाश एकदम से साफ-सुथरा व स्वच्छ था। ऋतम्भरा-प्रज्ञा आकाश में प्रकाशित हो रही थी। मैं ऋतम्भरा-प्रज्ञा को देख रहा था तब मुझे भान हो रहा था कि मैं ध्यान पर बैठा हुआ हूँ। ऋतम्भरा-प्रज्ञा आकाश में बाये ओर से दाहिनी ओर

क्लॉक-वाइज गति करती हुई धीरे-धीरे आगे की ओर जा रही थी। मैं भी ऋतम्भरा-प्रज्ञा को टकटकी लगाये हुए देख रहा था।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा पहले मुझे आकाश में दक्षिण दिशा की ओर दिखाई दे रही थी, फिर गति करती हुई पश्चिम दिशा की ओर आ गयी। और फिर पश्चिम दिशा से गति करती हुई उत्तर दिशा में आ गयी, उत्तर दिशा से पूर्व दिशा होते हुए दक्षिण दिशा में आ गयी। अर्थात ऋतम्भरा-प्रज्ञा ने आकाश में एक चक्कर क्लॉक-वाइज लगा दिया। आकाश में गति करते समय ऋतम्भरा-प्रज्ञा को मैं लगातार देख रहा था अर्थात मेरी दृष्टि भी चारों ओर बिना गर्दन घुमाए देख रही थी। ऐसा दर्शन जीवन में पहली बार हुआ है कि ऋतम्भरा-प्रज्ञा आकाश में चारों ओर गति करती हुई दिखाई दी हो।

अर्थ- इस अनुभव से स्पष्ट हो रहा है- अब मेरे चित्त की अवस्था पहले की अपेक्षा धीरे-धीरे निर्मल व स्वच्छ हो रही है। अनुभव में ऋतम्भरा-प्रज्ञा चित्ताकाश में चारों ओर गति करती हुई दिखाई दी। इस प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण चित्त पर पड़ रहा था। एक साथ सम्पूर्ण चित्त पर ज्ञान का प्रकाश पड़ने के कारण संसार की बची शेष अज्ञानता भी शीघ्र ही नष्ट होने में सहायता मिलेगी।

तेजोमयी देवी का आशीर्वाद

यह अनुभव 29 जनवरी की शाम को ध्यानावस्था में आया। ध्यान के समय शिवलिंग की स्थापना के लिये चबूतरे के विषय में सोच रहा था, तभी उस तेजोमयी देवी के दर्शन होने लगे। देवी हमारे सामने आकाश में प्रकट हो गयी। तब उस माता (देवी ने) ने मुझसे कहा- "जब आप शिवलिंग की स्थापना करेंगे उस समय प्रभु के साथ मैं भी कुछ समय के लिये प्रवेश कर जाऊँगी। तब आपको मुझसे जो माँगना हो माँग लेना, मैं तुम्हें दे दूँगी"। माता के मुख से ये शब्द सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। मैं भाव विभोर हो गया क्योंकि माता के शब्दों में बहुत ही महान आशीर्वाद मेरे लिये छिपा हुआ था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जब मैं शिवलिंग की स्थापना करूँगा तब उस समय शिवलिंग के अन्दर मेरे इष्ट भगवान शंकर जी कुछ समय के लिये कर प्रवेश जायेगे, उनके साथ माता आदिशक्ति का अंश (तेजोमयी देवी) भी प्रवेश कर जायेगा, अर्थात स्थापना के समय शिवलिंग के अन्दर कुछ समय के लिये शिव और शक्ति भी प्रवेश करके विद्यमान हो जायेगी। यह हमारे जीवन का महत्वपूर्ण क्षण होगा।

गुरु माता और तेजोमयी देवी का सन्देश

यह सन्देश 30 जनवरी शाम को ध्यानावस्था में दिया गया। ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी- "हे पुत्र"। मैं आवाज सुनकर चौंका, फिर सोचा-पुत्र किसे कहा गया। कुछ क्षणों बाद फिर आवाज आयी- "हे योगी पुत्र"। ये शब्द सुनकर मैं समझ गया कि ये शब्द मुझसे कहे गये हैं। मैंने आवाज की ओर गौर किया, तब फिर आवाज आयी- "हे योगी पुत्र, तुम्हारी गुरु माता तुमसे कुछ बात करना चाहती हैं"। तभी मैं चौंका गुरु माता अर्थात माता जी। उसी समय हमारे हृदय में माता जी का चेहरा उभर आया अर्थात दिखाई दिया। माता जी मुझसे बोली- "आनन्द कुमार! तुम जो साधकों को योग सिखाने का कार्य कर रहे हो, भले ही मेरे आश्रम (मिरज- महाराष्ट्र) में नहीं किया है किसी भी जगह कर रहे हो, वो मेरा ही कार्य कर रहे हो। अब तुम महानता के शिखर के पास आ गये हो अथवा ऐसा समझो अब तुमने महानता का दरवाजा खटखटा दिया है। जब तुम महानता के शिखर पर बैठ जाओगे, तब एक बात याद रखना- तुम्हें सभी को माफ करना है, इन्हे यह मालूम नहीं है कि ये तुम्हारे साथ क्या कर रहे हैं"। क्षण भर के बाद माता जी बोली- "ये अन्तिम शब्द तुम्हारी माता (तेजोमयी देवी) ने बोले हैं ऐसा समझो", जबकि मैं देख रहा था- सभी शब्द माता जी ही बोल रही थी, मगर अन्तिम शब्द उस तेजोमयी देवी की प्रेरणा से माता जी के मुख से निकले थे। ये माता जी के कहने का अर्थ था।

अर्थ- मेरी गुरु माता से कई वर्षों बाद बात हुई है। मुझे याद आ रहा है जब मैं मिरज में था तब इस तरह प्यार से बातें होती थी। अब लगभग तीस वर्ष बाद इस तरह से बात करने का सुअवसर आया है। माताजी ने अनुभव में बताया- "तुम महानता के शिखर पर आ गये हो। जब महानता के शिखर पर बैठ जाना, तब उन लोगों को माफ कर देना, जिन्होने आपसे अपराध किया है"।

मेरा स्वभाव

साधकों! आप सभी को यह बताना चाहता हूँ- मैं सिर्फ योगी ही नहीं हूँ, कभी-कभी कुछ समय के लिए भक्ति मार्ग को भी अपना लेता हूँ। मैंने स्वयं देखा है- भक्ति मार्ग को अपनाने से चित्त में शुद्धता शीघ्रता से आने लगती है। आज शाम 31 जनवरी को मैं अपने परम प्रिय प्रभू श्रीकृष्ण जी और श्रीराम जी को याद करने लगा, उन्हें इस प्रकार से याद कर रहा था -

"राधे श्याम राधे श्याम कहो प्यारे, मोर मुकुट मुरली वाले।
सीताराम सीताराम कहो प्यारे, धनुष बाण तरकस वाले।।"

मैं लगभग एक घण्टा तक इन्ही शब्दों द्वारा प्रभू को याद करता रहा, फिर शान्त होकर ध्यान करने लगा। तभी अंतःकरण से आवाज आयी- "योगी, तुम स्वभाव से बहुत सरल हो, सरलता के कारण तुम जाने जाते हो। मगर कभी-कभी तुम्हारा स्वभाव थोड़ा रुखा हो जाता है, ऐसा तुम्हारी प्रकृति के अनुसार होता है। पूर्वजन्मों में तुम्हारी प्रकृति थोड़ी रूखी जैसी रही है, इसी कारण वर्तमान जन्म में भी तुम्हारा स्वभाव ऐसा है"।

कर्माशयों का जलना

यह अनुभव 5 फरवरी को ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- मेरे सामने थोड़ी दूरी पर एक चूल्हा है। चूल्हे के अन्दर पतली-पतली लकड़ियाँ रखी हैं, उन लकड़ियों में आग लगी हुई है। धीरे-धीरे कुछ समय में लकड़ियाँ जल गयी, अब चूल्हे में सिर्फ आग बची हुई थी, वह आग भी ठण्डी होकर राख के रूप में परिवर्तित हो रही थी। चूल्हे के ऊपर कोई पात्र नहीं रखा था अर्थात चूल्हे पर किसी प्रकार का खाना नहीं बन रहा था।

अर्थ- लकड़ियाँ मेरे चित्त पर स्थित कर्माशय हैं जो योगाग्नि के द्वारा जलकर नष्ट हो गये। ये कर्माशय साधकों को मार्गदर्शन करते समय मुझे ग्रहण करने पड़ते हैं। अनुभव में दिखाया गया चूल्हे के अन्दर लकड़ियाँ तो जल रहीं है मगर चूल्हे के ऊपर किसी प्रकार का पात्र नहीं रखा है अर्थात चूल्हे के ऊपर भोजन नहीं बन रहा है। अनुभव से स्पष्ट होता है अभी मुझे किसी प्रकार के कर्म नहीं भोगने है बल्कि चित्त पर स्थित कर्माशयों का नाश हो रहा है।

इस संसार का त्याग कर दो

यह अनुभव 5 फरवरी को ध्यानावस्था में आया। मेरी आँखे बंद थी- तभी सामने की ओर से किसी पुरुष की आवाज आयी मगर वह पुरुष दिखाई नहीं दिया- "हे योगी! तुम इस संसार का त्याग कर दो, त्याग पूर्ण रूप से होना चाहिए, ये संसार तुम्हारे लिये नश्वर है, नश्वर वस्तु का क्या याद करना, इसे

त्याग कर आगे की ओर चले जाओ, जहाँ जा रहे हो"। आवाज में रूखापन व कठोरता थी। मैं शान्त होकर इन शब्दों को सुन रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

आजकल सदैव मुझसे कहा जाता है इस संसार से आसक्ती पूर्ण रूप से समाप्त कर दो, ताकि तुम्हारे लिए संसार छूट जाय और यह नष्ट हुए के समान हो जाये। अपना अभ्यास करते रहो ताकि आगे की अवस्था में स्थित हो सको।

प्रकृति देवी की इच्छा

ये अनुभव 6 फरवरी को आया। मैं ध्यान कर रहा था तभी प्रकृति देवी की आवाज आयी- "तुमने अपनी इच्छा से अध्यात्म में इतना आगे बढ़ा दिया, ऐसा तुम अपने अधिक सामर्थ्य के कारण कर सके हो। किसी ने तुमसे ऐसा करने को नहीं कहा था, मगर अब किसी भी साधक के साथ ऐसा नहीं करना और किसी साधक को आध्यात्मिक सहायता (शक्तिपात) न करना। अब सभी को त्याग कर शान्त हो जाओ।" फिर आवाज आनी बन्द हो गयी।

साधकों ये शब्द मुझसे प्रकृति देवी कह रही थी। उसकी आवाज में थोड़ा रुखापन था। प्रकृति देवी के रुखेपन का कारण स्पष्ट है, साधकों का मार्गदर्शन करते समय प्रकृति देवी के नियमों का पालन नहीं करता हूँ। साधकों को अभ्यास करने से पहले ही, आगे की अवस्था शक्तिपात द्वारा प्राप्त करवा देता हूँ।

संहार करने की शक्ति

मैंने 7 फरवरी को पहले ध्यान किया। फिर ध्यान करने के पश्चात मैंने संकल्प किया- हे ईश्वर, हे मेरे इष्ट देव, हे ब्रह्माण्ड की समस्त दिव्य शक्तियों, मैं आप सभी से प्रार्थना करता हूँ- "मुझे संहार करने की शक्ति प्रदान की जाय"। कुछ क्षणों तक उत्तर का इंतजार किया मगर उत्तर में कोई आवाज नहीं आयी। फिर ध्यान करने लगा, कुछ समय बाद ध्यानावस्था में हल्का सा प्रकाश प्रकट हो गया। प्रकाश में स्पष्ट दिखाई दे रहा था- एक साधारण सी स्त्री शांत मुद्रा में हमारे सामने खड़ी हुई है। मैं उस स्त्री को टकटकी लगा कर देख रहा था। कुछ क्षणों बाद वह स्त्री मुझसे बोली- "हे योगी, संहारक शक्ति तो मेरे पास है।"

अब मैं उस स्त्री को लगातार देखने में लगा हुआ था, मगर वह स्त्री मुझसे कुछ और नहीं बोली, फिर वह स्त्री अदृश्य हो गयी। अनुभव भी समाप्त हो गया।

मैं उस स्त्री को पहचान नहीं सका और न ही उस स्त्री ने अपना परिचय दिया। मुझे मालूम है- प्रकृति ही अपने भिन्न-भिन्न स्वरूपों में सृजन का कार्य करती है और प्रलय के समय अपने स्वरूप को समेट लेती है। मगर शास्त्रों के अनुसार प्रलय के समय एक विशेष प्रकार की क्रिया होती है। फिर वो संहार का कार्य शुरु कर देते है, इस कार्य में भगवान शंकर का सहयोग उनकी संगिनी का दूसरा स्वरूप काली देवी भी देती है। यह देवी तमोगुण की सर्वोच्च देवी है। अगर गौर करें- सृष्टि के समय तमोगुण से ही बहिर्मुखी होकर सृजन का कार्य सम्पन्न होता है। सर्वत्र तमोगुण का व्यापार हो रहा है, इसी प्रकार प्रलय के समय तमोगुण का अपने आप में अंतर्मुखी होने का कार्य होता है। मगर प्रत्यक्ष रूप में तमोगुण की देवी अपनी संहारक शक्ति के द्वारा सर्वत्र विनाश करना शुरु कर देती है, फिर अन्त में अपरा-प्रकृति अपने स्वरूप को समेट लेती है।

इस शक्ति को प्राप्त करने के लिये अभ्यास के द्वारा पूर्ण रूप से अपरा-प्रकृति पर अधिकार करना होगा। ऐसा तभी हो सकता है जब हमारा चित्त अत्यन्त शुद्ध होकर स्फटिक मणि के समान हो जाये, प्रकृति का आवरण शुद्ध होकर पूर्ण रूप से नष्ट हो जाय। तब परा-प्रकृति का अवतरण चित्त पर पूर्ण रूप से हो जायेगा, ऐसी अवस्था में अभ्यासी के लिये अपरा-प्रकृति नष्ट हुए के समान हो जायेगी। तब अभ्यासी का चित्त ईश्वर के चित्त में (परा-प्रकृति में) अंतर्मुखी हो जायेगा, ये अन्तर्मुखता निरन्तर बनी रहेगी। अब आगे लिखना नहीं चाहता हूँ, क्योंकि इस अवस्था को प्राप्त योगी परमशान्ति में स्थित हो जाता है फिर उसमें विकार नहीं आता है। यह निर्वाण की अवस्था होती है। इस अवस्था में योगी इच्छा रहित हो जाता है।

शान्त हो जाओ शान्ति स्थापित करो

यह अनुभव 11 फरवरी का है। ध्यान करते समय मैंने देखा- मुझे मेरे सिर के ऊपरी भाग से आवाज आयी- "योगी अब शान्त हो जाओ और शान्ति स्थापित करो"। मैं ध्यानावस्था में बैठे हुए सोचने लगा, इसका क्या अर्थ है –"शांति स्थापित करो"। मगर मैं समझ नहीं पाया, फिर कुछ समय बाद ध्यान टूट गया।

एक बार फिर मैं शान्त और अन्दर से प्रसन्न सा हो गया, क्योंकि संसार के विषय में ढेर सारा ज्ञान प्राप्त हो गया है, यह ज्ञान याद करके मैं मुस्कुराने लगता हूँ।

पूर्ण सत्य अपनाने से संसार नहीं चलता

यह जानकारी मुझे 13 फरवरी को दी गयी। मुझे बताया गया- "हे योगी, तुम पूर्ण सत्य अपनाने का प्रयास कर रहे हो, ये संसार पूर्ण सत्य अपनाने से नहीं चलता है। इस पूर्ण सत्य में चाहे लेष मात्र ही असत्य हो, तभी संसार का चलना सम्भव हो पायेगा, इस संसार की रचना सिर्फ सत्वगुण से नहीं हुई है, इसमें तमोगुण की मात्रा ज्यादा है, तुम्हारे लिए दु:ख का कारण यही है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। ये सत्य है संसार तमोगुण की प्रधानता से युक्त है। मनुष्य का जन्म भी पाप और पुण्य कर्मों के मिश्रण से हुआ है। ऐसी अवस्था में मनुष्य अधर्म को भी अपना लेता है क्योंकि तमोगुणी कर्म उसके चित्त पर स्थित है।

भगवान श्री कृष्ण जी जड़ रूप में

यह अनुभव 20 फरवरी को आया। ध्यानावस्था में देखा- भगवान श्री कृष्ण का शरीर छोटा सा था, उनके शरीर का रंग हल्का नीला चमकीला सा था। मैं उनके स्वरूप को देख रहा था तभी भगवान श्री कृष्ण जी का शरीर जड़ रूप जैसा दिखाई देने लगा। ऐसा लग रहा था उनका शरीर मिट्टी का बना हुआ है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

भगवान श्री कृष्ण जी का जन्म सामान्य मनुष्यों की भाँति नहीं हुआ था उन्होंने जन्म नहीं लिया था, उन्होंने अवतार लिया था। दोनों शब्दो में भारी अन्तर है। मनुष्य किसी स्त्री के गर्भ से जन्म लेता है, किसी लोक से आया सूक्ष्म शरीर, मनुष्य शरीर में जन्म ग्रहण करता है। अर्थात उसका सूक्ष्म शरीर अपरा-प्रकृति के अन्दर स्थित किसी लोक में विद्यमान रहता है।

अवतार लेने वाला परा-प्रकृति के क्षेत्र से आता है। वह अपने साथ ईश्वरीय शक्तियों को अंशरूप में अपने अधिकार में रखता है। वह जीवों के कल्याण के लिये भूलोक पर आकर प्रकट होता है। उसकी माँ समझ नहीं पाती है, वो अपना बेटा ही समझती रहती है। परा-प्रकृति चाहे जितनी स्फूर्तिवान हो, मगर

होती तो जड़ ही है। आकाश तत्व भी जड़ तत्व ही है। इस अनुभव में भगवान श्री कृष्ण जी का शरीर ऐसा लग रहा है जैसे मिट्टी का बना हुआ है।

ढेरों सफलताऐं

यह अनुभव 20 फरवरी को आया। ध्यानावस्था में देखा- मैं एक छोटा सा झोला (बैग) लिए हूँ, मैं उस झोला के अन्दर झाँक रहा हूँ अर्थात देख रहा हूँ। उस झोले के अन्दर ढेर सारी चाभियाँ पड़ी हुई है। चाभियों को देखकर लगता है- ये चाभियाँ अभी-अभी बन कर आयी है।

अर्थ- चाभियों का अर्थ होता है- सफलता प्राप्त होना अथवा रुकावट दूर होना। कभी-कभी साधकों को अनुभव में बन्द दरवाजा दिखाई देता है ऐसे अनुभव के कुछ दिनों बाद अगर चाभी दिखाई दे, तब इसका अर्थ समझना चाहिए, अनुभव में दिखाई देने वाला बन्द दरवाजा शीघ्र ही खुल जाएगा और आगे का मार्ग प्रशस्त हो जाएगा।

शिवलिंग की पूजा

ये अनुभव 9 मार्च को आया। ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर थोड़ी दूरी पर बड़े आकार में शिवलिंग विद्यमान है। उस शिवलिंग पर दूध प्रकट होकर अपने आप फैल रहा है। शिवलिंग के सामने थोड़ी दूरी पर एक स्त्री बैठी हुई है। मैं उस स्त्री को टकटकी लगाकर देख रहा हूँ। ऐसा लग रहा था यह स्त्री भूलोक की नहीं है। वह स्त्री सिर्फ शिवलिंग की ही पूजा करती है। ऐसा मुझे बताया गया था।

भगवान श्री राम जी

यह अनुभव 26 मार्च का है। ध्यानावस्था में भगवान श्री राम जी का दर्शन हुआ। वह बहुत ही सुन्दर राजाओं की भाँति दिखाई दे रहे थे। मैं उनके शरीर का दाहिना भाग देख पा रहा था, फिर मुझे बाँयी ओर का भी भाग दिखाई देने लगा अर्थात मैं भगवान राम जी के सम्पूर्ण शरीर का दर्शन कर रहा था। पहले मुझे उनके शरीर के दाहिने भाग का दर्शन हुआ, फिर उनके शरीर के बाँये भाग का भी दर्शन होने लगा।

आश्चर्य यह था- उनके शरीर का दाहिना भाग राजाओं के समान था, मगर उनके शरीर के बाँये भाग पर पतली सी मिट्टी की परत चढ़ी हुई थी। ऐसा लग रहा था मानो उनका आधा शरीर (बाँयी ओर का) जड़ रूप में परिवर्तित हो गया है और आधा शरीर अभी राजाओं की भाँति अत्यन्त तेजस्वी था। कुछ क्षणों तक मैं उनका दर्शन करता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

संघर्षमय जीवन

यह जानकारी मुझे 3 अप्रैल को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझे ध्यान में बताया गया- "जीवन संघर्षमय है, जीवन जीने के लिये संघर्ष करना पड़ता है। तुम्हारे साथ क्या हुआ, किसने क्या किया, यह तुम्हारा विषय नहीं है। महत्व इस बात का है- तुमने सफलता की ऊँचाइयों को छुआ है, लक्ष्य को भेदा है, अभी और संघर्ष करना है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 5 अप्रैल सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- हमारे दाहिने ओर ऋतम्भरा-प्रज्ञा क्षणिक देर के लिये दिखाई दी। कल भी ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दी थी। कुछ दिनों से ऋतम्भरा-प्रज्ञा क्षणिक देर के लिए ही दिखाई देती है, फिर अदृश्य हो जाती है। वैसे ऋतम्भरा-प्रज्ञा का दर्शन अक्सर होता रहता है।

भगवान शंकर जी से प्रार्थना

मैंने 5 अप्रैल को सुबह साढ़े तीन बजे ध्यानावस्था में भगवान शंकर जी से प्रार्थना की- "आप मुझे मार्गदर्शन दीजिए, हमारी कुटिया के सारे कार्य कैसे पूर्ण होंगे, क्योंकि मैं अकेला हूँ।" उत्तर में भगवान शंकर जी बोले- "सभी कार्य सम्पन्न हो जायेंगे।" मैं भगवान शंकर जी से बोला- "आप मुझे दर्शन दीजिये"। भगवान शंकर जी मुझसे बोले- "मेरा दर्शन आपको अब नहीं हो पायेगा।" मैंने भगवान शंकर जी से कहा- "क्या शिवलिंग स्थापना के लिये चबूतरा बनवाना है। अगर न बनवाया जाय, क्योंकि पहले

से इतना चबूतरा बना हुआ है"। भगवान शंकर जी बोले- "वह आपके द्वारा बनवाया जायेगा, यह आपका कर्म है, क्योंकि आपके द्वारा स्थापना होनी है"। मैं बोला- "मैं अवश्य कोशिश करूँगा। वह अच्छा सा बन जाय ताकि आपके लिंग स्वरूप की स्थापना कर सकूँ"। फिर हम दोनों की बातें होनी बन्द गयी। ध्यान भी मैंने समाप्त कर दिया और अपनी आँखे खोल दी।

मानव आकार का शुद्ध होना

यह अनुभव 5 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने आकाश में एक मानव आकार खड़ा हुआ है। उस मानव आकार का रंग मटमैला सा था। उसके ऊपर स्वच्छ पारदर्शी आवरण चढ़ा हुआ है। इस मानव आकार के बाहरी ओर बड़ा सा तेज प्रकाश का बना हुआ गोलाकार रिंग जैसा है अर्थात मानव आकार के बाहरी ओर गोलाकार रूप में तेज प्रकाश विद्यमान है। कुछ क्षणों में प्रकाशित गोलाकार क्षेत्र के अन्दर मानव आकार ऊपर-नीचे होने लगा। मानव आकार थोडा सा ऊपर की ओर जाता, फिर नीचे की ओर आ जाता। मानव आकार यही क्रिया कर रहा था। कभी-कभी गोलाकार प्रकाश (वलय) थोडा सा ऊपर-नीचे होने लगता था। यही क्रिया कुछ समय तक देखता रहा, फिर मानव आकार के ऊपर चढ़ा हुआ आवरण फट गया। आवरण के फटने के बाद मानव शरीर के अन्दर से हल्की काली सूखी मिट्टी सी निकल पड़ी। वह मिट्टी आकाश में एक ओर जाकर अदृश्य हो गयी। अब मानव आकार एकदम स्वच्छ दिखाई देने लगा। इसका अर्थ यह है जब मानव आकार गोलाकार प्रकाश में ऊपर नीचे हो रहा था, तब वह मानव आकार स्वच्छ हो रहा था। पहले मानव आकार के अन्दर मिट्टी नहीं दिखाई दी थी लेकिन आवरण फटने के बाद मिट्टी निकल कर दूर चली गयी, फिर मानव आकार शुद्ध निर्मल दिखाई देने लगा। कुछ क्षणों बाद मानव आकार अदृश्य हो गया। फिर अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मानव आकार मटमैला सा था, लेकिन प्रकाशित गोलाकार वलय के अन्दर वह ऊपर की ओर और नीचे की ओर अर्थात आरोही और अवरोही क्रम में क्रमशः शुद्ध हो रहा था। इसीलिये वह मानव आकार जिसका शुद्धिकरण चित्त से लेकर स्थूल तक और स्थूल से लेकर चित्त तक हो रहा था, इसी शुद्धिकरण को अनुभव में इस प्रकार दिखाया गया है। शुद्धिकरण के बाद अशुद्ध तमोगुणी पदार्थ मिट्टी के रूप में निकल कर अदृश्य हो गया। आवरण जो मानव आकार के ऊपर चढ़ा था वह भी फट कर नष्ट हो गया।

अहंकार का स्वरूप

यह अनुभव 5 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं नीचे की ओर देख रहा हूँ। नीचे की ओर मटमैली सी भूमि दिखाई दे रही थी। उस भूमि के मध्य में थोडा सा ऊपर की ओर मिट्टी का उठा हुआ क्षेत्र दिखाई दे रहा था। मैं इसी ऊपरी उठी हुई भूमि को देख रहा था। इस भूमि में कुछ काला-काला सा दिखाई दे रहा था। इस ऊपर उठी हुई भूमि को मैंने अपने दोनों हाथों से पकड़ कर उठा लिया। इसी मिट्टी के अन्दर काली सी चमकने वाली वस्तु को देखने लगा। मगर आश्चर्य की बात यह है- जैसे ही मैंने अपने दोनों हाथों से मिट्टी को उठाया, उसी समय काली सी चमकने वाली वस्तु अदृश्य हो गयी। अब हमारे हाथों में सिर्फ मटमैली सी मिट्टी थी। तभी ऊपर आकाश से आवाज आयी- "यह काला सा चमकने वाला भाग नाग का मुँह था, अब वह मिट्टी में मिल गया है"। मगर मैं तो अपने हाथों में मटमैली सी सिर्फ मिट्टी लिये हुए था। फिर मैंने भूमि की ओर गौरपूर्वक देखा, तो ऐसा लगा- यहाँ पर पहले कोई नाग था मगर अब वह मिट्टी के रूप में परिवर्तित होकर भूमि में मिल गया है अर्थात नाग का स्वरूप नष्ट हो गया है। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में दिखाया गया- अहंकार चित्त की भूमि में मिट्टी के रूप में मिल गया। अहंकार चित्त से प्रकट होता है, फिर उस चित्त में विलीन हो गया। वास्तव में अहंकार जड़ स्वरूप ही है जिसका निर्माण पंचभूतों से होता है। सत्य तो यही है सम्पूर्ण सृष्टि पंचभूतों से ही बनी हुई है, ये पंचभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी) निर्माण के समय न्यूनाधिक होते है। अहंकार जिसमें विलीन (चित्त में) हो गया, वह भी (चित्त) पंच भूतों द्वारा बना हुआ है। पहले ये (चित्त, अहंकार आदि) चैतन्य से दिखाई देते है जब इनका अभ्यास के द्वारा साक्षात्कार हो जाता है, तब ये सभी अपने वास्तविक स्वरूप जड़ रूप में दिखाई देने लगते है। फिर इनका प्रभाव उस अभ्यासी पर नहीं पड़ता है। अनुभव में नाग अहंकार का प्रतीक होता है।

अपरा-प्रकृति जड़ रूप में

यह अनुभव 5 अप्रैल को सुबह साढ़े तीन बजे आया। ध्यानावस्था में मैंने देखा- मेरे सामने एक स्त्री खड़ी हुई है। देखने में वह सामान्य स्त्रियों जैसी दिखती है। मैंने उस स्त्री से पूछा- आप कौन है? उत्तर में वह स्त्री बोली- "मैं आपकी प्रकृति हूँ।" उस स्त्री का उत्तर सुनकर मैं चौंक पड़ा। मैं स्त्री को लगातार देख

रहा था, उसी समय उस स्त्री की दाहिनी कनपटी का स्वरूप बदलने लगा, उसकी कनपटी से सूखी मिट्टी नीचे की ओर गिरने लगी, फिर उसके मुँह का स्वरूप बदलने लगा। मैं चौंक पड़ा- यह स्त्री तो मिट्टी की बनी हुई है। तभी हमारा ध्यान टूट गया, मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- इस स्त्री के चेहरे से जो सूखी मिट्टी नीचे की ओर गिर रही थी, ये वैसी ही मिट्टी थी जब अहंकार मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो गया था। इसका अर्थ है- अहंकार, चित्त और प्रकृति एक ही जैसे पदार्थ से बने हुए है। ये भी सत्य है- अपरा-प्रकृति से ही चित्त का निर्माण हुआ है, चित्त से ही अहंकार बहिर्मुखी हुआ है। इसलिये ये तीनों एक ही जैसे पदार्थों से बने हुए दिखाई दे रहे है। अनुभव में दिखाई देने वाली स्त्री अपरा-प्रकृति ही है, इसलिये वह स्त्री कह रही है- "मैं आपकी प्रकृति हूँ"। अपरा-प्रकृति पंचभूतों से बनी हुई है। ये पंचभूत क्रमशः इस प्रकार है- 1- आकाश, 2- वायु, 3- अग्नि, 4- जल, 5- पृथ्वी तत्व। ये पाँचों तत्व, जड़ स्वरूप होते है। अपरा-प्रकृति के द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि का इन्ही पाँचों तत्वों द्वारा सृजन हुआ है। ये पाँचों तत्व न्यूनाधिक रूप में सभी प्रकार के पदार्थों का निर्माण करते है।

शिवलिंग

यह अनुभव 7 अप्रैल को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- चारों ओर प्रकाश फैला हुआ है। उस प्रकाश में सामने की ओर काफी बड़ा सा शिवलिंग दिखाई दिया, इस शिवलिंग में तीन आड़ी लाइनें सफेद रंग की थी। शिवलिंग बहुत सुन्दर दिखाई दे रहा था। इस अनुभव में शिवलिंग का दर्शन करके मुझे बहुत अच्छा लगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

शिवलिंग का स्वरूप इस अनुभव में इतना अच्छा लगा कि मैं सोचने पर मजबूर हो गया- इसी प्रकार के शिवलिंग की स्थापना अपने कुटिया में करूँगा।

मैं चित्ताकाश में

यह अनुभव 7 अप्रैल को आया। ऊपर लिखे अनुभव के बाद आया। कुछ समय के बाद दृश्य बदल गया। मुझे याद आ रहा है मैंने अपने दाहिने हाथ से कोई वस्तु पीछे की ओर को फेंकी। उसी समय मुझे दिखाई दिया- मैं आकाश में खड़ा हूँ, चारों ओर सर्वत्र आकाश ही आकाश फैला हुआ है, फिर मुझे

दिखाई दिया यह आकाश अण्डाकार स्वरूप में है। यह अनुभव कुछ समय के लिये आया था, फिर मेरा ध्यान टूट गया। इस अनुभव में मैं चित्ताकाश में खड़ा हुआ था।

अज्ञानता की जड़ों को उखाड़ना

यह अनुभव 13 अप्रैल सुबह 4:30 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने दाहिने हाथ को भूमि के अन्दर घुसेड़ कर एक बहुत मोटी सी जड़ पकड़ ली। उस जड़ को बड़े आराम से खींचने लगा, जड़ भूमि के अन्दर गहराई तक विद्यमान थी। यह जड़ भूमि के अन्दर बहुत बड़ा गुच्छा नुमा थी। जड़ खींचते समय भूमि की ऊपरी परत उखड़ती जा रही थी। जड़ की लम्बाई 3 मीटर से ज्यादा रही होगी। ऐसा लग रहा था मैं अपने हाथ में किसी बरगद की लटकने वाली जड़ पकड़े खड़ा हूँ। अन्त में आखिरी जड़ निकल नहीं पायी, तब मुझे जोर लगाकर निकालनी पड़ी। अब मैं अपने हाथ में ढेरों जड़ों का लिपटा हुआ गुच्छा सा पकड़े खड़ा था।

यह अनुभव 14 अप्रैल को सुबह आया। ध्यानावस्था में देखा- मैंने भूमि के अन्दर से जड़ों का गुच्छा सा उखाड़ दिया, इन जड़ों की लम्बाई 5-6 फीट रही होगी। मैं जड़ों को पकड़े हुए खड़ा था ऐसा लग रहा था मानो मैं बरगद के पेड़ की जड़ पकड़े खड़ा हूँ। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- दोनों अनुभवों में भूमि के अन्दर से जड़ें उखाड़ रहा था, ये जड़ें भूमि के अन्दर विद्यमान थीं। अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि चित्त की भूमि है। यह जड़ें अज्ञानता की प्रतीक है। अज्ञानता की जड़ें ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा नष्ट होती है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश जब चित्त की भूमि पर पड़ता है, तब चित्त के उस स्थान पर विद्यमान अज्ञानता धीरे-धीरे नष्ट होने लगती है। यह प्रक्रिया अभ्यासानुसार कई वर्षों तक चलती है। फिर अन्त में ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान का प्रकाश चित्त की भूमि पर सर्वत्र पड़ता है तब ज्ञान के प्रकाश के कारण अज्ञानता मूल रूप से नष्ट होने लगती है। यही अनुभव में दिखाया गया है। अज्ञानता की जड़े उखड़ने लगी है। ऐसी प्रक्रिया बहुत समय से चल रही है। जब अज्ञानता मूल से समाप्त हो जाती है, तब चित्त शुद्ध होकर स्फटिक मणि के समान हो जाता है।

शिवलिंग आवरण मात्र

यह अनुभव 20 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं भूमि के अन्दर बैठा हुआ हूँ। मैंने अपने अगल-बगल में (दाहिनी ओर और बायीं ओर) देखा- तो दिखाई दिया मिट्टी की परत है, फिर मैंने सामने ओर देखा तो दिखा मिट्टी धीरे-धीरे अदृश्य हो रही है। मिट्टी अदृश्य हो-होकर उसका क्षेत्र (मिट्टी का) कम हो रहा है। जिस जगह की मिट्टी अदृश्य हो जाती है, वहाँ रिक्त स्थान (आकाश) होता जा रहा है। मिट्टी लगातार अदृश्य हो रही है। तभी मेरे अन्दर विचार आया- "मैं कहाँ हूँ", उसी समय मैंने ऊपर की ओर देखा तो आश्चर्यचकित हो गया क्योंकि ऊपर की ओर स्वच्छ निर्मल आकाश था, मगर आकाश में पारदर्शी आवरण भी था। यह आवरण 8-10 फीट ऊँचा अण्डाकार सा था। जिस जगह मैं बैठा हुआ था वहाँ की ढेर सारी मिट्टी अदृश्य हो चुकी थी। वहाँ भी आकाश दिखाई देने लगा था, मिट्टी की उपस्थिति मात्र थोड़ी सी रह गयी थी। अब मैंने फिर ऊपर की ओर दृष्टि की तब समझ में आया कि मैं अत्यन्त स्वच्छ शिवलिंग के नीचे जलाधारी के अन्दर बैठा हूँ। जलाधारी वाला क्षेत्र धीरे-धीरे शुद्ध हो रहा है। मैं जहाँ बैठा था, वहाँ की मिट्टी अदृश्य हो चुकी थी अब थोड़ा सा मिट्टी का क्षेत्र रह गया था। मेरे अनुमान से कुछ समय बाद मिट्टी अदृश्य हो जायेगी, वह क्षेत्र भी शुद्ध हो जायेगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- साधकों! इस अनुभव में मैं शिवलिंग के निचले क्षेत्र में विद्यमान था अर्थात शिवलिंग जिस गोलाकार क्षेत्र में रखा रहता है उसी में पनारी जैसी जगह बनी होती है उसी में पानी बहकर नीचे की ओर गिरता रहता है, उसे जलाधारी कहते है। अनुभव में जलाधारी की जड़ता धीरे-धीरे नष्ट हो रही थी। उस स्थान पर शुद्धता फैलती जा रही थी। पहले अनुभव में आपने पढ़ा होगा- शिवछिद्र के द्वारा हमारी ओर परा-प्रकृति का अवतरण हो रहा था ऐसा कई बार हुआ था। जितना परा-प्रकृति का अवतरण होता है उतनी ही हमारे लिए अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जाती है। ये उसी प्रक्रिया के अंतर्गत शुद्धिकरण हो रहा था। इस अनुभव के बाद हमारे चित्त में और शुद्धता आयेगी।

अहंकार का स्वरूप

यह अनुभव 21 अप्रैल को रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने पारदर्शी शरीर वाला एक नाग है। नाग आकाश में सीधा होकर लेटा हुआ है। उस नाग का मुँह मेरी ओर को है। वह

शांत है, मेरी ओर देख रहा है। मुझे यह आश्चर्य हुआ- यह नाग कैसा है?, इसका शरीर एकदम स्वच्छ और पारदर्शी है। ऐसा नाग भूलोक पर नहीं पाया जाता है, और न ही ऐसा नाग कभी अनुभवों में देखा है। जीवन में पहली बार ऐसे पारदर्शी नाग को देख रहा हूँ। वह नाग अपना फन चौड़ा किये था। उसके शरीर की बनावट में विलक्षणता सी थी। कुछ समय तक मैं उस नाग को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- अनुभव में सिर्फ आकाश दिखाई दे रहा था, भूमि कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। मेरे सामने आकाश में ही वह नाग सीधा लेटा हुआ था, उसका मुँह मेरी ओर था अर्थात यह आकाश हमारा ही चित्ताकाश है। नाग अहंकार का प्रतीक होता है। उसका शरीर अत्यन्त स्वच्छ पारदर्शी था अर्थात तमोगुणी अहंकार इतना स्वच्छ हो गया है कि उसका तमोगुण और जड़ता नष्ट सी हो गयी है इसलिये ऐसा स्वरूप वाला दिखाई दे रहा है। पिछले अनुभवों में पढ़ा होगा- नाग का स्वरूप मिट्टी में मिल गया है इसलिये नाग रूपी अहंकार शुद्ध होकर ऐसा दिखाई दे रहा है। उसका मुँह हमारी ओर है और वह अपना फन चौड़ा किये हुए है, इसका अर्थ है- यह अहंकार शुद्ध होकर हमारे चित्त में क्रियाशील है। अब हमारा चित्त शुद्धता की उच्चावस्था पर है।

ईश्वर से माँगो

यह जानकारी मुझे 3 मई को दी गयी। मैं ध्यान कर रहा था तभी अन्तःकरण से आवाज आयी- "अगर किसी वस्तु की जरूरत पड़ती है अथवा जरूरत पूरी करनी है तो ईश्वर से माँगो, किसी मनुष्य से कुछ न माँगना अर्थात ईश्वर से माँगो किसी मनुष्य से नहीं"। उत्तर में मैं बोला- मैं मनुष्यों से नहीं माँगता हूँ, सिर्फ ईश्वर से ही इच्छा रखता हूँ। मैं सदैव ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ- "प्रभू, मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मैं श्रेष्ठ योगी बनूँ और सिर्फ आपका ही स्मरण करूँ।" फिर आवाज आनी बन्द हो गयी।

तपेश्वर

ये शब्द मुझे 18 मई को कहे गये थे। मैं शांत बैठा हुआ कुछ सोच रहा था तभी मेरे अन्तःकरण से आवाज आयी- "योगी, तुम्हारा नाम तपेश्वर होना चाहिये"। ये शब्द सुनकर मैं चौंक पड़ा, क्योंकि मेरे ही

अंतःकरण से आवाज आयी थी। मैंने उस ध्वनि से पूछा- "तपेश्वर मेरा नाम क्यो होना चाहिये था"। तब मुझे उत्तर मिला, फिर ध्वनि सुनाई दी- "तुम्हारी जैसी अवस्था वाले योगी कभी इस प्रकार के कार्य करते नहीं देखे गये है। तुम अपनी कुटिया के निर्माण में जिस प्रकार का परिश्रम कर रहे हो, सच तो यह है तुम अपने को तपा रहे हो, इसलिए तुम्हारा नाम तपेश्वर होना चाहिये। मैं बोला- "मुझे इस समाज में कोई नहीं जानेगा कि मैं इस अवस्था में ऐसा परिश्रम कर रहा हूँ फिर समाज वाले मुझे तपेश्वर के नाम से क्यों जाने, या सम्बोधित करें"। फिर आवाज आयी- "तुम्हें सूक्ष्म जगत के प्राणी इस नाम से अवश्य जानेंगे, क्योंकि वह देख रहे है आप इस प्रकार का परिश्रम कर रहे है।" फिर आवाज आनी बन्द हो गयी।

तारा

यह अनुभव 19 मई की सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं ऊपर की ओर देख रहा था। ऊपर की ओर स्वच्छ निर्मल आकाश था, उस निर्मल आकाश के मध्य में एक बड़ा सा बहुत चमकीला तारा दिखाई दे रहा था। मैंने उस तारे को ऊपर की ओर आँखे करके दो बार देखा। वह तारा बहुत सुन्दर चमक रहा था। फिर हमारी आँखें खुल गयी और अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में इस प्रकार एक तारा चमकता हुआ दिखाई देना एक सौभाग्य की बात होती है। इस प्रकार से चमकता हुआ तारा दिखाई देना बहुत ही शुभ माना जाता है। अनुभव में ऐसे तारे का दर्शन अध्यात्म में उन्नति का प्रतीक माना जाता है।

जब शान्त हो जाओगे

यह अनुभव 18 जून को आया। ध्यानावस्था में मुझसे कहा गया- "जब तुम शान्त हो जाओगे, तब तुम्हारे विरोधी भी परास्त हो जायेंगे"। शायद ये शब्द मुझसे इसलिये कहे गये होंगे क्योंकि कुछ लोग मुझसे विरोध करते है, ऐसे लोगों पर ईश्वर कृपा करें, मैं ऐसा सोचता हूँ। क्योंकि मैं योगी हूँ, मेरा इस संसार में कुछ भी नहीं है। मैं सिर्फ ईश्वर से प्रेम करता हूँ। ऐसी अवस्था में ये लोग हमारा किसी प्रकार का नुकसान नहीं कर सकते है। मैं ऐसे लोगों को पूर्ण रूप से क्षमा करता हूँ ईश्वर से प्रर्थना करता हूँ आप भी ऐसे लोगों को क्षमा कर दीजिये। क्योंकि इन्हें नहीं मालूम है ये सभी हमारे साथ ऐसा व्यवहार कर रहे हैं।

एक स्त्री हृदय गुफा के मुहाने पर

यह अनुभव भी 18 जून को आया था। मैंने ध्यान में देखा- हल्का नीला सा स्वच्छ आकाश है। इसी आकाश में एक स्त्री शान्त भाव से खड़ी हुई है। वह स्त्री मुझे टकटकी लगाकर देख रही है, वह स्त्री बहुत सुन्दर है। उस स्त्री ने बहुत हल्के नीले रंग की पारदर्शी सी साड़ी पहन रखी है। वह साड़ी डिजाइनदार है, उस स्त्री का शरीर भी पारदर्शी सा है। फिर पूरा दृश्य स्पष्ट दिखाई देने लगा- वह किसी गुफानुमा जगह के मुहाने पर खड़ी है। गुफा के मुहाने पर और गुफा के अन्दर हल्का नीला रंग का आकाश है। वह स्त्री शान्त भाव से अब भी हमारी ओर देख रही है। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली गुफा को योगीजन हृदय गुफा के नाम से जानते है। लगभग डेढ़ साल पहले इसी गुफा के अन्दर भगवान श्री हरि जी, भगवान शेषनाग जी के शरीर की शैया पर लेटे हुए दिखाई दिये थे। यह स्त्री कौन है और हृदय गुफा के मुहाने पर क्यों खड़ी हुई मुझे शान्त भाव से देख रही है, अभी मुझे मालूम नहीं है।

राख का ढेर

यह अनुभव 30 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं सामने की ओर राख का ढेर देख रहा हूँ। राख के ढेर के अन्दर एक भी चिंगारी नहीं है। तभी मुझे दिखाई दिया यह राख चूल्हे के अन्दर पड़ी हुई है। चूल्हे के ऊपर कड़ाही रखी हुई है, कढाई अन्दर से स्वच्छ है। मेरी दृष्टि एक बार फिर चूल्हे के अन्दर पड़ी राख की ओर गयी। ऐसा लग रहा था चूल्हे के अन्दर पहले आग जलती रही होगी, अब शांत होकर राख के रूप में परिवर्तित हो गयी है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली राख का अर्थ है- कर्माशयों का जलकर राख हो जाना और दूसरा अर्थ यह है- इच्छाओं का समाप्त हो जाना। अनुभव में कढाई स्वच्छ दिखाई दे रही है, इसका अर्थ है इस कढाई में कुछ भी नहीं बनाया गया है, अर्थात कर्माशयों को अभी नहीं भोगा गया है। फिर चूल्हे वाली राख इच्छाओं के समाप्त हो जाने के कारण दिखाई दे रही है। ऐसी इच्छा ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान के कारण योगाग्नि के द्वारा नष्ट हो जाती है, वो राख के रूप में दिखाई दे रही है।

चित्ताकाश

यह अनुभव एक जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- सामने की ओर अत्यन्त स्वच्छ आकाश है। मैं आकाश में सामने की ओर खड़ा हुआ देख रहा था, फिर मैंने अपनी दृष्टि चारों ओर घुमाकर देखी- आकाश चारों ओर, ऊपर और नीचे सर्वत्र विद्यमान है। भूमि कहीं भी दिखाई नहीं दे रही है। स्वच्छ आकाश में खड़ा हुआ देख कर मैं प्रसन्न हो रहा हूँ। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह आकाश हमारा ही चित्ताकाश है। मैं अपने चित्ताकाश में खड़ा हुआ अपने आप को देख कर प्रसन्न हो रहा हूँ।

सुषुम्ना नाड़ी

यह अनुभव 2 जुलाई को ध्यानावस्था में आया था। ध्यान में मैं नीचे की ओर देख रहा हूँ। मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं किसी पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर ऊपर से नीचे की ओर देख रहा हूँ। पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर का व्यास 4-5 इंच रहा होगा। इस पाइपनुमा वस्तु के ऊपरी भाग से अन्दर की ओर झाँक रहा हूँ। उसके ऊपरी भाग में रिक्तता और प्रकाश विद्यमान है अर्थात पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर प्रकाश दिखाई दे रहा है। पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर नीचे की ओर हल्की सी अशुद्धता भरी हुई है। अशुद्धता (तमोगुण) पर मेरी दृष्टि पड़ते ही अशुद्धता और नीचे की ओर जाने लगी। यह अशुद्धता नीचे की ओर जा रही थी, वहाँ पर अन्दर से पाइप स्वच्छ होता जा रहा था, तब पाइपनुमा क्षेत्र के अन्दर स्वच्छ आकाश दिखाई देता जा रहा था।

अर्थ- ये पाइपनुमा वस्तु सुषुम्ना नाड़ी है। इसी नाड़ी के अन्दर ऊपर की ओर से झाँक रहा हूँ। यह स्वच्छ हो चुकी है। बहुत नीचे की ओर नाड़ी के अन्दर नाम मात्र की अशुद्धता विद्यमान है, वह भी अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे शुद्ध हो जायेगी। इस समय आरोही-अवरोही वाला क्रम चल रहा है। अनुभव में जो नीचे की ओर अशुद्धता दिखाई दे रही है, इसके लिये मुझे अपने स्थूल शरीर को और स्वच्छ करना होगा, फिर सुषुम्ना नाड़ी पूर्ण रूप से शुद्ध हो जायेगी।

हृदय गुफा के अन्दर भगवान नारायण और शेषनाग जी

यह अनुभव 2 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं अपने सामने बहुत दूर-दूर तक अत्यंत निर्मल स्वच्छ स्वप्रकाशित आकाश देख रहा हूँ। सर्वत्र चारों ओर आकाश ही आकाश है। तभी सामने की ओर थोड़ी दूरी पर थोड़ा सा नीचे की ओर को अत्यंत विशाल स्वरूप में भगवान शेषनाग जी प्रकट हो गये। भगवान शेषनाग जी के फनों की ऊँचाई बहुत ज्यादा थी। मेरा अनुमान है फनों की ऊंचाई 20 फीट के लगभग रही होगी। उनके ढेर सारे फन थे, मैं उन फनों (मुँह) की गिनती नहीं कर सकता था। फिर मुझे दृश्य और स्पष्ट होकर कुछ और भी दिखाई देने लगा। कुछ क्षणों बाद मुझे दिखाई दिया- भगवान शेषनाग जी अपने शरीर की अण्डाकार रुप में कुण्डली लगाये हुए हैं, उस कुण्डली के ऊपर भगवान नारायण जी बहुत आराम से थोड़ा सा करवट के बल लेटे हुए है। भगवान नारायण जी के वक्ष पर बहुत तेज प्रकाश चमक रहा है। ऐसा लगता है जैसे कोई मणि चमक रही हो। उस प्रकाश में निश्चय ही विलक्षणता विद्यमान थी। अब मैं अनन्त दूर तक स्वप्रकाशित आकाश फैला हुआ देख रहा था, उसी आकाश में भगवान शेषनाग जी की शैया पर भगवान नारायण जी लेटे हुए दर्शन दे रहे थे। कुछ समय तक अत्यंत दुर्लभ दर्शन करता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- यह अनुभव मुझे हृदय गुफा के अन्दर आया था। हृदय गुफा के अन्दर विद्यमान स्वप्रकाशित आकाश में भगवान नारायण जी और भगवान शेषनाग जी का अत्यंत सुन्दर दर्शन हुआ था। इसी हृदय गुफा के अन्दर पहले भी भगवान नारायण व शेषनाग जी का दर्शन हो चुका है।

सूर्य नाड़ी-चंद्र नाड़ी

यह अनुभव जुलाई में सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सामने ओर धुंधले प्रकाश में मोटे धागे के समान दो नाड़ियाँ अत्यंत स्वच्छ श्वेत रंग की खड़े आकार में चमक रही है। इन नाड़ियो को मैंने गौरपूर्वक देखा- ये दोनों नाड़ियाँ नीचे से ऊपर की ओर समानान्तर रूप से विद्यमान थी जैसे रेल की पटरियाँ समानान्तर रूप से विद्यमान रहती है। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया। ये दोनों नाडियाँ सूर्य नाड़ी और चन्द्र नाड़ी है।

ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप नष्ट हुए के समान हुए

यह अनुभव 4 जुलाई को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं किसी जगह पर खड़ा हूँ, दो नाग हमारे सामने भूमि पर मरे हुए पड़े है। एक नाग मेरे पास मरा हुआ पड़ा था। मैंने उस नाग को झुककर अपने हाथों से पकड़ लिया और फिर बोला- यह तो मर गया है। फिर मैंने उस नाग को दूर फेंक दिया। इसके बाद वहीं थोड़ी दूरी पर पड़ा हुआ दूसरे नाग की ओर देखा, फिर मैं बोला- यह नाग भी मर गया है। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में दिखाई देने वाले दोनों नाग अहंकार के ग्राह्य स्वरूप और ग्रहण स्वरूप है। अनुभव में दोनों नाग मरे हुए दिखाई दे रहे है, इसका अर्थ है- अहंकार के ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप मेरे लिए नष्ट हुए के समान हो गये है इसलिये अनुभव में ये दोनों नाग मरे हुए दिखाई दे रहे है। अहंकार जब बहिर्मुखी होता है तब दो स्वरूपों में प्रकट होता है, एक- ग्राह्य रूप में, दूसरा- ग्रहण रूप में। ग्राह्य रूप में वह तन्मात्राओं के रूप में प्रकट होता है। ग्रहण रूप में वह मन और सूक्ष्म इंद्रियों के रूप में प्रकट होता है।

इस विषय में आप हमारी पहले लिखी हुईं पुस्तकों में विस्तार से पढ़ सकते है। सत्य तो यही है सम्पूर्ण संसार में अहंकार ही अहंकार में बरत रहा है मगर अज्ञानता के कारण मनुष्य ये समझता है कि सम्पूर्ण कार्य मेरे द्वारा ही हो रहे है अथवा मैं करता हूँ। अब इस अनुभव में ग्राह्य स्वरूप और ग्रहण स्वरूप हमारे लिए नष्ट हुए के समान हो गये है अर्थात सम्पूर्ण संसार हमारे लिये नष्ट हुए के समान हो गया है।

सिर का ऊपरी भाग और नवयुवक

यह अनुभव 6 जुलाई को आया। दोपहर का समय था। हमारी आँखे अपने आप बन्द हो गयी और हमारा ध्यान लग गया। मैंने देखा- हमारे सामने एक सुन्दर सा नवयुवक खड़ा हुआ था। मैं उसे देख रहा था, तभी मैं सोचने लगा- यह नवयुवक कौन है? कुछ क्षणों बाद मैं स्वयं बोल पड़ा- "यह युवक तो मैं ही हूँ"। फिर हमारी दृष्टि उस नवयुवक के सिर के ऊपरी भाग पर पड़ी। मैं आश्चर्यचकित हो गया क्योंकि उस नवयुवक के सिर की ऊपरी परत नहीं थी। सिर ऊपर की ओर से पूर्ण रूप से खुला हुआ था। सिर के अन्दर का भाग खोखला जैसा था और सिर के अन्दर की परत पर काला-काला लेप सा था, क्योंकि दिव्य

दृष्टि के द्वारा दूर से ही ऊपर की ओर से सिर के अन्दर का दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों बाद सिर के ऊपरी भाग से काला-काला सा पदार्थ निकलने लगा था, फिर अनुभव ही समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में जो नवयुवक दिखाई दिया, उसे मैं अपने आपको मान रहा हूँ। सिर का ऊपरी भाग नहीं है, ऊपर से खुला हुआ दिखाई दे रहा है। सिर के अन्दर का भाग खाली है। सिर के अन्दर मस्तिष्क नहीं है। सिर आवरण मात्र है, इसी के अन्दर की तरफ से परत में (आवरण में) काला-काला गाढ़ा सा पदार्थ लगा हुआ है। काला-काला गाढ़ा सा पदार्थ (तमोगुण) बाहर की ओर निकलने लगा। काला-काला गाढ़ा पदार्थ तमोगुण है, ये बाहर निकल रहा है ये अच्छी बात है। इससे प्रकृति के आवरण पर प्रभाव पड़ेगा जिस आवरण में शिवछिद्र विद्यमान है। इस आवरण का तमोगुण धीरे-धीरे कम होगा, इससे आवरण की परत पतली सी हो जाएगी। इससे प्रकृति का आवरण पतला हो-होकर छिन्न-भिन्न होने में (नष्ट होने में) सहायता मिलेगी।

ब्रह्माण्ड के मध्य में खड़े आकार वाले खम्बे का मूल

यह अनुभव ऊपर लिखे अनुभव के बाद 11 जुलाई को आया। मैंने देखा- अत्यन्त शुद्ध निखरा हुआ आकाश है। उस आकाश के मध्य में पाँच धागे जैसे गोलाकार रूप में खड़े आकार में विद्यमान है। ऐसा लग रहा है जैसे गोलाकार खम्बा बनाने के लिए, सफेद सरिया जैसे गोलाकार रूप में खड़े है। अनुभव में देखा- लगभग एक फीट व्यास में गोलाकार क्षेत्र में खड़े आकार में धागे खड़े है। इन पाँचों धागों के अन्दर का क्षेत्र गोलाकार खम्बे जैसा बन रहा था। तभी ये पाँचों धागे एक बार आकाश में लहराये, फिर सीधे रूप में पाँचों धागे खड़े हो गये। इन पाँचों धागों में आपस में शुद्धता का अन्तर था। एक धागा शुद्धता के कारण चमक रहा था, अन्य चारों धागों में इतनी शुद्धता नहीं थी। इन पाँचों धागों के ऊपरी सिरे और निचले सिरे का अन्त दिखाई नहीं दे रहा था। अर्थात धागों के ऊपरी सिरे, ऊपर आकाश के अन्दर समाए हुए थे, उन धागों के निचले सिरे नीचे की ओर आकाश में समाए हुए थे अर्थात इन धागों का ऊपरी और निचले सिरों के अन्त दिखाई नहीं दे रहे थे।

अर्थ- आपने आध्यात्मिक पुस्तकों में पढ़ा होगा- भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु के सामने एक खड़े रूप में खम्बा प्रकट हो गया, इस खम्बे के ऊपरी सिरे और निचले सिरे का अन्त ये दोनों ढूँढ नहीं पाये, फिर वापस आ गये, उस खम्बे के अन्दर से भगवान शंकर जी प्रकट हो गये। मैंने अपनी पुस्तक

में लिखा है- एक खड़े आकार में खम्बा है। उस खम्बे के ऊपर सुनहरी नागिन लिपटी हुई है। वह सुनहरी नागिन फन चौड़ा करके मुझे फुफकार रही है। मैं उस नागिन से जितना दूर जाने का प्रयास करता हूँ उतना ही वह खम्बा मेरे नजदीक आ जाता है अर्थात मैं नागिन से चाहे जितना दूर जाऊँ मगर उस खम्बे की दूरी उतनी ही बनी रहती है। खड़े आकार में यह खम्बा प्रकृति का ही स्वरूप है। प्रकृति पाँच तत्वों से बनी हुई है। अनुभव में दिखाई देने वाले पाँचों धागे जैसे- पाँचों तत्वों के प्रतीक है।

सुबह होने वाली है

यह अनुभव 16 जुलाई को सुबह ध्यानावस्था में आया। पूर्व दिशा के क्षितिज पर तेज उजाला दिखाई दे रहा था। ऐसा लग रहा था मानो अभी थोड़ी देर में सूर्य निकलने वाला है, क्योंकि क्षितिज में लालिमा छाई हुई है। ऐसा दृश्य कुछ क्षणों के अन्तर से दो बार देखा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में जब क्षितिज पर इस प्रकार की लालिमा दिखाई दे कि सुबह होने वाली है अथवा सूर्य निकलने वाला है। तब इसका अर्थ होता है- भविष्य में शीघ्र ही आध्यात्मिक अवस्था में उन्नति होने वाली है।

शिवछिद्र

यह अनुभव 4 अगस्त को आया सुबह ध्यानावस्था में देखा- मैं सामने की ओर देख रहा हूँ। सामने ओर मात्र थोड़ी दूरी पर एक छिद्र दिखाई दे रहा है। छिद्र के उस पार स्वच्छ आकाश दिखाई दे रहा है। आकाश स्वप्रकाशित और विलक्षणता को लिये हुए है। मैं उस पार के आकाश को देख रहा था तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला छिद्र ही शिवछिद्र है। यह छिद्र परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के बीच आवरण में विद्यमान रहता है। छिद्र के उस पार का आकाश इसलिये अत्यन्त स्वच्छ निखरा हुआ दिखाई देता है, क्योंकि परा-प्रकृति में गुण साम्यावस्था में रहते हैं। साम्यावस्था में सत्वगुण प्रधान रुप से विद्यमान रहता है। सत्वगुण का स्वभाव हलका व प्रकाशक है। रजोगुण व तमोंगुण गौण रुप में रहते हैं।

परा-प्रकृति में सत्वगुण प्रधान रुप से विद्यमान रहने के कारण वहाँ का क्षेत्र सदैव स्वप्रकशित रहता है इसीलिए परा-प्रकृति का क्षेत्र विलक्षणता व विशुद्धता से युक्त है।

संसार की व्यवस्था मुझ पर छोड़ दो

यह अनुभव 30 सितम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैं दिल्ली के एक होटल में साधकों के साथ ठहरा हुआ था। मैं साधकों को योग के विषय में समझा रहा था- "भविष्य के लिये मुझे कुछ साधकों की आध्यात्मिक व्यवस्था करनी होगी"। थोड़ी देर बाद हम सभी साधक ध्यान करने लगे। मुझे ध्यानावस्था में एक आवाज सुनाई दी- "आप अपना देखो, संसार की व्यवस्था मुझ पर छोड़ दो, मैं देख लूँगी"। ये आवाज सुनकर मैं सोच में पड़ गया कि आखिरकार मुझसे ऐसा क्यों कहा गया है? मुझे इन शब्दों पर हैरानी हो रही थी- "आप अपना देखो" इन शब्दों को सुनने के बाद मेरा ध्यान टूट गया।

अर्थ- अनुभव में मुझसे कहा गया- "आप अपना देखो"। इसका अर्थ है- आप अपने आध्यात्मिक व्यवहार को देखो। मुझसे कई बार कहा गया है- आप मार्गदर्शन करना छोड़ दो, मगर मैंने मार्गदर्शन करना नहीं छोड़ा है। इससे अपरा-प्रकृति नाराज रहती है क्योंकि मैं अपरा-प्रकृति की व्यवस्था में कुछ न कुछ हस्तक्षेप करता रहता हूँ। साधकों को बिना अभ्यास किये ही कुछ न कुछ देता रहता हूँ।

सन् 2024

माता शक्ति का सन्देश

यह अनुभव 12 जनवरी को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। ध्यान में मैंने देखा- मैं बड़े से दरवाजे के अन्दर प्रवेश करके बहुत बड़े हालनुमा जगह के अन्दर पहुँच गया हूँ। वह हालनुमा जगह ऐसी लग रही थी मानो बहुत बड़े महल के अन्दर का क्षेत्र है। उस हालनुमा क्षेत्र की दीवारें नक्काशीदार बहुत ही सुन्दर थी ऐसा लग रहा था। इन दीवारों से हल्का सा प्रकाश निकल रहा है। मैं हालनुमा जगह की सुन्दरता देख रहा था, तभी मुझे सामने की ओर ऊँचे स्थान पर सोने की बनी हुई स्त्री दिखाई दी। मैंने नजदीक जाकर देखा- वह तपे हुए सोने की बनी हुई मूर्ति है। उस सुन्दर मूर्ति से बाहर की ओर तेज प्रकाश निकल कर फैल रहा था। मैं उस स्वर्ण मूर्ति को देख रहा था, तभी मूर्ति मुझसे बोल पड़ी- "इस संसार को छोड़ दो, ये संसार तुम्हारे लायक नहीं है, संसार को त्याग कर आगे का मार्ग तय करो"। मैं उस सोने की मूर्ति के द्वारा ऐसे शब्द सुनकर चौंक पड़ा और सोचने लगा- यह तो शक्ति स्वरुपा है, तपे हुए सोने के समान इसका स्वरूप है। मैं उस शक्ति स्वरुपा माता से बोला- "**हे माता आपकी जैसी आज्ञा है मैं अवश्य ही वैसा ही करूँगा**"। इन शब्दों के साथ मेरा ध्यान टूट गया, मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली सोने से बनी हुई मूर्ति वास्तव में कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप है। उसने मुझे समझाया- "इस संसार का त्याग कर दो, यह संसार तुम्हारे लायक नहीं है"। इस प्रकार के सन्देश कई दिव्य शक्तियों द्वारा दिये गये है। मैं अब साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द कर दूँगा। अनुभव में एक महत्वपूर्ण बात यह थी- माता कुण्डलिनी शक्ति स्त्री रूप में सोने से बनी हुई मूर्ति के स्वरूप में थी अर्थात उनका शरीर जड़ स्वरूप में दिखाई दे रहा था। इससे पहले माता कुण्डलिनी शक्ति दिव्य सुन्दर स्त्री के स्वरूप में दिखाई देती थी।

आकाश तत्व का परमाणु

यह अनुभव 18 जनवरी को रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। अब की बार मेरी समाधि 2-3 घण्टे की लगी होगी। समाधि अवस्था में सामने थोड़ी दूरी पर पानी की बूँद के समान आकार में बड़ा सा

बिन्दु दिखाई दिया। इस बिन्दु को कुछ क्षणों तक देखता रहा, फिर मुझे याद आया- यह बड़ा सा बिन्दु पानी की बूँद के समान है, और इस बूँद का रंग पूरी तरह से रंगहीन है। यह आकाश तत्व का परमाणु है। कुछ क्षणों तक मैं आकाश तत्व के परमाणु को देखता रहा फिर समाधि भंग हो गयी, मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला रंगहीन बूँद का आकार जैसा आकाश तत्व का परमाणु है। आकाश तत्व का परमाणु रंगहीन पानी की बूँद के समान होता है। आकाश तत्व का परमाणु सिर्फ एक ही होता है। मुझे कानपुर आई.आई.टी. के पीएच.डी. के छात्र ने बताया था- वैज्ञानिक आकाश तत्व का कोई परमाणु नहीं मानते है, आकाश तत्व का परमाणु नहीं होता है।

मेरा पारदर्शी स्वरूप

यह अनुभव 22 जनवरी को मध्य रात्रि के समय आया। मैं "श्री हरि ओम" मंत्र का जाप कर रहा था। फिर कुछ समय बाद मुझे मेरा सम्पूर्ण सिर अत्यंत पारदर्शी रूप में दिखाई देने लगा। इस तरह अपना पारदर्शी सिर पहली बार देखा था। पारदर्शी सिर का स्वरूप आकाश से बना हुआ दिखाई दे रहा था। मंत्र बोलते समय मैं अपने पारदर्शी सिर को भी देख रहा था और मुझे अपना मुँह खुला हुआ शरीर के निचले भाग सीने के अन्दर दिखाई दे रहा था अर्थात मेरा स्थूल मुँह मेरे सीने (वक्षस्थल) के अन्दर विद्यमान था। मंत्र बोलते समय मुझे अपना खुला हुआ मुँह, जीभ और मुँह के अन्दर का क्षेत्र दिखाई दे रहा था। इस अनुभव को देखते समय बड़ा आश्चर्य हो रहा था। मैं मंत्र बोलता जा रहा था और अपना पारदर्शी सिर तथा अपना स्थूल मुँह शरीर के अन्दर ही सीने में (वक्षस्थल में) देख रहा था। उस समय मैं समझ रहा था कि मंत्र के प्रभाव से मेरे अन्दर स्वच्छता आ रही थी। कुछ समय तक मैं मंत्र जाप करता रहा, फिर मंत्र जाप करना बन्द कर दिया।

अर्थ- इस मंत्र को जाप करने के लिये बहुत समय पहले से ध्यानावस्था में कहा गया था, क्योंकि मुझे "श्री हरि जी" का साक्षात्कार हो चुका है। मैं ज्यादातर इसी मंत्र का जाप करता रहता हूँ। इस मंत्र के जाप के प्रभाव से मुझे शुद्धता प्राप्त हो रही थी, जैसा कि अनुभव में मुझे दिखाया गया था।

मंत्र जाप करते समय

यह अनुभव 26 जनवरी को सुबह आया। मैं मंत्र जाप कर रहा था। मंत्र जाप करते समय देखा- मुझे मेरे पैर दिखाई दे रहे है। दोनों पैरों के मध्य क्षेत्र में (घुटने और पिंडलियों) अत्यन्त निर्मल स्वच्छ आकाश दिखाई देने लगा। मैं जैसे-जैसे मंत्र बोल रहा था वैसे-वैसे स्वच्छ आकाश का क्षेत्र बढ़ता जा रहा था। हमारी दृष्टि अब अपने पैरों के नीचे के क्षेत्र पर थी तब मैंने देखा- हमारे पैर आकाश में खड़े थे। मंत्र बोलते समय स्वच्छ आकाश का क्षेत्र बढ़ता जा रहा था कुछ समय बाद मुझे पैरों के नीचे का आकाश दूर-दूर तक दिखाई देने लगा। ऐसा निर्मल आकाश बहुत दिनों बाद दिखाई देने का अवसर मिला। आकाश प्रकाशित सा दिखाई दे रहा था। प्रकाश आता हुआ किसी भी ओर से नहीं दिखाई दिया। कुछ समय बाद मैंने मंत्र जाप करना बन्द कर दिया।

अर्थ- इस अनुभव में मंत्र जाप के प्रभाव से पैरों की पिंडलियाँ और घुटने स्वच्छ होकर आकाश के रूप में दिखाई दे रहे थे। ये क्षेत्र स्थूल नहीं दिखाई दे रहे थे। प्रकाश किसी भी ओर से नहीं आ रहा था फिर भी आकाश प्रकाशित सा था। अर्थात पैरों की स्थूलता नष्ट होकर आकाश के रूप में दिख रही थी।

स्फटिक मणि

यह अनुभव 5 फरवरी को रात्रि के समय आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- हमारे सामने 5-7 मीटर की दूरी पर कोई वस्तु चमक रही थी। चारों ओर धुंधला प्रकाश फैला हुआ था। कुछ क्षणों तक वह चमकीली वस्तु अपनी जगह पर चमकती रही, फिर मेरी ओर आने लगी। जब मेरे नजदीक आ गयी तब मैं प्रसन्न होकर बोल पड़ा- "यह तो स्फटिक मणि है"। स्फटिक मणि अपनी जगह पर धीरे-धीरे उल्टी-पुल्टी हो रही थी। मैंने स्फटिक मणि पूर्ण रूप से देख ली थी, मैं इसे देख कर प्रसन्न हो रहा था। कुछ क्षणों बाद स्फटिक मणि थोड़ा सा पीछे की ओर हो गयी, फिर वह अदृश्य हो गयी।

अर्थ- स्फटिक मणि के दर्शन होना अभ्यासी के लिये श्रेष्ठ होता है। इसका अर्थ होता है- कुछ समय पश्चात चित्त की शुद्धि बहुत ज्यादा हो जाएगी। स्फटिक मणि का स्वभाव होता है- उसके सामने जैसी वस्तु रख दी जाती है, वह वस्तु उसमें वैसी ही दिखाई देती है। स्फटिक मणि के दो अलग-अलग तरफ भिन्न-भिन्न रंग के फूल रख दिये जायें तब उस मणि के द्वारा अलग अलग रंग के फूल दिखाई देंगे।

मैं और शनिदेव

यह अनुभव 23 फरवरी को ध्यानावस्था में आया। अनुभव में धुंधला प्रकाश था फिर भी कुछ दूरी तक स्पष्ट दिखाई दे रहा था। ध्यानावस्था में मैं स्थूल शरीर से निकलकर सूक्ष्म शरीर द्वारा तीव्र गति से ऊपर की ओर गति करता हुआ जा रहा था। मुझसे तीन मीटर की दूरी पर एक मानव पारदर्शी सूक्ष्म शरीर धारण किये हुए मेरे सामने ही ऊपर की ओर चला जा रहा था। उस सूक्ष्म शरीर का मुँह मेरी ओर था, दोनों एक समान गति से ऊपर की ओर तीव्र गति से चले जा रहे थे। स्थूल जगत को पार करके सूक्ष्म जगत में प्रवेश करके ऊपर की ओर चले जा रहे थे। फिर सूक्ष्म जगत को पार करके कारण जगत में पहुँच गये। दोनों कारण जगत में जाकर आमने सामने खड़े हो गये। मेरे सामने सूक्ष्म शरीर धारण किये हुए वह पुरुष खड़ा हुआ था, देखने में वह बलिष्ट शरीर वाला दिख रहा था। उसी समय मुझे उस पुरुष पर क्रोध आ गया, मैंने आगे बढ़ कर उस पुरुष के मुँह पर दो मुक्के जोरदार मारे। मेरे मुक्के की मार वह सह नहीं सका। मेरे मुक्के लगते ही वह सात-आठ फीट नीचे आकाश में गिर गया। मैं अपनी जगह पर खड़ा हुआ नीचे की ओर देख रहा था। जब उस पुरुष ने उठ कर खड़े होने का प्रयास किया, तब मैं चौंक पड़ा, और मेरे मुँह से निकला- "अरे शनिदेव आप"। उत्तर में शनिदेव कुछ नहीं बोले, मगर मैं फिर उन्हें क्रोध से देखने लगा। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

ध्यान टूटने के पश्चात मैं अनुभव के विषय में सोचने लगा, फिर कुछ समय बाद मैं आसन से उठ कर खड़ा हो गया। फिर भी मैं अनुभव के विषय में सोच रहा था।

अर्थ- ध्यानावस्था में मैं अपने स्थूल शरीर को त्याग कर ऊपर आकाश में तीव्र गति से जाने लगा, तभी मैंने अपने सामने की ओर देखा- एक पुरुष भी मेरे साथ ऊपर की ओर चला जा रहा था। मैं स्थूल जगत और सूक्ष्म जगत को पार करके कारण जगत में जाकर खड़ा हो गया, इसी प्रकार वह पुरुष भी मेरे सामने खड़ा हो गया। मुझे नहीं मालूम है मुझे क्रोध क्यों आ गया। जब मेरा मुक्का खाकर नीचे आकाश में गिर गये और उठकर खड़े होने लगे, तब मैंने उन्हें पहचाना कि यह तो शनिदेव है। इस अनुभव के अनुसार शनिदेव हमारे मुक्के की मार सह क्यों नहीं पाये, वह अत्यन्त शक्तिशाली देवता है तथा सूर्य पुत्र भी है।

आश्चर्य की बात यह है- मैं इन पर क्रोधित क्यों हो गया? वर्तमान जीवन में मैं शनिदेव से किसी प्रकार से मतलब नहीं रखता हूँ, फिर ऐसी घटना क्यों घटी, मुझे मालूम नहीं है।

संसार का स्वभाव

यह जानकारी ध्यानावस्था में 23 फरवरी को दी गयी। ध्यानावस्था में आवाज सुनाई दी- "प्रत्येक मनुष्य स्वार्थ से दूसरे से निकटता बनाये रखता है। स्वार्थ पूरा होने पर अथवा स्वार्थ पूरा न होने पर उसे छोड़ कर चला जाता है, यह संसार का स्वभाव है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैं गहरे ध्यान में चला गया।

ध्यानावस्था में मुझे जो जानकारी दी गयी है वो निश्चय ही सत्य है। आजकल मनुष्यों में यही होता है। अपने स्वार्थ के कारण मनुष्य दूसरे से अपनापन दिखाता है अथवा मिथ्या प्रेम दर्शाता है। जब उसका स्वार्थ पूरा हो जाता है तब वह मनुष्य छोड़ देता है। कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है, जब उसका स्वार्थ पूरा होता नहीं दिखाई देता है तो भी उसे छोड़ कर चला जाता है। ज्यादातर देखा गया है कि मनुष्य अपने स्वार्थ से ही दूसरे के निकट आता है।

कमल के फूल पर

यह अनुभव 21 मार्च को ध्यानावस्था में आया। मैंने ध्यान में देखा- आकाश में एक कमल का फूल खिला हुआ है। उस फूल के ऊपर एक मनुष्य आसन लगाये हुए बैठा है। कमल का फूल आगे-पीछे और दायें-बायें खूब लहरा रहा है, कमल के फूल की डण्डी एक-डेढ़ फीट लम्बी लगी हुई है। वह कमल का फूल आकाश में ऐसे लहरा रहा था जैसे आँधी आयी हुई है अथवा तेज वायु चल रही है। फूल के ऊपर बैठा मनुष्य बड़े आराम से आसन पर बैठा हुआ है, फूल के लहराने से उस मनुष्य के शरीर पर किसी प्रकार का असर नहीं पड़ रहा है। कुछ क्षणों तक यह दृश्य देखता रहा, फिर ध्यान टूट गया।

अर्थ- मैं पहले लिख चुका हूँ- सहस्त्रार चक्र के ऊपर भी चक्र होते हैं। इसलिये कमल का फूल आकाश में खिला हुआ लहराता दिखाई दे रहा है ऐसा वायु के वेग के कारण हो रहा है। यह वायु का वेग हमारे जीवन को प्रभावित करने का प्रयास करेगा। मगर अनुभव में कमल के फूल पर बैठे मनुष्य को किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ता है, अर्थात हमारे जीवन में कुछ भी हलचल हो, इसका असर मुझ पर नहीं पड़ेगा। अर्थात वह विचलित नहीं होगा, यह हमारी स्थिरता की पहचान है।

त्याग की भावना और अहंकार

यह अनुभव 24 मार्च को आया। मैं शांत बैठा हुआ था। मेरे अन्दर विचार आया- मुझे सब कुछ छोड़ देना चाहिये क्योंकि संसार के विषय में अच्छी तरह से भलीभाँति जानकारी हो गयी है। अब सिर्फ मुझे ईश्वर चिंतन ही करना चाहिये। मैं ऐसा सोच रहा था उसी समय मेरी आँखें बन्द हो गयी तभी मुझे दिखाई दिया- सामने की ओर एक नाग है उस नाग का आवरण मात्र रह गया है। किसी-किसी जगह से आवरण टूटा हुआ है, नाग का शरीर अन्दर से पूरी तरह से पोला है, इस पोले (खोखले) क्षेत्र में निर्मल प्रकाश भरा हुआ है। ऐसा लग रहा है- कुछ समय बाद नाग का आवरण भी छिन्न-भिन्न हो जायेगा। मैं यह दृश्य देख कर मुस्कुरा रहा था, क्योंकि नाग का टूटा-फूटा आवरण नष्ट होने पर नाग का स्वरूप नष्ट हो जायेगा। फिर वह प्रकाश रूप में परिवर्तित हो जायेगा।

अर्थ- जैसे-जैसे मेरे विचारों में परिवर्तन आया कि मुझे आसक्ति छोड़ देनी चाहिये, उसी समय नाग दिखाई देने लगा, नाग अहंकार का प्रतीक होता है। नाग का शरीर आवरण मात्र शेष रह गया है। यह आवरण भी कई जगह से टूटा-फूटा है अर्थात अहंकार का अस्तित्व नाममात्र का रह गया है। नाग का शरीर खोखला है उस खोखले भाग में प्रकाश भरा हुआ है, इसका अर्थ है- अहंकार शुद्ध होकर अन्दर से प्रकाश से युक्त हो गया है। ऐसा लग रहा है- नाग के शरीर का आवरण कुछ समय बाद छिन्न-भिन्न हो जायेगा, अर्थात अहंकार का तमोगुण कुछ समय बाद नष्ट हो जायेगा, तब अहंकार पूर्ण रूप से प्रकाशवान शरीर वाला हो जायेगा। इसका प्रभाव चित्त पर पड़ेगा और अपरा-प्रकृति के आवरण पर पड़ेगा।

जब अनुभव के अनुसार अहंकार में शुद्धता आ जायेगी फिर वह प्रकाश स्वरूप हो जायेगा तब इसका प्रभाव अस्मिता पर पड़ेगा। अस्मिता शुद्धता की चरम सीमा पर आ जायेगी और चित्त भी अत्यन्त निर्मल होने लगेगा। सबसे बड़ा प्रभाव अपरा-प्रकृति के आवरण पर भी पड़ेगा इस आवरण का स्वरूप स्वच्छ हो-होकर पतला सा हो जायेगा। यह अवस्था आने में मुझे कई महीनों का अभ्यास करना पड़ेगा और साधकों का मार्गदर्शन भी छोड़ना पड़ेगा, क्योंकि यह कार्य अज्ञानता के अंतर्गत आता है।

चित्त

यह अनुभव 25 मार्च को ध्यानावस्था में आया। मैंने ध्यान में देखा मुझे सामने की ओर दीवार पर आला (NICHE) बना हुआ दिखाई दिया, वह दीवार सफेद रंग की थी। कुछ क्षणों बाद आले के आस पास का क्षेत्र दिखाई देने लगा। मैं उस आले को गौर पूर्व देख रहा था, तभी दीवार टूटने लगी। आला भी बायीं ओर से टूटने लगा। धीरे-धीरे दीवार की ऊपरी परत टूट सी गयी, आला भी टूटा-फूटा सा दिखने लगा, मैं यह दृश्य देख मुस्कुरा रहा था, क्योंकि दृश्य को देखते समय उसका अर्थ भी समझ रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला आला (NICHE) चित्त के अन्दर का वह स्थान है जहाँ पर साधकों को ध्यानावस्था में दीपशिखा के समान जलती हुई ज्योति दिखाई देती है। तब साधकों को ऐसा लगता है ये ज्योति आले के अन्दर जल रही है। आज के अनुभव में वह क्षेत्र जड़ रूप में और टूटा हुआ दिखाई दे रहा है।

साधकों, जब साधक अभ्यास करता है तब उसे कभी-कभी अंतःकरण में (हृदय में) जलती हुई ज्योति दिखाई देती है। यह जलती हुई दीपशिखा के समान लौ (ज्योति) को ज्यादातर अज्ञानी लोग आत्मा समझने की भूल कर बैठते हैं, जबकि यह चित्त की अत्यंत सशक्त सात्विक वृत्ति होती है, जो दीपशिखा के समान स्वरूप को धारण कर लेती है, अन्य वृत्तियाँ उसका सहयोग करती है। अच्छी तरह से कठोर अभ्यास करने वाले साधकों को लौ (ज्योति) इसी आलेनुमा क्षेत्र के अन्दर दिखाई देती है। इस अनुभव में वह आले वाला क्षेत्र पूर्ण रूप से जड़ रूप में दिखाई दे रहा था। अब उसका स्वरूप टूटा सा दिखाई दे रहा था।

मेरी गोद में

यह जानकारी 25 मार्च को ध्यानावस्था में दी गयी। मुझसे प्रकृति देवी ने कहा- "हे पुत्र, देख लिया संसार में कितनी गंदगी है, यहाँ कोई किसी का नहीं है, जल्दी से संसार को त्याग कर मेरी गोद में आ जाओ"। मैं चुप रहा, मैंने उत्तर नहीं दिया। फिर प्रकृति देवी ने कुछ नहीं कहा।

अर्थ- इस अनुभव में सिर्फ आवाज सुनाई दे रही थी, प्रकृति देवी का दर्शन नहीं हो रहा था, सिर्फ ध्वनि प्रकट हो रही थी।

स्फटिक मणि

यह अनुभव ध्यानावस्था में 25 मार्च को आया। एक पुरुष अत्यंत स्वच्छ स्फटिक मणि के समान पारदर्शी जैसी वस्तु लिये खड़ा हुआ था। अनुभव समाप्त हो गया।

वह पुरुष मैं ही था। अनुभव का अर्थ है- मेरा चित्त अत्यंत स्वच्छ हो जायेगा, अभी कुछ और अभ्यास करना होगा।

सनकादिक ऋषि और अपरा-प्रकृति

पहले मैंने सोचा यह अनुभव न लिखूँ, फिर बहुत सोचने के बाद मैं इस अनुभव को लिखने को तैयार हो गया। मैंने अपनी इस पुस्तक में बहुत से अनुभव इसलिये नहीं लिखे है, क्योंकि उनकी शब्दावली पढ़ने में अच्छी नहीं लगती। इस पुस्तक को सभी प्रकार के पाठक, साधिकाऐं, साधक भी पढ़ेंगे, जबकि वे अनुभव ज्ञान दृष्टि से अच्छे थे। क्योंकि अभ्यासी को उच्चावस्था में प्रकृति रचना के अनुसार सभी प्रकार के अनुभव आते है। इसी प्रकार का मैं ये अनुभव लिख रहा हूँ।

यह अनुभव 25 मार्च को ध्यानावस्था में आया। मैं आकाश में खड़ा हुआ सामने की ओर देख रहा हूँ। सामने की ओर आकाश में एक विशालकाय स्त्री को लेटे हुए देखा, उस स्त्री ने कपडे नहीं पहने हुए है, वह पूर्ण रूप से नग्नावस्था में थी। उस स्त्री के शरीर की लम्बाई लगभग 12 से 15 फीट रही होगी। मैं स्त्री के शरीर को देख कर चौंक पड़ा क्योंकि इतनी विशालकाय शरीर वाली स्त्री इस पृथ्वी पर नहीं होती है। मैं उस स्त्री के पास गया। पहले मुझे ऐसा लगा शायद यह स्त्री मरी हुई है, इतना सोचते ही उस स्त्री ने अपने होंठों को हिलाया, फिर मैं समझ गया यह स्त्री शान्त होकर शवासन मुद्रा में लेटी हुई है। फिर मैंने उस स्त्री को सिर की ओर से देखना शुरु किया, कमर तक उस स्त्री को देखा, उसका नाभि वाला क्षेत्र पेट आदि सामान्य से दिखायी दे रहे थे। उस स्त्री की जननेन्द्रिय स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी। मैं उस स्त्री की जननेन्द्रिय देख कर चौंका, क्योंकि वह स्त्री बच्चे को जन्म दे रही थी। मैं जन्म देने की क्रिया को गौरपूर्वक

देख रहा था। वह स्त्री बच्चे को जन्म बड़े आराम से दे रही थी। जब उस बच्चे का जन्म हो गया, तब वह बच्चा थोड़ा सा नीचे की ओर (लगभग एक मीटर) लुढ़कता हुआ आ गया। फिर उठ कर चल दिया। तभी फिर वह स्त्री दूसरे बच्चे को जन्म देने लगी। कुछ क्षणों में उस बच्चे का भी जन्म हो गया, इसी प्रकार उस स्त्री ने चार बच्चों को जन्म दिया। सभी बच्चे जन्म होते समय ही 5 से 6 साल की उम्र के बराबर के थे। तीन बच्चे एक साथ होकर दक्षिण दिशा की ओर को चले गये, एक बच्चा मेरे पास आकर खड़ा हो गया। यह बच्चा सबसे छोटा चौथा बच्चा था। इस बच्चे के सिर पर मोटी सी चोटी थी, सिर पर बाल नहीं थे। ऐसा लगता था मानो इसके सिर से बाल अभी-अभी उस्तरे से बना दिये गये है। यह बच्चा ब्राह्मणों जैसा दिखाई दे रहा था। यह बच्चा भी नग्न अवस्था में था। जब स्त्री बच्चों को जन्म दे रही थी तब वह बिलकुल शान्त अवस्था में थी अर्थात उसका शरीर हिलडुल नहीं रहा था। ऐसा लग रहा था बच्चे को जन्म देते समय उसके शरीर को कोई परेशानी नहीं हो रही है, उसका पेट सामान्य सा था, ये सब देख कर मैं आश्चर्यचकित हो रहा था। चारों बच्चों का स्वरूप एक जैसा ही था। सभी की उम्र 5 से 6 साल के बराबर थी। अनुभव में सबसे छोटा अर्थात चौथा बच्चा मेरे पास ही खड़ा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली स्त्री अपरा-प्रकृति है। अपरा-प्रकृति ने जिन चार बच्चों को जन्म दिया है, वे चारों सनकादिक ऋषि है। इनके नाम इस प्रकार है- 1- सनक, 2- सनन्दन, 3- सनातन और चौथा सनत्कुमार। इस अनुभव में मुझे दिखाया गया- सृष्टि के शुरूआत में इन चारों भाइयों का प्राकट्य अपरा-प्रकृति द्वारा हुआ है अर्थात सृष्टि की शुरूआत के समय ये अपरा-प्रकृति से जन्म लेते हुए दिखाए गये है जबकि अपरा-प्रकृति या देवियाँ इस प्रकार से किसी बच्चे को जन्म नहीं देती है बल्कि संसार की स्त्रियाँ इस प्रकार से बच्चे को जन्म देती है। जन्म लेते ही तीन बच्चे एक साथ एक ओर को चले गये, मगर सबसे छोटा चौथा बच्चा जिसका नाम सनत्कुमार हुआ वह मेरे बगल में आकर खड़ा हो गया इसका अर्थ है- वे तीनों बच्चे एक साथ एक ओर चले गये। वह तीनों संसार में किसी प्रकार से लिप्त नहीं होंगे। चौथा बच्चा सनत्कुमार मेरे पास खड़ा है वह संसार में किसी न किसी रूप में व्यवहार करेगा।

जब सृष्टि का सृजन हो गया, भगवान ब्रह्मा जी सृष्टि का कार्य करने लगे। सबसे पहले ब्रह्मा जी ने अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा इन्ही चारों सनत कुमारों को प्रकट कर दिया तब भी ये 5-6 साल के बच्चे के रूप में ही थे। अब प्रश्न उठता है जब अपरा-प्रकृति द्वारा चारों कुमारों ने जन्म ले लिया फिर ब्रह्मा जी ने अपनी इच्छा शक्ति से कैसे प्रकट कर दिया। सृष्टि को उत्पन्न करने का कार्य भगवान ब्रह्मा का ही है। सनत

कुमारों का जन्म प्रकृति द्वारा हो चुका था मगर अभी सृष्टि में नहीं आये थे, उन कुमारों को सृष्टि में ब्रह्मा जी द्वारा ही आना था। सबसे पहले सृष्टि में ब्रह्मा जी ने इन कुमारों को ही प्रकट किया था और उन्हें आदेश दिया कि वह आगे चलकर सृष्टि का कार्य करें। मगर चारो कुमारों ने सृष्टि का कार्य करने से मना कर दिया, फिर वह चारो कुमार तपस्या में लीन हो गये। भगवान शंकर का प्राकट्य परा-प्रकृति में परम शिव के तीसरे नेत्र से हुआ था, मगर अपरा-प्रकृति में भगवान ब्रह्मा के मस्तक से प्रकट हो गये। इसी प्रकार भगवान नृसिंह जी भगवान ब्रह्मा के नाक के छिद्र से बाहर आ गये थे।

अपरा-प्रकृति में सृष्टि का कार्य भगवान ब्रह्मा जी करते है इसीलिये उनका नाम- प्रजापति और पितामह भी कहा गया है। शास्त्रों में कई जगह वर्णन मिलता है- सनत्कुमार जी ने कुछ ऋषियों का शब्दों से मार्गदर्शन किया। ये वही चौथा बच्चा है जो मेरे पास आकर खड़ा हो गया था। सनत्कुमार का वर्णन शास्त्रों में मिलता है। इन्हीं चारो कुमारों के श्राप से जय-विजय को तीन जन्मों तक राक्षस कुल में जन्म लेना पड़ा था। भगवान ब्रह्मा जी की इच्छा शक्ति द्वारा उत्पन्न होने के कारण इन्हे ब्रह्मा जी के मानस पुत्र कहा गया है। ब्रह्मा जी ने चारो कुमारों से कहा- "पुत्रों! तुम सृष्टि उत्पन्न करो।" किन्तु वे जन्म से ही मोक्ष मार्ग का अनुसरण करने वाले और भगवान के ध्यान में तत्पर थे। सनत्कुमार जी ने बहुत से ऋषियों-मुनियों को मार्गदर्शन किया है। इसका वर्णन शास्त्रों में मिलता है।

मैं स्त्री भी हूँ और पुरुष भी

यह अनुभव 27 मार्च को आया था। सुबह के समय मैं कुर्सी पर बैठा हुआ अपनी आँखे बन्द किये था। उसी समय मेरा ध्यान लग गया। मैंने देखा- हमारे शरीर में स्त्री की जननेन्द्रिय है, यह दृश्य देख कर मैं चौंक पड़ा, ऐसा कैसे हो सकता है। मैं जननेन्द्रिय को कुछ समय तक देखता रहा, फिर कुछ समय बाद उसी स्थान पर पुरुष की जननेन्द्रिय दिखाई देने लगी। कुछ समय बाद फिर स्त्री की जननेन्द्रिय उसी स्थान पर दिखाई देने लगी, मैं टकटकी लगाकर कुछ समय तक देखता रहा। फिर मेरी आँखे खुल गयी, ध्यान टूट गया।

मेरी आँखें फिर अपने आप बन्द हो गयी। मुझे अब भी स्त्री की जननेन्द्रिय दिखाई दे रही थी फिर उसी स्थान पर कुछ समय बाद पुरुष की जननेन्द्रिय दिखाई देने लगी। अबकी बार हमारा ध्यान नहीं लगा था मैं सिर्फ आँखे बन्द किये था। यह दृश्य देखते समय मुझे कुटिया के पेड़ों पर बैठे पक्षियों की आवाज

आ रही थी। फिर मैं कुर्सी से उठ कर वहीं पर घूमने लगा, फिर आँखे बन्द करने पर इस प्रकार का दृश्य दिखाई नहीं दिया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने से स्पष्ट होता है कि मैं पुरुष भी हूँ और स्त्री भी हूँ। इस अनुभव का अर्थ है- मैं पूर्ण हूँ अर्थात मैं स्त्री भी और पुरुष भी हूँ। यह अवस्था निकट भविष्य में अवश्य ही प्राप्त हो जायेगी। अनुभव से पहले यह दृश्य ध्यानावस्था में आया, फिर यह दृश्य आँखे बन्द करने मात्र से दिखाई दिया।

सिर धड़ से अलग

यह अनुभव 1 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरा सिर अपने आप धड़ से कट कर अलग हो गया, धड़ नीचे की ओर गिर गया। अब मैं सिर को देख रहा था, वह आगे की ओर गति कर रहा था। थोड़ा आगे जाकर धीरे-धीरे अदृश्य हो गया। ऐसा लग रहा था गर्दन को तेज धार वाले हथियार से काट दिया गया हो। शरीर में किसी प्रकार का दर्द भी नहीं हुआ था।

अर्थ- ध्यानावस्था में ऐसा लग रहा था कि मेरी गर्दन तेज धारदार वाले हथियार से काट दी गयी है, मगर किसी को गर्दन काटते हुए नहीं देखा था। सिर्फ दिखाई दे रहा था धड़ (शरीर), वही पर गिर गया मगर सिर आगे की ओर जाकर अदृश्य हो गया। मैं आकाश में खड़ा हुआ ये सब देख रहा था। दो वर्ष पूर्व भी ऐसा ही अनुभव आया था। उस अनुभव में भगवान विष्णु जी ने मेरी गर्दन सुदर्शन चक्र से काट दी थी, तब सिर उनके पैरों पर गिर गया था। मैं उनके सामने हाथ जोड़े हुए खड़ा था। इसका अर्थ होता है- "अभ्यासी का 'मैं' पन समाप्त हो जाना" अर्थात अहंकार का नाश और बुद्धि का समर्पण होना है। जब साधक का अहंकार मर जाता है तो वह देहाभिमान से मुक्त होकर शुद्ध चेतन में स्थित हो जाता है। यह देह (शरीर) के प्रति आसक्ति को समाप्त करने का प्रतीक है। जब अभ्यासी के समझ में आ जाता है, वह शरीर नहीं आत्मा है तब सिर कटा हुआ ही माना जाता है।

भगवान श्री गणेश जी का साक्षात्कार

यह अनुभव ध्यानावस्था में 3 अप्रैल को आया। मेरे सामने पतला सा हल्का काला परदा दीवालनुमा दिखाई दे रहा था अर्थात मुझे काला सा बहुत बड़ा पर्दा सा दिखाई दे रहा था। इस परदे के उस पार किसी पुरुष के सिर के ऊपर बालों का जूड़ा दिखाई दे रहा था, वह बालों का जूड़ा परदे के पीछे से धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठ रहा था, वह बालों का जूड़ा तीन चक्कर (स्टेप) वाला था। फिर किसी का चेहरा दिखाई देने लगा। वह परदे के पीछे से धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठ रहा था। कुछ क्षणों बाद उसका पूरा शरीर ऊपर की ओर दिखाई देने लगा, उसका शरीर तपे हुए सोने के समान था। वह पुरुष बहुत ही सुन्दर देवताओं के जैसा स्वरुप वाला था। वह मुझे टकटकी लगा कर देख रहे थे, तभी मैं अपने मन के अन्दर सोचने लगा- "यह देवता कौन सा है?, मैं उनकों पहचान नहीं पाया"। मैंने उन से पूछा आप कौन है? मेरे द्वारा पूछने पर उस पुरुष ने अपने सिर को दायीं ओर को झटका। सिर को झटकते ही उसका सिर हाथी जैसे स्वरूप में परिवर्तित हो गया और उनके मुँह पर हाथी की सूँड भी दिखाई देने लगी। तभी मैं बोल पड़ा- "ये तो भगवान गणेश जी हैं"। उनका सोने जैसा तपा हुआ शरीर बहुत ही सुन्दर लग रहा था। वह हमारी ओर देख रहे थे तभी वह बिना मुड़े अपने आप पीछे की ओर जाने लगे। वह सहजासन मुद्रा में बैठे हुए थे। इनके पीछे बनी सुरंगनुमा जगह के अन्दर अपने आप जाने लगे। जितना सुरंग के अन्दर अपने आप जा रहे थे उतना ही उनका शरीर छोटा होता जा रहा था। सुरंग के अन्दर जाते समय उनका शरीर छोटा हो-होकर अदृश्य हो गया। यह सुरंगनुमा क्षेत्र शिवछिद्र था। भगवान गणेश जी शिवछिद्र के अन्दर जाकर विलीन हो गये। अब मैं भगवान गणेश जी के विषय में सोचने लगा। फिर अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में हमारे और गणेश जी के बीच में काला सा पर्दा विद्यमान था। यह परदा अहंकार का आवरण है अर्थात परदा रूपी अहंकार के उस पार गणेश जी धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठते हुए आ रहे थे। उन्होंने सुन्दर देवता के समान स्वरूप को धारण किया हुआ था, मगर उनके सिर पर तीन स्टेप का ऊँचा जूड़ा विद्यमान था। उनका शरीर तपे हुए सोने के समान बना हुआ था। इसका अर्थ है- गणेश जी का स्वरूप (मुँह) देवताओं के समान सुन्दर था जैसा कि मुझे अनुभव में दिखाई दे रहे थे। उस समय इस स्वरूप में मैं पहचान नहीं पाया था, तब उन्होंने अपने सिर को दाहिनी ओर झटका दिया। झटके के साथ ही उनका स्वरूप बदल गया, वह हाथी वाले मुँह के स्वरूप में परिवर्तित हो गये। इसका अर्थ है- पहले उनका मुँह देवताओं के समान था फिर उनका मुँह हाथी के मुँह के समान हो गया, इसका वर्णन शास्त्रो में

मिलता है। फिर वह अपने आसन मुद्रा में बैठे हुए धीरे-धीरे पीछे की ओर जाने लगे, वह गुफा जैसी जगह शिवछिद्र है। वे शिवछिद्र के अन्दर जाकर अदृश्य हो गये।

मुझे याद आ रहा है। मैंने अपनी पुस्तक "**तत्वज्ञान**" में लिखा है। वायु तत्व के साक्षात्कार के समय भगवान गणेश जी को देखा था- वायु देवता और हनुमान जी वहाँ जड़ रूप में (पत्थर के रूप में) परिवर्तित हो गये थे। भगवान गणेश जी वायु तत्व के अन्दर खड़े रहे, वो जड़ रूप में परिवर्तित नहीं हुए थे। इस अनुभव में वह शिवछिद्र में अन्दर की ओर जाकर अदृश्य (विलीन) हो गये। इसका अर्थ है भगवान गणेश जी का प्राकट्य शिवछिद्र के अन्दर से होता है। जब अपरा-प्रकृति अपना सृजन का कार्य करती है तब शिवछिद्र के अन्दर से ॐ शब्द का प्राकट्य होता है, ॐ की ध्वनि से गति उत्पन्न होती है, गति के उत्पन्न होते ही महाविस्फोट होता है, महाविस्फोट से प्रकाश उत्पन्न होता है। फिर अपरा-प्रकृति आकाश तत्व में अधिष्ठित होकर वायु तत्व के द्वारा अपना सृजन का कार्य करती है।

वायु तत्व के प्राकट्य के समय ही भगवान गणेश जी का प्राकट्य होता है मगर उस समय ये अव्यक्त रूप में रहते हैं। जब उचित समय आता है तब माता पार्वती जी के द्वारा व्यक्त रुप में (शरीर रूप में) प्रकट हो जाते हैं, इसलिये भगवान गणेश जी माता पार्वती जी के पुत्र कहे जाते हैं जबकि इनका प्राकट्य माता पार्वती जी से पहले हो जाता है, जब अपरा प्रकृति द्वारा सृष्टि कार्य होता है। इस जगह पर रामायण में वर्णन मिलता है - माता सीता जी अपनी शादी से पहले माता पार्वती की पूजा करती हैं। उस समय गणेश जी की माता कहकर सम्बोधन किया गया है, उस समय भगवान शंकर जी के साथ माता सती संगिनी के रूप में थीं। रामायण में सीता जी और श्री राम जी के स्वयंवर से पहले माता सीता ने पार्वती जी की पूजा की थी, पूजा के समय कहती हैं-

जय जय गिरिवर राज किशोरी, जय महेस मुख चन्द्र चकोरी।
जय गजवदन षडानन माता, जगत जननि दामिनि दुति गाता॥

जब माता सीता ने माता पार्वती जी की स्तुति की तब वह गजवदन (गणेश जी) की माता कह कर सम्बोधन करती हैं, उस समय गणेश जी का तो जन्म भी नहीं हुआ था। अर्थात भगवान गणेश जी आदि पुरुष हैं। मूलाधार चक्र के अधिष्ठाता देवता हैं।

आज भगवान गणेश जी अपने मूल स्रोत शिवछिद्र में विलीन हो गये। इसका एक अर्थ और भी है- अब हमारे लिए वायु तत्व नष्ट हुए के समान हो गया है अथवा कुछ समय बाद नष्ट हुए के समान हो जायेगा, फिर हमारी अवस्था आकाश तत्व में प्रवेश कर जायेगी।

चित्त की आखिरी सीमा के पास

यह अनुभव 6 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- एक पुरुष दीवार में बनी पत्थर की सीढ़ियों पर जोर लगाकर चढ़ रहा है, फिर वह ऊपर अंतिम सीढ़ी पर खड़ा हो गया। फिर मुझे ऐसा लगा मैं ही सीढ़ियाँ चढ़ रहा हूँ। अन्तिम सीढ़ी पर पैर रखते समय बहुत जोर लगाना पड़ रहा है, मैं ऊपरी अंतिम सीढ़ी पर खड़ा हो गया। फिर मैंने अपने बायीं ओर का दृश्य देखा तो डर सा लगने लगा, क्योंकि मैं कुएँ की दीवार पर बनी सीढ़ियों पर चढ़ रहा था, कुआँ बहुत पुराना और गहरा था। अगर मैं पैर उठाकर और ऊपर की ओर रखता, तो कुएँ के ऊपर खड़ा हो जाता क्योंकि मैं अंतिम सीढ़ी पर खड़ा था। वहाँ से मात्र एक फीट की ऊँचाई पर कुएँ का ऊपरी किनारा था। तभी हमारी दृष्टि दाहिनी ओर को गयी। मैंने देखा दाहिनी ओर बहुत चौड़ी और ऊँची थोड़ी लम्बी सुरंगनुमा जगह है। सुरंगनुमा जगह के उस पार का क्षेत्र स्पष्ट दिखाई दे रहा था, उस पार निर्मल स्वच्छ स्वप्रकाशित आकाश था। फिर हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ - इस अनुभव में मैं दृष्टा और शरीर के रूप में मैं ही हूँ। एक पुरुष सीढ़ियाँ चढ़ रहा है यह मैं दूर से देख रहा हूँ। जो पुरुष सीढ़ियाँ चढ़ रहा है वह मैं ही हूँ। कुएँ के ऊपर सीढ़ियों द्वारा आ गया, कुआँ चित्त का प्रतीक है। अनुभव से स्पष्ट हो रहा है अब मैं चित्त की आखिरी सीमा पर आ गया हूँ। सुरंगनुमा जगह शिवछिद्र है। अपरा-प्रकृति के आवरण की अभी मोटी परत है इसलिये शिवछिद्र सुरंगनुमा दिखाई दे रहा है। जब ये आवरण अभ्यास द्वारा पतला हो जायेगा तब यह सुरंग जैसी जगह छिद्र रूप में दिखाई देने लगेगी। छिद्र के उस पार का आकाश परा-प्रकृति का क्षेत्र है।

शरीर के अन्दर शुद्धता

यह जानकारी मुझे 8 अप्रैल को मिली। मैं कुर्सी पर बैठा हुआ था। मैं अपनी आँखें बन्द किये हुए था। तभी हमारे बाँये पैर की एड़ी के पास खुजली हुई। मैं अपनी आँखें बन्द किये हुए ही एड़ी के आस पास खुजाने लगा। खुजाते समय मुझे दिखाई दिया मेरे पैर की हड्डी पारदर्शी काँच के समान स्वच्छ है, अन्दर पूरी तरह से खोखली है, घुटने के पास अन्दर स्वच्छ पारदर्शी हड्डी के अन्दर प्रकाश भरा हुआ है। फिर मैं चौंका- मुझे अपने पैर के अन्दर का भाग दिखाई दे रहा था। अन्दर मेरा पैर पारदर्शी काँच के समान स्वच्छ और पूरी तरह से खोखला था। फिर मैं सोचने लगा- बाहर से पैर कितना गन्दा दिखाई देता है। बाहर की ओर त्वचा और बाल आदि हैं। अन्दर से पैर कितना स्वच्छ है। ऐसा ही अन्दर से मेरा सम्पूर्ण शरीर पूर्ण रूप से स्वच्छ है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में पैर के अन्दर शुद्धता का विकास-क्रम चल रहा है। अनुभव में देखा- पैर के अन्दर हड्डी काँच के समान स्वच्छ हो गयी है, ऐसे ही हमारे शरीर के अन्दर स्वच्छता आ रही है। मैं पहले भी लिख चुका हूँ कि वर्तमान समय में आरोह क्रम और अवरोह क्रम में अभ्यास करने से शुद्धता हो रही है। ये तब तक चलती रहेगी, जब तक चित्त स्फटिक मणि के समान शुद्ध नहीं हो जाता है। ताकि चित्त जीव को उसके वास्तविक स्वरूप का दर्शन करा दे।

चित्त की अवस्था

यह अनुभव 10 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं देख रहा हूँ- मैं संकरे कुएँ नुमा गड्ढे में खड़ा हूँ। इस कुएँ नुमा गड्ढे की गहराई मेरी कमर के बराबर है। इसकी गहराई लगभग तीन फीट रही होगी। कुएँ नुमा जगह के ऊपरी किनारे पर मैं अपने दोनों हाथों को रखे हुए हूँ। मैं जब चाहूँ, कुएँ नुमा गड्ढे से बाहर निकल जाऊँ और जब चाहूँ, इसके अन्दर आ जाऊँ। मैं उसके अन्दर खड़ा हुआ प्रसन्न हो रहा हूँ।

अर्थ- अनुभव में कुएँ नुमा गड्ढा हमारा ही चित्त है। मैं चित्त के अन्दर खड़ा हूँ मगर हमारे दोनों हाथ उस कुएँ नुमा जगह से बाहर हैं अर्थात चित्त के ऊपरी सिरे पर हैं। अनुभव से स्पष्ट होता है मैं शीघ्र ही चित्त से बाहर (अपरा-प्रकृति से बाहर) निकल जाऊँगा।

तुम महान हो, तुम श्रेष्ठ हो

इस अनुभव की जानकारी 11 अप्रैल की रात्रि को लगभग 11 बजे दी गयी। मैं ध्यानावस्था में था, तभी किसी पुरुष की आवाज सुनाई दी- "पुत्र, तुम महान हो, तुम श्रेष्ठ हो, शीघ्र ही ये संसार तुम्हें श्रेष्ठ पुरुष के रूप में जानेगा। तुम्हारे विरोधी शान्त हो जायेगे, तुम श्रेष्ठता की उच्चता पर हो, श्रेष्ठ योगी हो, निडर और शान्त होकर रहो, इस संसार में तुम्हारा कुछ समय ही रह गया है, इसलिये प्रसन्नता पूर्वक जीवन जिओ"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। ध्यानावस्था में मुझसे बहुत से शब्द कहे गये, मगर जो याद रहे उन्हें लिख दिया।

प्रकृति की गति के ऊपर सहजासन मुद्रा में बैठा

यह अनुभव 20 अप्रैल को ध्यानावस्था में आया। मैंने ध्यान में देखा- मैं सहजासन मुद्रा में बैठा हुआ था। मेरी दृष्टि नीचे आसन की ओर गयी, मैं जिस जगह पर बैठा हुआ हूँ, उसके नीचे वायु की परत अत्यंत पारदर्शी एन्टी-क्लॉक वाइज तीव्र गति से घूम रही है। वायु की निचली परत क्लॉक वाइज घूम रही है। ऐसा लग रहा था मानो मैं वायु से बने हुए सुदर्शन चक्र के ऊपर बैठा हूँ। एन्टी-क्लॉक वाइज घूमने वाली परत के ऊपर मैं स्थिर बैठा हुआ हूँ, इस परत के नीचे दूसरी परत क्लॉक वाइज घूम रही है। ये दोनों परतें अत्यन्त निर्मल वायु की परतें थीं। मुझे बस इतना क्षेत्र ही दिख रहा था जितने में मैं सहजासन मुद्रा में बैठा था। कुछ क्षणों तक वायु की दोनों प्रकार की गति देखी। फिर मेरी आँखें खुल गयीं।

अर्थ- मैंने अपनी पुस्तक '**तत्त्वज्ञान**' में लिखा है- मुझे आकाश में दो प्रकार की वायु की परतें दिखाई दीं। ऊपरी परत क्लॉक वाइज घूम रही थी, इसी परत पर ब्रह्माण्ड की समस्त आकाश गंगाएँ विद्यमान थी, निचली परत एन्टी-क्लॉक वाइज घूम रही थी। क्लॉक वाइज घूमने का अर्थ है- "सृष्टि उन्मुख गति का होना"। एण्टी-क्लॉक वाइज घूमने का अर्थ है- "प्रलय उन्मुख गति का होना"। मगर इस अनुभव में मैं सम्पूर्ण वायु तत्व के ऊपर बैठा हुआ हूँ। मेरे नीचे की वायु तत्व की परत एण्टी-क्लॉक वाइज घूम रही है, इसका अर्थ है- प्रलय उन्मुख गति हो रही है। इसके नीचे की वायु तत्व की परत क्लॉक वाइज घूम रही थी, इसका अर्थ है- सृष्टि उन्मुख वायु तत्व का प्रवाह बहना। मैं अनुभव में दोनों प्रकार के प्रवाह (प्रलय उन्मुख और सृष्टि उन्मुख) की परतों के ऊपर बैठा हुआ हूँ।

सम्पूर्ण वायु तत्व का क्षेत्र मुश्किल से मात्र दो फीट व्यास वाला रहा होगा। ये अवस्था मुझे कुछ दिनों के अभ्यास के बाद प्राप्त हो जायेगी। मैं अनुभव में सम्पूर्ण वायु तत्व के ऊपर बैठा हुआ हूँ। आगे की अवस्था आकाश तत्व से सम्बंधित है। आकाश तत्व का क्षेत्र परा-प्रकृति से सम्बंधित है।

शिवछिद्र

यह अनुभव 24 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैं शिव मंत्र का जाप कर रहा था। हमारी आँखें बन्द थी, उसी समय मुझे दिखाई दिया- मैं बड़े से छिद्र के मुहाने पर खड़ा हुआ हूँ, उस छिद्र की दीवारें हल्के काले रंग की थी। छिद्र के अन्दर प्रकाश विद्यमान था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला छिद्र, 'शिवछिद्र' है। अच्छी बात यह है कि शिवछिद्र के अन्दर प्रकाश भरा हुआ है। मैं शिवछिद्र के पास खड़ा हूँ। अब मेरी साधना में थोड़ी उन्नति हुई है क्योंकि मैं शिवछिद्र के पास खड़ा हूँ।

आवरण नोंच डाला

यह अनुभव 29 अप्रैल को आया। ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर थोड़ी सी दूरी पर एक मनुष्य खड़ा हुआ है। उसके शरीर के बाहरी ओर (ऊपरी ओर) सभी जगह पतला सा पारदर्शी आवरण चढ़ा हुआ है। मैंने अपने दाहिने हाथ से झिल्ली रूपी आवरण को एक ही झटके में नोच डाला। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैंने उस मनुष्य के शरीर के ऊपर चढ़ा हुआ आवरण नोंच कर अलग कर दिया। अनुभव में दिखाई देने वाला मनुष्य मैं स्वयं ही हूँ। आवरण नष्ट होने का प्रभाव मुझ पर अवश्य पड़ेगा। इससे संसार के प्रति हमारी आसक्ति दूर हो जाएगी। मैं संसार के प्रति थोड़ा रूखा हो जाऊँगा।

मैं अब भी संसार के प्रति आसक्त हूँ। मुझे कई बार दिव्य शक्तियों ने कहा- अब साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द कर दो। मैं अब भी साल में एक बार छोटा सा शिविर कर लेता हूँ और साधकों को

शक्तिपात करके उन्हें आगे की अवस्था प्राप्त करा देता हूँ। मेरे इस प्रकार के कार्य से अपरा-प्रकृति नाराज हो जाती है।

मैं शिवछिद्र के उस पार चला गया

यह अनुभव 16 मई को सुबह ध्यानावस्था में आया। मुझे अनुभूति हुई- मैं तीव्र गति से ऊपर की ओर उछल कर छिद्र के उस पार निकल गया। फिर वहीं पर एक ओर खड़ा हो गया। मैंने नीचे की ओर को देखा- तो दिखाई दिया लगभग 6 इंच व्यास वाला एक छिद्र है। उस छिद्र से ऊपर की ओर तीव्र गति से योगबल निकलकर ऊपर की ओर आ रहा है। इस छिद्र में नीचे की ओर से इतना प्रेशर है कि छिद्र से ऊपर की ओर लगभग एक मीटर ऊँचा फव्वारा सा बन रहा है। मैं खड़ा हुआ छिद्र से ऊपर की ओर निकलने वाले योगबल को देख रहा हूँ। इसी छिद्र से योगबल के प्रेशर से उछल कर ऊपर की ओर आ गया था। फिर मैं चारों ओर को देखने लगा, चारों ओर सर्वत्र स्व-प्रकाशित आकाश विद्यमान है। आकाश बहुत ज्यादा निर्मल है। उसी समय आवाज आयी- "बेटा, कुछ दिन वहाँ रहो, फिर यहाँ आ जाना, तुम्हारे रहने का स्थान यही है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैं आकाश की निर्मलता को देखने लगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में जब मैं उछल कर ऊपर की ओर जा रहा था तब दिखाई नहीं दे रहा था, सिर्फ अनुभूति हो रही थी। यह अनुभव मात्र कुछ समय ही दिखाई दिया था। जब मैं छिद्र के उस पार परा-प्रकृति में खड़ा हो गया, तब मैं नीचे की ओर देखता हूँ कि नीचे की ओर एक छिद्र है इस छिद्र से योगबल के प्रेशर से ऊपर की ओर आ गया हूँ। यह छिद्र ही शिवछिद्र है। उदान वायु के प्रभाव से योगबल शिवछिद्र द्वारा ऊपर की ओर आ रहा था। उदान वायु का स्वभाव होता है ऊपर की ओर गति करना। फिर एक स्त्री की आवाज आयी- "बेटा, कुछ दिन वहाँ रहो, फिर यहाँ आ जाना"। यह आवाज परा-प्रकृति की थी। इस अनुभव से स्पष्ट होता है- कुछ समय बाद परा-प्रकृति में जाने के लिये बहुत ज्यादा प्रयास नहीं करना पड़ेगा।

मन्दिर के अन्दर

मैं अपनी कुटिया में छोटा सा मन्दिर बनवा रहा हूँ। मन्दिर अभी अधूरा है पूरा नहीं बना हुआ है। यह अनुभव 20 मई को आया था। रात्रि के समय ध्यानावस्था में विशेष तरह की जोरदार आवाज आयी। आवाज इस प्रकार की थी मानो छैनी-हथौड़ा आपस में टकराये हो, आवाज में जोरदार खनक थी। मैंने मन्दिर की ओर देखा- तब मुझे दिखाई दिया। मन्दिर के अन्दर एक व्यक्ति है, वह व्यक्ति दो मूर्तियों को पश्चिम दिशा वाली दीवार की ओर रख रहा है। मूर्तियाँ नीले रंग की संगमरमर की बनी हुई हैं मुझे ऐसा लगा। मूर्तियों को देखकर मैं बोल पड़ा- यह मूर्ति तो भगवान राम जी की है। दूसरी मूर्ति मैं समझ नहीं पाया कि वह मूर्ति लक्ष्मण जी की है अथवा सीता जी की है, क्योंकि दूसरी मूर्ति मैं समझ नहीं पा रहा था। मन्दिर के अन्दर विद्यमान उस व्यक्ति की पीठ मेरी ओर थी, उस व्यक्ति की ओट में वह मूर्ति थी। यह व्यक्ति शिल्पकार था क्योंकि इसी व्यक्ति ने उन दोनों मूर्तियों को बनाया था। मुझे इस मन्दिर में शिवलिंग की स्थापना करनी है।

अर्थ- मुझे इस मन्दिर में शिवलिंग की स्थापना करनी है। मुझसे स्वयं भगवान ने ऐसा कहा है - "योगी पुत्र, तुम हमारे लिंग स्वरूप की स्थापना करो।" मैं इसी प्रयास में लगा हुआ हूँ। मगर अनुभव में मन्दिर के अन्दर कोई शिल्पकार भगवान श्रीराम जी की और लक्ष्मण या सीता जी की मूर्तियों को रख रहा है। इसका मैं क्या अर्थ लगाऊँ। शिवलिंग के साथ सूक्ष्म रूप से भगवान श्रीराम जी और लक्ष्मण जी या सीता जी की मूर्ति विद्यमान रहेगी। अगर ऐसा होगा तब मुझे निश्चय ही बहुत प्रसन्नता होगी। इस अनुभव से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।

शिवछिद्र

यह अनुभव 26 मई को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मैं शिवछिद्र के पास लेटा हुआ हूँ। मेरा सिर शिवछिद्र को स्पर्श कर रहा है। मैं शिवछिद्र को और अपने आपको दूर से देख रहा हूँ। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में शिवछिद्र को और अपने आपको द्रष्टा रूप से दूर से देख रहा हूँ। अभ्यास के द्वारा शुद्धता आने के कारण मैं अपने आप को शिवछिद्र के नजदीक देख रहा हूँ। अभी कठोरता के द्वारा

परा-प्रकृति का अवतरण भी कराना है ताकि अपरा-प्रकृति हमारे लिये शुद्ध हो जाये और आवरण भी नष्ट हुए के समान हो जाये।

बैलगाड़ी

यह अनुभव 3 जून को आया। ध्यानावस्था में देखा- भूमि पर घास के कुछ पेड़ खड़े हुए थे। मैं उन घास के पेड़ों को उखाड़ने लगा। जब मैं घास के पेड़ों को उखाड़ रहा था तब घास की जड़ों में कुछ मिट्टी उखड़ कर आ जाती थी। भूमि से मिट्टी उखड़ जाने से उस जगह पर भूमि के अन्दर कुछ दिखाई देने लगा। मैंने उस भूमि को गौरपूर्वक देखा, तो दिखाई दिया- वह बैलगाड़ी का जुँआ है। फिर भूमि पर दृष्टि पड़ते ही बैलगाड़ी के ऊपर जमी हुई मिट्टी अपने आप अदृश्य होने लगी। कुछ क्षणों बाद बैलगाड़ी स्पष्ट दिखाई देने लगी। यह बैलगाड़ी का ढाँचा मात्र था। उसमें पहिये आदि नहीं थे। कुछ क्षणों तक मैं उस बैलगाड़ी का ढाँचा टकटकी लगाकर देखता रहा। मेरे देखते ही बैलगाड़ी का स्वरूप घटकर अंग्रेजी के अक्षर टी (T) आकार में हो गयी। अब बैलगाड़ी किसी कार्य के लायक नहीं रह गयी है। बैलगाड़ी भूमि में अन्दर नीचे की ओर जाने लगी, तभी मेरा ध्यान टूट गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला बैलगाड़ी का ढाँचा मेरा ही स्थूल शरीर है। बैलगाड़ी का ढाँचा नष्ट हुए के समान हो गया है अर्थात किसी कार्य के लायक नहीं रह गया है। इस अवस्था के बाद अभ्यासी का शरीर प्रारब्ध वेग से सधा रहता है। प्रारब्ध वेग समाप्त होने पर स्थूल शरीर गिर जाता है अर्थात योगी पुरुष स्थूल शरीर का त्याग कर देता है।

शिवछिद्र के उस पार चला गया

यह अनुभव 10 जून को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मैं शिवछिद्र के मुहाने पर खड़ा हूँ। कुछ क्षणों बाद मैं शिवछिद्र के अन्दर प्रवेश कर गया। छिद्र के उस पार निर्मल-स्वच्छ प्रकाश विद्यमान था। कुछ क्षणों बाद मैं छिद्र के उस पार खड़ा हो गया। वहाँ पर प्रकाश ही प्रकाश विद्यमान था। वह क्षेत्र स्वयं अपने में स्वप्रकाशित था। मैं प्रकाश में खड़ा हुआ चारों ओर का क्षेत्र देख रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला छिद्र ही शिवछिद्र है। यह छिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान है। इस छिद्र के उस पार परा-प्रकृति का क्षेत्र है। मैं अनुभव में परा-प्रकृति के क्षेत्र में चला गया। कुछ क्षणों का ही यह अनुभव था फिर अनुभव समाप्त हो गया। स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात परा-प्रकृति में जाना हमारा निश्चित हो गया है क्योंकि अनुभव में मैं शिवछिद्र के द्वारा परा-प्रकृति में चला जाता हूँ।

मन्दिर का ऊपरी गुम्बद

यह अनुभव 11 जून को आया। ध्यानावस्था में दिखाई दिया- मन्दिर के गुम्बद के ऊपर एक सरिया जैसा लगा रहता है, वह मुझे अपने सामने अति नजदीक दिखाई दे रहा था। मन्दिर का ऊपरी भाग धीरे-धीरे नीचे की ओर चला गया। कुछ क्षणों बाद यह भाग नीचे की ओर जाकर अदृश्य हो गया। चारों ओर ऊपर-नीचे आकाश ही आकाश दिखाई दे रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला मन्दिर का ऊपरी भाग जैसा वास्तव में मन्दिर का ऊपरी भाग नहीं है। यह ज्ञान की सात मंज़िल इमारत का ऊपरी भाग है। ज्ञान की सात मंज़िल रूपी भवन है। इस भवन का ऊपरी भाग दिखाई दे रहा था। अब धीरे-धीरे नीचे की ओर जाकर अदृश्य हो गया, यह अवस्था हमारी कुछ समय बाद आयेगी। इसका अर्थ है- ज्ञान का पूर्ण हो जाना। इस अवस्था में ऋतम्भरा-प्रज्ञा रूपी वृत्ति भी धीरे-धीरे जड़ रूप में दिखाई देकर अदृश्य होने लगती है, क्योंकि ऋतम्भरा-प्रज्ञा के ज्ञान के प्रकाश में धीरे-धीरे चित्त की भूमि भी अदृश्य हो जाती है तब चित्त स्फटिक मणि के समान स्वच्छ हो जाता है। यही अभ्यासी का लक्ष्य होता है।

प्रभु आप कहाँ हो

यह जानकारी मुझे ध्यानावस्था में मिली। ध्यानावस्था में मैंने भगवान शंकर से पूछा- "प्रभु, आप कहाँ हो"। उसी समय मुझे अपने हृदय से आवाज आयी- "पुत्र, मैं तुम्हारे अन्दर ही हूँ"। मैं आवाज सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि मैं भगवान शंकर की आवाज को पहचानता हूँ। फिर सोचा- भगवान शंकर तो हमारे हृदय में ही रहते हैं।

कुण्डलिनी शक्ति

यह अनुभव 23 जुलाई की सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने ध्यान के लिए सिर्फ आँखें बन्द की थी तभी अनुभव आने लगा- पूर्व दिशा की ओर आकाश में लाल साड़ी पहने सुन्दर स्त्री दिखाई दी। वह स्त्री मेरी ओर देख रही थी। उसका शरीर बहुत बड़ा था। वह स्त्री स्वर्ण आभूषणों को धारण किये हुए थी। उसके सिर पर ऊँचा मुकुट लगा हुआ था, उसके तीन नेत्र थे, तीनों नेत्र खुले हुए मेरी ओर देख रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो उसके शरीर से पूर्व दिशा ढक गयी है। वह स्त्री बहुत सुन्दर दिखाई दे रही थी। फिर अनुभव समाप्त हो गया। इस स्वरूप में माता कुण्डलिनी शक्ति मुझे दर्शन दे रही थी।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने वाली

यह जानकारी मुझे ध्यानावस्था में दी गयी। 23 जुलाई को मैं ध्यान कर रहा था तभी गहरे ध्यान में आकाश से आवाज आयी- "अब तुम्हारी माँ हूँ, सांसारिक स्त्री नहीं है, तुम्हारी माँ वो है जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करती है"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी और अनुभव भी समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मुझे यह बताया गया- तुम्हारी माँ संसारिक स्त्री नहीं है। इसका अर्थ है- आनन्द कुमार को जिस स्त्री ने जन्म दिया है, अब वह मेरी माँ नहीं है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने वाली तुम्हारी माँ है। इसका अर्थ है- सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने वाली शक्ति स्वरूपा मेरी माँ है। ऐसा इसलिये कहा गया है क्योंकि अब मैं सिर्फ आनन्द कुमार नहीं हूँ बल्कि 'योगी आनन्द' हूँ। अब मेरी मृत्यु भी संसारी मनुष्यों जैसी नहीं होगी, बल्कि तत्वज्ञानियों की तरह होगी। इस अनुभव का यही अर्थ है।

भगवान विष्णु जी

ये अनुभव 23 जुलाई को ध्यानावस्था को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- "भगवान विष्णु जी निर्मल स्वच्छ आकाश में सर्वत्र लेटे हुए दिखाई दे रहे थे"। यह दृश्य मैं काफी समय तक देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। जिस आकाश में भगवान विष्णु लेटे हुए थे वह हमारा ही चित्ताकाश था।

सर्वत्र घी फैल गया

यह अनुभव 28 जुलाई को आया। ध्यानावस्था में जोर से आवाज सुनाई दी। आवाज सुनकर ऐसा लगा मानो जोर से कोई वस्तु पटक दी गयी हो। मैंने ध्यानावस्था में आँखें खोल दी तब देखा- चारों ओर सर्वत्र आकाश में और भूमि पर घी फैला हुआ है।

मेरे ऊपर भी घी फैला हुआ था। घी की गुणवत्ता बहुत ही अच्छी थी, देखने में घी दानेदार था। मैं अपने शरीर पर गिरा हुआ घी देख रहा था। फिर मेरी समाधि टूट गयी। मैंने अपनी आँखें खोल दी, अब अनुभव सोच कर मुस्कुरा रहा हूँ।

अर्थ- इस प्रकार के अनुभव में दिखाई देने वाला घी का अर्थ ज्ञान होता है। हमारे लिये सर्वत्र ज्ञान का प्रकाश फैल गया अर्थात भविष्य में चित्त पर ज्ञान सर्वत्र विद्यमान हो गया।

नीला पुरुष

यह अनुभव 25 अक्टूबर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने की ओर एक नीले रंग का पुरुष खड़ा हुआ था। वह अपने सीने की ऊपरी मृत त्वचा को उखाड़ रहा था। वह मृत त्वचा मजबूती से शरीर पर चिपकी हुई थी। मृत त्वचा थोड़ी-थोड़ी ही टूटकर शरीर से उखड़ रही थी। मैं गौरपूर्वक हल्के नीले रंग के पुरुष को देख रहा था। वह त्वचा छोटे-छोटे टुकड़ों में शरीर से खींच कर निकाल के फेंक रहा था। उस मृत त्वचा का रंग नाग की पारदर्शी केंचुली की तरह था। कुछ क्षणों तक यह दृश्य देखता रहा, उसने अपने सीने की सम्पूर्ण त्वचा निकालकर फेंक दी। फिर यह अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला नीले रंग का पुरुष (नीलमय पुरुष) मैं ही हूँ। नीले रंग का शरीर कारण शरीर होता है। कारण शरीर अब और ज्यादा शुद्ध होगा। अधिक शुद्धता पर महाकारण जगत में प्रवेश करने में सरलता होगी। आगे चलकर कारण शरीर के द्वारा गति करना आवश्यक होगा। धीरे-धीरे शरीर का त्याग भी होना शुरू हो जायेगा अंत में मैं अपने साधकों को भी त्याग दूँगा।

शिवछिद्र सिर के ऊपरी भाग पर

यह अनुभव 26 अक्टूबर को सुबह ध्यान में आया। मैंने देखा- मेरे सिर के ऊपर बहुत बड़ा छिद्र है। उस छिद्र के उस पार का दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा है। छिद्र के उस पार अत्यंत निर्मल निखरा हुआ आकाश है। सिर का सम्पूर्ण ऊपरी क्षेत्र छिद्र रूप में विद्यमान है। ये भी स्पष्ट हो रहा है- ये छिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में है। मेरा सिर अपरा-प्रकृति के आवरण से सटा हुआ है। देखने में लग रहा है- छिद्र मेरे सिर के ऊपरी भाग पर है।

अर्थ- पहले अनुभवों में ये छिद्र मुझसे थोड़ी दूरी पर दिखाई देता था, अब यह छिद्र सिर के ऊपरी भाग पर खुला हुआ दिखाई दे रहा है। यहीं पर अपरा-प्रकृति का आवरण भी है। अनुभव में मुझे खुले हुए छिद्र द्वारा उस पार का क्षेत्र निर्मल आकाश के रूप में दिखाई दे रहा है। एक बात का ध्यान रहे- ब्रह्मरंध्र द्वार भी सिर के ऊपरी भाग पर होता है, मगर ब्रह्मरंध्र का मुँह अर्थात छिद्र नीचे की ओर होता है। मगर शिवछिद्र सिर के ऊपरी भाग में विद्यमान रहता है और ऊपर की ओर खुला रहता है।

इन दोनों छिद्रों की अवस्थाओं में भारी अन्तर होता है। ब्रह्मरंध्र के अन्दर का क्षेत्र अहंकार का क्षेत्र होता है। शिवछिद्र का खुला होना यह निश्चित करता है कि अभ्यासी स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात मोक्ष को (परा-प्रकृति या ईश्वर का लोक) निश्चय ही प्राप्त करता है। फिर कभी जन्म ग्रहण करने के लिये नहीं आता है।

घड़ा छिद्र की ओर जाता हुआ

यह अनुभव 25 अक्टूबर की सुबह के समय आया। मैंने देखा- मिट्टी का एक बन्द घड़ा सोने की जंजीरों से बँधा हुआ (पट्टीनुमा सोने की बनी हुई) ऊपर की ओर जा रहा था। उसे ऊपर की ओर कौन खींच रहा था, यह दिखाई नहीं दे रहा था। ऐसा लग रहा था मानो ये घड़ा शिवछिद्र के अन्दर चला जायेगा। घड़ा जिन पट्टीनुमा जंजीर से बँधा हुआ था, वह पट्टी चमकीले सोने की बनी लगभग दो इंच चौड़ी डिज़ाइनदार थी। ये सोने की बनी हुई पट्टीनुमा जंजीर घड़े के चारों ओर लिपटी हुई थी। ये घड़ा तीन सोने की बनी पट्टियों से लटका हुआ अपने आप ऊपर की ओर चला जा रहा था। मानो घड़े को कोई

अदृश्य रूप से ऊपर की ओर खींच रहा है, ऐसा लग रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया। फिर मैं अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला घड़ा मेरे चित्त का प्रतीक है। अनुभव में घड़ा अपने आप ऊपर की ओर धीरे-धीरे गति कर रहा था। ऐसा लग रहा था यह घड़ा शिवछिद्र के अन्दर चला जायेगा। अनुभव में घड़ा सोने की पट्टियों में बँधा हुआ है। यहाँ पर सोने की पट्टियाँ सामान्य पट्टी जैसी नहीं हैं, बल्कि सुन्दर चौड़ी डिज़ाइनदार सोने से बनी हुई पट्टियाँ हैं। यहाँ पट्टियों या जंजीर का अर्थ बंधन नहीं है, बल्कि तीन पट्टियाँ घड़े में लिपटी हुई हैं, वह पट्टियाँ सोने से बनी हुई हैं। इसका अर्थ है- तीनों सोने से बनी हुई पट्टियाँ तीनों गुणों का प्रतीक हैं। इन तीनों गुण के आंतरिक परिणाम के द्वारा चित्त का स्वरूप बना रहता है। तीनों गुणों के आंतरिक परिणाम के कारण चित्त उर्ध्वमुखी हो रहा है। अगर चित्त पर कर्माशय विद्यमान होते, तब चित्त में बाह्य परिणाम भी हो रहा होता, ऐसी अवस्था में चित्त का प्रवाह निम्नमुखी रहता है अर्थात संसार की ओर प्रवाह बहता रहता है।

चित्त का बाह्य परिणाम होना समाप्त हो चुका है, आंतरिक परिणाम हो रहा है। यह परिणाम चित्त के स्वरूप को बनाये रखता है। अब हमारा चित्त स्वच्छ और व्यापक होकर ईश्वर की ओर उन्मुख है।

ऊर्जावान शरीर

ये अनुभव 25 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मैं अपना सूक्ष्म शरीर देख रहा था, तभी आकाश से आवाज आयी- "देखो, तुम्हारा सूक्ष्म शरीर कितना ऊर्जा से भरा हुआ है"।मैं देख रहा था मेरा सूक्ष्म शरीर अत्यंत तेजस्वी था अर्थात सूक्ष्म शरीर तेज से युक्त था। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- ध्यानावस्था में मुझे अपना सूक्ष्म शरीर अत्यंत तेजस्वी दिखाई दे रहा था, वही मुझे बताया जा रहा था- "तुम्हारा शरीर कितना ऊर्जा से भरा हुआ है"।

सोने का मुकुट

यह अनुभव ध्यानावस्था में 26 अक्टूबर को दिखाई दिया। मैंने देखा- दो हाथों ने सोने से बना हुआ सुन्दर मुकुट उठाकर सामने खड़े व्यक्ति के सिर के ऊपर रख दिया। मुकुट छोटे साइज का बना हुआ था। सामने खड़े व्यक्ति का शरीर अत्यंत स्वच्छ पारदर्शी था। वह व्यक्ति पहचान में नहीं आ रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला पारदर्शी सूक्ष्म शरीर मेरा ही सूक्ष्म शरीर है। मुकुट का अर्थ होता है- भविष्य में विजयी होऊँगा अथवा सम्मान मिलेगा।

कर्मों का नाश करने के लिये भेजा गया है

ये अनुभव 27 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मुझे सुनाई दिया- "न ही तुम्हे पृथ्वी पर योग प्रचार के लिए भेजा गया है और न ही तुम्हें सनातन धर्म का बैलेंस करने के लिये भेजा गया है। तुम्हें अपने कर्मों का नाश करने के लिये भेजा गया है"। कुछ समय बाद मैं ध्यान की गहराई में चला गया। ध्यान टूटने के बाद मैं उन शब्दों के विषय में सोचने लगा, जो मुझे ध्यानावस्था में सुनाई दिये थे।

अर्थ- ध्यानावस्था में ये शब्द मुझसे इसलिये कहे गये क्योंकि मैं अब भी साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। मुझे साधकों का मार्गदर्शन करने से मना किया गया था। मुझसे कहा गया था- दिसम्बर 2018 के बाद साधकों का मार्गदर्शन नहीं करना है और न हीं शिविर लेना है। मैं अब भी जीवों के कल्याण भाव से मार्गदर्शन कर रहा हूँ और छोटे-छोटे शिविर लेता रहता हूँ।

उल्टे घड़े से

यह अनुभव 4 नवम्बर को आया। मैं मंत्र जाप कर रहा था उसी समय दिखाई दिया- मेरे सिर के ऊपरी भाग से एक घड़ा निकलकर ऊपर की ओर जाने लगा, थोड़ा सा ऊपर जाकर आकाश में स्थिर हो गया। आकाश स्वच्छ और निर्मल था। घड़ा अपनी जगह पर ही धीरे-धीरे तिरछा होने लगा, जैसे ही घड़े का मुँह तिरछा हुआ तभी घड़े के अन्दर से अत्यन्त स्वच्छ निर्मल पानी जैसा तरल पदार्थ निकलने लगा।

वह तरल पदार्थ मेरे सिर के ऊपरी भाग में गिरने लगा। सिर पर गिरा हुआ तरल पदार्थ सिर के अन्दर समाता जा रहा था। घड़ा धीरे-धीरे उल्टा हो गया और घड़े का सम्पूर्ण तरल पदार्थ मेरे सिर के अन्दर समा गया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

सम्पूर्ण घड़े का तरल पदार्थ मेरे सिर के अन्दर समा रहा था, इससे हमारे अंदर शुद्धता और ज्यादा बढ़ जायेगी।

सहस्त्रदल कमल का स्वरुप

यह अनुभव 11 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सिर के ऊपर आकाश में छोटा सा अनानास जैसा पिण्ड दिखाई दिया। इस अनानास जैसे पिण्ड में ढेरों कमल की पंखुडियाँ प्रकट होती जा रही थी, क्षण भर में कई सौ पंखुडियाँ विद्यमान हो गयी। ऐसे फूल के विषय में न तो पढ़ा था और नहीं कहीं सुना था। ऐसा लगता था इतनी पंखुडियाँ तो सहस्त्रदल कमल में होती है। सहस्त्रदल कमल तो सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त रहता है, मगर फूल तो छोटा सा है। मैं उस फूल को देख रहा था, उसी समय हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला फूल सहस्त्रदल कमल था। यह इतना छोटा इसलिये दिखाई दे रहा था- सहस्त्रदल कमल ज्ञान का आयतन है। आज से 25-26 साल पहले इसका स्वरूप अत्यंत विस्तृत था उस समय वह सम्पूर्ण चित्ताकाश में व्याप्त था। अब मेरी अवस्था में भारी अन्तर आ गया है। ऋतम्भरा प्रज्ञा द्वारा चित्त पर ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र फैल जाने के कारण अज्ञानता पूर्ण रुप से नष्ट हो रही है तथा परा-प्रकृति का अवतरण होने के कारण अपरा-प्रकृति शुद्ध होकर अभ्यासी के लिये अपरा-प्रकृति नष्ट हुए के समान हो रही है, ऐसी अवस्था में अपरा-प्रकृति का भी स्वरूप छोटा होने लगा है। अज्ञान की अवस्था में अपरा-प्रकृति उपस्थित रहती है। ज्ञान की अवस्था में अपरा-प्रकृति का अस्तित्व ही नहीं रह जाता है। इसलिए सहस्त्रदल कमल का स्वरूप इतना छोटा दिखाई देने लगा है।

स्थूल शरीर का स्वरूप मिटने लगा

यह अनुभव 12 नवम्बर को आया। शरीर काले रंग के पदार्थ से बना हुआ है। मंत्र जाप के प्रभाव से यह काला पदार्थ धीरे-धीरे अदृश्य होने लगा। अर्थात स्थूल शरीर का स्वरूप नष्ट होने लगा। स्थूल शरीर का काफी भाग मंत्र के प्रभाव से नष्ट हो- होकर अदृश्य हो गया।

अर्थ- स्थूल शरीर तमोगुण की प्रधानता के कारण ठोसता को प्राप्त है। तमोगुण ही काले पदार्थ के रूप में दिखाई दे रहा है। ये तमोगुण मंत्र के प्रभाव से नष्ट होने लगता है। इसीलिये शरीर का वह भाग अदृश्य सा दिखाई देने लगता है। अर्थात मंत्र के प्रभाव से स्थूल शरीर शुद्ध हो रहा होता है।

सन् 2025

शिवछिद्र के अन्दर खड़ा हूँ

यह अनुभव 11 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं बहुत बड़े शिवछिद्र के अन्दर खडा हूँ। इस शिवछिद्र के उस पार का क्षेत्र देख रहा हूँ। उस पार का क्षेत्र पूर्ण रूप से स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा है। सिर्फ निर्मल आकाश ही दिखाई दे रहा है। जिस शिवछिद्र के अन्दर मैं खड़ा हूँ वह शिवछिद्र इतना बड़ा है कि मैं उसके अन्दर खड़ा हो सकता हूँ। छिद्र को पार करने के लिए लगभग तीन-चार फीट और चलना पड़ेगा। मैं अपनी जगह पर खड़ा हूँ और उस पार का क्षेत्र (परा-प्रकृति का क्षेत्र) देख रहा हूँ। फिर मेरा अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखें खोल दी।

अर्थ- इस अनुभव में शिवछिद्र बहुत बड़ा दिखाई दिया, मैं उसके अन्दर खड़ा हूँ। शिवछिद्र का स्वरूप अभ्यासानुसार घटता-बढ़ता सा दिखाई देता है। वह कारण जगत और महाकारण जगत के मध्य में विद्यमान है। साधक के अभ्यास के अनुसार ही उस समय शिवछिद्र का आकार छोटा या बड़ा होने की अनुभूति कराता है। अगर मैं शिवछिद्र को दूर से देखूँ तो वह शिवछिद्र छोटा सा (लगभग एक फीट व्यास वाला) दिखाई देता है। जब मैं उस शिवछिद्र को पास से देखता हूँ, तो बड़ा सा दिखाई देता है। इस अनुभव में मैं शिवछिद्र के अन्दर ही खड़ा हो गया हूँ।

अनुभव में शिवछिद्र कभी सामने की ओर दिखाई देता है, इस बार भी शिवछिद्र सामने की ओर ही था। मैं उसके अन्दर खड़ा हुआ था। कभी-कभी शिवछिद्र सिर के ऊपर की ओर दिखाई देता है। कभी दिखाई देता है शिवछिद्र हमारे सिर के ऊपरी भाग में स्थित है। एक बार शिवछिद्र नीचे की ओर दिखाई दिया था।

यह शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान है। अभ्यास के द्वारा अपरा-प्रकृति का आवरण धीरे-धीरे ही नष्ट होगा। जैसे-जैसे अभ्यास के द्वारा चित्त की शुद्धता बढ़ेगी, वैसे-वैसे अपरा-प्रकृति का आवरण पतला होता जायेगा। इस शुद्धता का प्रभाव शिवछिद्र की लम्बाई पर भी पड़ेगी, क्योंकि अपरा-प्रकृति का आवरण पतला हो रहा होता है तो शिवछिद्र की लम्बाई भी घटेगी। जब शिवछिद्र सामने की ओर दिखाई देता है तब शिवछिद्र का आकार बड़ा होता है और उसकी लम्बाई भी

ज्यादा होती है। तब शिवछिद्र की दीवारे काली रंग की होती है क्योंकि यह आवरण अज्ञानता के कारण बना हुआ है। अज्ञानता के कारण संसार में आसक्ती बनी रही।

जब शिवछिद्र सिर के ऊपर की ओर दिखाई देता है तब शिवछिद्र का व्यास 6 इंच से लेकर एक फीट तक होता है। जब शिवछिद्र ऊपर की ओर आकाश में दिखाई देता है उस समय अपने आप ऊपर का दृश्य आ जाता है, मुझे अपनी आँखे ऊपर की ओर नहीं करनी पड़ती है। कभी ऐसा भी दिखाई दिया कि शिवछिद्र हमारे ही सिर के ऊपरी भाग में स्थित है। हमारे सिर का ऊपरी भाग अपरा-प्रकृति के आवरण में शिवछिद्र की जगह पर स्पर्श कर रहा है। भविष्य में जब अपरा-प्रकृति का आवरण नष्ट हो जायेगा, तब शिवछिद्र का स्वरूप भी नष्ट हो जाएगा। ऐसा तभी होगा जब परा-प्रकृति का अवतरण पूर्णरूप से हो जायेगा। मगर अन्य अभ्यसियों के लिए शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान रहेगा।

परा-प्रकृति का अवतरण नाभि क्षेत्र में

यह अनुभव 12 जनवरी को आया। ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर से शुद्ध प्रवाह मेरी ओर चला आ रहा है। यह प्रवाह मेरी नाभि के क्षेत्र में विलीन होता जा रहा था। यह शुद्ध प्रवाह लगभग 12 इंच व्यास जैसे क्षेत्र से (पाइपनुमा क्षेत्र) आ रहा था। मैं इस शुद्ध प्रवाह को आते देख कर और नाभि के क्षेत्र में विलीन होता देख कर प्रसन्न हो रहा था। यह शुद्ध प्रवाह अत्यन्त निर्मल पारदर्शी था। इसलिए यह प्रवाह देखकर मुझे बहुत अच्छा लग रहा था। कुछ समय तक यह प्रवाह आता हुआ और विलीन होता हुआ देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला शुद्ध प्रवाह परा-प्रकृति का स्वरूप है। अभ्यासी के शरीर में जितना परा-प्रकृति का अवतरण होता है। उतनी ही अपरा-प्रकृति शुद्ध होती जाती है। इससे सांसारिक पदार्थों के प्रति आसक्ति समाप्त होती जाती है।

नदी का अस्तित्व समाप्त

यह अनुभव 12 जनवरी को आया। मैंने देखा- दूर-दूर तक सुनहरे रंग की बालू जैसे चमकीले कणों का मैदान है। इन कणों से हल्का प्रकाश स्वमेव निकल रहा था। इसी मैदान के मध्य क्षेत्र में एक नदी है, नदी के किनारे बहुत गहरे है। नदी के दोनों किनारों के मध्य में बहुत पतली पानी की धारा धीरे-धीरे बह रही है, नदी का पानी बहुत ही स्वच्छ है। जैसे ही मेरी दृष्टि नदी पर पड़ी, उसी समय नदी का पानी अपने आप अदृश्य हो गया और नदी का स्वरूप भी अपने आप नष्ट होने लगा। आसपास की चमकीली प्रकाशित बालू नदी के स्वरूप को नष्ट कर रही थी। अर्थात नदी के आसपास की बालू नदी के अन्दर तेजी से समा रही थी, फिर नदी के स्थान पर मैदान बनता जा रहा था। सम्पूर्ण नदी समतल मैदान के रूप में परिवर्तित हो गयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल ली।

अर्थ- नदी संसार का प्रतीक होती है। अनुभव में नदी का स्वरूप नष्ट हो गया। अर्थात संसार का स्वरूप नष्ट हुए के समान हो गया। इस अनुभव के अनुसार भविष्य में हमारे लिए संसार से आसक्ति समाप्त हो जायेगी।

विशाल स्वरूप में कमल की कली

यह अनुभव 12 जनवरी को आया था। ध्यानावस्था में मैंने देखा- मेरे सामने बहुत ऊँचा सा काला पिण्ड है। मैं सोचने लगा इतना विशाल काला पिण्ड मेरे सामने कहाँ से आ गया? मैं इसे एक बार में पूर्णरूप से नहीं देख पा रहा हूँ। मैं ऐसा सोच रहा था तभी उस पिण्ड का पूरा स्वरूप धीरे-धीरे दिखाई देने लगा। यह पिण्ड गोलाकार रूप में था, ऊपर की ओर गोलाकार पिण्ड धीरे-धीरे संकरा सा होता जा रहा था। इस पिण्ड के सबसे ऊपर के स्थान पर नोंक सी निकली हुई थी। मैं उस पिण्ड की बनावट पर थोड़ा चौंका- कि यह कैसा पिण्ड है। कुछ क्षणों में यह काला पिण्ड एक बार में पूर्ण रूप से दिखाई देने लगा है। फिर मैं मुस्कुराया यह पिण्ड तो कमल की कली जैसा स्वरूप वाला है। फिर मैं समझ गया अत्यन्त विशाल आकार में यह पिण्ड वास्तव में काले रंग की कली ही है जिसका मुँह वाला क्षेत्र ऊपर की ओर है। मैं इस कली का स्वरूप देखकर सोच रहा था- इतनी विशाल आकार वाली कली है, उसी समय कली के स्वरूप में थोड़ी सी स्वच्छ जैसी होने लगी अर्थात कली के ऊपर विद्यमान काला पदार्थ (तमोगुण) थोड़ा सा कम हुआ। तब वह काली कली स्पष्ट दिखाई देने लगी, उस कली में पंखुड़ियाँ चिपकी हुई थी,

कुछ पंखुड़ियाँ खुलने का प्रयास कर रही थी। मैं यही दृश्य देख रहा था पंखुड़ियों के ऊपर का तमोगुण धीरे-धीरे कम हो रहा था। फिर हमारा ध्यान टूट गया।

अर्थ- अपने साधना काल में अभी तक इतनी बड़ी कमल की कली नहीं देखी थी। पहली बार इतनी बड़ी कली देखी है। सहस्त्रदल कमल वाली कली भी इतनी बड़ी नहीं थी। इस विशाल कली का मुँह ऊपर की ओर है, उस कली का तमोगुण थोड़ा सा कम हुआ है, उसकी पंखुडी खुल सी रही है। यह कमल की कली इतनी बड़ी क्यों दिखाई दे रही है, जब यह कली खिलकर फूल बनेगी तब यह खिला हुआ फूल कितना विशाल होगा, इसका अनुमान लगाना बड़ा मुश्किल है। इस कली के ऊपर काला पदार्थ लगा हुआ है- अब हमारी अवस्था शिवछिद्र के पास (अपरा-प्रकृति) है। शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में विद्यमान रहता है तथा इस छिद्र का दूसरा सिरा परा-प्रकृति से सम्बंधित है। अपरा-प्रकृति का आवरण काले पदार्थ से (तमोगुण) बना हुआ है। इस कली के स्वच्छ होने पर अपरा-प्रकृति का आवरण स्वच्छ होने लगेगा अथवा अपरा-प्रकृति का आवरण स्वच्छ होने पर कली स्वच्छ होने लगेगी।

महत्वपूर्ण बात यह है- इस कली का मुँह ऊपर की ओर है। अभी यह कली खिली भी नहीं है, पहले से ही ऊर्ध्वमुखी है। जबकि शरीर के मुख्य सातों चक्र जब कली के रूप में थे तब सभी सातों चक्रों की कमल कली निम्नमुखी थी। जब चक्रों का अभ्यास के द्वारा विकास- क्रम होने लगा, तब ये कलियाँ अभ्यासानुसार धीरे-धीरे ऊर्ध्वमुखी होने लगी, फिर अन्त में ऊर्ध्वमुखी होकर पूर्ण रूप से विकसित हो जाती है। फिर एक अनुभव में सातों चक्र निम्नमुखी हुए दिखाई दिये थे क्योंकि ये सातों चक्र अपरा-प्रकृति के अन्तर्गत आते है। अपरा-प्रकृति का प्रवाह निम्नमुखी है इसीलिए अनुभव में सभी चक्र निम्नमुखी हुए दिखाई दे रहे थे।

अनुभव में दिखाई देने वाली यह कमल की कली शुरूआत में ही अत्यन्त विशाल थी। जो एक बार में दिव्य-दृष्टि के द्वारा मैं देख नहीं पा रहा था, पहले से ही ऊर्ध्वमुखी थी। इसका अर्थ है- इस कमल कली का सम्बन्ध परा-प्रकृति से है, क्योंकि परा-प्रकृति ऊर्ध्वमुखी होती है।

भगवान् गणेश जी का सुन्दर स्वरुप दो चेहरे वाला

यह अनुभव 17 जनवरी को रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- सोने से बना हुआ बहुत बड़ा आभूषण किसी के माथे पर है, माथा बहुत चौड़ा व बड़ा सा है। तभी कुछ क्षणों बाद पूरा चेहरा

दिखाई देने लगा। मैं आश्चर्य चकित और प्रसन्न हुआ। यह चेहरा भगवान गणेश जी का हाथी के मुँह वाला वाला है। भगवान गणेश जी का चेहरा ऐसा लग रहा है, मानो तपे हुए सोने से बना हुआ है। उसी क्षण भगवान गणेश जी का शरीर अपनी जगह पर थोड़ा सा घूम गया, तब मैंने देखा- हाथी वाले चेहरे के पीछे देवताओं जैसा चेहरा था, लेकिन देवताओं वाला चेहरा उनकी गर्दन पर ही स्थित था अर्थात एक ही बार में भगवान गणेश जी का दो प्रकार का चेहरा दिखाई दे रहा था। भगवान गणेश जी का स्वरूप बहुत ही सुन्दर था। इतना सुन्दर स्वरूप पहली बार दिखाई दिया है। तभी मुझे दिखाई दिया- मैं शिवछिद्र के अन्दर खड़ा हूँ। भगवान गणेश जी भी हमारे सामने शिवछिद्र के अन्दर खड़े हुए हैं। मैं थोड़ी देर उनका दर्शन करता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैं पहले अनुभव में लिख चुका हूँ भगवान गणेश जी दो प्रकार के चेहरे वाले स्वरूप में दिखाई दिये थे, जब वह शिवछिद्र में अन्दर जाकर विलीन हो गये थे। इस अनुभव में भी दो प्रकार के चेहरे वाले स्वरूप में दिखाई दिये थे। शास्त्रों के अनुसार भगवान गणेश जी का पहले देवताओं के समान चेहरा था, फिर उनका हाथी वाला चेहरा लगा दिया गया था। इसलिये अनुभव में दो प्रकार के चेहरे वाला स्वरूप दिखाई दिया था। पहले अनुभव में गणेश जी शिवछिद्र के अन्दर जाकर विलीन हो गये थे। इस अनुभव में शिवछिद्र के अन्दर ही विद्यमान थे, मैं भी भगवान गणेश जी के सामने शिवछिद्र के अन्दर खड़ा हुआ था। अब मेरी अवस्था शिवछिद्र के पास अथवा शिवछिद्र के अन्दर की ही है। इसी शिवछिद्र के अन्दर से वायुतत्व का प्राकट्य होता है और फिर सृष्टि का सृजन होता है। एक बार मैं फिर लिख रहा हूँ- भगवान गणेश जी बहुत सुन्दर दिखाई दे रहे थे। वैसे वह दो प्रकार के मुख वाले है ऐसा मुझे अनुभव में दिखाई दिया, बाल्यावस्था में उनका मुख देवताओं देवताओं जैसा स्वरुप वाला था मगर बाद में हाथी के मुख वाला स्वरूप धारण कर लिया। इसका वर्णन शास्त्रों में विस्तार से मिलता है। मगर अभ्यास के उच्चतम अवस्था में इनका दर्शन दो प्रकार के मुख वाला भी होता है।

स्फटिक मणि जैसा

यह अनुभव 21 जनवरी को रात्रि के समय ध्यानावस्था मे आया। मैंने देखा- सामने थोड़ी दूरी पर मुझे एक काँच के टुकड़े जैसा पारदर्शी टुकड़ा दिखाई दिया। उस समय मैं बैठा हुआ था, बैठे हुए ही मैंने

अपना दाहिना हाथ बढ़ाकर उस काँच जैसे टुकड़े को उठा लिया। उस टुकड़े को गौरपूर्वक देखने लगा, तब मैं तुरन्त जान गया, यह तो स्फटिक मणि है। मैं इसे देख ही रहा था, तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- स्फटिक मणि दिखाई देने का अर्थ है- "निकट भविष्य में चित्त का अत्यंत निर्मल हो जाना, चित्त की ऐसा अवस्था भविष्य में प्राप्त हो जायेगी"।

किम्प पुरुष द्वारा पालकी ढोना

यह अनुभव 23 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- एक पुरुष अपने कंधे पर पालकी का बॉस रखे हुए है, धीरे-धीरे वह मेरी ओर आ रहा है। जब मैंने उस पुरुष का मुँह देखा तो आश्चर्यचकित हुआ, क्योंकि उस पुरुष का मुँह मनुष्यों जैसा नहीं था। उसका मुँह बन्दर के मुँह की तरह था। इसे देखते ही मैं समझ गया- यह किम्प पुरुष है। वह किम्प पुरुष पालकी को ढो रहा था। मुझे पालकी तो दिखाई दी, मगर पालकी पर बैठा हुआ कोई नहीं दिखाई दिया क्योंकि पालकी वाला दृश्य पूर्ण रूप से स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा था। पालकी के पीछे भी एक किम्प पुरुष पालकी ढो रहा था। आगे चलने वाला किम्प पुरुष पूर्ण रूप से स्पष्ट दिखाई दे रहा था। पालकी के पीछे वाला किम्प पुरुष की ओर मेरी दृष्टि ज्यादा देर नहीं ठहरी थी। आगे चलने वाले किम्प पुरुष को गौरपूर्वक देख रहा था। यह अनुभव कुछ ही देर के लिए दिखाई दिया था। फिर अनुभव समाप्त हो गया था।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले दो किम्प पुरुष पालकी ढो रहे थे। किम्प पुरुष उसे कहते है- जिनका मुँह बन्दरों जैसा होता है, धड़ (शरीर) मनुष्यों जैसा ही होता है। इस प्रकार की प्रजाति पूर्व काल में पृथ्वी पर पायी जाती थी। वर्तमान समय में यह प्रजाति पृथ्वी पर नहीं पायी जाती है।

अनुभव में दो किम्प पुरुष पालकी को अपने कन्धे पर रखें हुए चले आ रहे थे। अनुभव में स्पष्ट नहीं दिखाई दिया कि पालकी पर कौन बैठा हुआ है, अथवा नहीं बैठा है। अनुभव में एक विशेषता थी- किम्प पुरुषों का शरीर स्थूल शरीर जैसा नहीं था। दोनों किम्प पुरुष और पालकी वायु तत्व द्वारा बने हुए थे। किम्प पुरुष वायुतत्व का प्रतीक माने जाते है। वर्तमान में मेरी अवस्था शिवछिद्र के पास है अर्थात वायु तत्व के विलीन होने के पास है। शिवछिद्र के अन्दर से ही वायु तत्व का प्राकट्य सृष्टि के समय होता है और प्रलय के समय शिवछिद्र में सम्पूर्ण सृष्टि वायु तत्व के बीजरूप में विद्यमान हो जाती है।

किम्प पुरुष निश्चय ही बहुत बलिष्ट होते थे। मनुष्य की अपेक्षा इनके अन्दर बहुत ज्यादा बल होता है। अनुभव में ऐसा लगता था ये दोनों किम्प पुरुष पालकी मेरे लिये ला रहे थे। अभ्यास के अनुसार मेरी अवस्था वायुतत्व से आगे की ओर जाने वाली है, अर्थात भविष्य में मेरा अभ्यास आकाश तत्व के अंतर्गत होगा।

अपरा-प्रकृति के आवरण का साक्षात्कार

यह अनुभव 23 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं आकाश में विद्यमान हूँ। नीचे की ओर आकाश में गोलाकार रूप में, बहुत विस्तृत क्षेत्र में काले पदार्थ से बनी हुई मोटी दीवार है। दीवार की मोटाई और ऊँचाई स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही है। दीवार की ऊँचाई लगभग 6-7 फीट रही होगी, उसकी मोटाई लगभग चार फीट रही होगी, ऐसा अनुभव में दिखाई दे रहा है। ऐसा लग रहा है- नीचे की ओर आकाश के मध्य में काले रंग की गोलाकार (रिंग के आकार जैसी) दीवार विद्यमान है। इसी दीवार के अन्दर-बाहर और ऊपर-नीचे सर्वत्र एक समान आकाश ही आकाश विद्यमान है। यह अनुभव ध्यानावस्था में क्षणिक देर के लिये आया था। तभी मुझे अपना होश आने लगा कि मैं ध्यान में बैठा हुआ हूँ। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह सम्पूर्ण अनुभव आकाश में ही आया था। मैं ऊपर की ओर आकाश में स्थित हूँ। नीचे की ओर आकाश में गोलाकार रूप में काली दीवार विद्यमान है। मुझे एक बार में गोलाकार दीवार के अन्दर का आकाश और गोलाकार दीवार के बाहर का आकाश स्पष्ट दिखाई दे रहा है। गोलाकार दीवार के अन्दर का आकाश, बाहर का आकाश और ऊपर का आकाश एक जैसा ही दिखाई दे रहा है। गोलाकार दीवार के अन्दर का क्षेत्र अपरा-प्रकृति का क्षेत्र है। गोलाकार काली दीवार अपरा-प्रकृति का आवरण है। अपरा-प्रकृति के आवरण के बाहर का क्षेत्र परा-प्रकृति का क्षेत्र है, फिर भी दोनों प्रकार की प्रकृतियों का (अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति) आकाश एक जैसा ही दिखाई दे रहा है। मैं पहली बार दोनों प्रकृतियों को एक साथ देख रहा हूँ। दोनों प्रकृतियों के आकाश में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं है। सर्वत्र आकाश एक जैसा ही है, जबकि अपरा-प्रकृति के अन्दर का क्षेत्र गुणों की विषमावस्था वाला है तथा परा-प्रकृति का क्षेत्र गुणों की साम्यावस्था वाला है। दोनों प्रकृतियों के क्षेत्र में भारी अन्तर होता है। इसका

अर्थ है- अपरा-प्रकृति में परा-प्रकृति का अवतरण पूर्ण रूप से हो चुका है इसीलिये दोनों प्रकृतियों के आकाश एक जैसे ही दिखाई दे रहे है।

दोनों प्रकृतियों का आकाश इसलिये एक जैसा दिखाई दे रहा है क्योंकि परा-प्रकृति का अवतरण अपरा-प्रकृति में होता रहता है। परा-प्रकृति का अवतरण अपरा-प्रकृति में जितना ज्यादा होगा, अपरा-प्रकृति उतनी ज्यादा शुद्ध होती जायेगी। उस अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति का स्वरूप घटने लगेगा, क्योंकि अपरा-प्रकृति की अशुद्धता (तमोगुण) कम हो रही है। ऐसी अवस्था में तमोगुण सत्वगुण का सहयोग करता है अथवा सत्वगुण और रजोगुण मिलकर तमोगुण को दबा लेते है, ऐसी अवस्था में सत्वगुण प्रधान रूप से रहता है। यह अवस्था शुरूआत में थोड़े समय के लिये होती है, फिर धीरे-धीरे अभ्यासानुसार यह अवधि बढ़ती रहती है। इसीलिये अनुभव में सम्पूर्ण आकाश एक जैसा दिखाई दे रहा है। इस अनुभव में मैं आकाश में बहुत ऊपर विद्यमान हूँ कि अपरा-प्रकृति का सम्पूर्ण क्षेत्र दिखाई दे रहा है और साथ में परा-प्रकृति का भी क्षेत्र दिखाई दे रहा है। इस अनुभव से स्पष्ट होता है मैं ध्यानावस्था में अपरा-प्रकृति के क्षेत्र से बाहर परा-प्रकृति के क्षेत्र में चला जाता हूँ। पहले अनुभवों में मैं शिवछिद्र के अन्दर से होकर परा प्रकृति के क्षेत्र में गया हूँ। फिर परा-प्रकृति के क्षेत्र में कुछ क्षणों तक ही ठहर पाया था तभी अनुभव समाप्त हो गया। मगर इस बार अनुभव में एक साथ अपरा-प्रकृति का सम्पूर्ण क्षेत्र और परा-प्रकृति का क्षेत्र एक जैसा दिखाई दे रहा है। साधकों यह अनुभव हमारे लिये भविष्य में निश्चय ही श्रेष्ठ अवस्था होने का सूचक है। इस अनुभव में अपरा-प्रकृति का आवरण पूर्ण रूप से दिखाई दिया। अब अभ्यास के द्वारा अपरा-प्रकृति का आवरण धीरे-धीरे नष्ट होने लगेगा। यह अवस्था मुझे निकट भविष्य में प्राप्त हो जायेगी।

भगवान नारायण, शेषनाग और परम शिव का साक्षात्कार

यह अनुभव 24 जनवरी को रात्रि के समय आया। पहले एक घण्टा मैं ध्यान कर चुका था। किसी कारण से मुझे ध्यान तोड़ना पड़ा, फिर कुछ समय बाद आँखे बन्द करके ध्यान करने लगा। मैं जैसे ही ध्यान करने के लिए बैठा, मैंने आँखें बन्द ही की थी कुछ क्षणों बाद मुझे अपने सामने की ओर सफेद रंग का चमकीला प्रकाश दिखाई दिया। उसी प्रकाश में शेषनाग पर लेटे हुए भगवान नारायण जी का दर्शन होने लगे। मैं उनका दर्शन कर रहा था, भगवान नारायण थोडी सी करवट लिये हुए मेरी ओर देख रहे थे।

भगवान नारायण और शेषनाग की शैया के सामने धीरे-धीरे सफेद रंग की चमकीली भाप जैसी परत (सत्व गुण की परत) नीचे से ऊपर की ओर उठने लगी अर्थात हमारे और भगवान नारायण जी के बीच में नीचे से ऊपर की ओर को प्रकाशमान भाप जैसी उठने लगी। इस प्रकाशमान भाप के कारण शेषनाग की शैया और भगवान नारायण जी का स्वरूप नीचे से ऊपर की ओर ढकने लगा, यह प्रक्रिया धीरे-धीरे ही हो रही थी। भगवान नारायण जी को उस प्रकाशित भाप जैसी वस्तु से ढकते हुए मैं देख रहा था। भगवान नारायण जी का स्वरूप ढकने के बाद मैं शेषनाग जी के ढेरों फनों से युक्त स्वरूप को अब भी देख रहा था, धीरे-धीरे उनका स्वरुप भी नीचे से ऊपर की ओर ढ़क रहा था। उसी समय भगवान नारायण और मेरे बीच परम शिव त्रिशूल लिये हुए मेरी ओर देखते हुए प्रकट होने लगे।

जब मुझे परम् शिव दिखाई दे रहे थे, तब उनके दायीं ओर और बायीं ओर अर्थात दोनों तरफ मोटी सी 5-6 फुट ऊँची दीवारें दिखाई दे रही थी। ये दीवारें भी सफेद चमकीले प्रकाशित पदार्थ से बनी हुई थी। दोनों दीवारों की आपस में दूरी डेढ़ से दो मीटर रही होगी। दोनों दीवारों के मध्य में परम शिव त्रिशूल लिये खड़े हुए थे, दोनों दीवारों के मध्य में दिखाई देने वाला क्षेत्र शिवछिद्र का क्षेत्र था, यहीं पर परम शिव खड़े हुए दिखाई दे रहे थे। तभी परम शिव भी अदृश्य होने लगे। परम शिव मेरी ओर देख रहे थे, तभी मैं जोर से बोला- "प्रभू-प्रभु, आप थोड़ी देर और दर्शन दीजिए प्रभु मैंने अभी आप को जी भर के देखा नहीं है"। उसी समय परम शिव का स्वरूप एक बार फिर स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। अब मुझे परम शिव का स्वरूप स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। प्रभु त्रिशूल लिये हुए मेरी ओर प्यार से देख रहे थे, उनके गले में नाग नहीं था, कुछ क्षणों बाद परम शिव धीरे-धीरे अदृश्य होने लगे। अब मुझे दायीं ओर और बायीं ओर अत्यन्त उजली सफेद प्रकाश से युक्त दीवारें दिखाई दे रही थी। दोनों दीवारों की दूरी डेढ से दो मीटर रही होगी। भगवान नारायण, परम शिव, शेषनाग जी और दीवारें आदि एक ही जैसे पदार्थ से बने हुए थे। वह पदार्थ सफेद रंग का चमकीला व स्वप्रकाशित था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव कुछ देर तक ही आया था। मेरे जीवन में पहली बार है, जब भगवान नारायण जी, शेषनाग जी और परम शिव के एक साथ दर्शन हुए है। भगवान नारायण और शेषनाग के कई बार दर्शन हो चुके है, मगर परम शिव के दर्शन जीवन में दूसरी बार हो रहे थे। कई वर्ष पहले परम शिव के दर्शन हुए थे। सम्पूर्ण दृश्य में अत्यंत विलक्षण सफेद रंग का चमकीला प्रकाश फैला हुआ था। भगवान नारायण, शेषनाग जी और परम शिव एक ही जैसे पदार्थ से निर्मित थे । यह सफेद चमकीला पदार्थ सत्वगुण है। यहाँ पर (परा-प्रकृति) सत्वगुण विशुद्धता को प्राप्त होता है। परा-प्रकृति में सत्वगुण विशुद्धता को प्राप्त होने के

कारण वहाँ का क्षेत्र स्वप्रकाशित रहता है। परा-प्रकृति में वायुतत्व, अग्नितत्व, जलतत्व और पृथ्वीतत्व बीज में विद्यमान रहते है, वहाँ सिर्फ आकाश तत्व उपस्थित रहता है। दृश्य बहुत सुन्दर था मैं शब्दों में नहीं लिख सकता हूँ। अनुभव में जो दिखाई दिया उसको मैं लिखने का प्रयास कर रहा हूँ।

जिस स्थान पर परम शिव खड़े हुए दिखाई दे रहे थे, वहाँ पर दीवार दो भागों में बँटी हुई दिखाई दी थी। यह अपरा-प्रकृति का आवरण था। पहले यह आवरण काले रंग की दीवार के रूप में दिखाई दे रहा था, अब इस अनुभव में दीवार स्वच्छ सफेद रंग की स्वप्रकाशित सी दिखाई दे रही थी। शिवछिद्र के स्थान पर दीवार दो भागों में बँटी हुई दिखाई दे रही थी। शिवछिद्र के स्थान पर परम शिव खड़े हुए दिख रहे थे। अर्थात शिवछिद्र के स्थान पर रिक्त स्थान था, उसी रिक्त स्थान पर खड़े हुए परम शिव मुझे दर्शन दे रहे थे। इसीलिए इस छिद्र का नाम शिव-छिद्र पड़ा है।

पहले अनुभवों में शिवछिद्र अपरा-प्रकृति के आवरण में दिखाई देता था। यह आवरण मात्र 5-6 फीट ऊँची गोलाकार दीवार के रूप में दिखाई देता था। अब उस शिवछिद्र के स्थान पर रिक्त स्थान दिखाई दे रहा था, इसी रिक्त स्थान के मध्य में परम शिव खड़े हुए थे। इसलिये दो दीवारें दिखाई दे रही थी। पहले दीवार (आवरण) काले रंग के पदार्थ से बनी हुई दिखाई दे रही थी, अब इस अनुभव में दीवार उज्ज्वल सफेद प्रकाशित पदार्थ से बनी हुई दिखाई दे रही थी। यह सम्पूर्ण दृश्य परा-प्रकृति के अन्दर दिखाई दे रहा था।

शिवछिद्र के अन्दर गरुड़ जी का दर्शन

यह अनुभव 26 जनवरी को रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने बिल्कुल नजदीक शिवछिद्र है। शिवछिद्र के उस पार स्वप्रकाशित आकाश विद्यमान है। शिवछिद्र का व्यास लगभग दो-ढाई फीट रहा होगा। उस छिद्र के अन्दर की लम्बाई लगभग तीन फीट रही होगी। यह छिद्र हल्के काले पदार्थ से बना हुआ हैं। इस छिद्र के अन्दर दीवारों पर सफेद रंग की चमकदार भाप जैसा पदार्थ विद्यमान है। मैं छिद्र के अन्दर का दृश्य देख रहा था, तभी छिद्र के अन्दर एक पक्षी का स्वरूप धीरे-धीरे प्रकट होने लगा। कुछ समय बाद स्पष्ट रूप से दिखाई दिया- "यह गरुड़ पक्षी है"। गरुड़ पक्षी का दर्शन कुछ क्षणों तक होता रहा, उस समय गरुड़ पक्षी अपनी गर्दन लम्बी करके मुझे देख रहा था।

अर्थ- अनुभव में पहली बार शिवछिद्र के अन्दर सफेद चमकदार प्रकाश भाप जैसा देखा। इस शिवछिद्र की दीवारों पर भी सफेद प्रकाश भाप जैसा विद्यमान था मगर शिवछिद्र की दीवारें काले रंग की दिख रही थी। भाप जैसा प्रकाश परा-प्रकृति के क्षेत्र का है। इसका प्रभाव हमारे चित्त पर शुद्धता के रूप में पड़ेगा और अपरा-प्रकृति का आवरण भी शुद्ध होगा। इसका तमोगुण कम होगा। दूसरे शब्दों में यह प्रकाश उस परा-प्रकृति के सत्वगुण का प्रकाश होता है। यह सत्वगुण विशुद्धता से युक्त होता है। यह परा-प्रकृति का अवतरण कहा जाता है। वर्तमान समय में कई बार परा-प्रकृति का अवतरण हो चुका है।

शिवछिद्र के अन्दर पक्षी राज गरुड़ जी प्रकट होकर मुझे देखने लगे। वैसे गरुड़ जी का जन्म महर्षि कश्यप जी की पत्नी विनता की तपस्या से हुआ है। मगर मुझे अनुभव में शिवछिद्र के अन्दर प्रकट हुये थे, ऐसा दिखाई दिया। गरुड़ जी का जन्म महर्षि कश्यप की पत्नी के कठोर तपस्या के बाद उनके गर्भ से हुआ था। आध्यात्मिक दृष्टि से इसका अर्थ है- गरुड़ जी- अज्ञानता से मुक्ति, ज्ञान की शक्ति और भगवान विष्णु जी की भक्ति और सेवा का प्रतीक है।

कछुआ शिवछिद्र में विलीन हो गया

यह अनुभव 26 जनवरी की रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। मैं शिवछिद्र को देख रहा था। कुछ समय के बाद एक कछुऐ का बच्चा दूर से आकाश में उल्टा-पुल्टा होता हुआ चला आ रहा था। कुछ क्षणों बाद शिवछिद्र के पास आकर उल्टा-पुल्टा होता हुआ शिवछिद्र के अन्दर प्रवेश कर गया। शिवछिद्र के अन्दर प्रवेश करते ही उसका स्वरूप अदृश्य हो गया। इसका शरीर अदृश्य होते हुए ही मैं इसका अर्थ समझ गया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- कछुआ इंद्रियों का प्रतीक होता है। कछुऐ का शिवछिद्र में विलीन होने का अर्थ है भविष्य में इंद्रियों की क्रियाशीलता और चंचलता नष्ट हो जायेगी। इंद्रियाँ नष्ट हुए के समान हो जायेगी। यह अनुभव हमारे लिये बहुत अच्छा सन्देश है।

शिवछिद्र और अपरा-प्रकृति का आवरण

यह अनुभव 3 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरा मुँह शिवछिद्र के पास है। मैं शिवछिद्र के उस पार का क्षेत्र देख रहा हूँ। शिवछिद्र के उस पार निर्मल स्वच्छ आकाश विद्यमान है। मैं शिवछिद्र से थोड़ा पीछे की ओर हो जाता हूँ। तब शिवछिद्र और शिवछिद्र के आसपास की दीवार दिखाई देने लगी। शिवछिद्र के द्वारा मालूम हुआ, जिस दीवार में छिद्र है, उस दीवार की मोटाई लगभग 6 इंच (छ: इंच) होगी। छिद्र का व्यास लगभग डेढ़ फीट रहा होगा। मुझे शिवछिद्र के आसपास की दीवार स्पष्ट दिखाई दे रही थी। दीवार का रंग क्रीम कलर का था अर्थात उज्ज्वल सफेद नहीं था। फिर भी दीवार से प्रकाश की चमक निकल रही है और दीवार एकदम स्वच्छ है। मैं तीव्र गति से ऊपर की ओर जाकर आकाश में स्थित हो गया। उस समय मुझे वह दीवार गोलाकार रूप में नीचे की ओर दिखाई दी। दीवार की ऊँचाई 5-6 फीट रही होगी। इस गोलाकार दीवार के अन्दर के क्षेत्र में प्रकाश ही प्रकाश विद्यमान है। इसी प्रकार का प्रकाश गोलाकार दीवार के बाहर के क्षेत्र में विद्यमान है। अर्थात गोलाकार दीवार रूपी बाउण्ड्री के अन्दर और बाहर के क्षेत्र का प्रकाश एक ही जैसा है। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मेरी अवस्था में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ है। पहले शिवछिद्र के दीवार की मोटाई कई फीट होती थी, अब छिद्र की मोटाई लगभग 6 इंच रह गयी है, छिद्र भी छोटा सा रह गया है। यह दीवार अपरा-प्रकृति का आवरण है। अर्थात पहले की अपेक्षा अपरा-प्रकृति का आवरण मात्र 6 इंच मोटा रह गया है। पहले दीवार (अपरा-प्रकृति का आवरण) का रंग काला था। ऐसा लगता था यह दीवार काले रंग के पदार्थ से बनी हुई थी। अब दीवार का रंग क्रीम कलर का है। इस दीवार से प्रकाश जैसी चमक निकल रही थी। इस अनुभव से स्पष्ट होता है तमोगुण की मात्रा में बहुत भारी कमी आयी है। सत्वगुण की मात्रा बहुत ज्यादा बढ़ गयी है।

चूल्हे के ऊपर कढ़ाई

यह अनुभव 3 फरवरी को रात्रि के समय ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- चूल्हे के अन्दर पतली-पतली ढेर सारी लकड़ियाँ रखी हुई है। लकड़ियाँ ज्यादा होने के कारण आग खूब तेजी से जल रही है। यह चूल्हा भूमि को खोद कर बनाया गया है। चूल्हे के ऊपर बड़ी सी कढ़ाई रखी हुई है। मैंने कढ़ाई के अन्दर देखा तो चौक पड़ा- क्योंकि कढ़ाई के अन्दर कुछ भी नहीं था, फिर भी चूल्हे के ऊपर चढ़ी हुई थी। फिर

मैंने दुबारा देखा- तो मुझे आश्चर्य हुआ क्योंकि कढ़ाई की तली ही नहीं थी। चूल्हे की आग की लपटें कढ़ाई के अन्दर से ऊपर की और उठ रही थी। मैं सोच रहा था- आग के कारण कढ़ाई की तली जल कर नष्ट हो गयी है, तली की जगह खूब बड़ा सा छिद्र हो गया था। मैं कभी चूल्हे की आग देख रहा था फिर कढ़ाई के अन्दर आग की उठती हुई लपटें देख रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव का अर्थ बहुत अच्छा है। लकड़ियाँ कर्माशयों का प्रतीक है। चूल्हे के अन्दर जलती आग हमारी योगग्नि का प्रतीक है। अर्थात योगग्नि के द्वारा कर्माशयों का नाश हो रहा है। कढ़ाई की पेंदी टूटी हुई है। किसी प्रकार भोजन नहीं बन सकता है अर्थात कर्माशयों को नहीं भोगना है। ये अनुभव भविष्य में श्रेष्ठता प्राप्त होना दर्शा रहा है।

अपरा-प्रकृति का आवरण टूर-टूट कर नष्ट हो गया

यह अनुभव 5 फरवरी को आया। मैं गहरे ध्यान में था तभी मैंने देखा- मैं सामने की ओर देख रहा हूँ। सामने थोड़ा नीचे की ओर क्रीम कलर की, खड़े आकार में पतली सी दीवार, बीच से धीरे-धीरे फटफट कर दो परतों में अलग-अलग होने लगी अर्थात वह दीवार धीरे-धीरे बीच से फट कर दो भागों में हो रही थी। यह दृश्य बहुत ही छोटे से क्षेत्र में था। इसलिये मैं नहीं समझ पा रहा था कि यह दीवार क्या है जो धीरे-धीरे बीच से फटती जा रही थी। तभी दिखाई दिया फटी हुई दोनों परतों के बीच में, बहुत पतले (कागज जैसा पतला) आकार में हरे रंग का गाढ़ा पदार्थ भरा हुआ है। यह दीवार लगभग 6 इंच व्यास में गोलाकार रूप में थी। इस गोलाकार दीवार की ऊँचाई लगभग 2 इंच की रही होगी। यह दीवार बीच से फटकर दो परतों में अलग-अलग हो रही थी। अब दीवार की दोनों परतें और हरे रंग का गाढ़ा पदार्थ का अवशेष वहीं पड़ा हुआ था। यह अनुभव मैं ऊपर आकाश में स्थित होकर नीचे की ओर देख रहा था। ऊपर और नीचे का आकाश सर्वत्र एक जैसा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में क्रीम कलर की दिखाई देने वाली दीवार अपरा-प्रकृति का ही आवरण है। पहले ये दीवार 5-7 फीट ऊँची बहुत ही मोटी काले पदार्थ से बनी हुई थी, अब यह गोलाकार दीवार 6 इंच व्यास वाली और 3 इंच ऊँचाई वाली ही रह गयी थी। यह आवरण रुपी दीवार बीच से फट कर मलबे के रूप में बदल गया, फटी हुई दीवार के मध्य से हरे रंग का गाढ़ा सा पदार्थ भी निकला। फटी हुई दीवार और हरे रंग का गाढ़ा सा पदार्थ का मलबा आपस में एक होकर वहीं पर पड़ा हुआ था। हरे रंग का गाढ़ा

पदार्थ जल तत्व से सम्बन्धित है। अनुभव में पड़ा हुआ शेष मलवा मुझे भोग कर नष्ट करना होगा। इसे नष्ट करने के लिए कुछ सांसारिक कार्य करने होंगे और कुछ साधकों का मार्गदर्शन करना होगा। फिर कुछ समय बाद इस मलवे का स्वरूप नष्ट हो जाएगा, हमारे लिए अपरा-प्रकृति और उसका आवरण सदैव के लिए नष्ट हुए के समान हो जाएगा। ऐसे अभ्यसी को परा-प्रकृति में स्थिति बनाए रखने के लिए निरन्तर अभ्यास करते रहना पड़ेगा।

भगवान वराह

यह अनुभव ध्यानावस्था में 24 मार्च को आया। मैंने देखा- भगवान वराह भूमि पर पीठ के बल लेटे हुए थे। उनके पैरों और हाथों के ऊपर धूल पड़ी हुई थी। ऐसा लग रहा था उनका शरीर किसी धातु से बना हुआ था। उनका मुँह दाहिनी ओर को मुड़ा हुआ था। आश्चर्य की बात यह थी, उनका मुँह खुला हुआ था। मुझे उनके मुँह के अन्दर से हृदय तक का दृश्य दिखाई दे रहा था। उनका हृदय धड़क रहा था अर्थात स्पन्दन कर रहा था। भगवान वराह का शरीर मृत जैसा था मगर उनका हृदय धड़क रहा था। ऐसा लग रहा था मानो कुछ समय बाद इनका शरीर शान्त हो जायेगा। अर्थात मृत्यु हो जायेगी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान वराह का दर्शन हुआ था। भगवान वराह का शरीर किसी धातु का बना हुआ था। भगवान वराह का स्वरूप धातु का बना होने के कारण, जड़ रुप में दिखाई दे रहा था। भगवान वराह का प्राकट्य सृष्टि के कुछ समय बाद अर्थात सतयुग के शुरूआत में हुआ था। अब हमारे लिये मृत हुए के समान हो गये है, ऐसा अनुभव से ज्ञात हो रहा है। मैंने भगवान वराह को कभी स्मरण नहीं किया, फिर भी उन्होंने मुझे दर्शन दिया। भविष्य में परा- प्रकृति के पूर्ण अवतरण के बाद हमारे लिये अपरा-प्रकृति पूर्ण रूप से शुद्ध हो जाएगी।

कुण्डलिनी शक्ति के दर्शन

यह अनुभव 5 मार्च को सुबह ध्यानावस्था में आया। सामने की ओर थोड़ी दूरी पर दिखाई दिया। कुण्डलिनी शक्ति नागिन के रूप में कुण्डली मारे हुए मेरी ओर देख रही है। वह अपनी जीभ मेरी ओर को निकाल रही है। कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप तपे हुए सोने के समान था, उसके सम्पूर्ण शरीर से प्रकाश

निकल रहा था। फिर भी कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप जड़ जैसा है, ऐसा दिखाई दे रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप तपे हुए सोने के समान दिखाई दे रहा है। वह हमारी तरफ देख रही है। वह अपनी जीभ भी निकाल रही थी। ऐसा पहली बार हुआ है कि अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति अपनी जीभ बाहर की ओर निकाल रही थी। उसके शरीर से प्रकाश निकल रहा था फिर भी जड़ स्वरूप जैसी लग रही थी।

चित्त की भूमि

यह अनुभव 5 मार्च को आया। मैंने ध्यानावस्था मे देखा- मेरे सामने लगभग एक फीट व्यास की गोलाकार मटमैले रंग की भूमि दिखाई दे रही है। इस भूमि के आसपास का क्षेत्र अत्यंत निर्मल है। चारों ओर आकाश दिखाई दे रहा है। अब मेरी दृष्टि गोलाकार भूमि पर स्थिर हो गयी। उस भूमि के बाँयी ओर का सिरा थोड़ा ऊपर की ओर उठता है, उसी समय दाहिनी ओर का सिरा नीचे की ओर झुकता था। फिर दाहिनी ओर का सिरा ऊपर की ओर उठता था, तब बाँयी ओर का सिरा नीचे की ओर झुकता था। यही क्रिया लगातार हो रही थी, एक सिरा ऊपर की ओर उठता था तब दूसरा सिरा नीचे की ओर झुकता था। कुछ क्षणों तक मैं यही क्रिया देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि चित्त की भूमि है। चित्त की भूमि छोटी हो होकर मात्र इतनी छोटी (एक फीट व्यास के समान) रह गयी है। भविष्य में अभ्यास के द्वारा चित्त की भूमि छोटी हो होकर नष्ट हुए के समान हो जायेगी। चित्त की भूमि पर कुछ हलचल हो रही है इसका अर्थ है- हमें समाज में कुछ कार्य करना होगा, फिर उसकी हलचल समाप्त हो जायेगी।

श्रेष्ठ गुण

यह अनुभव 5 मार्च को आया। मैं ध्यान पर बैठा ही था, तभी आकाश से आवाज आयी- "आप में श्रेष्ठ गुण है, आप जितना अपने से प्रेम करते हो, उतना ही आप अपने विरोधी से भी प्रेम करते हो"। कुछ क्षणों तक ध्यानावस्था में इन्ही शब्दों के विषय में सोचता रहा, फिर समाधि की गहराई मे चला गया।

अखण्ड शान्ति

यह शब्द 13 अप्रैल को ध्यानावस्था में सुनाई दिये। जैसे ही मैंने ध्यान करने के लिये आँखें बन्द की थी, उसी समय मुझे आकाश से आवाज सुनाई दे रही थी- "अखण्ड शांति को प्राप्त हो जाओ"। यह आवाज सुनकर मैं शाँत सा हो गया, इन शब्दों का अर्थ समझ रहा था, फिर ध्यान की गहराई में उतर गया।

तुम सिर्फ अकेले हो

यह शब्द मुझे 24 अप्रैल को ध्यानावस्था में सुनाई दिये। मैंने ध्यान करने की शुरूआत की थी, तभी आकाश से आवाज सुनाई दी- "तुम अकेले हो"। मैं इन शब्दों को सुनकर कुछ क्षणों तक शांत बैठा रहा, फिर गहरे ध्यान में चला गया।

सहस्त्रदल कमल का स्वरूप

यह अनुभव 8 अगस्त को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने अंगूठे के समान आकार वाली कोई वस्तु दिखाई दे रही है। उसका स्वरूप ऐसा है जैसे मकई के भुट्टे के अगर दाने निकाल लिये जाय, फिर अन्दर का जो शेष भाग बच जाता है जिसमें दाने लगे होते है। ठीक उसी के तरह की अंगूठे के आकार वाली वह वस्तु है। उसी वस्तु के निचले क्षेत्र में गोलाकार रूप में कमल की छोटी-छोटी पंखुड़ियाँ लगी हुई है। कुछ क्षणों बाद दिखाई दिया, ये कमल की पंखुड़ियाँ तीन लाइनों में गोलाकार रूप में विद्यमान है। मैंने पंखुडियों को गौरपूर्वक देखा तो दिखाई दिया- ये छोटी-छोटी पंखुडियाँ कई सौ होंगी, मैं उन पंखुड़ियों की गिनती नहीं कर सकता था। मैं उसी समझ गया था ये सहस्त्रदल कमल है। अब यह इतना छोटा सा रह गया कि इसका स्वरूप अगूठे से छोटा, ऊँचाई में छोटी छोटी पंखुड़ियाँ लगी हुई है, सम्पूर्ण फूल का व्यास डेढ़ से दो इंच रहा होगा। ये सहस्त्रदल कमल अपनी जगह पर एण्टी-क्लॉक वाइज घूम रहा था। यह सहस्त्रदल कमल छोटा सा था, मेरे आँखो के नजदीक थोड़ा सा नीचे की ओर, मुझ से एक फीट की दूरी पर स्थित था।

अर्थ- सहस्त्रदल कमल या सहस्त्रार चक्र ज्ञान का आयतन होता है। सहस्त्रदल कमल सम्पूर्ण चित्त में व्याप्त रहता है। यह सहस्त्रार चक्र शिव-शक्ति का निवास स्थान है। भगवान शिव (शंकर) अपनी शक्ति (कुण्डलिनी शक्ति) के साथ विराजमान रहते हैं। अब सहस्त्रदल कमल का स्वरूप कितना छोटा रह गया है।

मन्दिर के गुम्बद का ऊपरी सिरा

यह अनुभव 13 सितम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने थोड़ी दूरी पर मंदिर के गुम्बद का ऊपरी सिरा छाया जैसे रूप में दिखाई दे रहा था। फिर ऐसा लगा मानो किसी ऊँची इमारत का गुम्बदनुमा ऊपरी सिरा है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- गुम्बदनुमा ऊपरी सिरा ज्ञान रूपी सात पायदान का ऊपरी भाग है। अभ्यासियों को कभी-कभी ज्ञान सात मंजिल वाली इमारत के रूप में भी दिखाई देती है। यह इमारत बहुत सुन्दर दिखाई देती हैं।

कुण्डलिनी शक्ति सहस्त्रदल कमल के ऊपर

यह अनुभव 14 सितम्बर को सुबह आया। मैंने देखा- सहस्त्रदल कमल के ऊपर नाग के रूप में कुण्डलिनी शक्ति कुण्डली मारे फन ऊपर की ओर उठाए जोर-जोर से फुफकार रही थी। 8 अगस्त 2025 को दिखाई दिये अनुभव में सहस्त्रदल कमल का स्वरूप के समान ही यह सहस्त्रदल कमल था। मगर नाग रूप में कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप सहस्त्रदल कमल के आकार से बड़ा था। मैं कुण्डलिनी शक्ति को फुंफकारते हुए देख रहा था । वह आकाश में इधर-उधर फुंफकार रही थी। फिर हमारा अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति सहस्त्रदल कमल के ऊपर बैठी हुई दिखाई दे रही थी। इसका अर्थ है कुण्डलिनी शक्ति अपने मूलस्थान पर बैठी हुई थी। ऐसी अवस्था में अभ्यासी का अभ्यास अंतिम अवस्था में चल रहा होता है क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति का मूल स्थान सहस्त्रार चक्र ही है। इस अनुभव में सहस्त्रार चक्र बिलकुल छोटा सा दिखाई दे रहा है, जैसा 8 अगस्त 2025 के अनुभव में दिखाई दिया था। अब सहस्त्रदल कमल का स्वरूप धीरे-धीरे छोटा सा रह गया है क्योंकि वर्तमान अवस्था में मैं

कभी-कभी परा-प्रकृति के क्षेत्र में चला जाता हूँ. इसलिए अपरा-प्रकृति का स्वरूप भी घट-घटकर छोटा सा रह गया है।

अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति अपना फन ऊपर की ओर उठाये हुए आकाश में इधर-उधर को फुफकार रही है। इसके फुंफकारने का प्रभाव हमारे चित्ताकाश पर पड़ेगा। मुझे कुछ आध्यात्मिक कार्य करने होंगे। जब चित्त के भोग पूर्ण हो जाते है तब कुण्डलिनी का स्वरूप शांत हो जायेगा।

अत्यन्त विशाल दरवाजा

यह अनुभव 10 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे मुँह से मात्र एक मीटर की दूरी पर विशाल दरवाजे की देहरी है। मैं देहरी को गौरपूर्वक देख रहा था। देहरी पर बहुत सुन्दर नक्काशी बनी हुई है। तभी मैंने देहरी के सहारे ऊपर की ओर देखना शुरू किया, तब मुझे दिखाई दिया- ये नक्काशीदार बहुत बड़ा दरवाजा आकाश में विद्यमान है। यह दरवाजा बन्द है। मैं उस सुन्दर दरवाजे को देख रहा हूँ, उसी समय वह दरवाजा अपने आप खुल गया। दरवाजे के खुलते ही उस पार का प्रकाश युक्त आकाश दिखाई देने लगा। वह आकाश स्वयं अपने आप में स्वप्रकाशित था। स्वप्रकाशित आकाश बहुत ही सुन्दर दिख रहा था। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- जब अनुभव में दिखाई देने वाला दरवाजा नक्काशीदार, बहुत बड़ा और आकाश में विद्यमान दिखाई दे, तब उसके दो प्रकार के अर्थ होते हैं।

एक- अगर साधक नया है। उसकी साधना के कुछ ही महीने या वर्ष हुए है, तब दरवाजा दिखाई देने का अर्थ होता है उसकी कुण्डलिनी जागृति होने वाली है अथवा किसी लोक का प्रवेश-द्वार है। **दूसरा-** यह किसी लोक का दरवाजा है। इस समय हमारी अवस्था अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति की सीमा पर है। इसका यही अर्थ निकलता है कि यह परा-प्रकृति का प्रवेश द्वार है। वैसे परा-प्रकृति के क्षेत्र में कई बार जा चुका हूँ फिर भी यह प्रवेश द्वार मुझे अनुभव में दिखाई दे रहा था। यह प्रवेश द्वार पहले बन्द था। फिर उस पर दृष्टि पड़ते ही खुल गया।

गणेश जी जड़ स्वरूप में

यह अनुभव 25 अक्टूबर को शाम के समय ध्यानावस्था में आया। ध्यान में देखा- सामने भगवान गणेश जी बैठे हुए हैं। उनका शरीर जड़ पदार्थों से बना हुआ है। ऐसा लग रहा है मानों उनका शरीर हल्के नीले रंग के पत्थर से बना हुआ है। कुछ क्षणों तक मैं उन्हें देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- पहले अनुभव में भगवान गणेश जी को शिवछिद्र में प्रवेश करते हुए देखा था। यह अनुभव 17 जनवरी 2025 को आया था। भगवान गणेश जी का प्राकट्य शिवछिद्र से वायु तत्व की प्रधानता से हुआ था। वायु तत्व से अन्य देवताओं का भी प्राकट्य हुआ है। उन देवताओं का स्वरूप भी जड़ रूप में परिवर्तित होते हुए देखा है। इस अनुभव में अब मैंने भगवान गणेश जी को यह जड़ रूप में परिवर्तित होते हुए देखा है।

कुण्डलिनी शक्ति जड़ स्वरूप में

यह अनुभव 10 नवम्बर को आया। सुबह 3:30 बजे ध्यानावस्था में देखा- मेरे सामने एक मीटर की दूरी पर सुनहरी नागिन कुण्डली मारे फन ऊपर की ओर उठाए हुए बैठी हुई थी। यह सुनहरी नागिन पूरी तरह से जड़ पदार्थ की बनी हुई थी। ऐसा लगता था मानों यह कुण्डलिनी नागिन के रूप में तपे हुए सोने की बनी हुई है। मैं तुरन्त समझ गया यह कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप है, मगर इसका स्वरूप जड़ रूप में तपे हुए सोने से बनी हुई देखकर आश्चर्य चकित हुआ। कुछ समय तक कुण्डलिनी शक्ति को इस रूप में देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। उसी समय हमारा ध्यान टूट गया। अब कुण्डलिनी के विषय में सोचने लगा कि मुझे ये इस प्रकार जड़ स्वरूप में क्यों दिखाई दी, फिर मैं इसका अर्थ समझ गया।

अर्थ- मैंने साधकों को शिविर में कई बार बताया है- जीव जब अपरा-प्रकृति में भोग करने के लिए आता है, तब जीव अपनी संगिनी कुण्डलिनी शक्ति के साथ आता है। कुण्डलिनी शक्ति का मूल निवास सहस्त्रार चक्र में होता है। सहस्त्रार चक्र से आज्ञा चक्र होते हुए नीचे की ओर गमन करती हुई मूलाधार चक्र में त्रिकोण के मध्य में शिव लिंग के ऊपर साढ़े तीन चक्कर लगाकर सुषुप्तावस्था में विद्यमान हो जाती है। जब अभ्यास के द्वारा कुण्डलिनी को जाग्रत करके के ऊर्ध्व करते हुए सभी छ: चक्रों का भेदन करते हुए सहस्त्रार चक्र में स्थित शिव से कुण्डलिनी शक्ति का मिलन करा देता है। तब जीव के

लिये भोग और अपवर्ग का कार्य पूर्ण हो जाता है। तब जीव के लिए अपरा-प्रकृति नष्ट हुए के समान हो जाती है, जबकि अन्य जीवों के लिये अपरा-प्रकृति उपलब्ध रहती है। ऐसी अवस्था में कुण्डलिनी शक्ति जड़ रूप में दिखाई देने लगती है।

इस अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति के जड़ स्वरूप का (तपे हुए सोने से बनी हुई) साक्षातकार हुआ है। सांख्य योग के अनुसार चेतन और जड़ दो ही तत्व माने गये है। चेतन तत्व निर्गुण ब्रह्म है। इसके अतिरिक्त दृश्यमान सब कुछ जड़ तत्व ही है। जड़ तत्व ही जड़ प्रकृति है।

भगवान विष्णु जी जड़ स्वरूप में

यह अनुभव 19 नवम्बर को सुबह जागते समय पौने चार बजे आया। मैं सुबह जाग गया था मगर किसी कारण से ध्यान पर नहीं बैठा था। मैं लेटा हुआ जाग रहा था। मेरी आँखे बन्द थी। मुझे बन्द आँखों से ही दिखाई दिया था- मेरे सामने भगवान विष्णु जी चतुर्भुज स्वरूप में खड़े हुए है। उनका शरीर सफेद रंग के जड़ पदार्थ से बना हुआ है। इनका शरीर अत्यंत सफेद उज्ज्वल विलक्षणता को लिये हुए पदार्थ से बना हुआ है। मैं भगवान विष्णु जी को देखे जा रहा था। जड़ पदार्थ से बने होने के बाद भी बहुत सुन्दर लग रहे थे। तभी मुझे अपना होश आ गया। मैं लेटा हुआ भगवान विष्णु जी के सुन्दर स्वरूप को देख रहा था। मैं उठकर बैठ गया। फिर सोचने लगा ध्यान पर बैठ जाऊँ, तभी याद आया- इस प्रकार का दर्शन मैं सुबह तीन से चार बजे के बीच क्षणिक देर के लिये कई दिनों से रोजाना कर रहा हूँ। मगर इस प्रकार के दर्शन होने पर भगवान विष्णु जी के विषय में ध्यान नहीं देता था। मैं थोड़ी देर में ध्यान करने के लिये बैठ गया।

मैं जल्दी से ध्यान करने के लिये बैठ गया। मैंने भगवान विष्णु जी से प्रार्थना की- आपके इसी स्वरूप का फिर से दर्शन करना चाहता हूँ, कृपया मुझे दर्शन देने की कृपा करें। मेरे द्वारा ऐसी प्रार्थना करते ही भगवान विष्णु जी फिर से एकदम उज्ज्वल सफेद रंग वाले, पहले की तरह चतुर्भुज रूप में प्रकट हो गये। जिस उज्ज्वल सफेद पदार्थ से उनके स्वरूप का निर्माण हुआ था, वह पदार्थ विलक्षणता को लिये हुए था। परन्तु स्पष्ट हो रहा था जड़ पदार्थ से ही उनके स्वरूप का निर्माण हुआ है। कुछ समय तक उनके स्वरूप को देखता रहा, फिर भगवान विष्णु जी का स्वरूप अदृश्य हो गया। तभी मैंने अपनी आँखें खोल दी। फिर अनुभव के विषय में चिन्तन करने लगा।

अर्थ- शास्त्रों के अनुसार भगवान विष्णु जी सम्पूर्ण जगत के पालक है। मैंने पहले भी अपने लेख में देवताओं के विषय में लिखा है। वह भी जड़ स्वरूप में परिवर्तित हो गये थे। भगवान ब्रह्मा जी और भगवान शंकर जी के विषय में मैं पहले ही लिख चुका हूँ। इस अनुभव में भगवान विष्णु जी के इस स्वरूप में दर्शन हो चुके है जैसा अनुभव में लिखा है। भगवान विष्णु जी के स्वरूप का इस प्रकार दर्शन मैं पहले भी तीन-चार बार कर चुका था, मगर उस समय मैंने ध्यान नहीं दिया था। अबकी बार मैं सजग हो गया था। मुझे याद आ गया मैं भगवान विष्णु जी के जड़ स्वरूप में दर्शन कर रहा हूँ।

मैं एक बात लिखना चाहता हूँ- सच तो यह है इन तीनों में कोई छोटा या बड़ा नहीं है। इन तीनों के कार्य अलग-अलग है। इन तीनों में किसी को छोटा या बड़ा कहना अज्ञानता और अल्प बुद्धि के सिवाय और कुछ नहीं है। इन तीनों की कार्यकाल की अवधि कम और ज्यादा अवश्य है। भगवान ब्रह्मा जी का कार्यकाल सबसे कम है, भगवान शंकर जी का कार्यकाल भगवान ब्रह्मा जी के कार्यकाल से ज्यादा और भगवान विष्णु जी के कार्यकाल से कम है। भगवान विष्णु जी का कार्यकाल सबसे ज्यादा है। वर्तमान समय में मेरी अवस्था अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति की सीमा पर है। इसीलिये इन देवताओं का स्वरूप जड़ रूप में दिखाई देता है। अर्थात इन तीनों का स्वरूप जो चैतन सा दिखता है, उनका शरीर वास्तव में जड़ पदार्थों से बने होने के कारण जड़ स्वरूप में दिखाई दे रहे हैं। जब किसी पदार्थ के मूल स्वरूप का साक्षात्कार हो जाता है, तब वह पदार्थ उस अभ्यासी को प्रभावित नहीं करता है। इसके लिए इस अवस्था की निरन्तरता बनी रहनी चाहिए। अर्थात वह अभ्यासी व्युत्थान अवस्था को प्राप्त न हो।

एक बात का गहराई से ध्यान रखना चाहिये कि भगवान ब्रह्मा जी, भगवान शंकर जी और भगवान विष्णु जी का प्राकट्य परा-प्रकृति से हुआ है। ये तीनों देवता अपरा-प्रकृति की व्यवस्था देखने के लिये प्रकट हुए है। परा-प्रकृति में आकाश तत्व ही प्रधानता से युक्त रहता है। अन्य चारों तत्व बीज रूप से विद्यमान रहते हैं और तीनों गुण साम्यावस्था में रहते है। मनुष्यों का जन्म अपरा-प्रकृति में कर्मों के आधीन होकर, जल तत्व की प्रधानता से युक्त होता है। अपरा-प्रकृति में गुण विषमावस्था में रहते हैं। इसीलिये मनुष्य चाहे जितनी साधना कर ले अर्थात चाहे जितना कठोर अभ्यास कर ले मगर इन तीनों देवताओं की बराबरी नहीं कर सकता है। इस अनुभव में भगवान विष्णु जी का शरीर सत्व गुण की प्रधानता से युक्त था। सत्वगुण जड़ता वाला होने के कारण भी स्वच्छ सफेद रंग से युक्त प्रकाशित था, क्योंकि यह सत्व गुण का स्वभाव है।

उल्टी गदा के समान उठा हुआ क्षेत्र

यह अनुभव 7 दिसम्बर को आया। मैंने देखा- मैं नीचे की ओर उतर रहा हूँ। उतरते समय मैं मिट्टी की बनी हुई कच्ची दीवार को पकड़ कर उतर रहा हूँ क्योंकि वहाँ पर सीढियाँ नहीं बनी है। ऐसा लग रहा है- यह मिट्टी की दीवार बहुत पुरानी है। मैं बड़े आराम से कच्ची दीवार को पकड़ कर नीचे आ रहा हूँ, पर ऊपर की ओर कच्ची दीवार बिलकुल सीधी थी, फिर भी मैं बड़े आराम से कच्ची दीवार को पकड़ लेता हूँ। कुछ क्षणों बाद मैं नीचे आकर खड़ा हो गया। फिर मैंने कच्ची दीवार को ऊपर की ओर देखा, तो ऊपर का दृश्य देखकर मैं चौंक पड़ा। क्योंकि ये उल्टी गदा के समान ऊपर की ओर उठा हुआ क्षेत्र था। वह अब कच्ची मिट्टी का बना हुआ दिखाई दे रहा था। मिट्टी बहुत जगह से टूट चुकी थी। कच्ची दीवार पर कई जगह बड़े-बड़े गड्ढे हो गये थे। कच्ची दीवार की सभी जगह से मिट्टी टूट-टूट कर गिर रही थी। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव के जैसा अनुभव मैं पहले पुस्तकों में लिख चुका हूँ। ये अनुभव सिर्फ तत्वज्ञानी अभ्यासी को ही आता है, जब उसकी ऋतम्भरा-प्रज्ञा प्रकट हुए कई वर्ष हो चुके होते है। उल्टी गदा के समान खड़े हुए क्षेत्र के ऊपर तत्त्वज्ञानी अपने आप को उपस्थित हुआ देखता है। यह क्षेत्र ऐसा दिखाई देता है जैसे निर्मल शुद्ध आकाश में (बीस मंजिल इमारत की ऊँचाई के समान) उल्टी गदा खड़ी हुई है। उस गदा का मोटा वाला भाग ऊपर की ओर होता है और डण्डा वाला भाग नीचे की ओर होता है।

उल्टी गदा जैसा क्षेत्र बहुत ऊँचा और मोटाई भी बहुत होती है। योगी अंतिम जन्म में ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्राकट्य होने के बाद, जब कुछ वर्षों तक कठोर अभ्यास करता रहता है, तब उचित अवस्था में वह अपने आप को उल्टी गदा के समान उठे हुए भाग के ऊपर उपस्थित हुआ पाता है। वह स्वयं को देखता है- इस उल्टी गदा जैसे क्षेत्र के ऊपर वह लेटा हुआ है। उल्टी गदा का ऊपरी क्षेत्र जितना विस्तृत होता है, उस सम्पूर्ण क्षेत्र में उसका शरीर लेटा हुआ रहता है। अर्थात अभ्यासी की व्यापकता भी बहुत बढ़ जाती है। इसका अर्थ है- वह सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति को अपने नीचे दबाये हुए उस ऊपरी क्षेत्र के ऊपर उपस्थित रहता है। वह उस समय सम्पूर्ण प्रकृति का स्वामी होता है। यह क्षेत्र ईश्वर का क्षेत्र होता है।

अनुभव में मैं नीचे की ओर बड़े आराम से उतर रहा हूँ, जबकि नीचे उतरने के लिये सीढियाँ नहीं है, फिर भी मैं कच्ची दीवार पकड़ कर उतर रहा हूँ। इसका अर्थ है- नीचे की अवस्था में आना, अर्थात जो

अवस्था हमारी वर्तमान में है, उस अवस्था से नीचे की अवस्था में आना। इस अनुभव से स्पष्ट होता है मैं कोई सांसारिक कार्य करने वाला हूँ।

कुछ वर्ष पहले जब इस प्रकार का अनुभव आया था, तब उल्टी गदा के समान ऊपर उठा हुआ क्षेत्र प्रकाशित था। मगर अब अनुभव में वह क्षेत्र पुरानी कच्ची मिट्टी द्वारा निर्मित हुआ दिखाई दे रहा है। ऐसा लग रहा था कुछ समय बाद ये अपने आप आप गिर जायेगा। पहले अनुभव मे यह क्षेत्र दिव्यता को लिये हुआ था, अब जड़ रूप में दिखाई दे रहा है, इसका अस्तित्व नष्ट हो रहा है। यह भी हमारे लिये नष्ट हुए के समान हो गया है।

भगवान विष्णु जी

यह अनुभव 15 दिसम्बर को आया। अनुभव में भगवान विष्णु जी की आवाज आयी- "पुत्र, अब तुम मेरा स्मरण किया करो"। उत्तर में मैं बोला- "अवश्य प्रभू जी", फिर मैं गहरे ध्यान में चला गया।

अर्थ- इस अनुभव मे भगवान विष्णु जी मुझसे कह रहे हैं- "पुत्र, अब तुम मेरा स्मरण किया करो"। मेरे इष्ट भगवान शंकर जी है। मैंने सम्पूर्ण जीवन भगवान शंकर जी का स्मरण किया। कुछ समय से भगवान विष्णु जी का स्मरण कर रहा हूँ। अब मैं दोनों का स्मरण करता हूँ।

भगवान विष्णु जी से प्रार्थना

यह अनुभव 21 दिसम्बर को आया। ध्यानावस्था में मैंने भगवान विष्णु जी से प्रार्थना की- मेरे अंत:करण में अब किसी प्रकार के संस्कार नहीं है, फिर भी मैं आपसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि मेरे अन्दर से उसका (अमुक साधक का) संस्कार निकाल दीजिये। फिर हमारा गहरा ध्यान लग गया। मुझे ध्यानावस्था में अनुभव आया- थोड़े से क्षेत्र में मटमैली सी भूमि दिखाई दे रही है। ऐसा लगता है भूमि की जुताई अभी-अभी हुई है। भूमि बिलकुल स्वच्छ है। किसी प्रकार का कोई खरपतवार नहीं है। उस भूमि के मध्य में एक सफेद रंग का स्वच्छ प्रकाशित मन्दिर का गुम्बद है। मैं उस स्वच्छ गुम्बद को कुछ क्षणों तक देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी।

अर्थ- अनुभव में भूमि स्वच्छ है, इसका अर्थ है- चित्त की भूमि स्वच्छ है। भूमि के मध्य में मन्दिर का गुम्बदनुमा आकृति है। इसका अर्थ है- ज्ञान के सात पायदान होते हैं अथवा ज्ञान सात मंजिलनुमा इमारत है। इस इमारत का जो सबसे ऊँचा क्षेत्र है वह मन्दिर का गुम्बद जैसा दिखाई दे रहा है। अर्थात ज्ञान का सबसे ऊँचा पायदान इस रूप में दिखाई दे रहा है। इसका अर्थ है निकट भविष्य में सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों का त्याग कर दूँगा।

महा कुण्डलिनी शक्ति का साक्षात्कार

यह अनुभव सुबह 4 बजे ध्यानावस्था में 31 दिसम्बर को आया। ध्यानावस्था में देखा- मुझे अपनी पीठ दिखाई देने लगी। सुनहले रंग का एक मोटा नाग मूलाधार चक्र से ऊपर की ओर चढ़ने लगा। उस समय ऐसा लग रहा था यह नाग पीठ के ऊपर रीढ़ के सहारे चढ़ रहा है। नाग बहुत मोटा था, रीढ़ के सहारे ऊपर चढ़ता हुआ गले के और सिर के पिछले भाग से होता हुआ सिर के ऊपर तक आ गया। फिर मेरे सिर के ऊपर चौड़ा सा फन रख दिया। तब मैंने देखा- उसके सिर के ऊपर बहुत बड़ी सी मणि विद्यमान है। कुछ क्षणों तक स्पष्ट रूप से मणि को देखता रहा। एक बार फिर मुझे अपनी पीठ दिखाई देने लगी। मैं आश्चर्य चकित हुआ- यह नाग बहुत मोटा और काफी बड़ा था। सामान्य रूप से नाग इतने मोटे और बड़े नहीं होते हैं। फिर दिखाई दिया- नाग का पूँछ वाला भाग मेरे मूलाधार क्षेत्र से होता हुआ पीछे की ओर भूमि पर दो-ढाई फीट लम्बा विद्यमान था, तब मैंने सोचा- कुण्डलिनी का ये स्वरूप कैसा है, इस प्रकार का दर्शन कुण्डलिनी का कभी नहीं हुआ। अब मेरी दृष्टि अपने सिर के ऊपर आ गयी, तब मैंने देखा- नाग का फन इतना चौड़ा था कि फन का दाहिने भाग का किनारा मेरे पूरे सिर को ढके हुए था, उसका शेष फन सिर से अलग बायीं ओर था। नाग का मुँह बहुत मोटा व बड़ा था। अब मैं उसके मुँह का दाहिना भाग ही देख पा रहा था। उसकी बहुत तेज चमकती हुई दाहिनी आँख ही देख पा रहा था। आँख पीले रंग की थी, वह अंगारे की तरह दहक रही थी। मैं उस आँख को निरन्तर देख रहा था वह आँख मुझे भी देख रही थी। कुछ क्षणों तक उस आँख को देखता रहा फिर दूसरा दृश्य (अनुभव) दिखाई देने लगा।

अर्थ- मैं पहले अनुभवों में लिख चुका हूँ- कुण्डलिनी शक्ति के मुझे जड़ स्वरूप में दर्शन हुए थे। मगर इस अनुभव में इस प्रकार की कुण्डलिनी जीवन में पहली बार दिखाई दी। मैंने अपने जीवन में सैंकड़ों साधकों की कुण्डलिनी ऊर्ध्व की है, मुझे अपने साधना काल में भी कुण्डलिनी के बहुत अनुभव आये

और कुण्डलिनी शक्ति से कई बार बातें भी हुई हैं, इसलिए कुण्डलिनी के विषय में ढेर सारा ज्ञान है। मगर कभी भी इस प्रकार की कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन नहीं हुआ था।

कुण्डलिनी शक्ति साधक को जब ध्यानावस्था में दिखाई देती है, तब उसका पूँछ वाला भाग त्रिकोण के मध्य में स्थित शिवलिंग के ऊपर चक्कर लगाये होता है। अगर साधक के शरीर में कुण्डलिनी स्थिर हो चुकी है या स्थिर होने वाली है तब भी कुण्डलिनी का पूँछ वाला भाग शिवलिंग के ऊपर थोड़ा सा चक्कर लगाये हुए दिखाई देता है, फिर भी कुण्डलिनी की पूँछ शिवलिंग से कभी भी अलग नहीं होती है।

क्योंकि शिवलिंग अपरा-प्रकृति का स्वरूप होता है। अपरा-प्रकृति से ही जीव का चित्त बना है। यह चित्त भी अपरा-प्रकृति के समान स्वरूप वाला होता है। एक बात का ध्यान रहे- अपरा-प्रकृति और चित्त अलग-अलग होते हैं। जीव अनन्त होने के कारण चित्त भी अनन्त होते हैं। जीव के चित्त सदैव अपना-अपना अलग-अलग अस्तित्व रखते हैं जबकि सभी चित्त अपरा-प्रकृति से ही बने होते हैं। सभी चित्त का स्वरूप एक जैसा ही होता है फिर भी अनन्त चित्त समान स्वरूप वाले होने के बाद भी, आपस में एक दूसरे में विलीन नहीं होते हैं। इसका कारण है सभी जीवों के कर्माशय भिन्न-भिन्न होते हैं। कर्माशय भिन्न-भिन्न होने के कारण आपस में कभी नहीं मिलते हैं। उनका अपना-अपना अलग अस्तित्व होता है।

अभ्यासी के अंतिम जन्म में जब उसकी ऋतंभरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो जाता है अथवा होने वाला होता है, तब जीव का चित्त अर्थात अपना चित्त शिवलिंग के स्वरूप जैसा भी दिखाई देता है, ऐसा कभी-कभी ही दिखाई देता है। अभ्यासी का चित्त कभी-कभी घड़े के रूप में भी दिखाई देता है। साधक का जब ब्रह्मरंध्र खुलने वाला है तब ब्रह्मरंध्र उल्टे घड़े के रूप में दिखाई देता है। उसका (घड़े का) मुँह नीचे की ओर होता है। ब्रह्मरंध्र खुल जाने के बाद घड़े का मुँह ऊपर की ओर हुआ दिखाई देता है। इसका अर्थ है- अभी तक साधक के जीवन का प्रवाह निम्नमुखी (संसार की ओर) था, ब्रह्मरंध्र खुलने पर साधक के जीवन का प्रवाह उर्ध्वमुखी (ईश्वर की ओर) हो गया है। ऐसा तभी होता है - जब साधक अपने अभ्यास की निरंतरता बनाये रखता है।

शिवलिंग का अर्थ होता है- शिवलिंग दो शब्दों के द्वारा बना हुआ है, **"शिव और लिंग"**। शिव का अर्थ है कल्याणकारी देवता, लिंग का अर्थ है "व्यक्त रूप में" (प्रकट रूप में), चिन्ह, सूक्ष्म, आदि। परा-प्रकृति को अव्यक्त, अलिंग, आदि नामों से जाना जाता है इसी प्रकार अपरा-प्रकृति को व्यक्त, लिंग

आदि नामों से जाना जाता है। इसीलिए परा-प्रकृति को **अव्यक्त** भी कहते हैं, **अलिंग** भी कहते हैं। इसी प्रकार अपरा-प्रकृति को **व्यक्त** भी कहते हैं, **लिंग** स्वरूप वाली भी कहते हैं। शिव शब्द का सम्बोधन भगवान शंकर जी के लिये किया जाता है। शिवलिंग- ऐसा कल्याणकारी देवता जो ब्रह्माण्ड रूपी अपरा-प्रकृति के (लिंग) कण-कण में व्याप्त हो, इसीलिये भगवान शंकर जी को शिवलिंग के स्वरूप में अर्थात अण्डाकार पिण्ड के रूप में पूजते हैं क्योंकि अपरा-प्रकृति का स्वरूप ब्रह्मांड रूपी पिंड, अण्डाकार रूप में ही होता है। योग की भाषा में सूक्ष्म शरीर को लिंग शरीर भी कहते है।

मैं पहले लिख चुका हूँ- कुण्डलिनी शक्ति का मूल स्थान सहस्रार चक्र पर है। कुण्डलिनी शक्ति भगवान शिव जी के साथ सहस्रार चक्र में विराजमान रहती है। मगर जब जीव जन्म ग्रहण करने के लिये आता है, तब जीव अपने साथ कुण्डलिनी शक्ति को संगिनी के रूप में और प्राण शक्ति को भी अपने साथ लाता है। फिर वह सहस्रार चक्र से नीचे की ओर आज्ञा चक्र व हृदय चक्र होते हुए, मूलाधार चक्र में त्रिकोण के मध्य में स्थित शिवलिंग के ऊपर साढ़े तीन चक्कर लगाकर अपनी पूँछ को मुँह में दबाकर सुषुप्तावस्था में विद्यमान हो जाती है।

फिर अभ्यासी अभ्यास के द्वारा कुण्डलिनी शक्ति को जगाकर उसे ऊर्ध्व करता हुआ सहस्रार चक्र में भगवान शिव से मिलन करा देता है। यह प्रक्रिया अभ्यास के द्वारा कई जन्मों में होती है। कई जन्मों तक अभ्यास करने का कारण उसके चित्त पर स्थित कर्माशयों का भी नाश करना होता है, इसलिए कई जन्मों तक लगातार अभ्यास करना पड़ता है।

वर्तमान जन्म में कई वर्षों तक कठोर अभ्यास करते हुए कुण्डलिनी शक्ति को मूलाधार चक्र से ऊर्ध्व करके सहस्रार चक्र तक कुण्डलिनी शकित को गमन करा दिया है। मेरे लिए अब कुण्डलिनी शक्ति अपने जड़ स्वरूप में दर्शन देने लगी है। ऐसा मैंने अपने अनुभव में अभी कुछ दिन पूर्व लिखा है क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप भी पंचतत्वों द्वारा निर्मित है। वह शक्ति स्वरूप है, इसलिए वह दिव्यता को लेकर प्राप्त है। वह सम्पूर्ण ब्रह्मांड में व सभी प्रकार के पदार्थों में और स्थूल जगत से लेकर कारण जगत तक शक्ति के स्वरूप में विद्यमान रहती है। **इस कुण्डलिनी शक्ति को व्यष्टि कुण्डलिनी और क्षुद्र कुण्डलिनी भी कहते है।**

इस अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप नागिन के रूप में बहुत लम्बा और मोटा आकार वाला दिखाई दे रहा था। कुण्डलिनी शक्ति के पूँछ वाला भाग, मेरी रीढ़ के निचले क्षेत्र से लगभग ढाई

फीट से भी ज्यादा था। उसकी पूँछ भूमि पर सीधे रूप में लगभग ढाई फीट लम्बी विद्यमान थी, मैंने ऐसा पहली बार देखा था। वैसे कुण्डलिनी की पूँछ साधकों के शरीर में मूलाधार चक्र पर, पूर्ण ऊर्ध्व के समय (हृदय चक्र में स्थित होने के समय) शिवलिंग पर थोड़ा सा भाग स्पर्श करती रहती है, जब वह साधक के शरीर में पूर्ण रूप से ऊर्ध्व होती है अथवा हृदय में स्थित होने की अवस्था में भी पूँछ का थोड़ा सा भाग शिवलिंग पर चिपका रहता है।

कुण्डलिनी शक्ति का फन इतना चौड़ा था कि उसके फन का दाहिनी तरफ का किनारा ही हमारे पूरे सिर को ढके हुआ था, फन का शेष भाग मेरे सिर के बाई ओर था। वैसे अभ्यास के समय जब साधक की कुण्डलिनी शक्ति ब्रह्मरंध्र को खोल देती है, तब फिर कुछ श्रेष्ठ साधकों को कुण्डलिनी शक्ति कभी-कभी अपना फन चौड़ा किए सिर के ऊपरी भाग को अपने फन से पूरी तरह ढके हुए दिखाई देती है। उस समय कुण्डलिनी शक्ति अपना फन पूरा चौड़ा किए हुए, पूरे सिर को ढके हुए दिखाई देती है। मगर इस अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति का फन विशालता को लिए हुए था। इसलिए कुण्डलिनी शक्ति के फन का मात्र दाहिना किनारा मेरे पूरे सिर को ढके हुए था उसके फन का बायाँ भाग हमारे सिर से अलग विद्यमान था।

अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति का मुँह भी काफी बड़ा दिखाई दे रहा था। ऐसा उसके विशाल शरीर के कारण था। जबकि साधकों के शरीर में क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति का मुँह ऊर्ध्व होते समय नाग (कोबरा) के समान दिखाई देता है।

अनुभव में कुण्डलिनी शक्ति के सिर के ऊपर बहुत बड़ी मणि विद्यमान थी। उस मणि का साइज ऐसा था, जैसे बूंदी के लड्डू का आकार होता है। साधकों को उन्हें अपनी कुण्डलिनी शक्ति के सिर के ऊपर ध्यानावस्था में मणि दिखाई नहीं देती है। कुछ तेजस्वी साधकों को कुण्डलिनी शक्ति के सिर के ऊपर मणि दिखाई दी है, मगर उस मणि का आकार कंचे (काँच की गोली जो बच्चे खेलते हैं) के समान छोटी आकार वाली दिखाई देती है।

वर्तमान समय में मेरी स्थिति शिवछिद्र के पास है, अर्थात परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति की मध्य सीमा पर है। इसे अपरा-प्रकृति का आवरण भी कह सकते हैं, यह आवरण भी शुद्ध होकर नष्ट हुए के समान जैसा हो गया है। दिव्य शक्तियाँ भी अपने वास्तविक स्वरूप का दर्शन करा चुकी है। कुण्डलिनी

शक्ति भी अपने जड़ स्वरूप का दर्शन करा चुकी है। अब इस अवस्था में इतने विशाल स्वरूप में कुण्डलिनी शक्ति का दर्शन हो रहा है।

भगवान श्रीकृष्ण जी गीता में कहते हैं- हे अर्जुन! मेरी दो प्रकृतियाँ हैं, एक- परा-प्रकृति, दूसरी- अपरा-प्रकृति। शास्त्रों में भी वर्णन मिलता है कि प्रकृति दो प्रकार की होती है:

1. परा-प्रकृति, इसमें गुण साम्यावस्था में रहते हैं तथा यह ईश्वर का क्षेत्र है।
2. अपरा-प्रकृति, जीव का सम्बन्ध इसी अपरा-प्रकृति से रहता है, इसमें गुण विषमावस्था में रहते हैं।

जब जीव का चित्त अभ्यास के द्वारा कर्माशयों से पूर्ण रूप से रहित होकर अत्यंत शुद्ध निर्मल हो जाता है, तब अपरा-प्रकृति उस अभ्यासी के लिए नष्ट हुए के समान हो जाती है, क्योंकि जीव को अपरा-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। फिर उचित समय बाद अभ्यासी स्थूल शरीर त्याग देता है। स्थूल शरीर के त्यागते ही सूक्ष्म शरीर योगाग्नि द्वारा जल कर भस्म हो जाता है। अब सूक्ष्म शरीर बने रहने का कोई कारण नहीं रह गया, क्योंकि उसका चित्त कर्मशयों से रहित होकर अत्यंत शुद्ध निर्मल हो जाता है। सम्पूर्ण चित्त ज्ञान के प्रकाश से युक्त हो जाता है। ऐसा अभ्यासी ईश्वर के चित्त में अंतर्मुखी हुआ ईश्वर के लोक परा-प्रकृति के क्षेत्र में चला जाता है।

ऐसी अवस्था में स्थूल शरीर त्यागने के पहले अभ्यास द्वारा उसका चित्त अत्यंत सूक्ष्म व व्यापक हो जाता है। शरीर त्यागने के पश्चात ईश्वर के लोक में विद्यमान होने (रहने लायक) के योग्य हो जाता है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी के चित्त पर, सत्व गुण का तमोगुण विरोध नहीं करता है, बल्कि सत्व गुण का सहयोग करता है। उस समय अभ्यासी के चित्त में व्यापकता इतनी आ जाती है कि वह महाकारण जगत में (ईश्वर के लोक में) अन्तर्मुखी हो जाता है।

अभ्यासी के शरीर में अभी तक जो कुण्डलिनी शक्ति थी, उसका सम्बन्ध अपरा-प्रकृति से था। अपरा-प्रकृति की निश्चित सीमाएं होती हैं तथा कुण्डलिनी का मूल निवास सहस्रार चक्र में होता है। सहस्रार चक्र ज्ञान का आयतन है। कुण्डलिनी शक्ति का जब अभ्यास के द्वारा सहस्रार चक्र में शिव से मिलन (शक्ति और शक्तिमान का) हो जाता है, तब उस अभ्यासी के लिए किसी प्रकार का कार्य शेष नहीं रह जाता है। जीव का भोग और अपवर्ग पूर्ण हो जाता है।

अभी अभ्यासी को आगे की यात्रा करनी होती है, क्योंकि अभी चित्त का अस्तित्व विद्यमान रहता है। स्थूल शरीर त्यागने के पश्चात परा-प्रकृति में (महाकारण जगत, ईश्वर का क्षेत्र, परा-प्रकृति) प्रवेश कर जाता है। वहां पर अनंत काल तक समाधि का अभ्यास करता रहता है।

ये अवस्था स्थूल शरीर में रहते हुए अभ्यास के द्वारा प्राप्त करनी होती है। उस समय कुण्डलिनी शक्ति के जड़ स्वरूप का साक्षात्कार होने के बाद, समष्टि कुण्डलिनी शक्ति के विशाल स्वरूप का प्राकट्य होता है, इसे महा-कुण्डलिनी शक्ति और समष्टि-कुण्डलिनी शक्ति भी कहते हैं। अनुभव में इसी महा-कुण्डलिनी शक्ति का प्राकट्य हुआ है, इसीलिए इस कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप अत्यंत विशाल है। मनुष्य के शरीर में जो कुण्डलिनी शक्ति विद्यमान रहती है, उसे क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति और व्यष्टि कुण्डलिनी शक्ति कहते हैं। महा-कुण्डलिनी शक्ति का सम्बन्ध परा-प्रकृति से है। यह परा-प्रकृति विशुद्धता को प्राप्त है क्योंकि परा-प्रकृति में गुण साम्यावस्था में रहते है। महा-कुण्डलिनी अभ्यासी के अन्दर परा-प्रकृति में मोक्ष पर्यन्त रहती है। अन्त में चित्त के स्वरुप को बनाए रखने वाले तीनों गुण मूल प्रकृति में विलीन हो जाते है। जीव (जीवेश्वर) अपने निज स्वरुप (आत्मा) में सदैव के लिए विलीन हो जाता है।

सुषुम्ना नाड़ी

यह अनुभव महाकुण्डलिनी के तुरंत बाद आया। 31 दिसंबर का अनुभव है। महाकुण्डलिनी के अनुभव के बाद मैंने देखा- मैं नीचे की ओर देख रहा हूँ। गोलाकार पाइपनुमा क्षेत्र के अंदर निर्मल शुद्ध अत्यंत तेज प्रकाश विद्यमान है, मैं इसी प्रकाश को गौरपूर्वक गहराई से देख रहा हूँ। उस प्रकाश को देखने के बाद स्पष्ट हुआ कि यह प्रकाश किसी पाइप (गोलाकार) के अंदर विद्यमान है, यह पाइपनुमा क्षेत्र नीचे तक गया है। प्रकाश बहुत ही सुंदर था, ऐसा तेजस्वी प्रकाश पहली बार देखा। मैं गौरपूर्वक उस प्रकाश को नीचे तक देखने का प्रयास कर रहा था, तभी मुझे उस प्रकाश के अंदर दो जगह आधा इंच लंबा गेहूं के दाने के बराबर मोटा हल्का काला सा धुआँ सा दिखाई दिया। इस धुएँनुमा काले पदार्थ को देखकर मन थोड़ा दु:खी सा हुआ, फिर सोचा- अभ्यास के द्वारा काले धुएँनुमा पदार्थ को भी नष्ट कर दूँगा। कुछ क्षणों तक पाइपनुमा क्षेत्र के अंदर भरे प्रकाश को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला पाइपनुमा क्षेत्र जिसके अंदर अत्यंत निर्मल शुद्ध तेजस्वी प्रकाश भरा हुआ था, यह सुषुम्ना नाड़ी है। शास्त्रों में वर्णन मिलता है मनुष्य के शरीर में 72,000 नाड़ियाँ

होती हैं। इन 72,000 नाड़ियों में तीन नाड़ियाँ प्रमुख हैं, इन तीनों के नाम इस प्रकार हैं- इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। इड़ा-पिंगला नाड़ी को सूर्य नाड़ी और चंद्र नाड़ी भी कहते हैं। इन तीनों नाड़ियों में सुषुम्ना नाड़ी मुख्य है। सामान्य मनुष्य में सुषुम्ना नाड़ी मात्र क्षणिक देर को क्रियाशील होती है, जब सूर्य नाड़ी और चंद्र नाड़ी के अंदर स्वर बदलता है। स्वर बदलते समय सुषुम्ना नाड़ी क्षणिक देर को क्रियाशील होती है। अगर सूर्य नाड़ी ज्यादा तेज चल रही है, फिर उचित समय पर सुषुम्ना नाड़ी क्रियाशील होकर चंद्र नाड़ी का स्वर बदलकर तेज चलने लगती है। शेष समय में सुषुम्ना नाड़ी निष्क्रिय सी बनी रहती है। इसीलिए सामान्य मनुष्य इस नाड़ी का उचित लाभ नहीं ले पाता है।

योग का अभ्यास करने वाला अभ्यासी सुषुम्ना नाड़ी को प्राणायाम के द्वारा ज्यादा शुद्ध करने का अभ्यास करता रहता है। समाधि अवस्था में सुषुम्ना नाड़ी ज्यादा क्रियाशील होने लगती है। समाधि अवस्था में जब दोनों स्वर (चंद्र नाड़ी और सूर्य नाड़ी) समान रूप से चलने लगते हैं, तब ये सुषुम्ना नाड़ी ज्यादा क्रियाशील रहती है। जिस अभ्यासी का मार्ग कुण्डलिनी शक्ति से संबंधित है, अर्थात जिन साधकों की कुण्डलिनी शक्ति ऊर्ध्व होती है, उन साधकों की सुषुम्ना नाड़ी सबसे ज्यादा क्रियाशील रहती है, क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति सुषुम्ना नाड़ी के सहारे ही ऊपर की ओर ऊर्ध्व होती है। कुण्डलिनी शक्ति सुषुम्ना नाड़ी का प्रयोग ऊर्ध्व होते समय करती है।

सुषुम्ना नाड़ी का निचला सिरा मूलाधार चक्र के पास होता है। उस नाड़ी का ऊपरी सिरा सहस्रार चक्र (सहस्त्रदल कमल) से जुड़ा रहता है। सुषुम्ना नाड़ी दिव्यता से युक्त होती है, इसीलिए इसे देवपथ भी कहा जाता है। जो अभ्यासी इस नाड़ी को पूर्ण रूप से क्रियाशील अभ्यास के द्वारा कर लेता है, वह अभ्यासी जन्म-जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। अनुभव में दिखाई दिया- इस सुषुम्ना नाड़ी के अंदर थोड़ा सा काला धुआँनुमा तमोगुण विद्यमान था, इस तमोगुण को अभ्यास के द्वारा समाप्त कर दिया जाएगा।

तमोगुणी अहंकार

यह अनुभव भी ऊपर लिखे अनुभव के तुरंत बाद आया 31 दिसंबर 2025 को। सुषुम्ना नाड़ी का अनुभव समाप्त होने के बाद यह अनुभव आया- मैं नीचे की ओर देख रहा था। काफी नीचे की ओर भूमि दिखाई दे रही थी। उसी भूमि पर बिल्कुल छोटे से पत्थर के ऊपर एक नाग का सिर्फ फन ऊपर की ओर

उठा हुआ मुझे देख रहा था। फन के बाद का शरीर (धड़) नहीं थ। उस फन का निचला भाग उस छोटे से पत्थर से जुड़ा हुआ था, अर्थात दृश्य को देखने से लगता था- नाग का धड़ (फन के अतिरिक्त शरीर) पत्थर का हो गया है, सिर्फ फन शेष बचा हुआ है। दृश्य में पीले रंग का सामान्य सा प्रकाश था। मैं इस दृश्य को देखकर मुस्कुरा दिया।

अर्थ- अनुभव में दिखने वाला नाग का फन तमोगुणी अहंकार है। तमोगुणी अहंकार का धड़ (शरीर) जड़ रूप में परिवर्तित हो रहा है। अब सिर्फ फन वाला भाग ही क्रियाशील है, क्योंकि मैं अभी संसार में किसी न किसी रूप में व्यवहार कर रहा हूँ, इसलिए ऐसा अनुभव आया।

सन् 2026

मै भगवान शेषनाग जी के स्वरुप वाला

यह अनुभव 3 जनवरी को सुबह आया। मैंने देखा- मेरे सिर के ऊपर काफी ऊँचाई पर नाग के ढेरों फन चारों ओर लहरा रहे हैं। उन सभी फनों की लंबाई एक जैसी है। मैं ढेरों फनों को लहराते हुए देख रहा था तथा सोच रहा था इतने अनगिनत फन एक जैसे कहाँ से आ गए। फिर कुछ क्षणों बाद उन सभी फनों को, फनों के सहारे नीचे की ओर देखता जा रहा था क्योंकि ये दृश्य मेरे सिर के काफी ऊपर दिखाई दे रहा था। जब मैं फनों को नीचे की ओर देखने लगा तो दिखाई दिया ये अनगिनत सभी फन एक साँप के शरीर से निकले हुए हैं। मैंने उस साँप के शरीर का धीरे-धीरे निचला भाग देखना शुरू किया तो अचानक मैं चौंक पड़ा, क्योंकि उस सर्प का निचला शरीर (धड़) मेरे ही सिर के ऊपरी भाग से जुड़ा हुआ था। ऐसा लग रहा था ये अनंत मुँह (फनों) वाला सर्प मेरे सिर के ऊपरी भाग से निकला हुआ है। मेरे ज्ञान ने कार्य कर दिया, मैं तुरंत समझ गया- ये तो भगवान शेषनाग जी हैं वो मेरे सिर के ऊपर अनंत फनों से युक्त होकर धीरे-धीरे लहरा रहे हैं। फिर कुछ क्षणों में देखा- मेरा शरीर धीरे-धीरे सिर से लेकर कमर तक शेषनाग जी का शरीर बन गया। मुझे मेरी अपनी अलग से भी अनुभूति हो रही थी। मैंने एक बार फिर शेषनाग के अनगिनत फनों की ओर देखा तो दिखाई दिया शेषनाग के सभी फन आगे की ओर एक साथ शांत भाव से देख रहे हैं। कुछ क्षणों तक मैं भगवान शेषनाग जी के फनों को मुस्कुराते हुए गौरपूर्वक देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान शेषनाग जी के अनंत फनों वाले स्वरूप को देख रहा था। शेषनाग के फनों की ऊंचाई मेरे सिर से लगभग 3-3.5 मीटर ऊँची रही होगी। शेषनाग जी के फन नाग के फन (कोबरा) की तरह नहीं थे, बल्कि उनके फन कम चौड़े व मोटे थे। नाग का फन बहुत ज्यादा चौड़ा होता है। अनुभव में शेषनाग जी मेरे सिर के ऊपर थे, ऐसा लगता था- शेषनाग जी मेरे सिर के ऊपर से प्रकट हुए हैं। कुछ क्षणों बाद मेरा शरीर सिर की ओर से धीरे-धीरे शेषनाग जी का शरीर बन गया। मैं स्पष्ट रूप से अपने शरीर की जगह शेषनाग जी का शरीर देख रहा था। उनके शरीर का रंग हल्का सफेद था। अनुभव से स्पष्ट होता है की मैं शेषनाग के स्वरुप वाला बन गया। शास्त्रों में वर्णन मिलता है कि भगवान शेषनाग जी

भगवान नारायण जी की सेवा में शैय्या के रूप में विद्यमान रहते हैं। वे क्षीर सागर (वैकुंठ) में उपस्थित रहते हैं।

कुछ दिनों पहले भगवान शेषनाग जी ने कहा था- "पुत्र, भूलोक पर अपना कार्य पूर्ण करके शीघ्र ही अपने लोक में आ जाओ, अब वहाँ ज्यादा दिन रहना उचित नहीं है"। मैं आसक्तिवश मनुष्यों का कल्याण करने के लिए योग का मार्गदर्शन करने में लगा हुआ हूँ।

धर्ममेघ समाधि

यह अनुभव 3 जनवरी को आया। ध्यानावस्था में जोर से पानी बरसने की आवाज आने लगी। मैं ध्यानावस्था में था फिर भी मुझे याद आ रहा था- मैं अपनी कुटिया के अंदर ध्यानावस्था में बैठा हुआ हूँ। मैं सोचने लगा- कुटिया के बाहर बारिश होने लगी है, अब सर्दी और बढ़ जाएगी। मैं ध्यान की और गहराई में चला गया। मुझे अपनी कुटिया के बाहर का दृश्य दिखाई देने लगा। बाहर मूसलाधार बारिश हो रही थी, मेरी कुटिया के बाहर की भूमि पूरी तरह से पानी से भरी हुई थी, बारिश बहुत जोर से हो रही थी। फिर मुझे दूर-दूर तक भूमि दिखाई देने लगी, सम्पूर्ण भूमि जलमग्न हो गई थी, बारिश बराबर हो रही थी। अब मेरी दृष्टि ऊपर की ओर गयी, ऊपर आसमान बिल्कुल स्वच्छ था। बादलों का नामोनिशान भी नहीं था फिर भी पानी की धार, ऊपर स्वच्छ आसमान से आ रही थी। यह देखकर मैं मुस्कुराने लगा। मेरे ज्ञान के द्वारा मुझे मालूम हो गया कि यह तो **धर्ममेघ समाधि** का अनुभव है। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव ध्यान पर बैठते ही आने लगा। मैं ध्यान पर तो बैठा था और ध्यान भी लग गया था, फिर भी पानी बरसने की आवाज आनी शुरू हो गई, तब यह याद आ रहा था कि मैं ध्यान पर बैठा हुआ हूँ। अनुभव में जोरदार बारिश होने की आवाज आ रही थी। फिर कुटिया के बाहर का दृश्य आने लगा। कुटिया के बाहर बारिश होती हुई दिखाई दे रही थी तथा भूमि पर पानी भरा हुआ था, सर्वत्र जलमग्न था। आसमान में बादल नहीं थे फिर भी जोर से बारिश हो रही थी। इसे कहते हैं "**धर्ममेघ समाधि**"। वास्तव में इस बारिश का सम्बन्ध स्थूल जगत से नहीं था, इसका सम्बन्ध मेरे चित्त से था। इस दृश्य में चित्त की भूमि पर बारिश होते हुए दिखाई दे रही थी, इसीलिए आसमान में बादल नहीं थे। वह आसमान चित्ताकाश था, पंचभूतों वाला आकाश नहीं था।

धर्ममेघ समाधि में धर्मरूपी पानी की वर्षा होती है, इसका प्रभाव अभ्यासी के चित्त पर पड़ता है। ऐसी अवस्था में आसक्ति से रहित हुए अभ्यासी के अंदर समभाव आ जाता है। अविद्या इसे बिल्कुल प्रभावित नहीं कर पाती है। उसके चित्त पर ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र विद्यमान हो जाता है, ऐसा ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा होता है। यह अवस्था अभ्यासी को धीरे-धीरे कई वर्षों के अभ्यास के बाद आती है। मैंने अपने अनुभवों में कई वर्ष पूर्व इस धर्ममेघ समाधि के अनुभव लिखे हैं। धर्ममेघ समाधि पूर्ण होने पर अभ्यासी पर किसी प्रकार के ताप (तीनों प्रकार के तापों) का प्रभाव नहीं पड़ता है। अभ्यासी अज्ञान और अविद्या से रहित होकर समभाव में शेष जीवन जीता है तथा ईश्वर के चित्त में अंतर्मुखी हुआ सिर्फ ईश्वर का ही चिंतन करता रहता है।

चित्त का स्वरूप स्फटिक मणि के समान

यह अनुभव 8 जनवरी को सुबह 3:30 बजे ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में मेरी दृष्टि सामने की ओर थोड़ी सी नीचे की ओर थी। तभी मुझे दिखाई दिया- सामने नीचे की ओर से एक सुंदर घड़ा थोड़ा सा मेरी ओर आया, फिर अपनी जगह पर स्थिर हो गया। मैं उस घड़े को गौर पूर्वक देख रहा था। वह सुन्दर घड़ा पारदर्शी काँच जैसे पदार्थ से बना हुआ था। मैं उसकी सुन्दरता देखे जा रहा था तभी मेरी बुद्धि ने निर्णय किया- यह घड़ा सामान्य काँच के द्वारा नहीं बना हुआ है, यह तो स्फटिक मणि जैसे काँच से बना हुआ है। घड़ा बहुत सुन्दर था क्योंकि स्फटिक मणि जैसे पदार्थ से बना हुआ था। अभी वह घड़ा स्फटिक मणि के समान अत्यंत स्वच्छ नहीं था, ऐसा लग रहा था इस घड़े को और स्वच्छ होना चाहिए। कुछ क्षणों में घड़ा अपने स्थान पर थोड़ा सा घूमा, तो दिखाई दिया- उस स्वच्छ घड़े की बाहरी सतह पर छोटा सा एक हल्का काला रंग सा लगा है। उस काले धब्बे को देखकर मैंने सोचा- यह काला निशान छोटा सा क्यों लगा हुआ है? मैं ऐसा सोच रहा था तभी वह छोटा सा काला निशान मिटने लगा। अब उसका आकार (निशान का) छोटा हो गया और कालापन भी कम हो गया, मगर पूर्ण रूप से मिटा नहीं। फिर सोचा- अभ्यास के द्वारा व त्याग के द्वारा यह निशान मिट जाएगा। यह घड़ा और स्वच्छ हो जाएगा, तब यह घड़ा स्फटिक के समान हो जाएगा। अनुभव में दिखाई देने वाले घड़े का मुँह सामान्य घड़ों से ज्यादा चौड़ा था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला घड़ा मेरे चित्त का प्रतीक है। मैंने अपने अनुभवों में कई बार लिखा है कि घड़ा चित्त के स्वरूप का प्रतीक होता है। जब ब्रह्मरंध्र खुलने वाला होता है, तब ज्यादातर साधकों को दिखाई देता है, उनके सिर के ऊपर उल्टा घड़ा (नीचे की ओर मुँह किए हुए) दिखाई दे रहा है। जब अभ्यासी को अंतिम जन्म में **विवेक** का साक्षात्कार होता है, तब चित्त नीचे की ओर घड़े के रूप में दिखाई देता है। चित्त जब स्फटिक मणि के समान स्वच्छ दिखाई देने लगे, तब यह चित्त की स्वच्छता की सबसे ऊँची अवस्था कही जाती है। चित्त को स्फटिक मणि के समान स्वच्छ होना चाहिए ताकि जीव के वास्तविक स्वरूप का भान करा दे, फिर जीव अपने स्वरूप में स्थित हो सके। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद चित्त निश्चय ही स्फटिक मणि के समान स्वच्छ हो जाएगा।

भगवान विष्णु जी का चतुर्भुज व सहस्त्रभुज स्वरूप

यह अनुभव भी ऊपर लिखे अनुभव के तुरंत बाद आया। यह अनुभव भी 8 जनवरी का ही है। जब स्फटिक मणि के समान घड़े का अनुभव समाप्त हो गया, उसके बाद मैंने देखा- सामने नीचे की ओर घड़े के स्थान पर भगवान विष्णु जी चतुर्भुज स्वरूप में खड़े हुए है, अपना दाहिना हाथ आशीर्वाद मुद्रा में ऊपर उठाए हुए और मुस्कुराते हुए मुझे देख रहे हैं। कुछ क्षणों तक ही इस चतुर्भुज स्वरूप का दर्शन हुआ, फिर उन्होंने ढेरों हाथ धारण कर लिए। मैं उन हाथों की गिनती नहीं कर सकता था क्योंकि बहुत हाथ धारण किए हुए थे। मैं भगवान विष्णु जी के अनंत हाथ धारण किए हुए स्वरूप को कुछ क्षणों के लिए ही देख सका, फिर भगवान विष्णु जी अदृश्य हो गए। मेरा ध्यान टूट गया और अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखें खोल दी।

अर्थ- ऊपरी अनुभव के बाद (घड़ा वाला अनुभव) तुरंत सामने नीचे की ओर भगवान विष्णु चतुर्भुज रूप में दिखाई देने लगे। उनका एक हाथ आशीर्वाद मुद्रा में उठा हुआ था तथा वे मेरी ओर देख कर मुस्कुरा भी रहे थे। कुछ क्षणों बाद उन्होंने अनंत भुजाओं वाला स्वरुप धारण कर लिया। मैं उनकी भुजाएँ गिन नहीं सकता था, इसलिए मैंने सहस्त्रभुज स्वरूप वाला कहा है। शास्त्रों में भगवान विष्णु को चतुर्भुज रूप में व कहीं-कहीं पर हजार भुजाओं वाला कहा गया है, ऐसा गीता के 11वें अध्याय के 15-17 वें श्लोकों में वर्णन मिलता है। स्थूल नेत्रों से सिर्फ स्थूल जगत व स्थूल पदार्थों को देखा जा सकता है, मगर भगवान के द्विभुज, चतुर्भुज, सहस्त्रभुज आदि जितने भी स्वरूप हैं, वे सब के सब दिव्य और अव्यय

हैं, इसलिए इनका दर्शन सिर्फ दिव्य दृष्टि के द्वारा ही किया जा सकता है। भगवान साधक की पात्रता, अधिकार और भाव आदि के भेद से विराट स्वरूप भी दिखा देते हैं अथवा जिस स्वरूप के जितने स्तरों को दिखाने की आवश्यकता होती है।

अनुभव में जब भगवान विष्णु अपने चतुर्भुज व सहस्त्रभुज स्वरुप का दर्शन करा रहे थे, उस समय मैं समाधि अवस्था में था। इस अनुभव से पहले मैं अपने चित्त को घड़े के रूप में जो स्फटिक मणि के समान था, उसका साक्षात्कार कर रहा था। मैं दृष्टा के रूप में ऊपरी क्षेत्र में विद्यमान था, भगवान विष्णु जी नीचे के ओर विद्यमान थे क्योंकि मैं पहले अनुभवों में भगवान विष्णु जी को जड़ रूप में दर्शन कर चुका हूँ। उस समय उनका स्वरूप सत्व गुण की अधिकता से युक्त था मगर वह शरीर, जड़ शरीर ही तो था। प्रभु फिर अदृश्य हो जाते हैं।

भगवान विष्णु जी आप यहाँ

यह अनुभव 9 जनवरी रात्रि को ध्यानावस्था में आया। अनुभव में पूर्व दिशा की ओर चलने के लिये आगे की ओर बढ़ा ही था, तभी दाहिनी ओर अत्यंत विशाल मिट्टी का पिण्ड गोलाकार रूप में दिखाई दिया। उस पिण्ड के ऊपरी भाग पर आयताकार जैसा निचला क्षेत्र था। इस निचले क्षेत्र की मिट्टी बहुत सुन्दर थी। इस क्षेत्र के किनारे एकदम से सीध में थे। इसी प्रकार गहराई भी नीचे की ओर बिल्कुल सीध में थी। ऐसा लगता था मानो नाप कर यह क्षेत्र सीधा और गहरा बनाया गया हो। निचली सतह पर जाने के लिए पश्चिम दिशा के सिरे पर कुछ सीढ़ियाँ नीचे की ओर को बनी थी। अगर नीचे की ओर निचले क्षेत्र के सतह पर जाना हो, तो इन सीढ़ियों से जाया जा सकता है। उस आयताकार क्षेत्र की सतह पर मिट्टी का बहुत सुन्दर महल सा बना हुआ था। कुछ और सुन्दर घर जैसे बने थे, जिसे मैं समझ नहीं पाया।

जैसे ही मैंने इस क्षेत्र को देखा- उसी समय मेरे मुँह से अपने आप आवाज निकली- "भगवान विष्णु जी आप यहाँ"। भगवान विष्णु जी उन सीढ़ियों की निचली पायदान से उतर कर महलनुमा क्षेत्र की ओर जा रहे थे। उन्होंने मेरे द्वारा कहे गए शब्दों पर ध्यान नहीं दिया, वह आगे की ओर (महल जैसे क्षेत्र की ओर) चले जा रहे थे। मैं उस आयताकार क्षेत्र के अन्दर का दृश्य देख रहा था। उस आयताकार क्षेत्र का दृश्य मिट्टी से बने होने के बाद भी बहुत सुन्दर लग रहा था। मैंने एक बार फिर मिट्टी से बने अत्यन्त विशाल पिण्ड की ओर देखा, जिसमें यह क्षेत्र बना हुआ था। मैं उस सम्पूर्ण पिण्ड को देख नहीं पा रहा था

क्योंकि उस पिण्ड की सीमाएँ अत्यन्त विशाल थीं। मैं उस पिण्ड से थोड़ा सा ऊपर की ओर आकाश में खड़ा हुआ था। यह अनुभव क्षणिक देर के लिए आया था मगर इसका वर्णन करने में थोड़ा विस्तार हो गया है।

अर्थ- इस अनुभव में भगवान विष्णु जी का लोक जड़ रूप में दिखाया गया है। यह लोक अपरा-प्रकृति के ऊपरी ओर, बाहरी क्षेत्र में स्थित है। अनुभव में दिखाई देने वाला पिण्ड अपरा-प्रकृति का स्वरूप है। अपरा-प्रकृति के बाहरी क्षेत्र में भगवान विष्णु के लोक (वैकुण्ठ) को विद्यमान हुआ दिखाया गया है। परा-प्रकृति में अवस्थित होकर जब मैं भगवान विष्णु जी के लोक (वैकुण्ठ) को देख रहा था, तब मुझे यह लोक अपरा-प्रकृति के बाहरी क्षेत्र में, अन्दर की ओर थोड़ा गहराई में दिखाई दे रहा था इस लोक का ऊपरी क्षेत्र परा-प्रकृति का क्षेत्र था। अर्थात यह लोक अपरा-प्रकृति के अन्दर विद्यमान है मगर इस लोक का ऊपरी क्षेत्र खुला हुआ है वह ऊपरी क्षेत्र अपरा-प्रकृति के आवरण के अन्दर नहीं हैं बल्कि अपरा-प्रकृति के आवरण से रहित परा-प्रकृति का क्षेत्र में विद्यमान है। दूसरे शब्दों में विष्णु लोक का क्षेत्र अपरा-प्रकृति और परा-प्रकृति के क्षेत्र में विद्यमान है। यह लोक अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति के आवरण से रहित है।

भगवान विष्णु जी, भगवान शंकर जी और भगवान ब्रह्मा जी यह तीनों परा-प्रकृति के क्षेत्र से आते है, फिर अपरा-प्रकृति में सृष्टि, पालन और संहार की व्यवस्था का संचालन करते है। शास्त्रों के अनुसार भगवान शंकर जी कैलाश पर्वत के क्षेत्र में रहते है। भगवान ब्रह्मा जी अपरा-प्रकृति के सबसे ऊपर के क्षेत्र ब्रह्मलोक में रहते हैं। भगवान विष्णु जी वैकुण्ठ लोक में रहते है। भगवान विष्णु जी परा-प्रकृति में विद्यमान भगवान नारायण जी के शरीर से, उन्हीं के स्वरूप के समान, स्वरूप को धारण किए हुए प्रकट होते हैं। भगवान नारायण जी के नाभी कमल पर भगवान ब्रह्मा जी का प्राकट्य होता है। भगवान शंकर जी का प्राकट्य परम शिव के तीसरे नेत्र से होता है। अपरा-प्रकृति में व्यवस्था ये तीनों देव ब्रह्मा जी, विष्णु जी और शंकर जी करते हैं।

कुछ वर्षों पूर्व मैंने समाधि अवस्था में देखा था मैं भगवान ब्रह्मा जी के पास उनके लोक में गया। तब मैंने देखा भगवान ब्रह्मा जी समाधि अवस्था में बैठे हुए हैं। चारों ओर अंधकार ही अंधकार है। अर्थात सर्वत्र अंधकार है। भगवान ब्रह्मा जी को देख कर मैं बोला- यहाँ तो रात्रि हो गई, सर्वत्र अंधकार ही है। अब मुझे यहाँ से चलना चाहिए। इतना कह कर मैं वहाँ से चल दिया।

कुछ वर्षों पूर्व यह भी अनुभव आया था। समाधि अवस्था में मैंने देखा- हमारे सामने ऊँचे स्थान पर भगवान शंकर जी बैठे हुए हैं। उनका शरीर गीली मिट्टी का बना हुआ है। गीली मिट्टी द्वारा बने शरीर को देखकर मैं भगवान शंकर जी से बोला- **प्रभु आप, आप तो गीली मिट्टी के बने हुए हैं।** मेरे द्वारा यह शब्द कहते ही गीली मिट्टी के बने हुए भगवान शंकर जी मुझसे बात करने लगे। जैसे ही वो मुझसे बोलने लगे तब मैं उनसे बोला- **प्रभु आप मिट्टी के क्यों बने हैं?** उसी समय हमारी समाधि टूट गई। फिर मैं सोचने लगा भगवान शंकर जी मिट्टी के बने हुए क्यों दिखाई दिए? फिर इसका अर्थ मुझे समझ में आ गया।

भगवान विष्णु जी का लोक इस अनुभव में पूर्ण रूप से मिट्टी का बना हुआ दिखाई दे रहा था। स्वयं भगवान विष्णु जी मिट्टी के बने हुए दिखाई दे रहे थे अर्थात अनुभव में भगवान विष्णु जी का शरीर और उनका सम्पूर्ण लोक जड़ स्वरुप में दिखाई दे रहा था। मिट्टी के बने भगवान विष्णु जी पूर्व दिशा की ओर चले जा रहे थे। पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति गोलाकार (अंडाकार जैसी) रूप में दिखाई दे रही थी। पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति गोलाकार होने के कारण बाहरी ओर से भगवान विष्णु जी का लोक अपरा-प्रकृति के अन्दर गहरे क्षेत्र में दिखाई दे रहा था। इस लोक की तीन ओर से दीवारों के सिरे दिखाई दे रहे थे। लोक के पूर्व ओर के क्षेत्र में दीवार रूपी सिरा नहीं था, क्योंकि अपरा-प्रकृति गोलाकार होती है। पूर्व दिशा की ओर और ऊपर की ओर परा-प्रकृति का क्षेत्र विद्यमान था। लोक के पश्चिम सिरे पर नीचे की ओर निचले सतह पर जाने के लिए कुछ सीढ़ियाँ बनी हुई थी।

उस समय मैं ऊपर की ओर परा-प्रकृति में अवस्थित था। अपरा-प्रकृति नीचे की ओर पिण्डरूप में दिखाई दे रही थी इसलिए भगवान विष्णु को देखते समय मेरी दृष्टि नीचे की ओर थी। भगवान विष्णु जी का लोक मूल रुप से जड़ तत्व से बने होने के कारण मिट्टी के द्वारा बना हुआ दिखाई दे रहा था। ऐसा दृश्य सिर्फ तत्त्वज्ञानियों को ही दिखाई दे सकता है, अज्ञान से युक्त प्राणियों (मनुष्यों और देवताओं) के लिए वैकुण्ठ लोक अत्यन्त दिव्यता से युक्त है।

तीनों देवता भगवान ब्रह्मा जी, भगवान विष्णु जी और भगवान शंकर जी का प्राकट्य परा-प्रकृति के क्षेत्र से सगुण ब्रह्म नारायण जी व परम् शिव के द्वारा होता है। इनका शरीर आकाश तत्व की प्रधानता से बना हुआ है। इस आकाश तत्व में सत्त्वगुण प्रधान रूप से विद्यमान रहता है; अन्य दोनों गुण (रजोगुण व तमोगुण) गौण रूप में (लेशमात्र) रहते हैं। इसलिए इन तीनों देवताओं का स्वरूप पूर्ण रूप से शुद्धता को प्राप्त रहता है। इनके चित्त में सत्त्वगुण की प्रधानता के कारण सदैव विकार से रहित रहता है। इस अपरा-

प्रकृति की उचित व्यवस्था बनाये रखने के लिए ये अपना-अपना कार्य करते रहते हैं। ये कार्य उनकी लीला मात्र से सम्पन्न होते रहते है। ये तीनों देवता भूख-प्यास से रहित होते हैं। ये कभी भी किसी प्रकार का भोजन ग्रहण नहीं करते हैं। जिनका शरीर प्राणों के सहारे जीवित रहता है, उन्हीं को भूख और प्यास लगती है। ऐसे जीवों को प्राणी कहा जाता है, अर्थात् प्राणों के सहारे जीवित रहने वालों को प्राणी कहते है।

इन तीनों देवताओं की आपस में आयु में भी भिन्नता रहती है। इस विषय में शास्त्रों में भी वर्णन मिलता है। भगवान ब्रह्मा जी की आयु इन तीनों में सबसे कम रहती है। इसके बाद भगवान शंकर जी की आयु भगवान ब्रह्मा जी से ज्यादा और भगवान विष्णु जी से कम रहती है। भगवान शंकर जी को रुद्र भी कहते हैं। ये रुद्र ग्यारह होते हैं। इन ग्यारहों रुद्रों के नाम अलग-अलग हैं। ग्यारहवें रुद्र से वीरभद्र और हनुमान जी का प्राकट्य हुआ है। भगवान विष्णु जी की आयु सबसे ज्यादा रहती है। अर्थात् अपरा-प्रकृति की व्यवस्था देखने के लिए भगवान विष्णु जी सबसे ज्यादा समय तक रहते हैं। जब इन तीनों देवों की आयु समाप्त हो जाती है, अर्थात् उनके कार्यकाल पूर्ण हो जाते हैं, तब वे क्रमशः अपने मूल स्रोत (ईश्वर नारायण व परम् शिव) में विलीन हो जाते हैं। फिर दूसरे भगवान ब्रह्मा जी, भगवान शंकर जी और भगवान विष्णु जी का प्राकट्य हो जाता है। यही क्रम-सृष्टि में चलता रहता है। भगवान विष्णु जी का कार्यकाल सबसे ज्यादा रहता है। ऐसा अनुभव में दिखाये गये लोक की संरचना से स्पष्ट होता है।

ॐ का दर्शन जड़ रूप में

यह अनुभव 14 जनवरी को सुबह साढ़े चार बजे आया। मैं मंत्र जाप करके ध्यान करने लगा। ध्यानावस्था में दिखाई दिया- मैं अपनी दृष्टि नीचे की ओर किए हुए हूँ। नीचे की ओर से प्रकाश मेरी ओर आ रहा था, वह प्रकाश मेरे मुँह पर पड़ रहा था । प्रकाश कहाँ से आ रहा है, यह मैंने देखने का प्रयास किया, तो क्षण भर में मालूम हो गया कि नीचे की ओर थोड़ी दूरी पर (4-5 मीटर की दूरी पर) ॐ लिखा हुआ है। यह प्रकाश इसी ॐ से निकल रहा है। प्रकाश की किरणें मेरी ओर आ रही हैं और मेरे मुँह पर पड़ रही हैं। मैं उस ॐ को टकटकी लगाकर देखे जा रहा था। कुछ क्षणों में वह प्रकाश धीमा पड़कर धीरे-धीरे समाप्त हो गया। अब मुझे सिर्फ "ॐ" लिखा हुआ दिख रहा था। यह ॐ चमक रहा था। ऐसा लग रहा था मानो यह ॐ चमकती हुई चाँदी (चाँदी धातु) का बना हुआ है। इसका आकार छोटा हो-होकर मात्र एक

इंच के बराबर रह गया। मुझे "ॐ" चमकती हुई चाँदी जैसी धातु का बना हुआ जड़ रूप में दिखाई दे रहा था।

अर्थ- साधकों, मैंने अपनी पुस्तकों में व प्रवचन करते हुए शिविरों में ॐ के विषय में कई बार बताया है। जितने भी मंत्र हैं, सम्पूर्ण मंत्रों की शुरुआत ॐ से ही होती है, ॐ के बिना सभी मंत्र अधूरे हैं। सच तो यह है कि अपरा-प्रकृति में सृष्टि की शुरुआत ॐ से ही होती है और सृष्टि का अंत (प्रलय) भी ॐ से ही होता है। ॐ स्वयं अपने आप में पूर्ण मंत्र है। इस ॐ की शक्ति अपरा-प्रकृति की तीनों अवस्थाओं में (स्थूल जगत, सूक्ष्म जगत और कारण जगत) व्याप्त रहती है।

मैंने अपने साधना काल में कई बार ॐ को देखा है और पुस्तक में भी इस ॐ के विषय में लिखा है। साधकों को यह ॐ भूताकाश और चित्ताकाश में ध्यानावस्था में दिखाई देता है। साधकों को ध्यानावस्था में ॐ निर्मल आकाश में दिखाई देता है। वह देखता है- ऊपर की ओर निर्मल आकाश है, उस निर्मल आकाश में सम्पूर्ण क्षेत्र में ॐ लिखा हुआ है। यह ॐ प्रकाश से लिखा होता है, अर्थात सम्पूर्ण आकाश में ॐ व्याप्त होता है।

इस अनुभव में मुझे नीचे की ओर ॐ दिखाई दे रहा है। इसी प्रकार पहले अनुभवों में घड़े के रूप में (स्फटिक मणि के समान शुद्ध) चित्त तथा भगवान विष्णु जी चतुर्भुज और सहस्त्र भुज रूप में दिखाई दिए थे। अब मुझे उसी प्रकार नीचे की ओर ॐ दिखाई दे रहा था। पहले ॐ से प्रकाश निकल रहा था, फिर वह धीरे-धीरे प्रकाश लुप्त हो गया, फिर वह जड़ धातु चाँदी के रूप में दिखाई देने लगा, तथा उसका आकार बहुत छोटा था। सामान्य चाँदी की चमक से, लिखा हुआ "**ॐ**" ज्यादा सुंदर व चमकदार था। अब मेरे लिए ॐ भी जड़ रूप में हो गया है। ॐ की उत्पत्ति शिव छिद्र के अंदर से होती है।

ज्ञान के सातों स्तर तेजहीन होकर नष्ट हुए के समान

यह अनुभव 17 जनवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा- मेरे सिर के ऊपर थोड़ा ऊँचा सा पिंड है। ऐसा लग रहा है जैसे वह पिंड पुराना सा और जर्जर हो चुका है। मैं इस छोटे से ऊँचे पिंड को गौरपूर्वक देख रहा था, तभी वह पिंड सामने थोड़ी दूरी पर आकाश में दिखाई दिया। धुँधला प्रकाश चारों तरफ फैला हुआ था मगर दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उस थोड़े से ऊँचे पिंड का स्वरूप स्पष्ट दिखाई देने लगा। दृश्य को देखकर मैं थोड़ा मुस्कुराया, क्योंकि वह पिंड ज्ञान की सात मंजिलों वाली

इमारत थी। इस इमारत के ऊपर एक गुम्बद (ऊपर की ओर नुकीला) बना हुआ था। इस अनुभव में सात मंजिल वाली इमारत पुरानी सी जर्जर हो गई थी। ऐसा लगा कि यह मिट्टी की बनी हुई है और ये मिट्टी टूट-टूट कर गिर रही है। अगर इसी प्रकार मिट्टी टूट-टूट कर गिरती रही, तो कुछ दिनों बाद यह इमारत पूरी तरह नष्ट हो जाएगी। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली सात मंजिल की इमारत के विषय में मैंने अपने अनुभव में कई बार उल्लेख किया। मैंने पहले अपनी पुस्तक में पहले लिखा हुआ है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा का अर्थ है- "सत्य को भरने वाला ज्ञान"। यह सभी प्रकार के ज्ञानों की मूल आधार है। अभ्यास के द्वारा जब अंतिम जन्म में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है, तब अभ्यासानुसार धीरे-धीरे ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्रकाश चित्त की भूमि पर पड़ता है। ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्राकट्य के पहले अभ्यासी के चित्त पर अज्ञान व अविद्या विद्यमान रहती है, यह ऋतम्भरा-प्रज्ञा इसी अज्ञान व अविद्या की विरोधी होती है। जब अभ्यासी के चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होता है, तब चित्त की भूमि पर ज्ञान का प्रकाश फैलने लगता है। धीरे-धीरे अभ्यासानुसार सम्पूर्ण चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैल जाता है। इस प्रक्रिया को पूर्ण होने में अभ्यासी को कई वर्ष अभ्यास करते हुए बीत जाते हैं। जब ऋतम्भरा-प्रज्ञा का स्वरूप धीरे-धीरे नष्ट (अदृश्य) होने लगता है, क्योंकि अभ्यासी का चित्त पूर्ण रूप से ज्ञान के प्रकाश से युक्त हो जाता है। फिर ऋतम्भरा-प्रज्ञा अपना स्वरूप खोने लगती है, क्योंकि अब उसका (ऋतम्भरा-प्रज्ञा) उपस्थित रहने का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता है। यह प्रज्ञा भी एक वृत्ति स्वरूप ही होती है। अभ्यासानुसार भविष्य में यह वृत्ति (ऋतम्भरा-प्रज्ञा) भी निरुद्ध हो जाती है। चित्त पर स्थित सभी प्रकार की वृत्तियाँ जड़ स्वरूप वाली ही होती हैं।

मैंने पहले अपनी पुस्तक में लिखा है- ज्ञान के सात पायदान होते हैं। मुझे चौथे पायदान में सगुण ब्रह्म परम शिव के दर्शन हुए थे। फिर ज्ञान के पाँचवें पायदान पर भगवान श्री राम जी के दर्शन धनुष-बाण धारण किए हुए थे। अनुभव में लिखा था जब मैं छठे पायदान (इमारत की छठवीं मंजिल) पर खड़ा था तब भगवान शंकर जी ने मुझे उठाकर सातवीं मंजिल (पायदान पर) खड़ा कर दिया था। उस समय भगवान शंकर का स्वरुप प्रत्यक्ष दिखाई नहीं दे रहा था, अदृश्य रूप में उपस्थित थे। अदृश्य स्वरूप से ही मेरी सहायता की थी। अभी कुछ दिन पहले 21 दिसंबर 2025 को चित्त की भूमि पर ऊपर की ओर नुकीला गुम्बद, सफेद प्रकाशित चमकीला दिखाई दिया था। सात मंजिल वाली (सात पायदान वाली) इमारत नहीं थी। आज के अनुभव में सात मंजिल वाली इमारत व गुम्बद जर्जर हालत में दिखाई दे रहे थे। ऋतम्भरा-प्रज्ञा वाले ज्ञान की भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ नहीं होती है, सिर्फ समझाने या समझने की दृष्टि में इसे सात

पायदान के रूप में कहा गया है। यही सात पायदान अभ्यासी के अनुभव में सात मंजिल वाली इमारत के रूप में दिखती है। ज्ञान सात प्रकार के स्तर वाला होने के कारण इस प्रकार से समझाया है। ऐसा समझो ज्ञान प्राप्ति के समय (ऋतम्भरा-प्रज्ञा के समय) चित्त पर ये सात प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं।

कीचड़ साफ किया जा रहा

यह अनुभव 18 जनवरी को 3:30 बजे ध्यानावस्था में आया। सामने भूमि का थोड़ा सा क्षेत्र दिखाई दे रहा है। उस भूमि पर मेरी ओर से सामने को कीचड़ की पतली धार धीरे-धीरे बह सी रही है। यह कीचड़ की धार लगभग चार मीटर दूर तक गई होगी। तभी सामने चिंपाजी जैसा बंदर आ गया। वह चिंपाजी बंदर उस कीचड़ को अपनी ओर से मेरी ओर को ढ़केंल रहा है। इस काम से चिंपाजी बंदर के हाथों में भी थोड़ा सा कीचड़ लग गया, उसने अपने दूसरे हाथ से हाथ में लगा कीचड़ साफ कर दिया। फिर चिंपाजी दोनों हाथों से भूमि का कीचड़ मेरी ओर को ढ़केंलने लगा। कुछ समय में ही भूमि के काफी क्षेत्र का कीचड़ साफ कर दिय। मैं दृष्टा रूप में वहीं थोड़ी दूरी पर उपस्थित यह दृश्य देख रहा था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया और मैंने अपनी आँखें खोल दी।

अर्थ- इस अनुभव में मैं दृष्टा रूप में यह दृश्य देख रहा था। अनुभव में भूमि का थोड़ा सा ही क्षेत्र दिखायी दे रहा था। अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि चित्त की भूमि है। इसी भूमि पर कीचड़ की पतली सी धार लगभग साढ़े तीन से चार मीटर दूरी तक थी। ऐसा लग रहा था मानो यह गाढ़ा कीचड़ बिल्कुल धीरे से बह रहा है। फिर चिंपाजी बंदर जैसा पशु उस कीचड़ को समेट कर भूमि को स्वच्छ करने लगा। उसने आधी दूरी तक कीचड़ साफ भी कर दिया। कीचड़ नाममात्र होने के कारण कीचड़ का ढेर नहीं लग रहा था। एक बार चिंपाजी ने अपने दूसरे हाथ में लगा कीचड़ साफ भी किया था। बाद में फिर कीचड़ समेट कर भूमि को साफ करने के कार्य में लग गया।

पिछले अनुभव जिसमें चित्त स्फटिक मणि के समान स्वच्छ घड़े के रूप में दिख रहा है, उसमें बाहर की ओर हल्के काले रंग का धब्बा लग रहा था। वही हल्का काला धब्बा इस अनुभव में कीचड़ के रूप में चित्त की भूमि को स्वच्छ किया जा रहा है। अनुभव में दिखाई देने वाला चिंपाजी बंदर वायु तत्व का प्रतीक है।

दोनों प्रकृतियाँ

यह अनुभव 18 जनवरी को ध्यानावस्था में सुबह 6 बजे के लगभग आया। यह अनुभव लिखने में थोड़ा अश्लील (गंदा) सा लगता है। यह अनुभव उच्चतम अवस्था का होने के कारण एवं इस अनुभव का अर्थ श्रेष्ठ होने के कारण साधकों के लिए लिखा जा रहा है।

अनुभव में बकरी के दो बच्चे एक ही जैसे शरीर और रंग वाले आगे-पीछे एक लाइन में शांत बैठे हुए हैं। पीछे की ओर बैठे बच्चे का सिर गर्दन तक आगे की ओर बैठे बच्चे के जननेन्द्रिय के अंदर पूरा घुसा हुआ है। दृश्य देखने में आश्चर्यजनक सा लगता है। फिर भी ऐसी अवस्था में दोनों बच्चे शांत बैठे हुए हैं, वे किसी प्रकार की हलचल नहीं कर रहे हैं। कुछ क्षणों तक मैं यह दृश्य देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैं इस विचित्र अनुभव का अर्थ तुरंत समझ गया जब मैं यह अनुभव देख रहा था।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले दोनों बच्चे बिल्कुल छोटे नहीं थे। ऐसा लगता था कुछ दिनों बाद प्रौढ़ (जवान) हो जाएंगे। दोनों के शरीर और रंग एक जैसे ही थे। इनका रंग सफेद था। हल्के काले रंग के कुछ धब्बे भी थे। ये दोनों आगे-पीछे एक जैसी मुद्रा में बैठे हुए थे। पीछे बैठे बकरी के बच्चे का सिर और गर्दन आगे बैठे बच्चे के जननेन्द्रिय के अंदर घुसा हुआ था। बकरी के दोनों बच्चे एकदम शांत मुद्रा में बैठे थे। बकरी प्रकृति की प्रतीक होती है। अनुभव में बकरी के दोनों बच्चे दोनों प्रकृतियों (परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति) के प्रतीक हैं। आगे वाले बच्चे का मुँह पूर्व दिशा की ओर था, उर्ध्वमुखी परा-प्रकृति का मुँह पूर्व दिशा की ओर होता है। सृष्टि उन्मुख अपरा-प्रकृति का मुँह पश्चिम दिशा की ओर होता है क्योंकि ये प्रकृति (अपरा-प्रकृति) निम्नमुखी होती है।

अनुभव में पीछे बैठे बकरी के बच्चे का मुँह पूर्व दिशा की ओर आगे बैठे बकरी के बच्चे के जननेन्द्रिय के अंदर पेट में घुसा हुआ था। इसका कारण है- जिस अभ्यासी की अवस्था निरुद्धावस्था वाली होती है, ऐसे अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति अत्यंत स्वच्छ होकर निम्नमुखी वाला प्रवाह छोड़ देती है, क्योंकि अभ्यासी के अंदर परा-प्रकृति का अवतरण होकर अपरा-प्रकृति शुद्ध हो जाती है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति धीरे-धीरे नष्ट हुए के समान हो जाती है। दूसरे शब्दों में उस अभ्यासी के लिए अपरा-प्रकृति परा-प्रकृति में अंतर्मुखी होने लगती है। तभी कहा जाता है कि निरुद्धावस्था वाले अभ्यासी का चित्त ईश्वर के चित्त में (परा-प्रकृति) अभ्यासानुसार अंतर्मुखी होने लगता है। ऐसी अवस्था में तमोगुण सत्वगुण का सहयोग करने लगता है। तब रजोगुण को दोनों गुण (सत्वगुण

और तमोगुण) मिलकर दबाने लगते हैं। आगे की ओर बैठा बकरी का बच्चा परा-प्रकृति का प्रतीक है पीछे बैठा बच्चा अपरा-प्रकृति का प्रतीक है। वर्तमान में मेरा चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी हो रहा है। मेरा चित्त अपरा-प्रकृति से बना हुआ है, ईश्वर का चित्त परा-प्रकृति से बना हुआ है। इसलिए अनुभव में बकरी के बच्चों का ऐसा दृश्य दिखाई दे रहा है।

अहंकार के तीन टुकड़े कर दिये

यह अनुभव 18 जनवरी की रात्रि 9 बजे आया। ध्यानावस्था में देखा सर्वत्र प्रकाश फैला हुआ है। सामने भूमि पर लगभग दो-ढाई इंच व्यास की सूखी लकड़ी खड़ी हुई है। इस लकड़ी की ऊँचाई चार-पाँच फीट रही होगी। उसमें पतला सा काला नाग लिपटा हुआ है। जैसे ही मेरी दृष्टि सूखी लकड़ी में लिपटे हुए काले नाग पर पड़ी, उसी समय तेज गति से तलवार के द्वारा उस काले नाग के एक ही वार से तीन टुकड़े कर दिये। काले नाग के शरीर के कटे हुए तीनों टुकड़े भूमि पर गिर पड़े। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि मेरे चित्त की भूमि है, सूखी पतली लकड़ी मेरा ही शरीर समझो। अनुभव में दृश्य देखते ही तीव्र गति से वैराग्य रूपी तलवार ने उस काले नाग के तीन टुकड़े एक ही वार में कर दिये। ये काला नाग अहंकार का प्रतीक है। अहंकार को काटा नहीं जा सकता है क्योंकि वह मरता नहीं है। अभ्यास द्वारा उसके स्वरूप को शुद्ध किया जाता है। पहले ये अहंकार तमोगुण की प्रधानता वाला होता है। अभ्यास के द्वारा इसके तमोगुण की मात्रा को धीरे-धीरे कम किया जाता है। जितना अहंकार में तमोगुण की मात्रा कम होगी, उतना ही अहंकार का स्वरूप घटता जायेगा। अन्त में निरुद्धावस्था में इसका स्वरूप घट-घट कर अदृश्य होता जाता है। फिर अस्मिता (अहंकार का मुँह ऐसा समझो) रह जाती है। चित्त पर अभ्यास के द्वारा जब निरुद्धावस्था में तमोगुण की मात्रा को बिलकुल कम (न्यून) कर देते हैं तब धीरे-धीरे अस्मिता भी नष्ट होने लगती है। फिर यह अहंकार सात्विक अहंकार के स्वरूप में बदलने लगता है।

अस्मिता का साक्षात्कार

यह अनुभव 19 जनवरी को सुबह 2:30 बजे पर आया। ध्यानावस्था में देखा- हमारे सामने थोड़ी सी ऊँचाई पर निर्मल आकाश में कुछ दिखाई दे रहा है, मगर मैं यह नहीं समझ पा रहा था क्या दिखाई दे रहा है, जबकि सर्वत्र प्रकाश विद्यमान था। मैं उस दृश्य को गौरपूर्वक देखने का प्रयास करने लगा। कुछ क्षणों बाद में दृश्य स्पष्ट होने लगा- एक छोटी सा गेंदनुमा गोलाकार पिण्ड अत्यन्त पारदर्शी है। फिर दृश्य थोड़ा सा नजदीक आकर और स्पष्ट हुआ- लगभग 2 इंच व्यास वाला पारदर्शी गोलाकार पिण्ड है। यह पिण्ड इतना ज्यादा पारदर्शी है कि उसका आकार कुछ देर में समझ में आया। उसी पारदर्शी पिण्ड के अन्दर हल्के काले रंग का छोटा सा नाग का सिर्फ मुँह है। मैं उस छोटे से पारदर्शी पिण्ड के अन्दर नाग का मुँह देख रहा था। मैं इस दृश्य को देख कर समझ गया कि यह अस्मिता है। मुझे मेरी अस्मिता दिखाई दे रही थी। अत्यंत शुद्ध पारदर्शी गोलाकार पिण्ड मेरे ही चित्त का प्रतीक है। चित्त में ये अस्मिता विद्यमान है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला छोटा सा गोलाकार अत्यन्त स्वच्छ निर्मल पिण्ड मेरे चित्त का ही स्वरूप है। इस अनुभव के अनुसार हमारा चित्त अत्यन्त निर्मल हो गया है। इस निर्मल पिण्ड के अन्दर नाग का छोटा मुँह विद्यमान था। यह नाग का मुँह चित्त की अस्मिता है। निर्मल चित्त पर अस्मिता दिखाई दे रही थी। चित्त जब अत्यन्त शुद्ध व निर्मल हो जाता है तब अस्मिता का स्वरूप भी धीरे-धीरे नष्ट हुए के समान हो जाता है।

अभ्यासी जब भौतिक संसार में किसी न किसी रूप में व्यवहार करता है तब उसके चित्त पर अस्मिता विद्यमान रहती है। अस्मिता अहंकार से सूक्ष्म होती है, ऐसा तभी होता है जब वह अभ्यासी भौतिक संसार में आसक्त और तृष्णा से युक्त होकर कार्य करता रहता है। जब वह संसार से आसक्ति और तृष्णा से रहित होकर अपने कार्य करता है तब उसके चित्त से अस्मिता का स्वरूप भी नष्ट हो जाता है। मैं अभी संसार में साधकों के लिए अथवा जीवों के कल्याण के लिए कुछ न कुछ मार्गदर्शन करता रहता हूँ। मुझे दिव्य शक्तियों ने कहा था- आप दिसम्बर 2018 तक ही साधकों का मार्गदर्शन करो, फिर मार्गदर्शन करना बन्द कर देना। मैं अब भी साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ। अब मुझे मार्गदर्शन करना बन्द करना पड़ेगा, ताकि चित्त को पूर्ण रूप से निर्मल व स्वच्छ कर सकूँ।

परम् शान्ति को प्राप्त

यह अनुभव 19 जनवरी सुबह 6 बजे ध्यानावस्था में आया। अनुभव में देखा- मेरे सामने राख का बहुत बड़ा और ऊँचा ढेर लगा हुआ है। मैं इस राख के ढेर को देख कर आश्चर्यचकित हुआ कि इतना बड़ा राख का ढेर कहाँ से आ गया। मैं राख के ढेर को देख रहा था तभी मैंने चारों ओर नज़र दौड़ाई मगर मुझे कुछ भी नहीं दिखाई दिया, सिर्फ छोटे से क्षेत्र के अन्दर राख का ढेर दिखाई दे रहा था, अर्थात जितना क्षेत्र मुझे दिख रहा था उस सम्पूर्ण क्षेत्र में राख का ढेर विद्यमान था। मेरे ज्ञान ने अपना कार्य कर दिया। इसने इस राख के ढेर का अर्थ तुरन्त बता दिया। कुछ क्षणों में अनुभव समाप्त हो गया, मैंने अपनी आँखें भी खोल दी। अनुभव को याद करके मैं प्रसन्न हो रहा था।

अर्थ- इस अनुभव में दिखाई देने वाला राख का ढेर काफी बड़े क्षेत्र में विद्यमान था। मुझे चित्त का स्वरूप भी छोटे से क्षेत्र वाला दिखाई दे रहा था उस सम्पूर्ण क्षेत्र में राख का ढेर विद्यमान था। मुझे चित्त की भूमि नहीं दिखाई दे रही है अर्थात् सम्पूर्ण भूमि पर राख का ढेर उपस्थित था। चित्त पर स्थित सभी प्रकार के कर्माशयों के जल जाने (नष्ट हो जाने पर) पर इस प्रकार का राख का ढेर दिखाई दे रहा है। जब अभ्यासी की सभी प्रकार की इच्छाएँ योगाग्नि के द्वारा जलकर नष्ट हो जाती हैं, उन्हीं इच्छाओं व चित्त पर स्थित सभी प्रकार के संस्कारों के जलने पर जो अवशेष बचता है वह राख के ढेर के रूप में दिखाई दे रहा है। इस राख के ढेर में किसी प्रकार की चिंगारी नहीं है। जैसे आग के अंगारों पर पानी डाल दिया जाय तब उसकी दाहिका शक्ति नष्ट होकर अवशेष के रूप में राख का ढेर बच जाता है।

ऐसे अभ्यासी के चित्त पर किसी प्रकार की इच्छाएँ नहीं रह जाती हैं। इसके फलस्वरूप उसके अन्दर न किसी पदार्थ को प्राप्त करने की इच्छा होती है और न ही किसी पदार्थ को त्याग करने की इच्छा होती है। वह इच्छाओं से रहित हुआ परम शान्ति में स्थित रहता है। ऐसे अभ्यासी का स्थूल शरीर प्रारब्ध के वेग से बंधा रहता है। प्रारब्ध वेग समाप्त होने पर ईश्वर के लोक (परा-प्रकृति के क्षेत्र में) में चला जाता है, फिर जन्म ग्रहण करने के लिए उसे भूलोक पर, वापस नहीं आना पड़ता है।

बौद्ध धर्म के अनुसार इस अवस्था को निर्वाण कहते हैं। बौद्ध धर्म में निर्वाण का अर्थ तृष्णा, घृणा और मोह (तीन अग्नियों) के पूरी तरह से बुझ जाने या समाप्त होने की अवस्था है। यह जन्म-मरण के चक्र से (संसार से) मुक्ति, सर्वोच्च शान्ति और परम सत्य की अवस्था है।

अग्नि का बुझ जाना शाब्दिक अर्थ में- दीपक की तरह इच्छाओं का बुझ जाना है। सम्पूर्ण दु:खों का अन्त है। यह संसार के दु:खों और पुनर्जन्म से छुटकारा पाने की स्थिति है। यह तृष्णा और अज्ञान का नाश है, जिसके बाद मनुष्य आत्मिक रूप से निर्विकार हो जाता है।

भारतीय आध्यात्मिक परम्परा में निर्वाण शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ समेटे हुए है। इसका प्रयोग सनातन साहित्य में परम शान्ति की अवस्था, अग्नि का बुझ जाना आदि के रूप में प्राप्त होता है। योग वशिष्ठ में निर्वाण प्रकरण में आत्मज्ञान, मुक्ति आदि का विशद वर्णन किया गया है। भगवान श्रीकृष्ण जी ने गीता के द्वितीय अध्याय में कहा है- जो मनुष्य सम्पूर्ण कामनाओं का त्याग करके ममता रहित और अहंकार रहित आचरण करता है वह शान्ति को प्राप्त होता है। हे अर्जुन! यह ब्राह्मी स्थिति है, इसको प्राप्त होकर कभी कोई मोहित नहीं होता है। इस स्थिति में यदि अन्तकाल में भी स्थित हो जाए तो निर्वाण ब्रह्म (शांति) की प्राप्ति हो जाती है। यहाँ ब्रह्म-निर्वाण का अर्थ शान्त ब्रह्म से किया गया है।

महाभारत में उल्लेख मिलता है- जिस प्रकार ईंधन हटा लेने पर धीरे-धीरे अग्नि शान्त हो जाती है, उसी प्रकार बुद्धिपूर्वक सभी शारीरिक एवं मानसिक संकल्पों का त्याग कर देने पर निर्वाण की प्राप्ति होती है।

ऐसे संस्कार जो बार-बार जन्म लेने का कारण बनते हैं, उनसे मुक्त हो जाना ही निर्वाण है। आसक्ति, घृणा, लालच आदि दु:ख रूपी अग्नि में मनुष्य दहकता रहता है। सम्पूर्ण इच्छाओं एवं संस्कारों के नाश द्वारा इस अग्नि का बुझ जाना ही निर्वाण है। यही परम लक्ष्य भी है।

चित्त की भूमि की स्वच्छता

यह अनुभव 20 जनवरी को सुबह 3:30 बजे ध्यानावस्था में आया। मैंने अनुभव में देखा- जिस जगह पर मैं खड़ा हूँ, वहीं पैरों के पास की भूमि पर मैं झाड़ू लगा रहा हूँ। भूमि पर दो-तीन बार झाड़ू को इधर-उधर किया, सम्पूर्ण भूमि स्वच्छ हो गयी क्योंकि अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि का क्षेत्रफल इतना ही था कि मैं खड़ा हो सकूँ। यह अनुभव क्षणिक देर का था। फिर मुझे अपना होश आ गया और अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली भूमि का क्षेत्रफल मुश्किल से एक मीटर रहा होगा। भूमि पहले से ही स्वच्छ थी फिर भी मैं उस स्वच्छ भूमि पर झाड़ू लगा रहा था। सच तो यह है कि उस भूमि पर मैं सिर्फ खड़ा हो पा रहा था। यह चित्त की भूमि थी। मैं अभी संसार में व्यवहार कर रहा हूँ। साधकों का कभी-कभी मार्गदर्शन भी कर देता हूँ। अब अनुभवों की एक और पुस्तक लिखने का प्रयास करना शुरू कर दिया है। इसलिए चित्त की भूमि इस प्रकार की दिखाई दे रही है तथा अनुभव में उस भूमि को स्वच्छ कर रहा हूँ।

चक्र जड़ रूप में

यह अनुभव 22 जनवरी को सुबह 6:00 बजे ध्यानावस्था में आया। अनुभव में मैं नीचे की ओर देख रहा था। नीचे की ओर 6 बड़े से फूल खिले हुए दिखाई दे रहे थे। इन सभी फूलों की सभी पंखुड़ियाँ पूरी तरह से विकसित थी। सभी फूल हल्के रंग के थे, मगर सभी फूलों का रंग अलग-अलग था। मैं इन सभी फूलों को गौरपूर्वक देख रहा था। ये सभी फूल एक बिलकुल छोटे से पेड़ पर लगे थे। इस पेड़ की ऊँचाई मात्र एक-सवा फीट रही होगी। पेड़ की मोटाई मुश्किल से पेंसिल की मोटाई के बराबर रही होगी। तने के लगभग 6 इंच ऊपर से तीन टहनियाँ अलग-अलग को निकली थी। इन टहनियों के ऊपर आखिरी किनारों पर (सिरों पर) 6 फूल पूर्ण रूप से विकसित लगे हुए थे। मैं इन्हीं फूलों को देखे जा रहा था। कुछ क्षणों बाद स्पष्ट हुआ इन फूलों की पंखुड़ियाँ ऐसी लग रही थी मानों रंगीन कागज की बनी हों। एक बार मैंने फिर गौरपूर्वक देखा तो निश्चय हुआ इन फूलों की पंखुड़ियाँ रंगीन कागज की बनी हुई हैं। पेड़ सूखा सा लग रहा था उस पेड़ पर एक भी पत्ती नहीं थी। कुछ समय में अनुभव समाप्त हो गया। फिर मैं फूलों के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला पेड़ हमारा ही शरीर है। सभी फूल हमारे शरीर में विद्यमान विकसित हुए चक्र हैं। सुन्दर फूल रंगीन कागज के जैसे दिखाई दे रहे थे अर्थात ये विकसित चक्र जड़ रूप में दिखाई दे रहे थे। घनत्व के स्तर में भिन्नता होने के कारण अलग-अलग रंग वाले भासित हो रहे थे। पेड़ में एक भी पत्ती न होने का यह कारण है- मेरे चित्त में इस समय किसी प्रकार की सांसारिक इच्छाएँ नहीं हैं। कर्माशय समाप्त हो जाने के कारण पेड़ बहुत ही छोटा और सूखा दिखाई दे रहा था।

विशाल स्वरूप वाला सात्विक अहंकार

यह अनुभव 22 जनवरी को रात्रि 9:00 बजे ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा- मेरे सामने लगभग 2 फीट की दूरी पर बहुत बड़ी कुण्डली मारे एक मोटा सा नाग फन ऊपर की ओर उठाये हुए मेरी ओर देख रहा था। मैं इस नाग का इतना मोटा और बड़ा स्वरूप देखकर थोड़ा सा चौंक पड़ा, क्योंकि इतना मोटा और बड़े शरीर वाला नाग मैंने अपने साधना काल में कभी नहीं देखा था। नाग का फन बहुत चौड़ा और बड़े साइज का था, उस नाग की कुण्डली भी बहुत बड़े क्षेत्र में लगी हुई थी। नाग की कुण्डली देख कर अनुमान लगाया जा सकता है, नाग की लम्बाई भी बहुत बड़ी होगी। नाग अपना फन ऊपर की ओर उठाये शांत भाव से मुझे देख रहा था। नाग के फन के नीचे का शरीर बहुत मोटा और चपटा सा था। फन के नीचे के चौड़े चपटे भाग पर (चलते समय जो भाग भूमि से चिपका रहता है) एक मनुष्य का चेहरा झलक रहा था। उस मनुष्य की आँखें स्पष्ट दिखाई दे रही थीं, ऐसा लगता था- मनुष्य का पारदर्शी शरीर नाग के शरीर के अन्दर विद्यमान है। क्षण भर के लिए मैं चौंका कि इस नाग के अन्दर मनुष्य का पारदर्शी शरीर विद्यमान है। नाग के शरीर का रंग हल्का काला सा था मगर जिस जगह पर मनुष्य का शरीर उसके अन्दर भासित हो रहा था उस स्थान पर नाग के शरीर का रंग स्वच्छ सफेद था। ऐसे शरीर वाला नाग पृथ्वी पर नहीं पाया जाता है। महत्वपूर्ण बात यह थी- नाग मुझे क्रोध से नहीं देख रहा था बल्कि ऐसा लगता था मानो वह मुझे प्यार से देख रहा है। इस विशाल स्वरूप वाले नाग का शरीर कुछ समय तक देखता रहा फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाले नाग का स्वरूप बहुत बड़ा व मोटा था। ऐसा नाग मैंने कभी भी अनुभव में व स्थूल जगत में नहीं देखा है। अपने यहाँ जो किंग कोबरा नाग पाया जाता है उसका फन (मुँह) ज्यादा चौड़ा नहीं होता है और वह किंग कोबरा कभी कुण्डली मार के नहीं बैठता है। अनुभव में दिखाई देने वाला नाग किंग कोबरा जैसा नहीं था। वह नाग कोबरा के बड़े स्वरूप जैसा था। अनुभव वाला नाग हमारे बहुत नजदीक कुण्डली मारे बैठा हुआ था। स्वभाव से शांत दिखाई दे रहा था। नाग के फन के नीचे मेरी ओर (पसलियों की ओर) मानव चेहरा पारदर्शी रूप में विद्यमान था। ऐसा लगता था जैसे नाग के अन्दर मनुष्य का सूक्ष्म शरीर विद्यमान है। मानव आँखें स्पष्ट रूप से चमक रही थी। नाग के शरीर में जिस जगह मानव चेहरा दिखाई दे रहा था वहाँ पर नाग का शरीर स्वच्छ सफेद रंग का था तथा काफी चौड़ा सा था, इसी चौड़ाई वाले स्थान पर मानव चेहरा दिख रहा था।

यह नाग डरावना नहीं लग रहा था बल्कि वह शांत भाव से देख रहा था, जाने क्यों मैं इस नाग को देखकर प्रसन्न सा हो रहा था। साधकों! यह नाग सामान्य संसारी नागों जैसा नहीं था, यह मेरा ही सात्विक अहंकार था। तमोगुणी अहंकार कुछ दिनों पूर्व ही जड़ अवस्था को प्राप्त हो चुका है ऐसा मैंने अनुभवों में भी लिखा है।

जब साधक को उसके तमोगुणी अहंकार और अस्मिता का साक्षात्कार हो जाता है तब उस साधक के लिये तमोगुणी अहंकार और अस्मिता नष्ट हुए के समान हो जाती है। उसके चित्त में सात्विक अहंकार का प्राकट्य हो जाता है। यह अहंकार (सत्वगुणी) तमोगुणी अहंकार जैसा स्वभाव वाला नहीं होता है, क्योंकि अभ्यासी का चित्त स्फटिक मणि के समान स्वरूप वाला अत्यन्त शुद्ध व निर्मल हो जाता है। ऐसे शुद्ध निर्मल और व्यापक चित्त में तमोगुणी अहंकार ठहर ही नहीं सकता है, क्योंकि चित्त का तमोगुण तो पहले ही अभ्यास के द्वारा नष्ट किया जा चुका है। ऐसी अवस्था में अभ्यासी के चित्त पर सात्विक अहंकार का प्राकट्य हो जाता है। सात्विक अहंकार अत्यन्त निर्मल व व्यापक स्वरूप वाला होता है। सात्विक अहंकार से युक्त अभ्यसी का चित्त, ईश्वर के चित्त में (परा-प्रकृति, ईश्वर के लोक में) अन्तर्मुखी रहता है।

जब चित्त स्फटिक मणि के समान शुद्ध व निर्मल हो जाता है तब उसके अन्दर व्यापकता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। इसका कारण है- ऐसा चित्त ज्ञान के प्रकाश से पूर्ण रूप से युक्त हो जाता है। तमोगुण लेश मात्र ही रह जाता है, सत्वगुण की पूर्ण रूप से प्रधानता रहती है, ऐसा परा-प्रकृति के अवतरण के कारण होता है। परा-प्रकृति का अवतरण अभ्यासानुसार धीरे-धीरे ही होता है। जितना परा-प्रकृति का अवतरण अपरा-प्रकृति में होता जाता है उसी के अनुसार अपरा-प्रकृति की अशुद्धता (तमोगुण) कम होती जाती है और शुद्धता का अनुपात (सत्वगुण) बढ़ता रहता है। इसी शुद्धता के अनुसार चित्त की व्यापकता बढ़ती रहती है। एक समय ऐसा आता है अभ्यासी का चित्त स्फटिक मणि के समान शुद्ध हो जाता है।

चित्त की मलिनता और शुद्धता का प्रभाव तमोगुणी अहंकार पर पड़ता है। चित्त की शुद्धता बढ़ने पर तमोगुणी अहंकार का स्वरूप छोटा होने लगता है। अभ्यास के द्वारा जैसे-जैसे तमोगुण की मात्रा घटती जाती है वैसे-वैसे अहंकार का स्वरूप और व्यापकता भी घटती जाती है। इसी प्रकार अभ्यास करते रहने पर तमोगुणी अहंकार का स्वरूप घट-घटकर नष्ट हुए के समान हो जाता है। ऐसी अवस्था में उचित समय पर सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य हो जाता है। चित्त की शुद्धता के अनुसार सत्वगुणी अहंकार के स्वरूप

में विशालता व व्यापकता आने लगती है, फिर धीरे-धीरे अहंकार का स्वरूप भी शुद्ध और व्यापक होता रहता है।

अनुभव में दिखाई देने वाला अहंकार विशाल और व्यापक स्वरूप वाला है परन्तु उसका रंग हल्का सा काला है। मैं अभी स्थूल जगत में व्यवहार कर रहा हूँ, जैसे- साधकों का मार्गदर्शन कर रहा हूँ, अभी भारत से बाहर देशों में साधकों का मार्गदर्शन करने जाता हूँ, वर्तमान में यह पुस्तक लिखने का प्रयास कर रहा हूँ, ये सभी प्रकार के व्यवहार हमारे चित्त के विकार ही हैं। इन विकारों के दूर होने पर सात्विक अहंकार का स्वरूप व रंग भी बदला हुआ दिखाई देने लगेगा। जिस प्रकार कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप बदल गया है उसी प्रकार अहंकार का स्वरूप भी बदल गया है। ऐसा परा-प्रकृति के अवतरण के कारण सम्भव हुआ है।

सात्विक इन्द्रियों का स्वरूप

यह अनुभव 23 जनवरी की सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में मैं आकाश में आसन के ऊपर बैठा हुआ हूँ। सामने की ओर आकाश में देख रहा हूँ, आकाश अत्यन्त निर्मल स्वच्छ है। सामने की ओर आकाश में एक कछुआ दिखाई देने लगा, कछुआ मुझसे 3-4 मीटर की दूरी पर था, कछुए का पिछला भाग मेरी ओर था। कछुए के शरीर की बनावट थोड़ी सी भिन्न प्रकार की दिखाई दे रही थी, वैसे कछुआ का शरीर थोड़ा गोलाकार जैसा होता है, मगर इस कछुए का शरीर थोड़ा सा लम्बा अण्डाकार रूप में था। मैं कछुए को देख रहा था। कछुआ किसी प्रकार की हलचल नहीं कर रहा था, बिल्कुल चुपचाप शान्त था। मेरे देखते ही उस कछुए के शरीर में हलचल होने लगी, वह थोड़ा सा पीछे की ओर (मेरी ओर) आया। इसके पैर दिखाई नहीं दे रहे थे, अपने आप पीछे की ओर को हटा। पीछे की ओर हटते ही मैं चौंक पड़ा, क्योंकि कछुए के नीचे एक मनुष्य का चेहरा दिखाई दिया। चेहरे से लग रहा था वह लेटा हुआ गहरी नींद में सो रहा है। जैसे ही कछुआ पीछे की ओर हटा, उसी समय मनुष्य के चेहरे पर झटका सा लगा, ऐसा लगा मानो वह चेहरा जागने वाला है। उसी समय कछुआ अपने आप पीछे की ओर (बिना चले) आने लगा, मैं इस दृश्य को गौरपूर्वक देख रहा था। कछुआ जब पीछे की ओर अपने आप आ रहा था तब भी उसके शरीर का पीछे का भाग मेरी ओर ही था, मुझसे लगभग एक मीटर की दूरी पर आकर कछुआ रुक गया। अनुभव के समय मुझे सिर्फ आकाश ही दिखाई दे रहा था। सर्वत्र आकाश ही आकाश

था, सामने की ओर, ऊपर की ओर, नीचे की ओर अत्यन्त स्वच्छ निर्मल आकाश था। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में सर्वत्र आकाश ही दिखाई दे रहा था, यह मेरा ही चित्ताकाश था। चित्ताकाश में कछुआ दिखाई दे रहा था। कछुए के चारों पैर नहीं दिखाई दिये, उसका सिर्फ थोड़ा सा मुँह बाहर की ओर निकला हुआ था। कछुआ इंद्रियों का प्रतीक होता है। कछुए का शरीर थोड़ा लम्बा सा अण्डाकार रूप में था। उसका शरीर थोड़ा बड़ा सा था। कछुए के शरीर का पिछला भाग मेरी ओर था अर्थात् अभी मैं इसके प्रभाव में नहीं हूँ। जब वह पीछे की ओर अर्थात् मेरी ओर थोड़ा सा अपने आप आया, तब कछुए के नीचे, जिस जगह पर पहले बैठा था पीछे की ओर हटने पर, उस जगह पर (पहले बैठे जगह पर) लेटे हुए पोजीशन में मनुष्य का चेहरा दिखाई दिया। चेहरे से लगता था वह गहरी नींद में सो रहा है। तभी मनुष्य के चेहरे पर ज़ोर से झटका लगा, तब ऐसा लगा मानो जागने का प्रयास कर रहा है मगर अनुभव में जागा हुआ दिखाई नहीं दिया। फिर कछुआ पीछे की ओर (मेरी ओर) अपने आप आ-आकर लगभग एक मीटर की दूरी पर ठहर गया।

अनुभव में दिखाई दे रहा था कछुआ (इन्द्रियाँ) क्रियाशील नहीं हुआ है, क्रियाशील होने वाला है। अर्थात् हमारे स्थूल शरीर में जो इन्द्रियाँ कार्य कर रही है वह इन्द्रियाँ तमोगुणी है क्योंकि ये इन्द्रियाँ तमोगुणी अहंकार के द्वारा बहिर्मुखी हो रही है। ये तमोगुणी इन्द्रियाँ स्थूल शरीर में विद्यमान रहती है तथा स्थूल जगत में व्यापार कर रही है। स्थूल शरीर व स्थूल जगत दोनों ही तमोगुण की प्रधानता वाले हैं।

अभ्यास द्वारा चित्त पर ज्ञान का प्रकाश (ऋतम्भरा-प्रज्ञा का) सर्वत्र फैल जाने (विद्यमान हो जाने) के कारण अब चित्त अत्यन्त निर्मल होकर स्फटिक मणि के समान जैसा हो गया है। स्फटिक मणि का स्वभाव होता है, जो चीज जैसी होती है उसका स्वरूप वैसा ही दिखा देती है। चित्त की निर्मलता के कारण उसके अन्दर व्यापकता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। तब चित्त पर सत्वगुण प्रधान रूप में हो जाता है और तमोगुण गौण रूप (नाम मात्र का) वाला हो जाता है। इसी प्रकार इन्द्रियों का स्वरूप भी बदल जाता है। जैसा कि अनुभव में दिखाया गया।

अभी तक इस शरीर में तमोगुणी इन्द्रियाँ कार्य कर रही थी, अब चित्त पर सात्विक इन्द्रियों का प्राकट्य हो गया है जैसा कि अनुभव में दिखाया गया है। ये इन्द्रियाँ स्थूल शरीर त्यागने के बाद पूर्ण रूप से क्रियाशील हो जायेगी। स्थूल शरीर त्यागते ही योगाग्नि के द्वारा सूक्ष्म शरीर जलकर भस्म हो जायेगा, तब

कारण शरीर में ये सात्विक इन्द्रियाँ विद्यमान होगी, उस समय सात्विक अहंकार और महा-कुण्डलिनी भी कारण शरीर में विद्यमान होगी। उस समय चित्त में इतनी ज्यादा सूक्ष्मता, निर्मलता और व्यापकता होगी कि स्थूल शरीर त्यागते ही कारण शरीर से परा-प्रकृति में (ईश्वर का लोक, ईश्वर का चित्त) प्रवेश कर जाऊँगा। स्थूल शरीर त्यागते ही सूक्ष्म शरीर योगबल के प्रभाव से जलकर भस्म हो जायेगा।

परा-प्रकृति को महाकारण जगत भी कहते हैं इसलिये ईश्वर (सगुण ब्रह्म) का शरीर महाकारण शरीर होता है। वहाँ पर आकाश तत्व विशुद्धता से युक्त होता है। विशुद्धता उसे कहते हैं जिसमें कभी अशुद्धता आयी ही नहीं है। वहाँ पर वायु तत्व, अग्नि तत्व, जल तत्व और पृथ्वी तत्व बीज रूप में विद्यमान रहते हैं, सिर्फ आकाश तत्व विशुद्ध रूप में रहता है। तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैं अर्थात् सत्वगुण प्रधान रूप से विद्यमान रहता है, रजोगुण व तमोगुण लेशमात्र रहते हैं। महाकारण जगत में सत्वगुण प्रधान रूप में होने के कारण वह क्षेत्र स्वप्रकाशित रहता है क्योंकि सत्वगुण का स्वभाव हल्कापन और प्रकाशित होता है। सत्वगुण की प्रधानता के कारण वहाँ पर रहने वाले (महाकारण जगत में) की इन्द्रियों में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न नहीं होता है।

कर्माशयों का जलकर राख का ढेर होना

यह अनुभव ध्यानवस्था में 30 जनवरी को आया। सुबह ध्यानवस्था में देखा- मेरे सामने भूमि पर एक नया बक्सा खुला हुआ रखा है, उस बक्से में आग लगी हुई है। फिर मुझे दिखाई दिया- बक्से के अन्दर राख भरी हुई है। उस राख के आकार से लगता है उस बक्से के अन्दर कागज अथवा कपड़े रखे रहे होंगे, क्योंकि जली हुई वस्तु का आकार सा अभी भी बना हुआ था। खुले हुए बक्से में रखी वस्तु से थोड़ी-थोड़ी आग की लपटें अभी उठ रही थी, जबकि बक्से के अन्दर रखी वस्तु की राख का आकार बना हुआ स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मैं बक्से के अन्दर की उठती हुई आग की लपटें देख कर मुस्कुरा रहा था तथा सोच रहा था सब कुछ जलकर राख हो गया, चलो अच्छा हुआ अब कुछ भी शेष नहीं बचा है।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला बक्सा बिल्कुल नया था। यह टीन की चद्दर का बना हुआ था। इसकी लम्बाई लगभग 3½ फीट से 4 फीट रही होगी, चौड़ाई लगभग 2½ फीट रही होगी। वह बक्सा पूरी तरह से खुला हुआ था। अनुभव में जब बक्सा मुझे दिखाई दिया तो मैंने देखा- पूरी तरह से खुले हुए बक्से के अन्दर राख का ढेर था तथा उसी राख के ढेर से बक्से के दाहिनी ओर थोड़ी सी जगह से पाँच-छः इंच

ऊँची आग की लपटें ऊपर की ओर उठ रही थी। जबकि बक्से के अन्दर जलने के लिए कुछ भी शेष नहीं था, उसके अन्दर राख ही राख भरी हुई थी। वह राख बारीक पाउडर के समान नहीं थी बल्कि राख से उस वस्तु का आकार बना हुआ था, जो वस्तु का स्वरूप जलने से पहले था। इसलिये मैंने पहले लिखा है- ऐसा लगता है बक्से के अन्दर शायद कपड़े या कागज जैसी वस्तु पहले रखी रही होगी। अगर और स्पष्ट करूँ तो ऐसा लगता था इस बक्से में पहले शायद कागज रखे रहे होंगे, जो अब जलकर राख के रूप में परिवर्तित हो गये। मैं इस दृश्य को गौरपूर्वक देख रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अनुभव में दिखाई देने वाला दृश्य का अर्थ है- "चित्त पर स्थित कर्माशयों का योगाग्नि के द्वारा जलकर राख हो जाना"। अर्थात् अब किसी प्रकार की इच्छाओं का चित्त पर नहीं होना।

चित्त पर राख का ढेर

यह अनुभव 30 जनवरी को सुबह ध्यानवस्था में आया। ध्यानवस्था में देखा- सामने भूमि पर बड़ा सा राख का ढेर लगा हुआ है। वह राख का ढेर पूरी तरह से शान्त है। उस राख के अन्दर किसी भी प्रकार की चिंगारी नहीं है। उस राख के ढेर को देखने से लगता है राख का ढेर कुछ दिन पुराना है। राख का स्वरूप बारीक पाउडर की तरह था। फिर मैंने अपनी दृष्टि इधर-उधर की ओर की। जिस जगह मैं उपस्थित था, वह जगह ऐसी लगती थी- लगभग 10-12 फीट ऊँची और लगभग 12 फुट व्यास का गोलाकार तम्बूनुमा जगह है, मैं इस छोटे से तम्बूनुमा जगह के अन्दर उपस्थित हूँ।

तम्बूनुमा जगह निर्मल आकाश के द्वारा बनी हुई थी। लगभग 11-12 फीट व्यास की गोलाकार जगह भूमि का साइज रहा होगा। इस भूमि के मध्य भाग में राख का बड़ा सा ढेर था, शेष सम्पूर्ण भूमि पर राख फैली हुई पड़ी थी, अर्थात् भूमि पर सर्वत्र राख ही राख फैली हुई थी। कुछ क्षणों तक उस राख के ढेर को शान्त भाव से टकटकी लगाकर देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह अनुभव एक छोटे तम्बूनुमा जगह के अन्दर आया। यह तम्बूनुमा जगह मेरा ही चित्त है। चित्त की भूमि के मध्य में राख का बड़ा सा ढेर लगा हुआ था। राख के अन्दर चिंगारी भी नहीं थी। राख पूरी तरह शान्त व ठण्डी थी। उस राख के ढेर के आसपास सम्पूर्ण भूमि पर राख फैली हुई पड़ी थी अर्थात् चित्त की सम्पूर्ण भूमि पर ठण्डी, पाउडर जैसी बारीक राख विद्यमान थी।

अनुभव में सम्पूर्ण चित्त पर राख का बड़ा सा ढेर दिखाई दे रहा है। इसका शाब्दिक अर्थ है सभी प्रकार की इच्छाओं का पूर्ण रूप से शांत हो जाना। बौद्ध धर्म में इसे निर्वाण कहा गया है। इस धर्म में निर्वाण एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसका अर्थ दु:ख से मुक्ति, तृष्णा का शमन और जन्म-मृत्यु के चक्र से अर्थात संसार से छुटकारा। यह केवल एक नकारात्मक स्थिति नहीं है, बल्कि सकारात्मक अवस्था है जो शान्ति, आनन्द और पूर्ण ज्ञान से चिह्नित है। निर्वाण की अवधारणा बौद्ध धर्म के केंद्र में है और यह धर्म के सभी पहलुओं को प्रभावित करती है। जैसे कि नैतिकता, ध्यान और ज्ञान। यह एक ऐसी अवस्था है जो जन्म-मृत्यु, दु:ख, तृष्णा और अज्ञानता आदि सभी सांसारिक सीमाओं से परे है। जीवन अनिवार्य रूप से दु:खमय है और इस दुःख का कारण तृष्णा और अज्ञानता है। निर्वाण दुःख का समाधान है।

तमोगुणी अहंकार मृत हुए के समान

यह अनुभव 31 जनवरी की शाम को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मैं अपने बाँये हाथ में एक नाग पकड़े हुए हूँ। नाग के गले को बाँये हाथ से पकड़े हुए नाग के शरीर को देख रहा हूँ। नाग का शरीर नीचे की ओर लटका हुआ था उसका शरीर इस तरह लटका हुआ था मानो नाग मर चुका है। बाँये हाथ से नाग का गला पकड़े हुए अब मैं नाग को हिला रहा था। उस नाग का शरीर इस तरह से हिल रहा था जैसे वह मर चुका है, क्योंकि नाग का शरीर किसी तरह की हलचल नहीं कर रहा था। अब मैंने उस नाग के मुँह की ओर को देखा। नाग का मुँह व उसके आसपास का शरीर देखकर निर्णय किया नाग मर चुका है। मरे हुए नाग को मैं गौरपूर्वक देख रहा था। नाग का शरीर सामान्य कोबरा के समान था, लगभग 4 फीट लम्बा रहा होगा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में मैं जिस मरे हुए नाग को पकड़े हूँ यह मरा हुआ नाग हमारा ही तमोगुणी अहंकार है। अनुभव में वह नाग हमारे ही तमोगुणी अहंकार का प्रतीक है। वर्तमान समय में यह तमोगुणी अहंकार मेरे चित्त पर नष्ट हुए के समान हो गया है। इसलिये अनुभव में नाग रूपी अहंकार मरा हुआ दिखाई दे रहा है क्योंकि हमारा चित्त अब इतना शुद्ध और व्यापक हो गया है कि उसका स्वरूप स्फटिक मणि के समान हो गया है। जिसका चित्त अभ्यास के द्वारा स्फटिक मणि के समान हो गया हो, ऐसा चित्त सत्वगुण की प्रधानता से युक्त होता है। रजोगुण और तमोगुण गौण रूप में रहते हैं। तब चित्त पर ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र

विद्यमान हो जाता है। उस समय तमोगुणी अहंकार अभ्यासी के लिये नष्ट हुए के समान हो जाता है। ऐसी अवस्था में **चित्त पर सत्वगुणी अहंकार का प्राकट्य** हो जाता है।

कुण्डलिनी शक्ति का प्राकट्य होना

यह अनुभव 7 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान करते समय देखा- मैं अपने आसन पर सहजासन मुद्रा में बैठा हुआ हूँ। मेरे पैरों के नीचे से बहुत सुन्दर एक सुनहरी पतली सी नागिन निकलकर तीव्र गति से सामने की ओर जाने लगी। सामने तीन-चार मीटर की दूरी पर जड़ रुप में एक मानव सहजासन मुद्रा में बैठा हुआ था। उसके सामने टिकटी के ऊपर मोटी सी किताब रखी हुई थी। ऐसा लग रहा था मानो वह पुरूष उस पुस्तक को पढ़ रहा है, पुस्तक भी देखने में स्थूल रूप वाली दिखाई दे रही थी। उस स्थान पर चारों ओर सर्वत्र प्रकाश फैला हुआ था। पतली सी सुनहरी नागिन उस मनुष्य के पास जाकर उस पुस्तक के ऊपर अपना मुँह मारने लगी और उस पुस्तक को अपने मुँह से नोचने लगी। मैं उस नागिन की सुन्दरता को देख रहा था, क्योंकि वह सुनहरी नागिन बहुत ही सुन्दर थी। आश्चर्य की बात यह थी कि उसके गले से थोड़ा नीचे की ओर (पूँछ की ओर) दो पंख छोटे-छोटे लगे हुए थे। वे दोनों पंख भी उसके शरीर के रंग के समान ही सुनहरे थे। उन दोनों पंखों को देखकर सोच रहा था इस सुनहरी नागिन के तो पंख लगे हुए हैं, ऐसे नाग मैंने कभी नहीं देखे हैं। कुछ समय तक मैं देखता रहा कि नागिन उस जड़ पुस्तक को नोच सी रही है। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली सुन्दर सुनहरी नागिन हमारी ही कुण्डलिनी है। पहले अनुभव में मैं लिख चुका हूँ कि कुण्डलिनी शक्ति जड़ रूप में परिवर्तित हो चुकी है उसकी जगह पर महा-कुण्डलिनी का प्राकट्य हुआ है। इस अनुभव में फिर ये कुण्डलिनी का प्राकट्य कैसे हो गया? इसका कारण है- वर्तमान में मेरी अवस्था पहले अवस्था की अपेक्षा निम्न स्तर पर आ गयी है, अर्थात वर्तमान समय में मैं अज्ञान की अवस्था में आ गया हूँ। इसका मुख्य कारण है- अब वर्तमान समय में मैंने एक पुस्तक लिखनी शुरू कर दी है, इस पुस्तक में मैं अपने अनुभवों को ही लिखूँगा। पुस्तक लिखना अथवा किसी प्रकार का समाज में परोपकार करना आदि अज्ञानता के अन्तर्गत आता है। अब आप कहेंगे परोपकार करना तो अच्छा कार्य है, सभी को परोपकार करना चाहिये। ये सच है सभी को परोपकार करना चाहिये, इससे पुण्य फल की प्राप्ति होती है तथा चित्त पर सत्वगुणी कर्माशय बनने के कारण चित्त पर सत्वगुण की मात्रा बढ़ती

है, मन और सोच में व्यापकता आती है, तथा मन में सरलता व शुद्धता बढ़ती है। मगर जिस योगी को तत्वज्ञान की प्राप्ति हो चुकी हो, उसके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य हो चुका होता है। चित्त पर ज्ञान का प्रकाश फैल चुका होता है, उसे निरुद्धावस्था प्राप्त होने लगती है अथवा निरुद्धावस्था प्राप्त हो चुकी है। इस अवस्था को प्राप्त हुए योगी के लिए सांसारिक कार्य करना अर्थात संसार में उतर आना योगी के लिये निम्न अवस्था में आना कहा जायेगा। संसार अज्ञानता से युक्त होता है। यहाँ पर तमोगुण प्रधान रूप से रहता है तथा सम्पूर्ण व्यवहार तमोगुण की प्रधानता से सम्बंधित होते हैं।

वर्तमान समय में पुस्तक लिखने के कारण निम्न स्तर पर आ गया हूँ। पहले की अवस्था ज्ञान के अर्तगत थी। अज्ञानता के अन्तर्गत आ जाने के कारण जिस कुण्डलिनी का स्वरूप जड़ वाला हो गया था अब अज्ञानता के कारण (पुस्तक लिखने के कारण) कुण्डलिनी शक्ति का प्राकट्य हो गया है। अनुभव में दिखाई देने वाली कुण्डलिनी शक्ति सुनहरी पतली सी सुन्दर नागिन के रूप में दिखाई दे रही थी। कुण्डलिनी शक्ति पहले की अपेक्षा बहुत सुन्दर थी क्योंकि चित्त की शुद्धता पहले की अपेक्षा कुछ दिन पहले बहुत ही ज्यादा थी। चित्त की शुद्धता के कारण कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप भी बहुत ज्यादा सुन्दर हो गया है। सामने की ओर बैठा मनुष्य शरीर मेरा ही स्वरूप है। जो मैं पुस्तक लिख रहा हूँ- उसी पुस्तक पर कुण्डलिनी शक्ति मुँह मार रही है तथा उस पुस्तक को मुँह से नोच रही है अर्थात पुस्तक को बहुत से पाठक पसन्द भी करेंगे, ज्ञान से युक्त होगी। अनुभव में अबकी बार कुण्डलिनी शक्ति के दो पंख लगे हुए थे। हालाँकि उन पंखों से शायद उड़ा नहीं जा सकता था क्योंकि पंख छोटे-छोटे थे।

आवश्यक जानकारी

साधकों आपने इन अनुभवों में पढ़ा होगा कि मेरी महा-कुण्डलिनी का जागरण हो गया है। ये अनुभव 31 दिसम्बर 2025 को आया था और अभी 7 फरवरी 2026 को पढ़ने को मिला कि पहले जिस क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति का स्वरूप जड़ रूप में परिवर्तित हो गया था वही क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति का फिर प्राकट्य हो गया है। इसी प्रकार पहले अनुभवों में पढ़ा होगा कि तमोगुणी अहंकार भी जड़ रूप में परिवर्तित हो गया था। तमोगुणी अहंकार का मात्र फन शेष रह गया था, फिर सात्विक अहंकार का प्राकट्य हो गया था, ऐसा आपने 31 दिसम्बर 2025, 18 जनवरी 2026 और 22 जनवरी 2026 के

अनुभव में पढ़ा होगा। फिर आपने पढ़ा होगा 31 जनवरी 2026 को- मैं नाग का गला पकड़े हुए खड़ा हूँ, नाग का मृत शरीर नीचे की ओर लटक रहा है।

पहले अनुभवों में कुण्डलिनी शक्ति और तमोगुणी अहंकार जड़ स्वरूप में परिवर्तित हो गये, ऐसा निरुद्धावस्था के समय होता है। फिर कुण्डलिनी शक्ति और तमोगुणी अहंकार जड़ स्वरूप को प्राप्त होकर पुनः अपने पूर्व अवस्था को प्राप्त हो गये अर्थात फिर क्रियाशील हो गये। इसका अर्थ है- हमारी अवस्था में गिरावट आ गयी अर्थात मैं निम्न अवस्था में आ गया हूँ। वर्तमान समय में पुस्तक लिखने का निर्णय किया। पुस्तक को लिखना अज्ञानता के अन्तर्गत आता है, अज्ञानता के अन्तर्गत आने के कारण क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति और तमोगुणी अहंकार का प्राकट्य फिर हो गया, वही अनुभव में क्रमशः दिखाई दे रहे हैं। जब तक मैं अभ्यास के द्वारा पुनः ज्ञान की अवस्था में स्थित नहीं हो जाऊँगा अर्थात निरुद्धावस्था की निरन्तरता नहीं बनी रहेगी तब तक यही क्षुद्र कुण्डलिनी शक्ति और तमोगुणी अहंकार ही क्रियाशील रहेगा तथा अज्ञान की अवस्था में व्यवहार करता रहूँगा।

इन अनुभवों से स्पष्ट होता है कि अभ्यासी को अभ्यास के द्वारा ज्ञान की अवस्था की निरन्तरता बनाये रखनी चाहिये। जिस समय अभ्यास में कमी आयेगी अथवा ज्ञान की अवस्था की निरन्तरता टूट जायेगी, उस समय अभ्यासी को निम्नावस्था में आना होगा अर्थात उसकी अपरा-प्रकृति में अवस्था आ जायेगी। अपरा-प्रकृति अज्ञानता से युक्त वाली प्रकृति है। अभ्यासी को यह नहीं सोचना चाहिये कि मैंने यह अवस्था प्राप्त कर ली है, अमुक अवस्था सदैव बनी रहेगी। इसके लिए उसे निरन्तर अभ्यास करते रहना होगा, निरन्तरता टूटने पर पतन निश्चित है।

साधकों! अब प्रश्न उठता है, क्या समाज के लिए या साधकों के लिए कल्याण हेतु पुस्तक लिखना, मार्गदर्शन करना, शिविर आदि लेना उचित नहीं है? उत्तर- जिस अभ्यासी की अवस्था अपरा-प्रकृति के अन्तर्गत है, ज्ञान प्राप्त नहीं है, अभी उनके चित्त पर ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य नहीं हुआ है, ऐसे अभ्यासियों को अपने चित्त की शुद्धता के लिए, तमोगुणी कर्मों को नष्ट करने के लिए, चित्त की मलिनता को स्वच्छ करने के लिए, ज्ञान प्राप्ति के लिए, अपने स्वरुप में स्थित होने के लिये किसी न किसी रूप में समाज व साधकों का कल्याण करते रहना चाहिए, इससे स्वयं अभ्यासी का भी कल्याण होता है तथा साधकों का भी कल्याण होता है। ऐसे गुरू या अभ्यासी को सतर्क भी रहना चाहिए कि परोपकार करते समय, शक्तिपात करते समय, संसारी मनुष्यों से व्यवहार करते समय धीरे-धीरे योगबल क्षीण होता रहता है। इस योगबल को बनाए रखने के लिये उस गुरू या अभ्यासी को कठोर अभ्यास करते रहना

चाहिए। मगर कुछ मार्गदर्शकों को देखा है- वह साधकों से या समाज वालों से आश्रम या संस्था चलाने के नाम पर मोटा धन लेते रहते हैं, ऐसे गुरू या मार्गदर्शक पतन को प्राप्त होते हैं। कुछ गुरू या मार्गदर्शक ढेरों सुख सुविधाओं से युक्त रहते हैं ऐसे गुरू या मार्गदर्शक की अध्यात्म में कितनी योग्यता होगी, मुझे मालूम नहीं है।

मैं ये जानता हूँ कि अपने स्वरूप में स्थित होने के लिए, ईश्वर प्राप्ति के लिये, निर्वाण प्राप्ति के लिए, ईश्वर के लोक में जाने के लिए अभ्यासी को निरन्तर कठोर अभ्यास और धीरे-धीरे क्रमशः सांसारिक इच्छाओं का त्याग, स्थूल पदार्थों का त्याग, अनावश्यक धन व सुख सुविधाओं का त्याग करना ही होगा। तभी अभ्यासी का चित्त शुद्ध होकर अंतिम जन्म में ऋतम्भरा-प्रज्ञा का प्राकट्य होगा, तब प्रज्ञा के ज्ञान के प्रकाश से चित्त धीरे-धीरे अज्ञानता से मुक्त होगा। उस समय अभ्यासी को क्लेशात्मक कर्म भी भोगने पड़ेंगे, इन क्लेशात्मक कर्मों को भोगते समय घर-परिवार, रिश्तेदार, मित्र व समाज के शुभचिंतकों के वास्तविक स्वरूप का भान हो जाएग। इसके बाद अपरा-प्रकृति का आवरण नष्ट होने पर परा-प्रकृति के अवतरित होने पर परा-प्रकृति (ईश्वर के लोक) के प्राप्ति के योग्य होंगे। ज़रा भी ईश्वर उन्मुख की निरन्तरता टूटने पर निम्नावस्था उपस्थित हो जायेगी। जैसे वर्तमान में मेरी निम्नावस्था उपस्थित हो गयी है क्योंकि अब मैं अपने अनुभवों की पुस्तक लिखने लगा हूँ।

मुझे कुछ वर्षों पूर्व कहा गया था आप सिर्फ पाँच साधक ही बनाये अर्थात सिर्फ पाँच साधकों का ही मार्गदर्शन करें। मैं कई साधकों का मार्ग दर्शन करने लगा हूँ, ऐसा मैंने जीवों के कल्याण के लिए किया है। इसके बाद मुझे दिसम्बर 2018 तक मार्गदर्शन करने की आज्ञा मिली थी, फिर भी मैं शिविर करता रहा। इसके बाद दिव्यशक्ति मुझसे नाराज हो गयी, उन्होंने भूलोक पर रहने की उम्र भी बढ़ा दी, यह मुझे दण्ड दिया गया। अब मैंने शिविर करने बन्द कर दिये हैं। लेकिन पुस्तक लिखने के कारण मेरी आध्यात्मिक अवस्था नीचे की ओर अर्थात अपरा-प्रकृति के अंतर्गत आ गयी है। यह अवस्था अज्ञानता के अंतर्गत आती है। ऐसी अवस्था में क्षुद्र कुण्डलिनी और तमोगुणी अहंकार का प्राकट्य होना जरूरी है क्योंकि इन दोनों का सम्बन्ध अपरा-प्रकृति से ही है। जब मैं अपरा-प्रकृति से सम्बंधित कार्यों से मुक्त हो जाऊँगा, तब फिर ये दोनों जड़ अवस्था को प्राप्त हो जायेंगे। फिर महाकुण्डलिनी और सात्विक अहंकार का प्राकट्य हो जायेगा।

दो मुँह वाला तमोगुणी अहंकार

यह अनुभव ध्यानावस्था में 8 फरवरी को सुबह आया। ध्यानावस्था में हमारे सामने थोड़ी दूरी पर एक काला सा नाग कुण्डली मारे फन ऊपर की ओर उठाए हुए है। इस नाग के दो मुँह है, दोनों मुँह पश्चिम दिशा की ओर देख रहे हैं। मैं इस नाग को गौरपूर्वक देख रहा था। नाग के दोनों मुँह लगभग एक फीट के बाद आपस में जुड़ गये थे अर्थात नाग का धड़ एक ही था। यह नाग बड़ी सी कुण्डली मारे दोनों फन चौड़े किये हुए पश्चिम दिशा की ओर देख रहा था। दोनों फन एक दो बार धीरे से लहराये फिर शान्त हो गये। कुछ क्षणों तक इस काले नाग को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दो मुँह वाला काला नाग हमारा ही तमोगुणी अहंकार का प्रतीक है। यह अहंकार अर्थात नाग कुण्डली मारे हुए शान्त भाव से पश्चिम दिशा की ओर देख रहा था। अर्थात तमोगुणी अहंकार सृष्टि उन्मुख हुआ कुण्डली मारे बैठा हुआ था। वह नाग हलचल बिल्कुल नहीं कर रहा था अर्थात अपना प्रभाव नहीं दिखा रहा था। उसके दोनों फन एक दो बार धीरे से लहराये अर्थात तमोगुणी अहंकार ने थोड़ी सी हलचल की थी। अब इस हलचल का प्रभाव हमारे जीवन में एक-दो बार अवश्य पड़ेगा। इसका अर्थ है- मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू कर दिया है। हमारे द्वारा इस पुस्तक का लिखा जाना ही अध्यात्म में पतन हो जाना है, क्योंकि पुस्तक का लिखा जाना अज्ञानता के अन्तर्गत आता है। अज्ञानता का अर्थ है हमारा अपरा-प्रकृति से सम्बंधित कार्य को करना। अपरा-प्रकृति में तमोगुणी अहंकार क्रियाशील रहता है क्योंकि मनुष्य का चित्त अपरा-प्रकृति के द्वारा बनता है। अपरा-प्रकृति में गुण परिणामी अवस्था में रहते हैं इसी प्रकार मनुष्य का चित्त परिणामी होता है। चित्त परिणामी होने के कारण चित्त पर किसी भी प्रकार की हलचल होने पर तमोगुणी अहंकार बहिर्मुख होने लगता है। मेरे द्वारा पुस्तक लिखे जाने के कारण चित्त पर हलचल हुई है इसीलिये तमोगुणी अहंकार बहिर्मुख होकर इस रूप में दिखाई दे रहा है, मगर वह शांत सा है यह महत्वपूर्ण बात है। मेरे द्वारा पुस्तक लिखने के बाद फिर अन्तर्मुखी होकर जड़ रूप में परिवर्तित हो जायेगा, क्योंकि अपरा-प्रकृति जड़ स्वरूप वाली है। दो मुँह का अर्थ है - तमोगुणी अहंकार दो स्वरूपों में बहिर्मुख होने लगता है **एक-** ग्राह्य रुप में, **दूसरा-** ग्रहण रुप में। इसलिए अनुभव में काला नाग दो मुँह वाला दिखाई दे रहा है। उस नाग के दोनों मुँह लगभग एक फीट बाद एक ही धड़ में जुड़े हुए थे अर्थात धड़ एक था, मुँह दो थे।

सत्वगुणी अहंकार

यह अनुभव 15 फरवरी सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- मेरे सामने आकाश में विशालकाय नाग अपना फन ऊपर की ओर उठाये हुए मेरी ओर देख रहा था। इस नाग को देखकर मैं समझ गया था यह सत्वगुणी अहंकार है। उस नाग का फन का नीचे वाला भाग मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा था, क्योंकि नाग का नीचे वाला शरीर का हिस्सा फन ऊपर उठाए होने के कारण मेरी ओर था। मैं उस नाग को टकटकी लगाकर देख रहा था और उसे देखकर मुस्कुरा रहा था। धीरे-धीरे नाग के शरीर में परिवर्तन होने लगा। फन के नीचे वाला क्षेत्र धीरे-धीरे स्वच्छ होकर चमकने लगा, ऐसा लग रहा था मानो उसका शरीर स्वच्छ होकर स्फटिक मणि के समान होने लगा है। ऐसा उसके शरीर के थोड़े ही क्षेत्र में हुआ था। कुछ क्षणों बाद उसका शरीर और ज्यादा नीचे की ओर स्वच्छ होने लगा, वह क्षेत्र भी मणि के समान चमकने लगा। नाग अपना फन ऊपर उठाए हुए मेरी ओर टकटकी लगाकर मुझे देख रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैं सत्वगुणी अहंकार के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- आज फिर सत्वगुणी अहंकार का नाग के रूप में दर्शन हो गया। नाग थोड़ी दूरी पर अपना फन उठाए मेरी ओर देख रहा था। नाग के शरीर का निचला भाग, जो जमीन पर चलते समय जमीन से चिपक कर रगड़ता है और पसलियाँ सी दिखाई देती है, वह शरीर का भाग फन से नीचे का शुद्ध हो रहा था और स्वच्छ स्फटिक मणि के समान चमकने लगा था क्योंकि सात्विक अहंकार स्वच्छ होने की यह एक प्रक्रिया थी। साधक को कभी उच्चावस्था उपस्थित हो जाती है तो कभी निम्न अवस्था उपस्थित हो जाती है।

चित्त का स्वरुप शिवलिंग के रूप में

यह अनुभव 16 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। ध्यान के अंतिम समय में देखा- सम्पूर्ण चित्त में जलाधारी विद्यमान थी। उस जलाधारी के मध्य में शिवलिंग बड़े आकार में विद्यमान था। मैं यह दृश्य देखकर थोड़ा आश्चर्य चकित हुआ, क्योंकि मैं पहली बार सम्पूर्ण चित्त को शिवलिंग के रूप में देख रहा हूँ। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया, मैंने अपनी आँखें खोल दी।

फिर दुबारा इसी तरह का अनुभव 17 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। अनुभव में देखा- सम्पूर्ण चित्त जलाधारी और शिवलिंग के स्वरूप वाला हो गया। मैं दृष्टा रूप में दृश्य को देख रहा था। इसी तरह का अनुभव कल भी देखा था।

अर्थ- दोनों अनुभव एक समान ही थे। इन अनुभवों में पहली बार मैंने देखा कि हमारा चित्त पूर्ण रूप से शिवलिंग के रूप में परिवर्तित हो गया। वैसे मैं पहले लिख चुका हूँ कि चित्त और अपरा-प्रकृति का स्वरूप शिवलिंग के ही समान होता है।

मानव आकृति का पारदर्शी आवरण

यह अनुभव 25 फरवरी को सुबह आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मेरे सामने कुर्सीनुमा जगह पर एक मानव बैठा हुआ है, उसके दाहिने पैर का घुटना मेरे नजदीक था। मैं अपने हाथों से उसके पैर के घुटने के ऊपर चढ़े पारदर्शी मजबूत आवरण को अपने हाथों से उखाड़ने लगा। आवरण बहुत मजबूत था, इसलिये शुरूआत में उँगलियों का जोर लगाना पड़ा था तब वह आवरण फाड़ पाया। फिर मैं बड़े आराम से आवरण को फाड़ने लगा। आवरण शरीर के ऊपर की ओर का धीर-धीरे अलग करने लगा। पैर के घुटने से कमर की ओर का आवरण निकालने लगा। इस दृश्य में एक बहुत बड़ा आश्चर्य था- आवरण इतना ज्यादा स्वच्छ व पारदर्शी था कि शरीर के अन्दर के अंग स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। जैसे शरीर के अन्दर की हड्डियां, आँतें, लीवर, दिल, पसलियाँ, नाड़ियाँ आदि। ये सभी अंग अपने सुचारू ढंग से कार्य कर रहे थे। मैं एकदम स्वच्छ पारदर्शी आवरण को निकालता जा रहा था। मैंने गले तक आवरण को निकाल दिया था, फिर कमर से बाँये पैर की ओर का आवरण निकालने लगा। मैं पेट के क्षेत्र के अंगों को देख रहा था कि किस प्रकार से कार्य करते हैं। मैं ये दृश्य देखता हुआ बाँये पैर का आवरण निकाल रहा था तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में बहुत अच्छा दृश्य था। मैंने अनुभव में देखा- मनुष्य के शरीर के अन्दर के अवयव (अंग) कैसे सुचारु रूप से कार्य करते हैं, यह इस अनुभव में स्पष्ट दिखाई दिया। ऐसा लग रहा था- स्वच्छ काँच के अन्दर मनुष्य के शरीर के आंतरिक अंग विधिवत (व्यवस्था पूर्वक) कार्य कर रहे हैं अर्थात मानव शरीर पूरी तरह से पारदर्शी था। उसके ऊपर चढ़े पारदर्शी आवरण को मैं निकालने में लगा

था। मैं बाँये पैर का आवरण निकाल रहा था क्योंकि पूरे शरीर का आवरण निकाल चुका था, फिर अनुभव समाप्त हो गया। इस अनुभव के अनुसार हमारे स्थूल शरीर की स्वच्छता ज्यादा बढ़ेगी।

अस्मिता

यह अनुभव 27 फरवरी को आया। मैंने सुबह ध्यानावस्था में देखा- एक नाग का सिर्फ मुँह अण्डाकार आवरण के अन्दर बन्द था। नाग के मुँह की आँखे हमारी ओर देख रही थी। आवरण अत्यन्त पारदर्शी था अन्दर का क्षेत्र प्रकाशित था। मैं इस दृश्य को देखते ही इस नाग के मुँह का अर्थ समझ गया था। कुछ क्षणों तक मैं इस दृश्य को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अध्यात्म में इस तरह नाग का मुँह दिखाई देने का अर्थ है - यह हमारी ही अस्मिता है। नाग अहंकार का प्रतीक होता है, सिर्फ नाग के मुँह का दर्शन अस्मिता होती है।

शिवछिद्र

यह अनुभव 27 फरवरी को सुबह ध्यानावस्था में आया। यह अनुभव पहले लिखे अनुभव के बाद आया। ध्यान में मुझे अपने सिर के ऊपर आकाश में छिद्र दिखाई दिया। छिद्र बहुत बड़ा था। छिद्र के उस पार का क्षेत्र दिखाई दे रहा था, उस पार अत्यन्त स्वच्छ आकाश था, वह आकाश स्वप्रकाशित था। यह छिद्र हमारे सिर के ऊपर मात्र एक फीट ऊपर था। सिर के पास इतना नजदीक यह छिद्र पहली बार देखा है। अनुभव मात्र थोड़ी देर ही आया। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला छिद्र शिवछिद्र ही है। यह शिवछिद्र अनुभव में कभी सामने की ओर दिखाई देता है, तो कभी ऊपर की ओर दिखाई देता है। अबकी बार शिवछिद्र सिर के ऊपर बहुत नजदीक दिखाई दिया। वैसे यह छिद्र हमारे सिर के ऊपरी भाग में स्थित है।

हृदय गुफा के द्वार पर पर्दा

यह अनुभव 6 मार्च को ध्यानावस्था में आया। ध्यान में मुझे हृदय गुफा के द्वार पर हल्के काले रंग का पर्दा लटका दिखाई दिया। पहले हृदय गुफा के अन्दर कई बार गया हूँ। हृदय गुफा के अन्दर के कई अनुभव लिखे हैं। कुछ क्षणों तक हृदय गुफा के द्वार पर लटके कपड़ेनुमा पर्दे को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- पहले अनुभवों में हृदय गुफा के अन्दर कई बार प्रवेश किया है। गुफा के अन्दर के कुछ अनुभव मैंने इस पुस्तक में लिखे हैं। इस अनुभव में हृदय गुफा के अन्दर का दृश्य नहीं देख सका, क्योंकि हृदय गुफा के द्वार पर पर्दा रूपी अहंकार का आवरण उपस्थित हो गया है। इसका अर्थ है- इस समय मैं इस पुस्तक को लिख रहा हूँ, यह कार्य अज्ञानता के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त मैं संसारियों से मिलजुल रहा हूँ इसलिए कुछ समय के लिये मेरी अवस्था नीचे की ओर आ गयी है। इसलिए हृदय गुफा के द्वार पर पर्दारुपी अहंकार विद्यमान हो गया है। कुछ दिनों में फिर आवरण हट जायेगा क्योंकि मैं संसार से व्यवहार करना बन्द कर दूँगा।

साधको! मैंने यह अनुभव इसलिये लिखा है ताकि आप सभी शिक्षा ले सकें। वर्तमान में मेरी अवस्था अध्यात्म में सर्वोच्च स्थान पर है। अगर मैं अभ्यास की निरन्तरता बनाकर नहीं रखूँगा एवं मानसिक रूप से संसार के त्याग में निरन्तरता बनाकर नहीं रखूँगा, तो मेरी अवस्था थोड़ी सी नीचे अहंकार के स्तर पर आ जायेगी। हो सकता है कल परसों में मेरी अवस्था फिर सर्वोच्च स्थान पर हो जायेगी। इसका कारण है सर्वोच्च स्थान पर मेरी स्थिरता है अर्थात कुछ समय के लिये निम्न अवस्था में आ गया हूँ संसार में व्यवहार करने के कारण ऐसा हुआ है। संसार में व्यवहार रुकते ही फिर अपने पूर्व अवस्था में स्थित हो जाऊँगा। इसलिए साधकों अभ्यास में निरन्तरता बनाये रखो, अगर आपकी साधना का पतन हुआ, अथवा निम्न अवस्था को प्राप्त हो गये तो आपको अपनी पहले की अवस्था प्राप्त करने में कुछ ज्यादा समय लग जायेगा। इसका यह कारण है- हमारा चित्त ज्ञान के प्रकाश से युक्त है क्योंकि लगभग 25 वर्ष हो गये हैं ऋतम्भरा-प्रज्ञा का चित्त पर प्राकट्य हुए एवं हमारा चित्त कर्माशयों से शून्य हो गया है, इसलिये मैं चाहे जितना संसार में व्यवहार करूँ फिर भी कुछ समय में ही अपनी पूर्व अवस्था को प्राप्त कर लूँगा। मगर आप नये साधक हैं, आपका चित्त अज्ञान से युक्त है, कर्माशयों का अम्बार लगा हुआ है। आपको कुछ ज्यादा समय लगेगा पूर्व अवस्था प्राप्त करने के लिये। साधकों इसलिए अभ्यास की निरन्तरता बराबर बनाए रखें।

तीतर पक्षी

यह अनुभव 12 मार्च को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर सर्वत्र सफेद उज्ज्वल बर्फ की अनगिनत छोटी-छोटी नोकदार चोटियाँ हैं। ऊपर की ओर आकाश है। मैं ऊँचे स्थान पर बैठा हुआ देख रहा हूँ। दृश्य ऐसा लग रहा है- ऊपर हल्का नीला चमकदार आकाश है, नीचे की ओर का क्षितिज दिखाई दे रहा है। नीचे की ओर सिर्फ सफेद बर्फ की चोटियाँ हैं, बर्फ के सिवाय और कुछ भी नहीं है। उन्हीं चोटियों में सबसे ऊपर की चोटी के ऊपर तीतर पक्षी बैठा हुआ है, मैं इस पक्षी को गौरपूर्वक देख रहा हूँ। तीतर बिलकुल शान्त बैठा हुआ है, वह किसी प्रकार से हिलडुल नहीं रहा है। मैं काफी समय तक उस तीतर पक्षी को देखता रहा, दृश्य बहुत ही अच्छा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में चित्त के नाम पर ऊपर की ओर आकाश और नीचे ओर सर्वत्र उज्ज्वल सफेद रंग की चोटियाँ थीं। ये चोटियाँ छोटी-छोटी अनगिनत थी। इन चोटियों में सबसे ऊपर की चोटी पर चुपचाप शांति से तीतर पक्षी बैठा हुआ था, वह पक्षी हिलडुल भी नहीं रहा था।

तीतर पक्षी के विषय में कुछ लोग नकारात्मक जैसा बोलते है, मगर कुछ जगहों पर तीतर पक्षी के विषय में सकारात्मक लिखा मिलता है। तीतर को मोह-माया का प्रतीक माना गया है। तीतर अपने आसपास के वातावरण के प्रति बेहद जागरुक होता है जो आध्यात्मिक खोज में सतर्क रहने का सन्देश देता है। तैत्तिरीय उपनिषद के कथा के अनुसार जब ज्ञान का अपमान हुआ तो शिष्यों ने तीतर पक्षी बनकर उस ज्ञान को ग्रहण किया जो ज्ञान के प्रति समर्पण को दर्शाता है। बौद्ध धर्म में तीतर की मृत्यु को बोधिसत्व के लिये एक चिंतन बिन्दु माना गया है, जो जीवन की नश्वरता को दर्शाता है।

शिवलिंग के ऊपर का जाल नष्ट हुआ

यह अनुभव 12 मार्च को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- मेरे सामने थोड़ी दूरी पर मुझे बड़ा सा शिवलिंग दिखाई दिया। इस शिवलिंग को देख कर मैं आश्चर्यचकित हो गया। आश्चर्यचकित होने का कारण यह था- उस बड़े से शिवलिंग के ऊपर पतली रस्सी द्वारा बुना हुआ जाल दिख रहा था अर्थात रस्सी के मजबूत जाल के अन्दर शिवलिंग विद्यमान था। मैं जाल को गौरपूर्वक देख रहा था। उसी समय मैंने विष्णु मंत्र का जाप करना शुरू कर दिया। कुछ समय तक मंत्र का प्रभाव जाल पर नहीं पड़ा, फिर मंत्र

का प्रभाव जाल पर पड़ने लगा। शिवलिंग धीरे-धीरे नीचे की ओर जाने लगा, जाल अपनी जगह पर विद्यमान था। कुछ क्षणों बाद शिवलिंग नीचे की ओर चला गया, अब मुझे सिर्फ रस्सी का बुना हुआ मजबूत जाल दिखाई दे रहा था। मैं बराबर भगवान विष्णु जी का मंत्र बोल रहा था। अब जाल धीरे-धीरे ऊपर की ओर आने लगा। सम्पूर्ण जाल ऊपर की ओर गया। जाल गोलाकार रूप में एक मीटर के आस-पास लम्बाई वाला होगा, उसके अन्दर का व्यास एक-डेढ़ फीट रहा होगा। अब मेरे सामने जाल विद्यमान था, मंत्र के प्रभाव से जाल छिन्न-भिन्न होने लगा, मैं यह दृश्य देखकर मुस्करा रहा था। कुछ समय बाद जाल छिन्न-भिन्न होकर अदृश्य हो गया। मैं भगवान विष्णु जी मंत्र बराबर बोल रहा था फिर शिवलिंग धीरे-धीरे ऊपर की ओर आकर मेरे समने ठहर गया। शिवलिंग का ऊपरी भाग ढक्कन की तरह खुल कर अदृश्य हो गया। अब मुझे दिखाई देने लगा शिवलिंग अन्दर से पोला है। शिवलिंग के आस-पास पानी जैसा तरल पदार्थ प्रकट होकर शिवलिंग के अन्दर समा रहा था। कुछ समय तक मैं यही दृश्य देखता रहा, मगर उस तरल पदार्थ से शिवलिंग के अन्दर का भाग भर नहीं रहा था, बल्कि तरल पदार्थ शिवलिंग के अन्दर समा रहा था कुछ समय बाद ऐसा दिखाई देने लगा कि शिवलिंग का स्वरूप टूट कर छिन्न-भिन्न हो जायेगा। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- मैं पहले लिख चुका हूँ- शिवलिंग अपरा-प्रकृति और चित्त का स्वरूप होता है। अनुभव में दिखाई देने वाला शिवलिंग चित्त का स्वरूप है। मैं भगवान विष्णु के मंत्र का जाप कर रहा था। शिवलिंग के ऊपर रस्सी का बना हुआ जाल विद्यमान था। उस जाल को मैं गौरपूर्वक देख रहा था। कुछ समय बाद मंत्र का प्रभाव उस जाल पर पड़ने लगा। मंत्र के प्रभाव से शिवलिंग नीचे की ओर जाने लगा। फिर शिवलिंग के ऊपर विद्यमान रस्सी का जाल शिवलिंग को त्यागकर ऊपर की ओर आने लगा। उस जाल की लम्बाई लगभग एक मीटर रही होगी और उस जाल का व्यास एक-डेढ़ फीट रहा होगा। फिर मंत्र के प्रभाव से जाल छिन्न-भिन्न होकर अदृश्य हो गया। फिर शिवलिंग ऊपर की ओर आकर तरल पदार्थ शिवलिंग के अन्दर समाने लगा। शिवलिंग के आसपास विद्यमान पानी जैसा तरल पदार्थ है वह हमारे ही चित्त पर स्थित सात्विक कर्म है। तरल पदार्थ शिवलिंग को अन्दर से भर नहीं पा रहा था। चित्त पर स्थित सात्विक कर्मों को जब मैं भोग कर (सात्विक कार्य करके) समाप्त कर दूँगा तब शिवलिंग का स्वरूप टूट कर छिन्न-भिन्न हो जायेगा। पहले अनुभव में (5 फरवरी 2025 में) दिखाई दिया था- प्रकृति का आवरण टूट गया था। आवरण का जो टूटा हुआ अवशेष शेष रह गया था, वह अवशेष भोग कर समाप्त करना है। वर्तमान समय में वही अवशेष भोगकर समाप्त कर रहा हूँ।

ऋतम्भरा-प्रज्ञा

यह अनुभव 25 मार्च को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- सिर के ऊपर थोड़ी ऊँचाई पर स्वप्रकाशित आकाश में अत्यंत तेजस्वी ऋतम्भरा-प्रज्ञा दिखाई दे रही थी। यह प्रज्ञा अत्यंत निर्मल व तेजस्वी थी, ऐसी तेजस्वी प्रज्ञा जीवन में पहली बार दिखाई दी थी। महत्वपूर्ण बात यह है- यह प्रज्ञा सिर के ऊपर की ओर दिखाई दे रही थी, जबकि अभी तक ऋतम्भरा-प्रज्ञा सिर के ऊपर नहीं, बल्कि सामने की ओर, दाहिनी ओर, बाईं ओर और पीछे की ओर दिखाई देती थी। यह अनुभव क्षणिक देर के लिये हुआ था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में ऋतम्भरा-प्रज्ञा सिर के ठीक ऊपर की ओर थोड़ी दूरी पर दिखाई दी थी, जबकि अभी तक ऋतम्भरा-प्रज्ञा पूर्व दिशा की ओर, पश्चिम दिशा की ओर, उत्तर दिशा की ओर और दक्षिण दिशा की ओर दिखाई देती थी। इनका स्वरूप इतना तेजस्वी नहीं होता था। इस प्रज्ञा का स्वरूप अत्यंत तेजस्वी आँखों को चकाचौंध कर देने वाला था। वर्तमान समय में प्रज्ञा का स्वरूप दिखाई देना बंद हो गया था। बहुत समय बाद यह ऋतम्भरा-प्रज्ञा बहुत ही तेजस्वी दिखाई दी थी।

मुझे ऐसा लगता है यह ऋतम्भरा-प्रज्ञा परा-प्रकृति के क्षेत्र में दिखाई दी थी, क्योंकि पहले अनुभव के अनुसार मेरा चित्ताकाश और चिदाकाश आपस में मिलकर एक हो गये थे। अर्थात मेरा चित्त ईश्वर के चित्त में अन्तर्मुखी हो गया था। यह हमारी आध्यात्मिक अवस्था में गति है, अभी स्थिति नहीं है। फिर भी समाधि अवस्था में ईश्वर के चित्त में कुछ समय के लिए अन्तर्मुखी रहता हूँ। मेरा अनुमान है इस ऋतम्भरा-प्रज्ञा के प्रभाव से अपरा-प्रकृति के आवरण के शेष पदार्थ की शीघ्र ही नष्ट होने की प्रक्रिया पूर्ण हो जायेगी।

परा-प्रकृति ने कमल का फूल दिया

यह अनुभव 31 मार्च का है। मैं कुर्सी पर बैठा हुआ था, सामने रखी मेज़ पर दोनों हाथों की कोहनी मेज पर टिकी हुई थी। दोनों हाथों की हथेलियाँ अपने मुँह पर लगाये हुए था। हमारा स्थूल शरीर थोड़ा सा आगे की ओर झुका हुआ था। मेरी आँखें बंद थीं, मैं चुपचाप बिल्कुल शांत था। तभी मैंने देखा- सामने की ओर से 16-17 साल की स्त्री साड़ी पहने हुए मेरी ओर चली आ रही है। मेरे सामने थोड़ी दूरी

पर आकर खड़ी हो गयी। वह स्त्री हल्के नीले रंग की चमकदार साड़ी पहने हुए थी, उसकी साड़ी विलक्षणता को लिए हुए थी। वह स्त्री बहुत ही सुन्दर थी। उसके दाहिने हाथ में बहुत ही सुन्दर कमल का फूल था। उस स्त्री ने कमल का फूल मेरे आगे की ओर बढ़ा दिया।

मेरी आँखें बंद थी मगर मैं जाग्रत अवस्था में था। उस स्त्री द्वारा कमल का फूल मेरी ओर बढ़ाने पर मैं अपने मन के अन्दर बोला- मैं यह कमल का फूल अपने हाथों में कैसे ले सकता हूँ, क्योंकि मैं जाग्रत अवस्था में बैठा हुआ हूँ, मेरे हाथ कोहनी के सहारे मेज पर रखे हुए हैं। मुझे दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि एक सुन्दर स्त्री मुझे कमल का फूल दे रही है। फिर मैंने आँखें बंद किए हुए ही, अपना दाहिना हाथ मेज से हटाकर आगे की ओर बढ़ा दिया। जैसे ही मैंने अपना दाहिना हाथ आगे की ओर बढ़ाया, उसी समय उस स्त्री के हाथ से कमल का फूल अदृश्य हो गया। इस दृश्य को देखकर मैं मुस्कुराया। इसका अर्थ यही समझा कि मैंने अपने दाहिने हाथ में कमल का फूल पकड़ लिया है। अनुभव में ऐसा नहीं दिखाई दिया था कि मैंने कमल का फूल पकड़ लिया है। कुछ क्षणों तक मैं उस अत्यंत सुन्दर स्त्री को देखता रहा, फिर वह स्त्री अदृश्य हो गयी। फिर अनुभव समाप्त हो गया, मैंने अपनी आँखें खोल दी। अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- यह अनुभव जाग्रत अवस्था में आया है। मैं सिर्फ आँखें बंद किये हुए कुर्सी पर बैठा था। वह स्त्री हल्के नीले रंग की चमकदार विलक्षणता से युक्त साड़ी पहने हुए थी। उसकी उम्र 16-17 साल की लड़की की तरह लग रही थी। यह अति सुन्दर स्त्री परा-प्रकृति है क्योंकि अपरा-प्रकृति हमारे लिए नष्ट हुए के समान हो चुकी है। अब अपरा-प्रकृति के आवरण का कुछ अवशेष ही चित्त पर विद्यमान है, उसी अवशेष को नष्ट करने के लिए वर्तमान समय में भोग कर रहा हूँ। कमल का फूल बहुत ही सुन्दर था, उसमें बहुत सी पंखुड़ियाँ थी। कमल के फूल की पंखुड़ियों को गिना नहीं जा सकता था। इस प्रकार कमल का फूल दिया जाना अत्यंत शुभ माना जाता है। इसका अर्थ कुछ इस प्रकार है- **1-** उच्च अवस्था वाली बुद्धि और ज्ञान का प्राप्त होना। **2-** विपरीत परिस्थितियों में भी सफलता प्राप्त होने व परिश्रम सार्थक होने का संकेत है। **3-** सांसारिक मोह-माया से ऊपर उठकर परम शांति की ओर अग्रसर होने का संकेत माना जाता है।

इस अनुभव की आश्चर्यजनक बात यह थी- यह अनुभव मैं जाग्रत अवस्था में देख रहा था। मुझे यह याद था मैं कुर्सी पर बैठा हुआ हूँ। मेरे आगे मेज रखी हुई थी मेज पर हाथों की कोहनी रखें हुए था दोनों हाथों की हथेलियाँ मुँह पर थी। फिर आँखें बन्द किये हुए ही अपना स्थूल हाथ आगे की ओर

बढ़ाया था, हमारा स्थूल शरीर उस समय जाग्रत अवस्था में था। वह परा-प्रकृति अपने क्षेत्र में (महाकारण जगत में) थी। उस समय दोनों की अवस्थाओं में भारी अंतर था, इसलिए आँखें बन्द होने पर वह मुझे दिखाई दे रही थी। मैंने अपना हाथ सिर्फ अन्दाज से आगे की ओर बढ़ाया, तभी कमल का फूल अदृश्य हो गया। अर्थात मैंने उसे ग्रहण कर लिया है, ऐसा मेरा सोचना है।

कुछ भी हो एक बात निश्चित है कि परा-प्रकृति द्वारा कमल का फूल दिये जाने से यह तय हो गया है कि मैं भविष्य में अपरा-प्रकृति को पूर्ण रूप से त्याग दूँगा। फिर परा-प्रकृति में ज्यादा समय तक अंतर्मुखी रहने का अभ्यास करता रहूँगा।

कछुए का स्वरूप

यह अनुभव 10 अप्रैल को आया। मैंने ध्यानावस्था में देखा- सर्वत्र अत्यंत स्वच्छ निर्मल आकाश है। इस निर्मल आकाश में दूर से कोई वस्तु मेरी ओर चली आ रही है। कुछ क्षणों बाद नजदीक आने पर स्पष्ट हो गया कि एक छोटा सा कछुआ मेरी ओर चला आ रहा है। उसका शरीर अत्यंत जीर्ण-शीर्ण है, उसके सभी पैरों की मोटाई माचिस की तीली के समान है, उसका मुँह दुबला-पतला बुड्ढा सा है। मैं कछुए के स्वरूप को देखकर मुस्कुराया, कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- कछुआ इन्द्रियों का प्रतीक होता है। अब हमारी इन्द्रियों का स्वरूप इसी तरह से दुबला-पतला जर्जर सा है क्योंकि इस समय अपरा-प्रकृति के आवरण को नष्ट कर रहा हूँ। ये इन्द्रियाँ संसार की ओर बहिर्मुखी रहती हैं और सांसारिक पदार्थों का भोग कराती रहती हैं। अब इन इन्द्रियों का स्वरूप नष्ट हुए के समान जैसा होने लगा है, क्योंकि इनका स्वरूप धीरे-धीरे कमजोर होता जा रहा है।

कछुए को कुचला जा रहा है

यह अनुभव 13 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा स्वच्छ निर्मल आकाश है। उसी आकाश में कछुए को तीन-चार इंच चौड़ी पारदर्शी फन्टी से कुचला जा रहा है। कछुए को कुचलने वाला कोई दिखाई नहीं दे रहा है। पारदर्शी फन्टी कछुए की पीठ पर जोर से दबाव दे रही है अर्थात उसे फन्टी द्वारा कुचला जा रहा है। उस कछुए के शरीर से हरे रंग का गाढ़ा पदार्थ निकल रहा है। कछुए को कुचल-

कुचल कर बुरा हाल किया जा रहा है। कछुए का शरीर कुचल-कुचल कर लुगदी जैसा बनाया जा रहा है, फिर उसका शरीर हरे रंग के गाढ़े तरल पदार्थ के रूप में बदलने लगा। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में निर्मल आकाश में कछुए को तीन-चार इंच चौड़ी पारदर्शी फन्टी बुरी तरह से कुचल रही है। इस फन्टी को कोई पकड़े नहीं है। यह दृश्य मैं देख रहा हूँ- कछुए के शरीर से हरे रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ निकल रहा है। ऐसा हरे रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ कुछ दिन पूर्व अनुभव (5 फरवरी 2025) में दिखाई दिया था, जब अपरा-प्रकृति का आवरण बिल्कुल छोटा सा रह गया था। फिर वह आवरण फटकर हरे रंग के गाढ़े तरल पदार्थ के रूप में परिवर्तित होकर वहीं पर एकत्र हो गया था। यह गाढ़ा तरल पदार्थ और कछुए के शरीर से निकला गाढ़ा तरल पदार्थ, अर्थात दोनों तरल पदार्थ बिल्कुल एक जैसे थे। इस हरे रंग के गाढ़े तरल पदार्थ में जल तत्व की प्रधानता विद्यमान है। इसी जल तत्व की प्रधानता से जिव्हा (जीभ) नाम की ज्ञानेन्द्रिय और जननेन्द्रिय नाम की कर्मेन्द्रिय का प्राकट्य हुआ है।

निर्मल आकाश हमारा ही चित्ताकाश है। कछुआ हमारी इन्द्रियों का प्रतीक है। इस कछुए को फन्टी से दबाव देकर कुचला जा रहा है ताकि कछुए का शरीर नष्ट हो जाये, इससे इन्द्रियों का स्वरूप नष्ट हुए के समान हो जाये। इन इन्द्रियों का प्राकट्य तमोगुण की प्रधानता से होता है। अभ्यास के द्वारा तमोगुण के धीरे-धीरे नष्ट हो जाने पर इन्द्रियाँ नष्ट हुए के समान हो जाती हैं। ऐसी अवस्था में सत्व गुण प्रधान इन्द्रियों का प्राकट्य होता है। ऐसा सिर्फ अन्तिम जन्म में बदलाव होना सम्भव होता है। इन्द्रियों के नष्ट हुए के समान वाली अवस्था धीरे-धीरे ही अभ्यास के द्वारा होगी, उस समय अभ्यासी को अत्यंत क्लेशात्मक कर्म भोगने पड़ते हैं। फिर परा-प्रकृति का अवतरण धीरे-धीरे होकर उसके लिए अपरा-प्रकृति धीरे-धीरे अभ्यासानुसार शुद्ध होती जायेगी।

ग्राह्य और ग्रहण रूप में अहंकार

यह अनुभव 23 अप्रैल को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- भूमि पर एक साथ दो नाग फन उठाये हुए मेरी ओर देख रहे हैं। मैं इन दोनों नागों को गौरपूर्वक देख रहा था। तभी मुझे आश्चर्य हुआ क्योंकि दोनों नागों का एक ही शरीर था, अर्थात एक ही नाग के दो फन थे। फन वाले भाग एक-एक फीट लम्बे रहे होंगे, बाद में उन दोनों का एक ही शरीर था। इन नागों का पूँछ वाला भाग मिट्टी का बना हुआ भूमि के रूप में विद्यमान था अर्थात नाग का आधा शरीर मिट्टी की भूमि वाला था और आधा शरीर दो

फन वाले नाग के रूप में था। मैं नाग का एक फन गौरपूर्वक देख रहा था। फन के अन्दर सूखी मिट्टी भरी हुई थी। धीरे-धीरे नाग का फन नष्ट होने लगा। नष्ट होते समय फन के अन्दर सूखी भरी हुई मिट्टी एक ओर को गिरने लगी। इसी प्रकार दूसरे फन में भी क्रिया हो रही थी, मगर दूसरे फन में यह क्रिया धीरे-धीरे हो रही थी। नाग के शरीर की त्वचा अत्यंत सूखी सी शेष बची थी। अनुभव में ऐसा लग रहा था कि इस नाग के दोनों फनों की मिट्टी एक ओर गिरकर भूमि में मिल जायेगी। नाग के शरीर की त्वचा अत्यंत सूखी होने के कारण छोटे-छोटे कणों में परिवर्तित हो जायेगी।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला दो फनों का नाग, जिसका आधे से अधिक शरीर (पूँछ वाला भाग) भूमि के रूप में परिवर्तित हो गया था। यह अहंकार का ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप था। इसके दोनों फनों का स्वरूप भी मिट्टी रूप में परिवर्तित हो रहा था, क्योंकि दोनों फनों के और शरीर के अन्दर सूखी भुरभुरी मिट्टी भरी हुई थी। उनके शरीर की पतली त्वचा बहुत सूखी थी। ऐसा लग रहा था इसकी त्वचा भी छोटे-छोटे कणों में परिवर्तित होकर मिट्टी में मिल जायेगी। फिर इस नाग का सम्पूर्ण शरीर मिट्टी रूप में परिवर्तित हो जायेगा।

इस अनुभव से स्पष्ट होता है कि अहंकार का ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप मिट्टी के रूप में अर्थात जड़ता में परिवर्तित हो जायेगा। अभी अहंकार के ग्राह्य और ग्रहण स्वरूप चैतन्य से भाषित होते थे, अब जड़ स्वरूप में परिवर्तित हो जायेगा। अहंकार के इसी स्वरूप से सृष्टि की रचना हुई है। अहंकार में जब विकृति का प्राकट्य होता है तब अहंकार दो भागों में बँट जाता है, **एक**- ग्राह्य रूप में, **दूसरा**- ग्रहण रूप में। इसीलिए कहा जाता है- अहंकार ही अहंकार में बरत रहा है।

परम पवित्र पुरुष

ये शब्द मुझे ध्यानावस्था में 25 मई को सुनाई दिये थे। आकाशवाणी द्वारा सुनाई दिया-"हे परम पवित्र पुरुष, तुम अत्यंत परम पवित्र हो। तुम दु:ख की अनुभूति क्यों कर रहे हो, दु:ख का त्याग करो, दु:ख तुम्हारा स्वरूप नहीं है। जड़ प्रकृति का त्याग करो, ये नश्वर है। प्रकृति की जब इच्छा होगी, तब मंदिर बनवायेगी"। फिर आवाज आनी बन्द हो गयी। मैं गहराई में चला गया।

अर्थ- ध्यानावस्था में मुझे इस प्रकार के शब्द इसलिए कहे गये हैं, क्योंकि मैं वर्तमान समय में मन्दिर निर्माण का कार्य करवाना चाहता हूँ। बहुत समय हो गया इस मन्दिर के निर्माण कार्य में बहुत

अवरोध आ रहे हैं, इस कारण मुझे थोड़ी दु:ख की अनुभूति हो रही थी। इस मन्दिर को बनवाने के लिये मुझसे स्वयं भगवान शंकर जी ने कहा था और स्वयं प्रकृति देवी ने भी मुझसे कहा था- शिवलिंग की स्थापना करवाइये। इस विषय में मैं पहले लिख चुका हूँ। मैं जानता हूँ शिवलिंग अपरा-प्रकृति और चित्त का स्वरूप है। शिव (शंकर) नाम का देवता इस अण्डाकार पिण्ड (ब्रह्माण्डरूपी अपरा-प्रकृति) के कण-कण में व्याप्त है, इसीलिए इस पिण्ड का नाम शिवलिंग पड़ा। लिंग का अर्थ है- व्यक्त रूप में। अपरा-प्रकृति का एक नाम लिंग भी हैं, परा-प्रकृति को अलिंग कहते हैं। लिंग का अर्थ सूक्ष्म भी होता है। योग की भाषा में सूक्ष्म शरीर को लिंग शरीर भी कहते हैं।

कछुए का स्वरूप

यह अनुभव 25 मई को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा- सर्वत्र अत्यंत स्वच्छ निर्मल आकाश है। सामने की ओर दूर से एक विशेष तरह का प्राणी चला आ रहा है। मैं उस प्राणी को गौरपूर्वक देख रहा था। कुछ क्षणों बाद वह प्राणी मेरे नजदीक आ गया, तब मैं उस प्राणी को देखकर मन के अन्दर मुस्कुराने लगा, क्योंकि वह प्राणी एक कछुआ था। मगर उसका शरीर विचित्र सा था। कछुआ सामने की ओर से मेरे पास चला आ रहा था। कछुए के शरीर की लम्बाई 4-5 इंच रही होगी, उसके शरीर की चौड़ाई मात्र एक इंच रही होगी। इसी में उसके चारों पैर माचिस की तीली के समान पतले दिखाई दे रहे थे। उसका मुँह बिल्कुल छोटा सा था। सामान्य रूप से कछुए का शरीर ऐसा नहीं होता है। वर्तमान समय में मेरी आध्यात्मिक योग्यता के कारण इस कछुए का शरीर ऐसा हो गया है। फिर अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखें खोल दीं, फिर कछुए के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- इस अनुभव में कछुए के शरीर का साइज बिल्कुल छोटा सा हो गया है। कछुआ इन्द्रियों का प्रतीक होता है। मेरी आध्यात्मिक योग्यता के कारण इन तमोगुणी इन्द्रियों का स्वरूप सिकुड़कर ऐसा हो गया है। इस अनुभव से स्पष्ट होता है भविष्य में ये इन्द्रियाँ धीरे-धीरे अभ्यासानुसार नष्ट हुए के समान हो जायेंगी। यही हमारे लिए अच्छा होगा, फिर सात्विक इन्द्रियों का प्राकट्य होगा। जैसा कि पहले अनुभवों में सात्विक इन्द्रियों का प्राकट्य हुआ कछुए के रूप में दिखाया गया था।

वर्तमान समय में आरोही-अवरोही क्रम से अभ्यास करने के कारण, चित्त पर इतना शुद्धता प्राप्त हुई। जब इन्द्रियाँ पूर्ण रूप से शुद्ध हो जायेंगी, मेरी अवस्था परा-प्रकृति में ज्यादा देर तक ठहरने की हो

जायेगी। यही आरोही-अवरोही क्रम तब तक चलता रहेगा, जब शुद्ध हुए चित्त पर जीव को अपना प्रतिबिम्ब दिखाई देने लगेगा। स्वच्छ आकाश हमारा ही चित्ताकाश है।

शिवलिंग का स्वरूप

यह अनुभव 25 मई को ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में देखा - सर्वत्र स्वच्छ आकाश है। उस निर्मल स्वच्छ आकाश में बिल्कुल छोटा सा उंगली के आकार वाला पारदर्शी स्वरूप वाला शिवलिंग है। शिवलिंग का स्वरूप धीरे-धीरे छोटा हो रहा है। शिवलिंग के नीचे और चारों तरफ हल्का सा काला पदार्थ विद्यमान था। यह दृश्य मैं थोड़ी देर तक देखता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में दिखाई देने वाला शिवलिंग हमारे ही चित्त के स्वरूप का प्रतीक है। अपरा-प्रकृति द्वारा बना तमोगुणी चित्त का स्वरूप धीरे-धीरे छोटा हो रहा है। इस स्वरूप का सम्बन्ध संसार से है जिसमें गुणों का सदैव परिणाम होता रहता है। शिवलिंग के निचले क्षेत्र में विद्यमान हल्के काले रंग के तमोगुण को अभ्यास के द्वारा और भोग कर नष्ट करना है। संसार के किसी भी प्रकार के कार्य या लिप्तता चित्ताकाश में इसी प्रकार दिखाई देती है। निर्मल चित्ताकाश में संसार से सम्बंधित आसक्ति अभी भी हमारे चित्त पर विद्यमान है। यह आसक्ति साधकों का मार्गदर्शन करना, इस पुस्तक को लिखना आदि है। इसलिए साधकों का मार्गदर्शन करना बन्द करना पड़ेगा।

बाल रूप में भगवान शंकर जी

यह अनुभव 27 मई को आया। दोपहर का समय था। मैं कुटिया के अन्दर ध्यान कर रहा था। तभी हल्के प्रकाश में बच्चे के स्वरूप में भगवान शंकर जी मेरे सामने प्रकट हो गये। उसी समय उनकी ओर से आवाज आयी- "वह मेरा ही स्वरूप है"। यह सुनकर मैं चौंक पड़ा क्योंकि मैं उन शब्दों का अर्थ समझ रहा था। भगवान शंकर का शरीर हल्के नीले रंग का चमकदार था। उनके सिर के बाल खुले हुए नीचे की ओर लटक रहे थे। सिर के बालों की लम्बाई पैर की एड़ियों तक थी। बाल काले और घने थे। उनके गले में नाग नहीं थे और न ही सिर पर चन्द्रमा था। कुछ क्षणों बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अपने जीवन में पहली बार भगवान शंकर जी का तीन-चार साल के बच्चे के समान शरीर वाला स्वरूप देखा। भगवान शंकर जी के सिर पर सदैव बालों का जूड़ा लगा रहता है, ऐसा शास्त्रों में वर्णन मिलता है, तथा योगियों को और साधकों को ध्यानावस्था में सिर पर बालों का जूड़ा लगा हुआ दिखाई देता है। अनुभव में उनके सिर पर बहुत घने, काले, लंबे बाल थे, जो नीचे पैर की एड़ियों तक लटक रहे थे। ऐसा अद्भुत स्वरूप पहली बार देखा था। उनके गले में नाग नहीं था, नाग अहंकार का प्रतीक होता है। उनकी ओर से आवाज आयी थी- "वह मेरा ही स्वरूप है"। इसका भाव यह था- मैं शिवलिंग को अपरा-प्रकृति और चित्त का स्वरूप मानता हूँ क्योंकि ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड अपरा-प्रकृति ही अण्डाकार स्वरूप वाली होती है। इसी प्रकार चित्त का भी स्वरूप होता है क्योंकि चित्त का निर्माण अपरा-प्रकृति द्वारा ही होता है।

शिवलिंग का अर्थ होता है- शिव का अर्थ है कल्याणकारी देवता। लिंग का अर्थ होता है- व्यक्त रूप में, दूसरा अर्थ है- सूक्ष्म रूप में। ब्रह्माण्ड रूपी पिण्ड अपरा-प्रकृति इसी स्वरूप वाली होती है (अण्डाकार रूप में)। शिवलिंग का अर्थ हुआ- ऐसा कल्याणकारी देवता जो व्यक्त रूप में (पिण्ड रूप में) कण-कण में व्याप्त हो, अर्थात सर्वत्र व्याप्त हो। इसलिए इस स्वरूप को शिवलिंग के रूप में जाना जाता है।

परा-प्रकृति का नाम अलिंग भी है, इसी प्रकार अपरा-प्रकृति का नाम लिंग भी है। परा-प्रकृति का एक नाम अव्यक्त भी है तथा अपरा-प्रकृति का नाम व्यक्त भी है। परा-प्रकृति और अपरा-प्रकृति के कई पर्यायवाची नाम हैं। कुछ अज्ञानी लोग शिवलिंग को पता नहीं किस-किस नाम से सम्बोधित करते हैं। योग में सूक्ष्म शरीर को लिंग-शरीर भी कहते हैं। इसलिये शिवलिंग के विषय में व्याख्या करने से पहले शास्त्रों का भली-भाँति अध्ययन कर लेना चाहिये अथवा पहले योग का अभ्यास करके समाधि में विशारदता प्राप्त कर लेना चाहिए ताकि शिवलिंग के विषय में ज्ञान प्राप्त हो सके। ताकि मूर्खतापूर्ण व अनर्गल शब्दावली से बच सकें।

बाल रूप में भगवान श्रीकृष्ण जी

यह अनुभव 26 जून को सुबह ध्यानावस्था में आया। मेरे सिर के ऊपर आकाश में बहुत बड़ा छिद्र है, उसी छिद्र से हल्के नीले रंग का चमकीला प्रकाश नीचे की ओर आ रहा है। उस सम्पूर्ण छिद्र में तथा छिद्र के उस पार हल्का नीला चमकीला प्रकाश भरा हुआ है। उसी छिद्र से नीचे की ओर लगभग पाँच

महीने का सुन्दर सा बच्चा मेरी ओर चला आ रहा है। वह बच्चा हमारे सामने और थोड़ा ऊपर आकर ठहर गया। उस बच्चे को देखकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ क्योंकि बच्चे के स्वरूप में भगवान श्री कृष्ण जी थे। उनके शरीर पर वस्त्र नहीं थे, वह पूर्णतया नग्नावस्था में थे। मैं उनका नग्नावस्था वाला स्वरूप देखकर बहुत प्रसन्न हो रहा था क्योंकि इस स्वरूप में वह बहुत सुन्दर लग रहे थे। भगवान श्री कृष्ण जी के शरीर का रंग हल्का नीला-चमकीला था।

तभी उनकी ओर से आवाज आयी- "संसार के भाव को समझो, संसार की सोच को समझो", और "संसार के स्वरूप को समझो"। जब मुझे ये शब्द सुनाई दे रहे थे, उस समय मेरी दृष्टि थोड़ी ऊपर की ओर थी। मैं भगवान श्री कृष्ण के अति सुन्दर स्वरूप को (बाल स्वरूप में) देख रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया और मेरा ध्यान टूट गया।

अर्थ- अपने सम्पूर्ण आध्यात्मिक जीवन में पहली बार भगवान श्रीकृष्ण जी को इतने छोटे बाल स्वरूप में देखा है। उनके शरीर पर एक भी वस्त्र नहीं था वह पूर्णतया नग्नावस्था में थे। वह मेरी ओर टकटकी लगाकर देख रहे थे और मैं उनको टकटकी लगाकर देख रहा था। अनुभव में ऊपर की ओर दिखाई देने वाला बहुत बड़ा छिद्र '**शिवछिद्र**' है। अबकी बार अनुभव में दिखाई देने वाला शिवछिद्र का स्वरूप बहुत बड़ा था। उस छिद्र के उस पार अन्दर की ओर तथा नीचे की ओर हल्के नीले रंग का चमकीला प्रकाश विद्यमान था। वह नीला प्रकाश मेरी ओर आ रहा था।

अब मैं बहुत दिनों से कठोर अभ्यास नहीं कर रहा हूँ। मैं पुस्तक को लिखने का कार्य कर रहा हूँ तथा कुछ कार्य कुटिया का करवाना है। इस समय मेरी अवस्था अपरा-प्रकृति के अन्तर्गत ही है। अब मैं शिवछिद्र के उस पार नहीं जाता हूँ क्योंकि पूर्ण रूप से अपरा-प्रकृति में ही बहिर्मुखी हूँ। इसलिए अनुभव में शिवछिद्र ऊपर की ओर दिखाई दे रहा है। पहले के अनुभवों में लिखा है- शिवछिद्र का स्वरूप ही समाप्त हो गया है, क्योंकि अपरा प्रकृति का आवरण नीचे की ओर 4 इंच के व्यास में गोलाकार रूप में देख रहा हूँ। गोलाकार आवरण ऐसा दिखाई दे रहा था, जैसे चार इंच व्यास की गोलाकार बाउंड्री बनी हुई है। फिर यह आवरण टूट जाता है, टूटे हुए आवरण का पदार्थ छोटी सी ढेरी के रूप में वहीं पर (चित्ताकाश) विद्यमान है। वर्तमान में आरोही-अवरोही क्रम में अभ्यास करते हुए नष्ट कर रहा हूँ। इससे अपरा-प्रकृति का आवरण सदैव के लिए नष्ट हो जायेगा।

इस अनुभव में एक महत्वपूर्ण बात है- शिवछिद्र के अन्दर और बाहर विद्यमान प्रकाश का रंग हल्का नीला चमकदार है, इसी प्रकार का रंग भगवान श्री कृष्ण जी के शरीर का रंग है। 27 मई 2026 को बालरूप में भगवान शंकर जी के स्वरूप का अनुभव आया था, उनके शरीर का रंग भी हल्का नीला चमकदार था। इन दोनों अनुभवों में शिवछिद्र के अन्दर-बाहर का रंग, भगवान शंकर जी के शरीर का रंग, और भगवान श्री कृष्ण जी के शरीर का रंग अर्थात इन तीनों का रंग बिल्कुल एक समान था। जबकि परा-प्रकृति का स्वरूप स्वच्छ निर्मल विलक्षणता को लिए हुए सत्वगुण की प्रधानता के कारण चमकीला हल्का सफेद अथवा रंगहीन प्रकाश से युक्त होता है। नीला रंग कारण शरीर और कारण जगत का होता है। महाकारण जगत या महाकारण शरीर का रंग नीला नहीं होता है। मैं ऐसा अपने अनुभवों के आधार पर लिख रहा हूँ।

अनुभवों में भगवान श्री कृष्ण जी की ओर से आवाज आयी- "**संसार का भाव समझो, संसार की सोच समझो, संसार का स्वरूप समझो**"। इस संसार का स्वरूप परिवर्तनशील है। परिवर्तनशील संसार का स्वरूप सदैव एक जैसा नहीं रहता है। हर क्षण इसका स्वरूप बदलता रहता है इसलिए कोई भी वस्तु आपकी सदैव के लिए नहीं हो सकती है। **संसार की सोच को समझो**- इस दुनिया की असलियत (माया, लोगों की फितरत और सांसारिक नियम) को गहराई से परखना और समझना अर्थात सांसारिक माया-मोह से परे होकर जीवन के असली सत्य और उद्देश्य को पहचानना है। **संसार का भाव समझो**- संसार का वास्तविक भाव नश्वरता और कर्म का चक्र है जहाँ माया-मोह और भौतिक सुख क्षणिक हैं। यह जीवन और मृत्यु का निरन्तर प्रवाह है। **संसार का स्वरूप समझो**- जीवन और जगत की नश्वरता, जन्म, जीवन और मृत्यु को पहचानना है।

अमृत कलश

यह अनुभव 4 जुलाई को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- एक स्त्री मेरे सामने थोड़ा नीचे की ओर बैठी है। उसके सिर पर कुछ रखा हुआ है। मेरी दृष्टि उस पर पड़ते ही वह स्त्री खड़ी हो गयी, तब स्पष्ट हुआ- वह स्त्री अपने सिर पर एक स्वर्ण कलश रखे हुए है। वह स्वर्ण कलश बहुत ही सुन्दर नक्काशीदार था, उस स्वर्ण कलश से प्रकाश निकल रहा था। वह स्वर्ण कलश मेरे सामने बिल्कुल नजदीक था। स्वर्ण कलश नजदीक होने के कारण सिर्फ स्वर्ण कलश ही दिखाई दे रहा था। उस स्वर्ण कलश के ऊपर सोने

का बना हुआ एक लोटा रखा हुआ था। वह लोटा भी स्वर्ण कलश के समान ही प्रकाशित व चमचमाता हुआ दिखाई दे रहा था। कुछ क्षणों तक मैं प्रकाशित चमकते हुए स्वर्ण कलश व उसके ऊपर रखे लोटे को देखता रहा। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अध्यात्म में स्वर्ण कलश पूर्णता, सर्वोच्चता और अमरत्व का प्रतीक है। यह ज्ञान और मोक्ष का प्रतीक है, इसे अमृत कलश भी कहते हैं। इसका मुख्य अर्थ आत्मज्ञान की प्राप्ति और दिव्य आनन्द से है जो साधक को सभी सांसारिक बन्धनों से मुक्त करके, सर्वोच्च (ईश्वरत्व) अवस्था तक ले जाता है, जो अज्ञान रूपी मृत्यु को मिटाकर अमरत्व अर्थात आत्मारूपी दिव्य स्वरूप की प्राप्ति को दर्शाता है। अध्यात्म में स्वर्ण कलश उस परम ज्ञान या चेतना का प्रतिनिधित्व करता है जो माया-मोह से परे है। मनुष्य का चित्त जब सांसारिक विकारों से मुक्त होकर सोने के समान शुद्ध बन जाता है, तब अभ्यासी का शरीर परमात्मा का सच्चा मन्दिर बन जाता है।

चित्त को स्वच्छ करना

यह अनुभव 9 अगस्त को ध्यानावस्था में आया, मैंने देखा - सभी जगह आकाश फैला हुआ है। सामने की ओर आकाश में सोने से बनी हुई बहुत सुन्दर एक थाली दिखाई दी। उस थाली से चारों ओर प्रकाश निकल रहा है। थाली के अंदर 5-6 इंच लम्बे वाइपर से सफाई हो रही है। वाइपर चलाने वाला कोई दिखाई नहीं दे रहा है, वाइपर स्वयं चल रहा है। थाली बिल्कुल स्वच्छ है। फिर भी स्वच्छ थाली के अन्दर वाइपर चल रहा है। कुछ क्षणों बाद देखा- वाइपर द्वारा थाली के अन्दर से कचरे के नाम पर मिट्टी के कुछ कण एकत्र हो गये। उन मिट्टी के कणों को वाइपर द्वारा थाली से बाहर फेंक दिया गया। मिट्टी के कण आकाश में नीचे की ओर गहराई में चले गये। अब मैं थाली की ओर देख रहा था, थाली निर्मल स्वच्छ चमक रही थी। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- निर्मल स्वच्छ थाली हमारे चित्त का प्रतीक है। वाइपर से थाली स्वच्छ की जा रही थी अर्थात अभ्यास के द्वारा मैं अपने चित्त को स्वच्छ कर रहा हूँ। आकाश हमारा ही चित्ताकाश है। थाली के अंदर से वाइपर द्वारा निकले मिट्टी के कण हमारे चित्त के अन्दर स्थित तमोगुण का अंश है। इस तमोगुणी अंश को थाली से बाहर कर दिया गया। अब सोने की थाली एकदम से स्वच्छ निर्मल और चमकती

दिखाई दे रही थी। मैं उस अत्यन्त स्वच्छ थाली को देख रहा था। अर्थात अत्यन्त स्वच्छ चमकदार चित्त को देख रहा था फिर अनुभव समाप्त हो गया।

सिंहासन पर बैठा पुरुष

यह मेरा अनुभव 30 अगस्त को ध्यानावस्था में दिखाई दिया। जब मैं प्रात:काल ध्यान में बैठा हुआ था, तभी मुझे दिखाई दिया कि सामने की ओर थोड़ी ऊंचाई पर आकाश में सोने का बना हुआ बहुत बड़ा सुन्दर सिंहासन है। उस सिंहासन पर एक सुन्दर व तेजस्वी पुरुष बैठा हुआ है। उस पुरुष के सिर के ऊपर एक सोने से बना हुआ मुकुट लगा है। उसकी वेशभूषा राजाओं के भांति थी। ऐसा लगता था कोई राजा बहुत बड़े सोने के सिंहासन पर बैठा हुआ है। राजा के समान दिखने वाला पुरुष मेरी ओर देख रहा था, मैं भी उसे देख रहा था, तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला पुरुष मैं ही हूँ, मेरा स्वरूप सोने से बना सिंहासन के ऊपर बैठा हुआ मुझे देख रहा है इसका अर्थ है - जीवात्मा अज्ञानता के कारण तृष्णा से युक्त हुआ संसार व सांसारिक पदार्थों में लिप्त रहता है, सांसारिक पदार्थ परिवर्तन शील होने के कारण सिर्फ दु:ख की अनुभूति करता रहता है क्योंकि सांसारिक पदार्थों में तृष्णा और आसक्त होने के कारण कर्मानुसार भिन्न-भिन्न शरीरों को प्राप्त हुआ सुख और दुख की अनुभूति करता रहता है। इस अनुभव से स्पष्ट होता है - जीवात्मा ने अज्ञानता को त्यागते ही, सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो गया, उसने संसार के वास्तविक स्वरुप को लिया है क्योंकि यह परिणाम स्वरुप और भ्रम स्वरुप है। अब वह अपने स्वरुप में स्थित हो गया है, इसलिए वह अनुभव में राजाओं के समान ऊँचाई पर सोने के सिंहासन पर बैठा हुआ दिखाई दे रहा है।

राजा अपनी प्रजा पर शासन करता है, उसकी प्रजा शासित होती है। इसी प्रकार अज्ञानता के कारण सांसारिक बन्धनों से बन्धा हुआ जीवात्मा पशुवत जैसा रहता है। ज्ञान प्राप्त होने पर अर्थात अज्ञानता नष्ट होते ही वह अपने वास्तविक में स्थित हो जाता है। इसीलिए मेरा ही स्वरूप (जीवेश्वर) राजाओ के समान बैठा हुआ दिखाई दे रहा है।

भगवान नारायण जी शेषनाग की शैया पर लेटे हुए

यह अनुभव 8 अगस्त को खुली आँखों से दिखाई दिया। मैं कैनकुन (मैक्सिको) के एक होटल में ठहरा हुआ था, दोपहर का समय था। मैं खाना खाकर अपने कमरे में आ गया था फिर कमरे के अन्दर मैं सोफे पर लेटने लगा। सोफे पर लेटते समय मुझे खुली आँखों से दिखाई देने लगा- भगवान नारायण जी शेषनाग की शैया पर मेरे शरीर के बगल में लेटे हुए थे। मैं भगवान नारायण जी से बोला – प्रभु, प्रभु आप रुक जाइये अभी मैं लेट लूँ, फिर आप दर्शन दीजिए। मगर भगवान नारायण जी और शेषनाग जी का लगातार दर्शन हो रहा था। ऐसा दिख रहा था शेषनाग का शरीर हमारे स्थूल शरीर से सटा हुआ है। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव को देखते समय मैं जाग्रत अवस्था में था। दोपहर के लगभग दो बजे होंगे। मैं होटल के कमरे में आकर सोफे पर लेटने लगा, सोफे पर झुक कर लेटने वाला था तभी यह अनुभव आया — भगवान शेषनाग जी की शैया पर भगवान नारायण जी लेटे हुए दिखाई दे रहे थे। भगवान शेषनाग जी का शरीर हमारे शरीर के बगल में (दाहिने ओर) था व उनका शरीर हमारे शरीर से स्पर्श कर रहा था। यह दृश्य देख कर मैं आश्चर्य चकित हुआ कि भगवान नारायण जी और शेषनाग जी मुझे जाग्रत अवस्था में स्थूल आँखों के द्वारा दिखाई दे रहे हैं। मैं बोला— प्रभु, प्रभु आप रुक जाइये मैं लेट लूँ, तब आप दर्शन दीजिये, मगर फिर भी भगवान नारायण जी और शेषनाग जी के दर्शन हो रहे थे। इस अनुभव में सबसे बड़ा आश्चर्य यह था की मैं जाग्रत अवस्था में महाकारण अवस्था में विद्यमान भगवान नारायण जी और भगवान शेषनाग जी का दर्शन कर रहा था। दोनों की अवस्थाओं में भारी अन्तर था फिर भी स्थूल नेत्रों से दर्शन हो रहा था। इस प्रकार का अनुभव शायद पहली बार आया था। क्योंकि स्थूल आँखों से सिर्फ स्थूल पदार्थ ही देखे जा सकते हैं, अथवा कभी-कभी ऐसा है स्थूल आँखें खुली हुई दिखाई देती है, सूक्ष्म शरीर की आँख कार्य कर रही होती है। ऐसी अवस्था में स्थूल आँखें स्थिर रहती है। मगर अनुभव में स्थूल आँखें चलयमान है, अर्थात क्रियाशील थी।

भगवान शंकर जी, सहस्त्रदल कमल और ध्वज

यह अनुभव 8 सितम्बर को सुबह ध्यानावस्था में आया। मैने देखा सामने की ओर आकाश में भगवान शंकर जी हैं। उनके सिर के बाल खुले हुए नीचे की ओर लटक रहे हैं, वह मुझे देख रहे हैं। कुछ

क्षणों में सामने ओर आकाश में बड़ा सा कमल का फूल अपने आप भगवान शंकर की ओर चला आ रहा है। उस कमल के फूल में सैकड़ों पंखुड़ियां दिखाई दे रहीं थीं। वह कमल का फूल भगवान शंकर के सिर के ऊपर, उल्टा रखा गया। भगवान शंकर के सिर पर कमल का फूल उल्टा विद्यमान होते ही मैं चौक पड़ा। उसी समय आकाश में भगवान शंकर जी नीचे की ओर धीरे धीरे अपने आप जाने लगे। तभी मैंने देखा- सिर के ऊपर रखे उल्टे कमल के फूल के ऊपर कुछ खड़े आकार में विद्यमान है। मैने धीरे-धीरे ऊपर की ओर को देखना शुरू किया तब स्पष्ट हुआ, वह भगवे रंग का ध्वज (झण्डा) हैं। ध्वज अत्यन्त स्वच्छ आकाश में पहरा रहा था। दृश्य बहुत सुन्दर था। भगवान शंकर जी के सिर के ऊपर, सैकड़ों पंखड़ियों वाला उल्टा रखा कमल का फूल फिर उसके ऊपर लम्बे बाँस वाला ध्वज आकाश में लहरा रहा था। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में सर्वत्र आकाश ही आकाश था यह आकाश मेरा चित्ताकाश हैं। सामने की ओर भगवान शंकर जी आकाश में स्थित हुए मुझे देख रहे थे। उनके सिर के ऊपर बालों का जूडा नहीं लगा था, बाल खुले हुए नीचे की ओर लटक रहे थे। सैकड़ों पंखुड़ियों वाला कमल का फूल सहस्त्र दल कमल था, वह भगवान शंकर जी के सिर के ऊपर उल्टा रखा था। सहस्त्र दल कमल ज्ञान का आयतन होता है। अपरा-प्रकृति का प्रवाह नीचे की ओर बहता रहता है। अनुभव में भी सहस्त्रदल कमल उल्टा होकर रखा हुआ है। अर्थात यह श्री सहस्त्र दल कमल निम्नमुखी हुआ रखा है। उसके ऊपर स्वच्छ आकाश में ध्वज फहरा है, अर्थात सम्पूर्ण अपरा-प्रकृति पर विजय हो गयी है। अब यह प्रकृति मेरे लिए नष्ट हुए के समान हो गयी है।

जीव को अपना स्वरूप दिखाई देना

यह अनुभव 28 सितम्बर को आया। मैं ध्यानावस्था में अपने चेहरे को देख रहा था। हमारा चेहरा युवावस्था वाला, अत्यन्त सुन्दर, तेजस्वी था। मुझे मेरा चेहरा बहुत सुन्दर लग रहा था क्योंकि चेहरे पर विशेष प्रकार की चमक थी। कुछ क्षणों तक मैं अपने चेहरे को देखता रहा, फिर अनुभव समाप्त हो गया। यह अनुभव मात्र कुछ क्षणों का ही था।

अर्थ- ऐसा अनुभव मैंने अपने जीवन में पहली बार देखा है, मुझे अपना चेहरा दिखाई दे रहा था मेरा चेहरा बहुत सुन्दर और तेजस्वी था। इस अनुभव का अर्थ है- जीव को अपने स्वरूप का दर्शन हो रहा

था, चित्त की शुद्धि इतनी हो गई है, कि चित्त पर जीव को अपना स्वरूप दिखाई देने लगा है। जब मेरा चेहरा दिखाई दे रहा था तब निर्मल स्वच्छ आकाश सर्वत्र विद्यमान था। उस समय चित्त पर कर्माशय और अविद्या लेशमात्र नहीं थे। तभी जीव को अपने स्वरूप का दर्शन हो रहा था। जीव को जब अपने स्वरूप का दर्शन हो जाता है फिर वह अपने मूल स्वरूप (चेतन तत्व) में स्थित हो जाता है। यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी। ऐसी अवस्था में अभ्यासी का शरीर प्रारब्ध वेग के कारण सधा रहता है, जैसे- **1-** कुम्हार का चाक बर्तन बनाने के बाद भी गति करता रहता है। **2-** कमान से तीर निकलने के बाद भी गति करता रहता है। वैसे ही यह अवस्था परिपक्व होने तक निरन्तर अभ्यास करते रहना पड़ेगा।

साधकों! यहाँ पर मैं एक बात स्पष्ट बताना चाहता हूँ, अभ्यास करते समय साधकों को ध्यनावस्था में सूक्ष्म शरीर भी दिखाई देता है वह दृष्टा रूप से दूर स्थित हुआ अपने सूक्ष्म शरीर को देखता है उसका सूक्ष्म शरीर ध्यान पर बैठा है, अमुक कार्य कर रहा है अथवा चला जा रहा है। यह उसका सूक्ष्म शरीर होता है ऐसे दृश्य में उसका सम्पूर्ण सूक्ष्म शरीर दिखाई देता है। मगर इस अनुभव में मुझे मेरा सिर्फ विलक्षणता को प्राप्त हुआ चेहरा दिखाई दे रहा है, यहाँ पर किसी प्रकार का दृश्य नहीं है सिर्फ अत्यन्त निर्मल स्वच्छ चित्ताकाश विद्यमान है। जीव चेतन तत्त्व है चेतन तत्त्व का किसी प्रकार का स्वरुप नहीं होता है इसलिये अभ्यसी को जीव इस अवस्था में अपने वर्तमान स्वरुप वाला ही दिखाई देता है। दोनों अवस्थाओं में भारी अन्तर है।

विशाल आकार वाली कमल कली का खिलना

यह अनुभव 1 अक्टूबर को आया। मैंने ध्यानावस्था में सामने की ओर आकाश में देखा- अत्यन्त स्वच्छ आकाश है। उस आकाश में बहुत सुन्दर, बड़ी सी ऊर्ध्वमुखी हुई कमल की कली है, उस कमल कली के आस-पास प्रकाश फैला हुआ है, कमल कली की कुछ पंखुडियाँ विकसित होकर खिल चुकी है। मै उस विशाल आकार वाली प्रकाशित कमल कली को प्रसन्नतापूर्वक टकटकी लगाकर देख रहा हूँ तभी उसकी 2 और पंखुड़ियाँ विकसित होकर खिल गई। मैं उन विकसित पंखुड़ियों की गिनती कर रहा था तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में दिखाई देने वाली विशाल आकार वाली प्रकाशित कमल कली के विषय में पहले अनुभवों में लिख चुका हूँ यह कमल कली (12 जनवरी 2025) को अनुभव दिखाई दी थी। उस

समय वह कमल कली पूर्ण रूप से बन्द थी उसका मुँह ऊपर की ओर को था अर्थात वह कमल कली ऊर्ध्वमुखी थी। उस समय उस कमल कली के ऊपर तमोगुण की कालिमा लगी हुई थी। इस अनुभव में कमल कली से चारों ओर को प्रकाश निकल रहा था और कुछ नीचे की पंखुड़ियाँ विकसित हो चुकी हैं।

इस कमल कली का सम्बन्ध परा-प्रकृति से है इसीलिए यह विशाल आकार वाली दिखाई दे रही है। परा-प्रकृति ऊर्ध्वमुखी रहती है अर्थात परा-प्रकृति का प्रवाह सदैव ऊपर की ओर रहता है। अनुभव में यह कमल कली इसीलिए ऊर्ध्वमुखी हुई दिखाई दे रही है। जैसे-जैसे मेरा अभ्यास और बढेगा, वैसे-वैसे इस कमल कली की पंखुड़ियाँ विकसित होती जायेगी, कमल कली के विकास के अनुसार ही हमारे लिये परा-प्रकृति का विकास होता जायेगा। परा-प्रकृति के विकास के अनुसार ही हमारे स्वभाव में भी परिवर्तन आता जायेगा। हमारे लिए संसार से दूरियाँ भी बढ़ती जायेगी क्योंकि मैं अंतर्मुखी होता जाऊँगा। इस अनुभव से स्पष्ट होता है अब हमारे लिए परा-प्रकृति का विकास होना शुरू हो गया है। मुझे याद आ रहा है अनुभव में कमल कली की अभी 8-10 पंखुडियाँ में ही खिली होगी। कमल कली को देखने से अनुमान लगता है, इस कमल कली में अनन्त अनगिनत पंखुड़ियाँ विद्यमान होगी। सहस्त्र दल कमल की कली से इस कली का आकार सैंकड़ों गुना बड़ा दिखाई दे रहा था।

विशाल आकार वाला अत्यन्त सुन्दर प्रकाशित महल

यह अनुभव 1 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया- मैं ऊपर की ओर से देख रहा हूँ - सामने थोड़ा नीचे की ओर, मैं आगे की ओर चला जा रहा हूँ, पैर के घुटने तक स्वच्छ सफेद भाप जैसी विद्यमान है। इसी स्वच्छ भाप के कारण नीचे का आकाश दिखाई नहीं दे रहा है, बस आगे की ओर चला जा रहा हूँ। यह सब मैं ऊपर की ओर से देख रहा हूँ, अर्थात मैं ऊपर की ओर से देख रहा हूँ और नीचे की ओर भी हूँ। मैं दो स्वरूपों में इस अनुभव में हूँ: दोनों स्वरूपों में शरीर स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा है।

ऊपर की ओर से मैं दृष्टा रूप से देख रहा हूँ- दूसरे स्वरुप से मैं आगे की ओर (कारण स्वरुप से) चला जा रहा हूँ। आगे की ओर थोड़ी दूरी पर एक बहुत सुन्दर नक्काशीदार स्वप्रकाशित विशाल महल है, मैं उसी महल की ओर जा रहा हूँ। महल की दीवारें बहुत सुन्दर नक्काशीदार स्वप्रकाशित हैं। दीवारें विशेष तरह के पदार्थ से बनी हुई हैं ऐसा पदार्थ मैंने अभी तक नहीं देखा है इसलिए महल की दीवारों का वर्णन नहीं कर सकता हूँ। थोड़ा और स्पष्ट करूँ दीवारें नक्काशी से ही बनी हैं, इसीलिये अन्दर का क्षेत्र दिखाई दे

रहा है। महल के अन्दर प्रकाश ही प्रकाश भरा हुआ है। महल का दरवाजा खुला हुआ है, मैं आगे की ओर चला जा रहा हूँ तभी अनुभव समाप्त हो गया। मैंने अपनी आँखे खोल दी, फिर अनुभव के विषय में सोचने लगा।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाली भाप जैसी वस्तु सत्वगुण का स्वरूप है। मैं ऊपर की ओर से सम्पूर्ण महल को देख रहा हूँ, मगर मुझे मेरा स्वरूप दिखाई नहीं दे रहा है क्योंकि मैं दृष्टा रूप से थोड़ा नीचे की ओर देख रहा हूँ। कारण शरीर से मैं महल की ओर चला जा रहा हूँ, यहाँ पर मेरा दूसरा स्वरूप भी दिखाई नहीं दे रहा है, मगर मैं चला जा रहा हूँ। अर्थात ये मेरे दोनों स्वरूप स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रहे हैं, ऊपर विद्यमान हुआ स्वरूप मेरा दृष्टा स्वरूप में है, नीचे वाला स्वरूप जो दिखाई नहीं दे रहा है, वह अत्यंत निर्मल स्वच्छ कारण शरीर है वह इतना निर्मल हो गया है मैं अपना स्वरुप देख नहीं पा रहा हूँ सिर्फ अनुभूति कर रहा हूँ, जो स्वप्रकाशित महल की ओर चला जा रहा है। सुन्दर स्वप्रकाशित महल परा-प्रकृति से सम्बंधित है। यह सम्पूर्ण क्षेत्र परा-प्रकृति का है, जो अनुभव में दिखाई दे रहा है। परा-प्रकृति जीव के भोग का विषय नहीं है इसलिये परा-प्रकृति के क्षेत्र के विषय में अभ्यासी को ज्यादा जानकारी नहीं मिल सकती है।

भगवान शंकर जी के समान पुरुष और महा कुण्डलिनी शक्ति

यह अनुभव 1 अक्टूबर को आया। ध्यानावस्था में देखा- सामने की ओर आकाश में हल्के चमकीले नीले रंग का एक पुरुष बैठा हुआ मेरी ओर देख रहा है। उसके लम्बे-लम्बे बाल नीचे की ओर लटक रहे हैं, वह पुरुष मुझे टकटकी लगाकर देख रहा है। तभी उस पुरुष ने अपने सिर को बायीं ओर को झटका मारा। सिर का जोर से झटका मारते ही, उसके लम्बे-लम्बे बाल, सिर पर गोलाकार रूप में लिपट गये। अब उस पुरुष का स्वरूप भगवान शंकर जी के समान दिखाई देने लगा, वह भगवान शंकर जी जैसा स्वरूप वाला पुरुष मुझे टकटकी लगाकर देखे जा रहा था। उस पुरुष के सिर के ऊपर नाग का बहुत चौड़ा फन दिखाई देने लगा, अर्थात उस पुरुष के पीठ की ओर बहुत बड़ा नाग खड़ा हुआ था वह अपना फन उस पुरुष के सिर के ऊपर किये हुए था। वह फन बहुत ही चौड़ा और बड़े आकार वाला था। फन के चारों ओर तेज प्रकाश फैला हुआ था। मैं इस दृश्य को देख कर प्रसन्न हो रहा था। मैं उस पुरुष को गौर पूर्वक

देख रहा था और मैं सोच रहा था यह भगवान शंकर जी नहीं है मगर उन्हीं के समान दिखाई देने वाला पुरुष कौन है?, फिर मैं सोचने लगा शायद इस स्वरूप में मैं ही हूँ। फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- सम्पूर्ण दृश्य परा-प्रकृति के क्षेत्र का है। अनुभव में दिखाई देने वाला पुरुष जो भगवान शंकर जी जैसा दिख रहा है, वह भगवान शंकर जी नहीं है। इस स्वरूप में मैं ही हूँ। मेरे स्वरूप के सिर के ऊपर दिखाई देने वाला बड़ा सा फन महा कुण्डलिनी शक्ति का है। महा कुण्डलिनी शक्ति के फन के चारों ओर तेज प्रकाश फैला हुआ है। वैसे कुण्डलिनी शक्ति साधक के शरीर के अन्दर सूक्ष्म शरीर में विद्यमान रहती है, मगर इस अनुभव में महा कुण्डलिनी शक्ति उस पुरुष के शरीर में बाहर की ओर दिखाई दे रही थी। सम्पूर्ण दृश्य निखरे हुए स्वच्छ आकाश में दिखाई दे रहा था। मैं दृष्टा रूप से इस दृश्य को देख रहा था।

मैं स्वच्छ निर्मल पारदर्शी पिण्ड के ऊपर खड़ा हूँ

यह अनुभव 3 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। मैंने देखा- चारों ओर ऊपर-नीचे सर्वत्र आकाश विद्यमान है, मैं किसी बहुत बड़े पिण्ड के ऊपर खड़ा हूँ। उसी समय वह पिण्ड थोड़ा सा एण्टी क्लॉक वाइज घूम गया। मैंने अपनी दृष्टि नीचे की ओर की। फिर मैं पिण्ड को देखने लगा, जिस पिण्ड के ऊपर मैं खड़ा हुआ था, वह पिण्ड अत्यन्त निर्मल पारदर्शी था। पिण्ड का आकार काफी बड़ा था। मैं पिण्ड के ऊपर खड़ा हुआ मुस्कुरा था। मैं उस पिण्ड पर इस प्रकार खड़ा हुआ था। जैसे भगवान शंकर जी उस पिण्ड के ऊपर खड़े हो। कुछ समय बाद अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- अनुभव में दिखाई देने वाला बहुत बड़ा पारदर्शी पिण्ड अपरा-प्रकृति का पिण्ड रूपी स्वरुप है। मैं पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति के ऊपर खड़ा हुआ हूँ। यह दृश्य परा-प्रकृति के अन्दर का क्षेत्र है। अनुभव में पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति बहुत ही शुद्ध निर्मल है। इस अनुभव से स्पष्ट हो रहा है, मैं अपरा-प्रकृति से बाहर आ गया हूँ। इसलिये पिण्ड रूपी अपरा-प्रकृति के ऊपर खड़ा हुआ दिखाई दे रहा हूँ।

भगवान शेषनाग जी, नवजात शिशु

यह अनुभव 3 अक्टूबर को ध्यानावस्था में आया। मेरी दृष्टि नीचे की ओर थी। आकाश में थोड़ा नीचे की ओर भगवान शेषनाग जी के अनन्त फनों से युक्त दिखाई दे रहे थे, उनके सभी फन कुछ क्षणों

तक धीरे-धीरे लहराते रहे, फिर मुझे दिखाई दिया- भगवान शेषनाग जी के शरीर से बनी बहुत बड़ी शैया है। उस शैया पर कोई नहीं लेटा था अर्थात भगवान शेषनाग जी अपने शरीर से लम्बे आकार में (अंडाकार रुप में) कुण्डली मारे, अनन्त फनों से युक्त हुए दिखाई दे रहे थे। मैं कुछ समय तक भगवान शेषनाग जी के सम्पूर्ण शरीर को देखता रहा, मेरी दृष्टि भगवान शेषनाग जी की शैया पर स्थिर थी क्योंकि उनकी शैया पर कोई नहीं लेटा था। कुछ क्षणों बाद दिखाई दिया, भगवान शेषनाग जी की शैया पर सफेद कपड़े में लिपटा हुआ नवजात शिशु लेटा हुआ है। ऐसा लगता है जैसे इस बच्चे ने अभी-अभी जन्म लिया है। मैं उस बच्चे को लगातार देख रहा था, फिर अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- इस अनुभव में मैं ऊपर की ओर दृष्टा रूप में विद्यमान हूँ। चारों ओर सर्वत्र आकाश विद्यमान है। मैं थोड़ा सा नीचे की ओर देख रहा था नीचे ओर भगवान शेषनाग जी अनन्त फनों से युक्त दिखाई दे रहे थे। उनके सभी फन कुछ क्षणों तक धीरे-धीरे लहराते रहें। कभी-कभी ऐसा भी लगा मानो इनका एक फन मुझे स्पर्श कर सकता है मगर ऐसा नहीं हुआ। मेरा किसी प्रकार का शरीर ही नहीं था, क्योंकि मैं दृष्टा रूप से विद्यमान था। कुछ क्षणों बाद मुझे उनका पूरा शरीर दिखाई देने लगा, भगवान शेषनाग जी के शरीर की बनी हुई शैया दिखाई देने लगी।

उनकी शैया पर कोई नहीं लेटा था। भगवान शेषनाग जी बिल्कुल शांत थे, कुछ क्षणों तक मैं उनका सम्पूर्ण शरीर का दर्शन करता रहा, फिर मुझे भगवान शेषनाग जी की शैया पर नवजात शिशु (मनुष्य के स्वरुप जैसा) सफेद कपड़े में लिपटा हुआ दिखाई दिया । वह बच्चा किसी प्रकार की हलचल नहीं कर रहा था। जिस समय मैं इस बच्चे को देखा रहा था उस समय मुझे ऐसा लग रहा था मानो बच्चे के रूप में मैं लेटा हुआ हूँ, अब भविष्य में मालूम होगा वह बच्चा कौन है? यह अनुभव परा-प्रकृति के क्षेत्र के अन्दर का है।

स्वच्छ निर्मल अण्डाकार क्षेत्र

यह अनुभव 3 अक्टूबर को आया था। अनुभव में देखा- सामने थोड़ा नीचे की ओर बहुत बड़ा अत्यन्त स्वच्छ अण्डाकार क्षेत्र है। मैं उस पारदर्शी अण्डाकार क्षेत्र को कुछ क्षणों तक देखता रहा फिर गहरे ध्यान में चला गया। कुछ समय बाद फिर वही अण्डाकार क्षेत्र दिखाई दिया। अबकी बार उस अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर काफी बदलाव देखा। इस अण्डाकार क्षेत्र के अन्दर की ओर से और सफाई कर

दी गयी थी, उस सफाई में निकला हुआ कचरा, गन्दी रुई (कपास) के समान वहीं पर अन्दर पड़ा हुआ था। अब वह अण्डाकार क्षेत्र पहले की अपेक्षा और अत्यन्त निर्मल स्वच्छ हो गया था। इस अण्डाकार क्षेत्र का आवरण सिर्फ अभास मात्र रह गया था अर्थात् स्वच्छता की पराकाष्ठा थी। तभी अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह सम्पूर्ण अनुभव आकाश में दिखाई दिया, चारों ओर सर्वत्र आकाश ही विद्यमान था। मुझे अण्डाकार क्षेत्र अत्यन्त पारदर्शी रूप में दिखाई दे रहा था। कुछ समय बाद यही अण्डाकार क्षेत्र फिर दिखाई दिया, किन्तु अबकी बार यह अण्डाकार क्षेत्र बहुत ही ज्यादा स्वच्छ और निर्मल था, क्योंकि अबकी बार अण्डाकार क्षेत्र की सफाई की गयी थी। सफाई से निकला हुआ कचरा गन्दी रुई (कपास) के समान वहीं पर पड़ा हुआ था। यह क्षेत्र इतना ज्यादा स्वच्छ हो गया था। इसे स्वच्छता की पराकाष्ठा ही कहूँगा। अनुभव में सफाई द्वारा निकला कचरा मुझे भोगकर नष्ट करना होगा। यह अनुभव परा-प्रकृति के क्षेत्र के अन्दर का है। अण्डाकार क्षेत्र हमारा ही चित्त है। चित्त अब भी स्वच्छ हो रहा है, अब यह स्वच्छता पराकाष्ठा पर पहुँच गयी है। यह अवस्था मुझे भविष्य में प्राप्त होगी। इस अनुभव से स्पष्ट होता है हमारा चित्त अत्यन्त निर्मल स्वच्छ होकर ईश्वर के चित्त में (परा-प्रकृति में) अन्तर्मुखी हो रहा है।

शिवलिंग और भगवान शंकर जी

यह अनुभव 7 अक्टूबर को शाम 5 बजे आया। मैं बैठा हुआ था, तभी हमारी आँखें बन्द हो गयीं। मुझे अपने सामने आकाश में बड़ा सा शिवलिंग प्रकट होकर दिखाई देने लगा, इस शिवलिंग का दर्शन मात्र कुछ क्षणों तक करता रहा, फिर शिवलिंग अदृश्य हो गया। शिवलिंग के अदृश्य होते ही मैंने देखा- आकाश में सामने ओर से मेरी ओर को एक नाव चली आ रही है। उस नाव पर भगवान शंकर जी बैठे हुए हैं। भगवान शंकर जी मुझे देख रहे हैं। भगवान शंकर जी के गले में नाग नहीं है, उनके सिर पर चन्द्रमा भी नहीं है, सर्वत्र तेज प्रकाश फैला हुआ है। नाव अपने आप मेरी ओर चली आ रही है, मैं भी भगवान शंकर जी को प्रसन्नता पूर्वक देख रहा हूँ। नाव चल कर मेरे अति नजदीक आ गयी, तभी ऐसा लगा नाव नजदीक आकर मेरे अन्दर समा जायेगी; मैं चौंक पड़ा मेरी आँखें खुल गयीं। अनुभव समाप्त हो गया।

अर्थ- यह सम्पूर्ण अनुभव स्वच्छ आकाश के अन्दर दिखाई दिया, यह आकाश हमारा चित्ताकाश है। शिवलिंग चित्त व अपरा-प्रकृति का प्रतीक है। (1) जीवन रूपी नाव ईश्वरीय कृपा का

प्रतीक माना जाता है। (2) गहरे ध्यान में अनुभूति होती है परमात्मा, शान्ति या जीवन को पार लगाने वाली कोई दिव्य ऊर्जा अपने आप आपके ओर चली आ रही है, अनुभव में भगवान शंकर जी उस नाव के ऊपर बैठे हुए हैं अर्थात मेरे इष्ट भगवान शंकर जी स्वयम् मेरा कल्याण करने के लिये ज्ञान रुपी नाव पर सवार होकर आ गये है। (3) कभी-कभी नाव का अर्थ- ज्ञान से, कभी संसार रूपी नाव से पार लगाने के लिए होता है। अभ्यासी के अवस्थानुसार अर्थ थोड़ा सा भिन्न हो जाता है। (4) कोई सकारात्मक ऊर्जा आपकी ओर खिंची चली आ रही है, आप अपने सही मार्ग पर आगे की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं। (5) कभी-कभी साधक स्वयं नाव पर सवार होकर नदी के उस पार चला जा रहा है वह ऐसा देखता है। नदी संसार का प्रतीक होती है। साधक अपनी अवस्थानुसार अर्थ निकाल लें। ऐसे अनुभव अभ्यासी के लिये सफलता के प्रतीक होते हैं।

संसार की यात्रा पूर्ण हुई

यह जानकारी मुझे अक्टूबर के दूसरे सप्ताह में दी गयी थी। मैं आँखें बन्द किये हुए चुपचाप बैठा हुआ था, तभी मुझे आकाश से आवाज सुनाई दी- "संसार की यात्रा तुम्हारी पूर्ण हुई"। इन शब्दों को सुनते ही मैं चौक पड़ा, मेरी आँखें खुल गयी। मैं इन्ही शब्दों के विषय में सोचने लगा। उस समय मेरे अन्त:करण में बहुत प्रसन्नता हो रही थी।

अर्थ- इस अनुभव का अर्थ है चित्त ने अपने भोग पूर्ण कर लिए है। मैं पहले बता चुका हूँ- अहंकार ही अहंकार में वरत रहा है, आध्यात्मिक पुस्तकों में लिखा मिल जाएगा- गुण ही गुण में वरत रहे है। मनुष्य अपने पिछले कर्मों के अनुसार सुख-दुःख, बीमारी, सुख सुविधाओं का अनुभव करता रहता हैं, इसी को भोग कहा जाता है। पूर्ण होने का अर्थ समाप्त होना है। जीवात्मा अपने चित्त पर स्थित सभी प्रकार के सुख-दुःख भोग लेती है, तब उसके जन्म की यात्रा पूर्ण हो जाती है। अर्थात अपने सारे सांसारिक दायित्व व कर्म फल पूरे कर लिए है, अब वह इस नश्वर संसार को त्याग कर अगले सफर पर चल देता है। ऐसे अभ्यासी फिर पुनः जन्म लेने के लिए भूलोक पर नहीं आते हैं।

भगवान विष्णु जी और मैं

यह अनुभव 27 अक्टूबर के ध्यानावस्था में आया। ध्यानावस्था में भगवान नारायण जी से प्रार्थना की – "हे प्रभु मेरा इस संसार से उद्धार करो"। मेरे कहते ही तुरन्त मेरे सामने भगवान विष्णु जी प्रकट हो गए, उनका स्वरूप तपे हुए स्वर्ण के समान था, उनका शरीर विलक्षणता को लिए हुए था, उनके चार भुजाएँ थी। मेरे सामने प्रकट होते ही उन्होंने अपना सुदर्शन चक्र मेरी ओर को वेग पूर्वक फेंका, सुदर्शन चक्र गति करता हुआ मेरी ओर आने लगा, क्षणभर के लिए मुझे डर लगा कि सुदर्शन चक्र मुझे काटने के लिए आ रहा है। तभी सुदर्शन चक्र हम दोनों के बीच में खड़ा तमोगुण से युक्त काला छोटा सा वृक्ष, को काटने लगा। सुदर्शन चक्र उस तमोगुणी छोटे से वृक्ष को काटते समय घर-घर की अवाज आ रही थी और काला बारीक पाउडर धीरे-धीरे उड़ रहा था। उसी समय मैंने अपने आप को देखा तो चौंक पड़ा- क्योंकि मेरा शरीर भी भगवान विष्णु जी के समान (तपे हुए स्वर्ण से बना हुआ) हो गया था। मुझमें और भगवान विष्णु जी के शरीर में कोई अन्तर नहीं था। अन्तर सिर्फ इतना था कि मैं अपना सुदर्शन चक्र धारण किये हुए था और भगवान विष्णु जी का सुदर्शन चक्र उस तमोगुणी वृक्ष को काट रहा था। काटते समय वृक्ष काले पावडर के रूप में परिवर्तित हो रहा था। फिर वृक्ष पूर्ण रूप से काट दिया गया, अब वृक्ष की जगह पर काला पाउडर थोड़ा सा पड़ा हुआ था। अब मैं मुस्कुरा रहा था क्योंकि भगवान विष्णु जी के दो स्वरूप एक जैसे (मैं और भगवान विष्णु जी) आमने सामने खड़े हुए थे। फिर दृश्य बदल गया।

मैंने अपने दाहिनी ओर देखा- निर्मल स्वच्छ आकाश में थोड़ी सी दूरी पर सिर्फ नक्काशी द्वारा (दीवार नहीं थी) बना हुआ मंदिर है। मंदिर का दरवाजा खुला हुआ था नक्काशी के छिद्रों से अन्दर का दृश्य दिखाई दे रहा था। मैं चलकर मंदिर के दरवाजे पर खड़ा हो गया, सामने भगवान विष्णु जी खड़े हुए थे, उनका स्वरूप वही था जो थोड़ी देर पहले दिखाई दिया था, उनका स्वरूप पहले जैसे तपे हुए सोने से बना हुआ था मगर वह चैतन्य स्वरूप में दिखाई दे रहे थे। कुछ क्षणों बाद वह अदृश्य हो गए। अदृश्य होते ही उसी स्थान पर माता लक्ष्मी जी प्रकट हो गई। माता लक्ष्मी जी का स्वरूप भी तपे हुए सोने के समान बना हुआ था। जैसा भगवान विष्णु जी का शरीर बना हुआ था। कुछ क्षणों बाद माता लक्ष्मी जी भी अदृश्य हो गयी। मैं मन्दिर के बाहर खड़ा हुआ, मंदिर की सुन्दरता देख रहा था वह किसी विशेष प्रकार के पदार्थ से बना हुआ था दीवारें नहीं थी दीवार की जगह सिर्फ सुन्दर नक्काशी थी। नक्काशी के छिद्रों से अन्दर का दृश्य दिखाई दे रहा था। अनुभव समाप्त हो गया, मैंने आँखें खोल दीं।

अर्थ- अनुभव में मैंने प्रार्थना भगवान नारायण जी से की थी, मगर भगवान विष्णु जी प्रकट हो गये। भगवान नारायण और भगवान विष्णु जी का स्वरुप एक जैसा ही है। भगवान नारायण जी परा-प्रकृति में रहते हैं, भगवान विष्णु जी का निवास अपरा-प्रकृति से सम्बधित है। अनुभव में दृश्य हमारे चित्ताकाश के अंतर्गत आया। मैं अभी दो महीने कनाडा रहकर आया हूँ, यह तमोगुण से युक्त छोटा सा वृक्ष, कनाडा यात्रा के कारण हमारे चित्त में दिखाई दे रहा है। अर्थात कनाडा यात्रा में हमारे चित्त के अन्दर मलिनता आ गयी है। भगवान विष्णु जी उसी मलिनता को अपने सुदर्शन चक्र के द्वारा नष्ट कर रहे हैं। मै भी भगवान विष्णु जी के समान स्वरुप वाला हो गया था। इसका अर्थ है- मेरे चित पर स्थित अत्यन्त सात्विक सशक्त वृत्ति ने भगवान विष्णु जी का स्वरुप धारण कर लिया था। ऐसी अवस्था में बहुत से अभ्यासियों को भ्रम हो जाता है, मैं अमुक देवता का अवतार हूँ, जबकि सात्विक सशक्त वृत्ति स्वरुप को धारण करती है। भगवान विष्णु जी ने हमारे चित्त पर स्थित मलिनता को स्वच्छ करने में सहायता की है। दूसरे दृश्य में निर्मल स्वच्छ आकाश में मन्दिर के अन्दर भगवान विष्णु जी और माता लक्ष्मी जी का दर्शन किया, यह मन्दिर जैसी जगह दीवारों की नहीं बनी थी, नक्काशी ही दीवार जैसे स्वरुप में थी, नक्काशी में बड़े-बड़े छिद्र थे।

त्याग कर दीजिए

ध्यानावस्था में यह आवाज 30 अक्टूबर को सुनाई दी। मैं गहरे ध्यान में था तभी मुझे आवाज सुनाई दी – "आप इस संसार का त्याग कर दीजिए"। उस आवाज को सुनते ही हमारा ध्यान हल्का होने लगा। फिर कुछ क्षणों बाद ध्यान टूट गया।

मुझे ध्यान में ही सुनाई दिया था। उन शब्दों के विषय में सोचने लगा। मैं समझ गया। शायद अब मुझे संसार को धीरे-धीरे त्यागना शुरू कर देना चाहिए।

आप कौन है

यह अनुभव 1 नवम्बर को ध्यानावस्था में आया। पश्चिम दिशा की ओर आकाश में विशेष प्रकार का प्रकाश प्रकट हो गया, उस प्रकाश की किरणें भी प्रकट हो रही थीं। उस प्रकाश में विशेष प्रकार की

क्रिया हो रही थी। उसका प्रकाश कम-ज्यादा हो रहा था। मैंने उस प्रकाश से पूछा- "आप कौन हैं", प्रकाश के अन्दर से आवाज आयी- "मैं तुम्हारा ही स्वरुप हूँ"। मैं यह शब्द सुनकर चौंका, फिर प्रकाश से आवाज आयी- "आप इस संसार का त्याग कर दीजिये"। कुछ क्षणों बाद हमारा ध्यान टूट गया।

ध्यान टूटने के बाद मैं सोचने लगा- मुझे इस प्रकार के संदेश क्यों मिल रहे हैं- आप इस संसार का त्याग कर दीजिये, मुझे मालूम है अभी हमारा कुछ समय और भूलोक पर जीवन जीने के लिए शेष है।

लेख के अन्त में

1- साधकों का मार्गदर्शन करने के कारण मेरी उम्र बढ़ा दी गयी है। प्रकृति का यह कार्य मुझे पसन्द नहीं आया, थोड़ी सी दु:ख की अनुभूति भी हुई। मैं तो साधकों का कल्याण करने के लिए मार्गदर्शन कर रहा था, साधकों पर शक्तिपात कर रहा था और कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत करके ऊर्ध्व कर रहा था। कुछ साधकों पर विशेष प्रकार का शक्तिपात करके उनकी आध्यात्मिक अवस्था आगे की ओर बढ़ा दी थी। ऐसे साधकों के प्रति हमारी किसी प्रकार की आसक्ति नहीं थी, क्योंकि मैं इन साधकों को पहले से जानता-पहचानता नहीं था। इन साधकों का मार्गदर्शन करने का तरीका थोड़ा भिन्न सा था, इस कारण से मुझे दिव्य शक्तियों से डाँट खानी पड़ती थी। उनका कहना होता था- वृक्ष अभी बड़ा हुआ नहीं है, फल पहले से पकड़ा देते हो। इन साधकों को स्वयं अभ्यास करने दो, तुम्हारा कार्य सिर्फ मार्गदर्शन करना है। तुमने अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया है और प्रकृति की व्यवस्था में हस्तक्षेप किया है। यह कार्य अपराधियों जैसा है। मैं बोला- यह कार्य मैं जीवों के कल्याण के लिए कर रहा था ताकि ये आध्यात्मिक मार्ग अपनाएं, ईश्वर की ओर उन्मुख होकर आगे की ओर बढ़ें। मुझसे कहा गया- "यह कार्य प्रकृति का है, प्रकृति स्वयं अपना कार्य करेगी। तुम भूलोक पर योग का फल प्राप्त करने गये हो, अपना कार्य पूर्ण करके अपने लोक में आ जायें"।

यह शब्द भले ही सत्य से न लगें, मगर सत्य यही है मेरी उम्र कुछ वर्षों के लिए बढ़ा दी गयी है। इन अनुभवों को मैंने अपनी इसी पुस्तक में लिखा है। सांसारिक मनुष्यों की धारणा होती है कि उनका जीवन काल जितना ज्यादा होगा, उतना ही उन्हें अच्छा लगता है अथवा उतना ही वे अपने आपको श्रेष्ठ समझने लगते हैं। संसारी मनुष्यों के साथ ऐसा नहीं होता है कि उनकी उम्र बढ़ा दी जाये। जन्म लेने से पूर्व ही मृत्यु का समय निश्चित हो जाता है कि अमुक व्यक्ति की मृत्यु कब होगी और किस स्थान पर होगी। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अमुक व्यक्ति की मृत्यु जिस स्थान पर होना निश्चित है, वह व्यक्ति मृत्यु से पूर्व स्वयं ही उस स्थान पर पहुँच जाता है। मगर यह सब संसारी मनुष्य को ज्ञात नहीं होता है, क्योंकि उसने योग के अभ्यास के द्वारा आंतरिक विकास नहीं किया है। वह अपने आपको सिर्फ स्थूल शरीर ही समझता है। उसके चित्त पर अज्ञानता विद्यमान रहने के कारण कर्मों के अधीन हुआ जीवन जीता रहता है।

तत्त्वज्ञानी पुरुष संसारी मनुष्यों की अपेक्षा कुछ विषयों में सर्वथा भिन्न होता है। तत्त्वज्ञानी पुरुष का यह आखिरी जन्म होता है। उसे दोबारा जन्म ग्रहण करने के लिए भूलोक पर नहीं आना पड़ता है क्योंकि तत्त्वज्ञानी पुरुष के जीवन के अन्तिम समय में उसका चित्त ज्ञान से प्रकाशित रहता है। उसके चित्त

पर किसी प्रकार के भोगने वाले कर्माशय नहीं रहते हैं क्योंकि ऋतम्भरा-प्रज्ञा के द्वारा उसके चित्त पर स्थित अज्ञानता मूल से नष्ट हो चुकी है एवं चित्त पर ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र विद्यमान रहता है, इसलिए उसके द्वारा किये गये कर्मों के संस्कार चित्त पर नहीं बनते हैं। जिनका चित्त ज्ञान से युक्त रहता है, सिर्फ उन्हीं मनुष्यों के द्वारा किये गये कर्मों के चित्त पर कर्माशय नहीं बनते हैं। तत्वज्ञानी पुरुष अपना आंतरिक विकास अभ्यास के द्वारा चित्त पर्यन्त किये रहता है, ऐसे महापुरुषों की मृत्यु भी संसारी मनुष्यों की भाँति नहीं होती है।

कभी-कभी मैं प्रकृति के नियमों को नहीं मानता था। अपने योग बल के प्रभाव से साधकों को आगे बढ़ाता रहता था। ऐसा तभी हो पाता था जब मैं उन साधकों के कर्मों को ग्रहण करता था। उदाहरण- अगर किसी साधक की कुण्डलिनी दस वर्ष तक कठोर अभ्यास करने के बाद जाग्रत होने वाली है, मैं उसकी कुण्डलिनी अभी शक्तिपात के द्वारा योगबल के प्रभाव से जाग्रत करके ऊर्ध्व कर देता था। ऐसी अवस्था में साधक का अभ्यास, अभ्यास का समय, उस समय उसके साथ घटने वाली घटनाएँ आदि जो दूसरे मनुष्यों के साथ भी जुड़ी होती हैं आदि, यह सब प्रकृति की व्यवस्था में बार-बार हस्तक्षेप है। इससे अपरा-प्रकृति नाराज होती थी। ऐसी अवस्था में मैं साधकों के कर्माशय स्वयं धारण कर लेता था, फिर साधकों के कर्माशय भोगते समय मुझे अत्यन्त क्लेश, दु:ख और अपमान सहना पड़ता था। कभी-कभी शारीरिक परेशानी भी भोगनी पड़ती थी, तब साधकों के कर्मों को भोग कर नष्ट कर पाता था। ऐसे कर्माशयों को योग बल के प्रभाव से पूर्ण रूप से नष्ट नहीं किया जा सकता है, सिर्फ कुछ हल्के-फुल्के कर्माशय प्राणायाम के समय योगाग्नि के द्वारा नष्ट हो जाते थे।

मार्गदर्शन करते समय कुछ विशेष प्रकार के कर्माशय हमारे अन्दर आ जाते थे, क्योंकि शक्तिपात करते समय योगबल का प्रेशर जोर से मारना पड़ता था। उस समय योगबल के प्रेशर से साधकों के चित्त पर स्थित कर्माशय बाहर निकलने लगते थे, यही कर्माशय हमारे अन्दर प्रवेश कर जाते थे। उस समय मैं यह नहीं देखता था कि साधकों के किस प्रकार के कर्माशय हमारे अन्दर आ रहे हैं। हमारा ध्यान शक्तिपात करने पर और साधक के सूक्ष्म शरीर के अन्दर होने वाली गतिविधियों पर होता था कि हमारे द्वारा किये जा रहे शक्तिपात से साधक के शरीर के अन्दर क्या प्रभाव पड़ रहा है। कुछ दिनों बाद अपनी कुटिया में पहुँचने पर साधकों के आये हुए कर्मों को देखता था, फिर कर्मों को नष्ट करने के विषय में सोचता था। ऐसी अवस्था में कभी-कभी ऐसे भी कर्म हमारे चित्त पर आ जाते थे जिन्हें मैं भोगकर नष्ट नहीं कर सकता था, क्योंकि मैं पुरुष हूँ।

तब मैं ऐसे कर्मों को वापस उसी अभ्यासी के पास भेज देता था, ऐसी अवस्था में उस अभ्यासी को वह कर्म अवश्य ही भोगने पड़ते हैं। अगर किसी कारण से अभ्यासी उन कर्मों को नहीं भोग पाया, तब उस अभ्यासी के अभ्यास में अवरोध आ जाता है। एक ऐसी ही घटना मुझे याद आ रही है, जब मैंने अभ्यासी का कर्म वापस कर दिया था, फिर उसकी साधना धीरे-धीरे बन्द हो गयी क्योंकि उस अवस्था में वह अभ्यासी भी वह कर्म नहीं भोग सकता था। वह कर्म निश्चय ही अगले जन्म में भोगना होगा।

2- इस प्रकार का मार्गदर्शन मैं करने में लगा हुआ था। यह सम्पूर्ण कार्य अपरा-प्रकृति के अन्तर्गत आता है। तत्वज्ञानी के लिए यह अवस्था पतन के अन्तर्गत आती है। संसारी मनुष्यों के लिए ऐसा मार्गदर्शन परोपकार की श्रेणी में आता है, मगर तत्वज्ञानी के लिए ऐसे कार्य अज्ञानता के अन्तर्गत आते हैं। जो योगी तत्वज्ञानी नहीं हैं, उनके लिए ऐसे कार्य परोपकार की श्रेणी में आते हैं। मैं साधकों का मार्गदर्शन करने के कारण कई वर्षों से अज्ञान की अवस्था में आ जाता हूँ। अभ्यास की निरंतरता के समय ज्ञान की अवस्था में रहता हूँ। मेरा जन्म प्रकृतिलय अवस्था से हुआ है, इस कारण मुझे इस जन्म में योग का फल मिलना निश्चित था। मैं यहाँ पर मार्गदर्शन करने के लिए नहीं आया हूँ। अभ्यास करते हुए चित्त पर स्थित क्लेशात्मक कर्मों को भोगकर नष्ट करूँ और निरुद्धावस्था का अभ्यास करते हुए स्थित-प्रज्ञ रहूँ, मगर मैं ऐसा नहीं कर रहा हूँ, इसलिए मेरी उम्र कुछ वर्ष बढ़ा दी गयी है। अब मैं निश्चय ही मार्गदर्शन करना धीरे-धीरे बन्द कर दूँगा ताकि अपने स्वरूप में स्थित होकर रहूँ, फिर उचित समय आने पर स्थूल शरीर का त्याग कर दूँ।

पुस्तकें पढ़कर, सन्त पुरुषों से प्रवचन सुनकर अथवा वीडियो देखकर योग का अभ्यास नहीं किया जा सकता है। योग का अभ्यास करने के लिए योग्य गुरू का अथवा अनुभवी मार्गदर्शक का होना अति आवश्यक है। योग्य गुरू के मार्गदर्शन में ही योग का अभ्यास करना चाहिये। अनुभवी गुरू ही किसी भी अभ्यासी को सही मार्गदर्शन कर सकता है, क्योंकि वह अनुभवी गुरू अभ्यास के द्वारा योग मार्ग को तय कर चुका है, इसलिए वह इस मार्ग को भलीभांति जानता है। उस गुरू को मालूम होता है कि अध्यात्म मार्ग में अमुक अवस्था पर किस प्रकार की कठिनाइयाँ या अवरोध आते हैं, इन अवरोधों को किस प्रकार से दूर किया जाय और योग मार्ग में आयी कठिनाइयों को कैसे सुलझाया जाय। अभ्यास करते समय साधक किस प्रकार के संयमों का पालन करे, किस प्रकार की विधि अपनाए, जिससे अभ्यासी का मार्ग आगे की ओर प्रशस्त हो जाये, जिससे अभ्यासी को सफलता मिलने में सरलता हो जाये।

बहुत से अभ्यासियों को मैंने कहते सुना है- उनके गुरू अमुक देवता हैं। ऐसे अभ्यासी अमुक देवता को ही गुरू बना लेते हैं। इस विषय में मैं कहना चाहूँगा- अगर आपको अच्छा साधक बनना है, सफलता को प्राप्त करना है, तो देवी-देवता को अपना गुरू न बनाएँ, देवी-देवताओं को अपना इष्ट जरूर बना लेना चाहिये। उसे जो भी देवता मनपसंद हो, उस देवता को अपना इष्ट बनाए क्योंकि अभ्यास करते समय योग के विषय में जब कोई जानकारी लेनी होगी, उस समय आपको किसी प्रकार की जानकारी देवता से नहीं मिल पायेगी। इसका कारण यह है- आप उस देवता से सम्पर्क ही नहीं कर पायेंगे, तब आप सम्पर्क के अभाव में मार्गदर्शन कैसे ले पायेंगे? यह बात अपने मस्तिष्क से निकाल दीजिए कि मैंने अमुक देवता को अपना गुरू मान लिया है। क्या आपको उस देवता ने अपना शिष्य माना है? पूर्वकाल में ऐसा होता था कि कुछ राजाओं व योगियों ने अपना गुरू देवताओं को बनाया है, ऐसे योगियों का सम्पर्क उस देवता से उनकी इच्छानुसार हो जाता था। वह युग दूसरा था, वर्तमान समय में ऐसा नहीं हो सकता है।

जब आपको योग का अभ्यास करना हो, तब सबसे पहले योग का मार्गदर्शन लेने के लिए सद्गुरु की तलाश कीजिए, फिर आप उसे अपना गुरू बना लीजिये। कभी भी गुरू बनाने में शीघ्रता न करें। पहले उसके बाहरी व्यवहार को अच्छी तरह भलीभाँति पहचान लीजिये। फिर उनके शिष्यों के विषय में जानने का प्रयास कीजिए कि उनके शिष्यों की आध्यात्मिक योग्यता क्या है अथवा साधकों की अवस्थाएँ कैसी हैं, उनके शिष्य आपस में कैसा व्यवहार करते हैं? यह सब जानना अति आवश्यक है कि उनके कितने शिष्य उच्चावस्था को प्राप्त हो चुके हैं, गुरू जी के पास सभी शिष्यों को मार्गदर्शन करने का समय है, जरूरत पड़ने पर शिष्यों की आध्यात्मिक समस्याओं को सुलझाने का उनके पास पर्याप्त समय है। अगर उनके पास बहुत ज्यादा शिष्य हैं अर्थात उन्होंने बहुत ज्यादा शिष्य बना लिये हैं, उनके पास शिष्यों की आध्यात्मिक समस्याएँ सुलझाने का समय नहीं है और शिष्यों को मार्गदर्शन करने का भी समय नहीं है, ऐसी अवस्था में आप उन्हें अपना गुरू न बनायें।

जब अभ्यासी को मार्गदर्शन करने के लिये उनके पास समय ही नहीं है, तब अभ्यास करते समय वह अपने शिष्य के आध्यात्मिक अवरोध कैसे दूर कर पायेंगे? आप अपना गुरू ऐसे योगी को बनाये, जिसने आध्यात्मिक मार्ग की अंतिम अवस्था को जाना है तथा स्वयं अनुभूति की है। उसने थोड़े से शिष्य बनाये हैं और जरूरत पड़ने पर सभी शिष्यों को उचित समय देता है। कम शिष्यों वाले योग्य गुरू के मार्गदर्शन में अभ्यास करें। श्रेष्ठ गुरू के शिष्य भी श्रेष्ठ ही होते हैं।

श्रेष्ठ गुरू में एक यह भी गुण होता है कि उचित समय पर गुरू अपने शिष्य को शक्तिपात करके अपने योग बल के प्रभाव से साधक को आगे की ओर बढ़ा देते हैं। उनका साधक अगर बहुत समय तक अभ्यास करने के बाद भी आगे की ओर नहीं बढ़ पा रहा है, ऐसी अवस्था में दयालु गुरूदेव उस पर कृपा कर देते हैं। इसलिए योग का अभ्यास करने के लिए अनुभवी गुरू का होना अति आवश्यक है।

3- बहुत से साधकों को भ्रम हो जाता है कि उन्हें अमुक अवस्था प्राप्त हो गयी है। ऐसा नाड़ियों में प्राणों की क्रिया के कारण होता है। साधकों के सद्गुरु की अथवा मार्गदर्शक की यह जिम्मेवारी होती है कि वह अपने शिष्य को आध्यात्मिक वास्तविक अवस्था के विषय में पूर्ण जानकारी से अवगत करायें, ताकि अभ्यासी को मालूम रहे कि उसकी आध्यात्मिक अवस्था क्या है। ऐसा सिर्फ उन साधकों के साथ होता है जो वर्तमान जन्म में आवश्यकतानुसार उचित अभ्यास नहीं करते हैं और योग मार्ग पर चलने के लिए सही ढंग से यम-नियम का पालन नहीं करते हैं। ऐसी अवस्था में उनके चित्त पर उचित शुद्धता की कमी रहती है, इस कारण उनके चित्त पर तमोगुण आच्छादित रहता है। तमोगुण के कारण अभ्यासी महसूस नहीं कर पाता है कि उनके अन्दर प्राणों की अवस्था कहाँ पर है। चित्त पर शुद्धता लाने के लिए प्राणायाम, मंत्र जाप, त्राटक, शुद्ध भोजन, समाज के प्रति अच्छा और सरल व्यवहार होना चाहिये। इससे अभ्यासी के चित्त पर शुद्धता के कारण सत्वगुण की मात्रा बढ़ेगी। चित्त पर उचित शुद्धता की अवस्था में ध्यानावस्था के समय शरीर के अन्दर की हलचल महसूस होने लगेगी। अगर आपको अपने अभ्यास के समय शरीर के अन्दर अनुभूति नहीं होती है, तब भी कठोर अभ्यास में लगे रहना चाहिए।

जिन साधकों ने पूर्व जन्म में योग का अभ्यास किया है, वर्तमान जन्म में जब आप अभ्यास करना शुरू करेंगे, तब सफलता मिलनी शुरू हो जायेगी, क्योंकि पूर्व जन्म के चित्त पर स्थित संस्कार वर्तमान समय में अभ्यास करते समय सहयोग करते हैं। जिन्होंने पूर्व जन्म में अभ्यास नहीं किया है, ऐसे अभ्यासियों को वर्तमान जन्म में योग का अभ्यास करते समय सफलता देर से मिलेगी, क्योंकि ऐसे अभ्यासी को अभ्यास करते समय कर्मों का सहयोग नहीं मिलता है, उनके चित्त पर योग के संस्कार विद्यमान नहीं रहते हैं। ऐसी अवस्था में अभ्यासी को किसी प्रकार की अपने अन्दर हेय भावना नहीं लानी चाहिये। उसे अपने गुरू के द्वारा बताये हुए तरीके से योग का अभ्यास कठोरता से करते रहना चाहिये। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि साधक की साधना अच्छे ढंग से चल रही होती है मगर उसे किसी प्रकार के अनुभव नहीं आते हैं और अनुभूति भी नहीं होती है। ऐसे साधक को उसकी आध्यात्मिक अवस्था के विषय में उसके गुरूदेव को बता देना चाहिए।

बहुत से गुरू या मार्गदर्शक अपने शिष्यों को मार्गदर्शन करना शुरू कर देते हैं। मगर साधक जब अपनी आध्यात्मिक अवस्था के बारे में पूछता है, तब उनके गुरूदेव साधक की आध्यात्मिक अवस्था बता नहीं पाते हैं अथवा उत्तर के समय चुप रहते हैं। इसका कारण यह होता है- वह महानुभाव गुरू पद पर बैठ तो जाते हैं, फिर ढेरों शिष्य बना लेते हैं, मगर उनकी योग्यता इतनी नहीं होती है कि वह अपने शिष्यों की आध्यात्मिक अवस्था के विषय में कुछ बता सकें। मुझे कुछ ऐसे साधक मिले है जो दूसरे गुरूओं के शिष्य हैं मगर वह अपनी आध्यात्मिक अवस्था के बारे में मुझसे पूछ रहे थे। उन साधकों ने मुझे बताया- जब मैं अपने गुरूदेव से अपनी आध्यात्मिक अवस्था के बारे में पूछता हूँ, तब वह चुप रहते हैं, कुछ भी नहीं बोलते हैं, अब मैं अपनी अवस्था के विषय में किस से पूछूँ।

4- कभी-कभी ध्यानावस्था में आये अनुभवों के अर्थ निकालने में भी गड़बड़ी हो जाती है। इसका कारण यह है- साधकों के ध्यानावस्था में आये एक जैसे अनुभवों के अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं। ऐसा साधकों की अवस्था में अंतर होने के कारण होता है। इसलिए साधकों की अवस्था को जानकर ही ध्यान में आये अनुभवों का अर्थ निकाला जाये। साधकों की अवस्था जाने बगैर अनुभव का अर्थ गलत भी हो सकता है। इन शब्दों को समझने के लिए एक उदाहरण भी दे रहा हूँ। अगर साधक नया है, उसने ज्यादा अभ्यास नहीं किया है, फिर भी कुछ महीनों से अभ्यास कर रहा है, ऐसे अभ्यासी की अगर ध्यान पर बैठते ही थोड़ी देर में भस्त्रिका अपने आप चलने लगे, अभ्यासी अगर रोकने का प्रयास करे फिर भी भस्त्रिका का चलना न रुके, तो समझ लेना चाहिए कि उस अभ्यासी की कुण्डलिनी ने अपनी आँखें खोल दी हैं।

कुण्डलिनी शक्ति मूलाधार चक्र में स्थित त्रिकोण के मध्य शिवलिंग पर साढ़े तीन चक्कर लगाए हुए लिपटी रहती है। अभ्यासी को शिवलिंग पर लिपटी हुई कुण्डलिनी शक्ति के साढ़े तीन चक्कर लपेटे हुए दिखाई देते हैं, मगर आधा चक्कर दिखाई नहीं देता है क्योंकि कुण्डलिनी शक्ति अपनी पूँछ अपने ही मुँह के अन्दर (आधा चक्कर) निगले रहती है और अपनी आँखें बन्द किये रहती है।

साधक जब अभ्यास करना शुरू कर देता है, तब ध्यानावस्था के समय उसकी इंद्रियाँ बहिर्मुखता को त्याग कर अंतर्मुखी होने लगती हैं। तब अपान वायु अपनी अधोगति को छोड़कर ऊर्ध्व मुखी होने लगता है। अभ्यासी द्वारा कठोर अभ्यास करने के बाद उचित समय पर सूक्ष्म प्राण मूलाधार चक्र में स्थित कुण्डलिनी शक्ति को धक्के मारने लगता है। उस समय कुण्डलिनी शक्ति अपनी पूँछ मुँह से उगल देती है और अपनी आँखें भी खोल देती है। आँखें खोलने के बाद कुण्डलिनी शक्ति के कारण भस्त्रिका जोर-जोर

से चलने लगती है। साधक अगर अभ्यास उग्रता से कर रहा है तो वह अपनी भस्त्रिका को रोक नहीं सकता है, क्योंकि यह भस्त्रिका कुण्डलिनी शक्ति द्वारा चलाई जा रही है।

जब कुण्डलिनी शक्ति कण्ठ चक्र तक ऊर्ध्व हो रही होती है, तब साधक को इसी अवस्था पर अभ्यास करते हुए कई वर्ष बीत जाते हैं, उस समय प्राणों का भारी दबाव कण्ठ चक्र पर होता है। कण्ठ चक्र बन्द होने के कारण कुण्डलिनी शक्ति आगे की ओर जा नहीं पाती है, तब स्वयं कुण्डलिनी शक्ति के प्रभाव से भस्त्रिका चलने लगती है। ऐसी अवस्था में साधक अपनी भस्त्रिका रोक नहीं सकता है। साधक को अधिक से अधिक प्राणायाम करना चाहिए ताकि कुण्डलिनी शक्ति का मार्ग आगे की ओर प्रशस्त हो सके।

साधक के इष्ट अगर भगवान शंकर जी हैं, तब उसे ध्यान करते समय हृदय चक्र पर भगवान शंकर जी के स्वरूप का दर्शन होता है। जब उसकी साधना कण्ठ चक्र पर चल रही होती है, तब भी अनुभव में भगवान शंकर जी के स्वरूप का दर्शन होता है। जब उसकी साधना आज्ञा चक्र पर चल रही होती है, तब भी साधक को भगवान शंकर जी का अनुभव आता है। अन्तिम जन्म में सहस्त्रार चक्र के विकसित होते समय परम शिव का साक्षात्कार होता है। फिर जब शिवछिद्र का विकास-क्रम चल रहा होता है तब भी परम शिव का साक्षात्कार होता है। इन सभी प्रकार की अवस्थाओं में भगवान शंकर जी का थोड़े से भिन्नता को लेकर दर्शन होते हैं, इनका थोड़ा सा अर्थ भी भिन्न होता है। सहस्त्रार चक्र के विकास के समय और शिवछिद्र के विकास के समय परम शिव के स्वरूप के साक्षात्कार में स्वरूप का थोड़ा सा अन्तर होता है, इसके अर्थ में भी थोड़ा सा अन्तर होता है।

ध्यानावस्था में जो अनुभव दिखाई देते हैं, वे अनुभव उसके चित्त पर स्थित वृत्तियों के अनुसार आते हैं। मनुष्य जैसे कर्म करता है, उन कर्मों के संस्कार उसके चित्त पर विद्यमान होते रहते हैं। ये संस्कार उसके चित्त पर अनन्त काल से विद्यमान होते आये हैं। मनुष्य को अगला जन्म उसके संस्कारों (कर्माशयों) के अनुसार ही प्राप्त होता है। कहते हैं- जीवात्मा क्रमानुसार 84 लाख योनियों में जन्म लेकर भटकता हुआ जीवन जीता रहता है। इन 84 लाख योनियों में मनुष्य शरीर को ही श्रेष्ठ शरीर कहा गया है, क्योंकि मनुष्य शरीर के द्वारा ही योग का अभ्यास करके ईश्वर की प्राप्ति अथवा स्थित-प्रज्ञ की अवस्था प्राप्त की जा सकती है। फिर भी अधिकांश मनुष्य ईश्वर की ओर ध्यान नहीं देते हैं और न ही ईश्वर प्राप्ति का प्रयास करते हैं।

जन्म ग्रहण करते ही मनुष्य माता-पिता, भाई-बहन, चाचा-ताऊ, दादा-दादी, मामा-नाना आदि रिश्तों में बँध जाता है। यह मेरा घर-परिवार, मोहल्ला-गाँव आदि है, अमुक हमारे रिश्तेदार हैं, अपना-पराया, राग-द्वेष, मोह-लालच, सुख-दु:ख आदि की तृष्णा से ग्रसित होकर जीवन जीने लगता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य जैसा कर्म करता है, उन कर्मों के संस्कार उसके चित्त पर विद्यमान होते रहते हैं। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, अज्ञान से युक्त होकर आसक्त हुआ संसार में लिप्त हो जाता है। स्थूल जगत में तमोगुण का ही व्यापार चलता है। इसलिए उसके चित्त पर ज्यादातर संस्कार तमोगुण से ही युक्त होते हैं। वर्तमान समय में देख सकते हैं मनुष्य कैसे-कैसे कर्म करता रहता है, यह सब हम सभी को देखने को मिलता है। क्योंकि समाज में कभी-कभी कुछ ऐसी घटनाएँ घटती हैं, उन घटनाओं के विषय में सुनकर या देखकर बड़ा दुख होता है। क्या ऐसी घृणित घटनाओं को अंजाम देने के लिए ही मनुष्य शरीर मिला है?

मनुष्य शरीर की प्राप्ति पाप और पुण्य मिश्रित कर्मों से हुई है। इसलिए मनुष्य के चित्त पर पाप और पुण्य मिश्रित संस्कार विद्यमान रहते हैं। मनुष्य चाहे जितना अधर्मी हो, उसके अन्तःकरण में कुछ न कुछ पुण्य रूपी संस्कार विद्यमान रहते हैं। इसी प्रकार मनुष्य चाहे जितना बड़ा धर्मात्मा हो, उसके अन्तःकरण में कुछ न कुछ पाप से युक्त संस्कार अवश्य विद्यमान रहते हैं। ये पाप और पुण्य से युक्त संस्कार प्रारब्ध वाले कर्माशयों में विद्यमान रहते हैं। इसलिए दोनों प्रकार के संस्कारों का इसी जन्म में भोगा जाना निश्चित है। कभी-कभी ऐसा देखा गया है- धर्मात्मा पुरुष अधर्मी बन जाता है और इसी प्रकार अधर्मी पुरुष कभी-कभी धर्मात्मा बन जाता है। साधक जब योग का अभ्यास करता है, तब उसे धर्म और अधर्म से युक्त दृश्य ध्यानावस्था में दिखाई देते हैं। अब ऐसी अवस्था में साधक यह नहीं कह सकता कि ऐसे कर्म इस जीवन में मैंने नहीं किये हैं। उस अभ्यासी की ऐसी सोच बिल्कुल सत्य है, मगर ऐसे कर्म उसने पूर्व जन्मों में अवश्य किये होंगे, नहीं तो अनुभव में ऐसे दृश्य दिखाई नहीं देते। इसी प्रकार के कर्मों के आधार पर ही साधक को सफलता और असफलता प्राप्त होती है। इस सफलता और असफलता का जिम्मेवार स्वयं साधक ही होता है। ऐसी अवस्था में साधक को हताश नहीं होना चाहिए, धैर्यपूर्वक कठोर अभ्यास में लगे रहना चाहिये। पूर्वजन्मों में उसने कैसे कर्म किये हैं, उसमें अब वह कुछ नहीं कर सकता, मगर इस जन्म में तो अच्छे कर्म किये जा सकते हैं, इन वर्तमान कर्मों का भविष्य में अच्छा फल अवश्य मिलेगा।

कुछ साधकों को दूसरों के विषय में ऐसे अनुभव आते हैं जो सत्य ही नहीं होते हैं, बल्कि वे अनुभव सर्वथा गलत होते हैं। ऐसी अवस्था में साधकों की तमोगुणी वृत्तियाँ ही दूसरों का स्वरूप धारण कर लेती हैं फिर ये वृत्तियाँ अभ्यासी को अधर्म से युक्त होकर तमोगुण के कारण गलत या असत्य दृश्य

दिखाती हैं। साधक सही अर्थ न समझ पाने के कारण दूसरों के विषय में गलत सोच बना लेता है। मगर सत्वगुण से युक्त वृत्तियाँ अनुभव में सत्य दृश्य दिखाकर सत्य से अवगत कराती रहती हैं। साधक को तमोगुण से युक्त वृत्तियाँ जो भी दृश्य दिखाती हैं, वह ज्यादातर असत्य ही होता है। ऐसी अवस्था में साधक को अपने सद्गुरु से मार्गदर्शन ले लेना चाहिये।

जो मनुष्य पूर्व जन्मों में अधर्म से युक्त होकर कार्य करता रहा होगा, उसके चित्त पर स्थित संस्कार अधर्म से युक्त ही होते हैं। जैसे उसके चित्त पर संस्कार विद्यमान होते हैं, उससे सम्बंधित उसकी सोच भी अधर्म से युक्त होती है, क्योंकि उसकी प्रकृति ही ऐसी होती है। जिस मनुष्य ने धर्म से युक्त होकर कर्म किये होते हैं, उसके चित्त पर स्थित संस्कार भी धर्म से युक्त होते हैं। ऐसे मनुष्यों की प्रकृति सात्विकी और सत्य से युक्त होती है। ऐसे मनुष्यों की सोच सात्विक, धार्मिक, परोपकारी एवं सरल स्वभाव की होती है। इसीलिए कहा जाता है कि आप दूसरों के स्वभाव को बदलने की कोशिश न करें, आप उन्हें नहीं बदल पायेंगे। इस कार्य के लिये अपना समय बर्बाद न करें। बदलना है तो आप अपने आप को बदलें। जिस मनुष्य की जैसी सोच होती है, वैसा ही व्यवहार वह दूसरों के साथ करता है। आजकल वर्तमान समय में अधर्म से युक्त सोच वाले मनुष्य अधिकतर देखने को मिल जायेंगे, ऐसे मनुष्य सदैव दूसरों को शब्दों से कष्ट ही देते रहते हैं।

उच्च श्रेणी के साधकों को अनुभव में जो अवस्था होती है अथवा जो अवस्था दिखाई देती है, उस अवस्था का प्रभाव वास्तविक जीवन में कुछ महीने के बाद अथवा कुछ वर्षों के बाद प्राप्त होता है। अनुभव पहले आता है, फिर कुछ समय बाद वह अवस्था प्राप्त हो जाती है। पहले से आध्यात्मिक अवस्था के बारे में जानकारी देने में सात्विक वृत्तियाँ कार्य करती हैं। ऐसी सात्विक वृत्तियों द्वारा दी गयी जानकारी कभी असत्य नहीं होती है। कभी-कभी साधक सोचने लगता है- मुझे अमुक अवस्था प्राप्त हो गयी है, ऐसा उसने अनुभवों में देखा है, मगर वर्तमान में ऐसा नहीं होता है। ऐसे अनुभव भविष्य के लिये सन्देश देते हैं कि साधक को यह अवस्था भविष्य में अवश्य प्राप्त हो जायेगी।

एक आवश्यक जानकारी सभी साधकों को देना चाहता हूँ। जब स्थूल शरीर युवा होता है, तब योग का अभ्यास करने की क्षमता ज्यादा होती है। उम्र बढ़ जाने के बाद योग का अभ्यास करने की शारीरिक क्षमता घट जाती है। इसलिए युवावस्था में ज्यादा से ज्यादा अभ्यास करना चाहिये, इससे अभ्यास में आगे का मार्ग प्रशस्त होने में सहायता मिलती है। बहुत से लोगों का कहना होता है- अभी व्यस्तता के कारण अभ्यास नहीं कर पा रहा हूँ, रिटायर होने के बाद फुर्सत में योग का अभ्यास करूँगा।

मनुष्य सांसारिक व्यस्तता के कारण योग का अभ्यास नहीं कर पाता है और उसका सारा जीवन सांसारिक पदार्थों के भोग में व्यतीत हो जाता है।

5- गुरू का कार्य शिष्य को मार्गदर्शन करना होता है। शिष्य को स्वयं अभ्यास के मार्ग पर आगे की ओर बढ़ना होता है। इसलिए जब आप अपना गुरू बनायें, गुरू बनाने से पहले उनके विषय में ज्यादा से ज्यादा जानकारी ले लीजिये। जब आप पूर्ण रूप से संतुष्ट हो जायें, तब गुरू के रूप में उन्हें स्वीकार करें। किसी के कहने पर अथवा किसी प्रकार के मानसिक दबाव में किसी को गुरू न बनायें। गुरू ऐसा होना चाहिए जिसने आध्यात्मिक मार्ग को अभ्यास के द्वारा भलीभांति जान लिया है, ऐसे गुरू ही शिष्य को सही मार्गदर्शन कर सकते हैं।

गुरू के पास नम्रतापूर्वक झुककर जायें। यदि आपके पास विनम्रता, श्रद्धा आदि नहीं है, तो फिर आपको उस गुरू से कुछ भी प्राप्त नहीं हो पायेगा। आप अपने अहंकार को अपने गुरू के सामने प्रकट न होने दें। अहंकारी शिष्य अहंकार के कारण आध्यात्मिक मार्ग में सफल नहीं हो पायेगा। आपका अहंकार ही आध्यात्मिक सफलता में रुकावट डालेगा। इसीलिए शिष्य को गुरू के प्रति श्रद्धावान होना ही चाहिए, तभी गुरू के मार्गदर्शन से उचित सफलता प्राप्त कर पायेगा।

अगर गुरू ने अपने शिष्य को कृपा भाव से शक्तिपात करके अथवा संकल्प के द्वारा कुछ दे भी दिया है, तो अहंकार से युक्त श्रद्धाहीन शिष्य गुरू के आशीर्वाद को अपने पास नहीं रख पायेगा। वह आशीर्वाद कुछ समय बाद निष्फल हो जायेगा। ऐसे शिष्य कुम्हार के चटके हुए घड़े के समान होते हैं। कुम्हार के आवे में जो घड़ा चटक जाता है, ऐसा घड़ा किसी के उपयोग का नहीं रहता है, उसे दूर फेंक दिया जाता है। उस फेंके हुए घड़े के टुकड़े बहुत समय तक किसी लायक नहीं रहते हैं, वे टुकड़ों के रूप में पड़े रहते हैं। इसलिए कुम्हार के अच्छे घड़े की तरह बनने का प्रयास करो। इतना याद रखना कि कुम्हार घड़े को आवे में अवश्य पकाएगा।

6- अष्टांग योग के अनुसार यम पहला अंग है अथवा पहली पायदान है, इसके अन्तर्गत पाँच सिद्धान्त आते हैं। सत्य इन्हीं सिद्धान्तों के अन्तर्गत आता है। किसी भी अभ्यासी को श्रेष्ठ बनने के लिए अपने जीवन में सत्य को अवश्य अपनाना चाहिए। सत्य का अनुसरण करने वाले का मन अत्यन्त शक्तिशाली होता है। जिसका मन शक्तिशाली या बलवान होता है, ऐसा साधक दृढ निश्चयी होता है। जो साधक दृढ़ निश्चयी होता है, उसे अभ्यास करते समय मन का पूर्ण सहयोग मिलता है। मनुष्य द्वारा किये

जाने वाले कार्य में मन का सहयोग मिलने से कार्य में सफलता प्राप्त होती है। सत्य बोलने वाले साधक को संसार में व्यवहार करते समय सत्य के कारण थोड़ी परेशानी हो सकती है, अगर वह अपने आप में संतुष्ट है।

वर्तमान समय में व्यवहार करते समय मनुष्य अपने लाभ के लिये अकारण ही असत्य बोल देता है। कुछ लोगों को झूठ बोलने की आदत सी बन जाती है। संसारी मनुष्य अपने स्वार्थ के लिये झूठ बोलता है, यह समझा जा सकता है मगर बहुत से साधक भी झूठ बोलते हैं, यह बड़े आश्चर्य की बात है। साधक सत्य को प्राप्त करने के लिये सत्य की खोज में लगा रहता है मगर वह अपने जीवन में झूठ को (असत्य को) अपनाये रहता है। अर्थात व्यवहार में झूठ बोलकर और अपने जीवन में असत्य अपनाकर सत्य की खोज कर रहा होता है, कैसी विडम्बना है!

बहुत से मनुष्य यह कहते हुए मिल जायेंगे- मैं कभी झूठ नहीं बोलता हूँ और कुछ समय बाद फिर झूठ बोलने लगते हैं। मैं ऐसे कुछ साधकों को जानता हूँ जो मुझसे ही झूठ बोल देते हैं। फिर मैं मन के अन्दर सोचता हूँ- यह साधक सोचता होगा कि जो झूठ मैंने बोला है, गुरूजी को मालूम ही नहीं होता होगा। मैं एक ऐसे अभ्यासी को जानता हूँ, किसी के कहने पर मैं कई किलोमीटर की यात्रा करके उसके पास गया, उसकी कुण्डलिनी जाग्रत करके ऊर्ध्व की। कुछ वर्षों बाद उसने मुझसे कहा- आपने मेरी कुण्डलिनी कब जाग्रत की थी, यह बात गलत है, मेरी कुण्डलिनी पहले से जाग्रत है। उसकी उम्र मुझसे भी ज्यादा है। साधकों! इस प्रकार का झूठ अपने गुरू से कभी मत बोलना।

7- साधक को श्रेष्ठ बनने के लिए किसी भी व्यक्ति द्वारा की गयी निंदा को सुन लेना चाहिये। जब कोई व्यक्ति आपकी निन्दा कर रहा हो, तब आप अपने मन को विचलित न होने दें, संयम से काम लें, अपने अन्दर विकार न लायें। आप आराम से निन्दा सुनते रहें। जब निन्दा करने वाला निन्दा करना बन्द कर दे, तब आप मुस्कुरा कर चल दीजिए। अब आप सोच रहे होंगे कि मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ- जब कोई व्यक्ति निन्दा कर रहा हो अर्थात अकारण शब्दों से अपमान कर रहा हो, मैं उसकी निन्दा सुनता रहूँ, निन्दा करने वाले को उत्तर क्यों न दूँ। सत्य तो यह है कि निन्दा सुन लेने से आपको अपने जीवन में बहुत लाभ मिलेगा। निन्दा सुन लेना साधक के लिये उपयोगी रहता है। बहुत से साधकों को शिकायत रहती है- गुरू जी, मैं कठोर अभ्यास कर रहा हूँ मगर अभ्यास के अनुसार मुझे सफलता नहीं मिल पा रही है, आगे का मार्ग प्रशस्त नहीं हो रहा है? इसका अर्थ है- आपके चित्त पर उचित मात्रा में शुद्धता नहीं होगी। चित्त पर स्थित अशुद्धता ही इस मार्ग में बहुत बड़ा अवरोधक है। निन्दा सुन लेने से चित्त पर स्थित मलिनता का

नाश होने लगता है। साधारण हल्के तमोगुणी कर्माशयों का नाश होने लगता है। चित्त पर स्थित तमोगुण का जितना नाश होगा, उतनी ही सत्वगुण की मात्रा चित्त पर बढ़ती है। इससे अभ्यास के समय ध्यान गहरा व पहले की अपेक्षा ज्यादा अवधि वाला हो जाता है।

निन्दा सुनते समय मन के अन्दर किसी प्रकार का विकार नहीं आना चाहिए। यह भी नहीं सोचना चाहिये- अभी तो मैं चुप हूँ, समय आने पर तुम्हें बताएँगे। शुरुआत में निन्दा सुनते समय आपके अन्दर क्रोध उत्पन्न होगा, संयम के द्वारा आप क्रोध को शान्त कर लीजिये। ऐसा करना थोड़ा कठिन होगा, क्योंकि अहंकार के कारण आपके अन्दर कुछ विकार आ सकता है मगर निन्दा करने वाले को किसी प्रकार का उत्तर न दें। इससे धीरे-धीरे आपकी सहनशक्ति बढ़ेगी और मन को ऐसी अवस्था में शान्त रखने का भी अभ्यास होता रहेगा। इससे मन बलवान व दृढ़ निश्चय वाला होने लगेगा। मन की दृढ़ता ही किसी भी कार्य को पूर्ण करने में सहायक होती है।

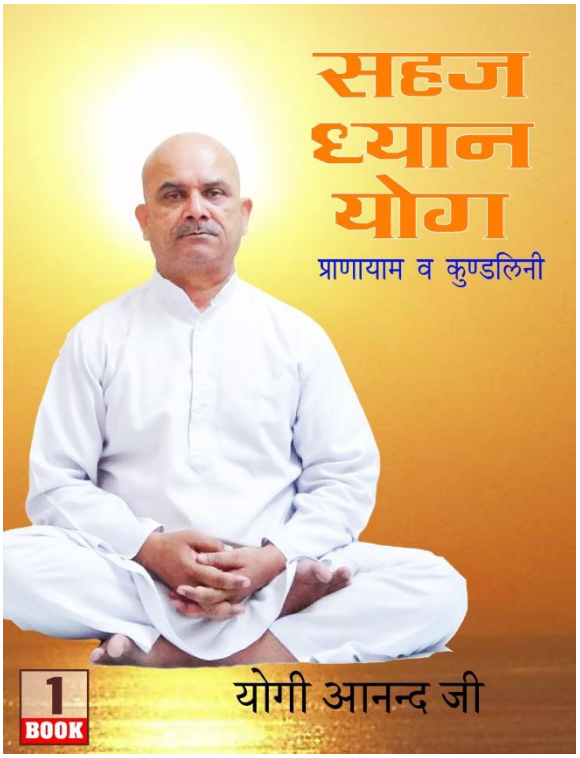
समाज में बहुत से ऐसे व्यक्ति मिल जायेंगे, वह आपको नीचा दिखाने के लिये आपकी झूठी मनगढ़ंत बुराई करेंगे और अकारण अपमान भी कर सकते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप गलत हैं। सच तो यह है कि निन्दा करने वाले व्यक्ति का अन्तःकरण मलिन होता है। मलिन चित्त वाला व्यक्ति ईर्ष्या और द्वेष के कारण आपकी अकारण निन्दा कर रहा होता है। निंदक की सोच या स्वभाव ही ऐसा होता है क्योंकि उसके चित्त पर निम्न श्रेणी के संस्कार विद्यमान रहते हैं, इसलिए वह दूसरों पर अकारण ही अपशब्दों की बौछार करता रहता है। निंदक को कभी भी शिक्षा देने का प्रयास नहीं करना चाहिए। आपकी शिक्षा का प्रभाव निंदक पर नहीं पड़ेगा, बल्कि उल्टा ही आपकी और वेगपूर्वक निंदा करेगा।

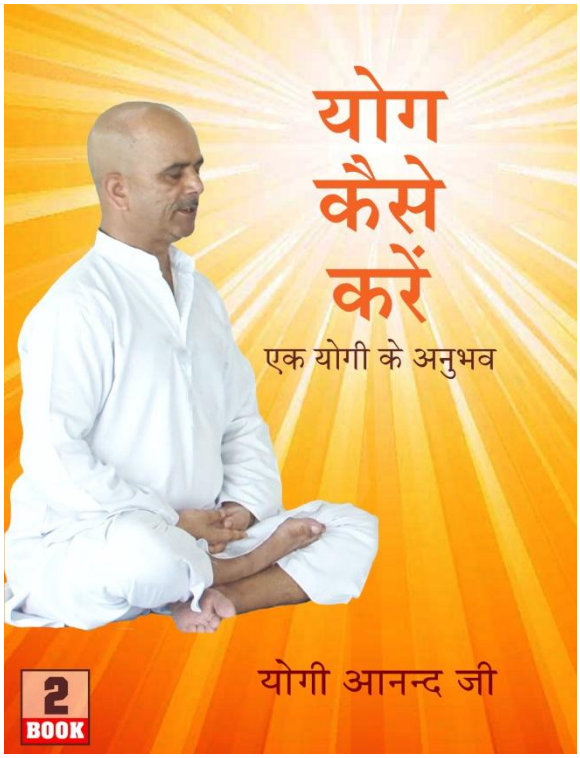
निन्दा करने वाले से वाद-विवाद में उलझना नहीं चाहिये, क्योंकि आप उससे जीत नहीं सकते हैं। वह निम्न श्रेणी के शब्दों का प्रयोग करेगा, उन शब्दों का उत्तर देने के लिये आपको भी निम्नता में उतरना होगा, तभी आप निम्न श्रेणी के शब्दों का प्रयोग कर पायेंगे। फिर भी आप उससे शब्दों में जीत नहीं पाओगे, क्योंकि वह आप को उत्तर देने के लिये और निम्नता में आ जायेगा, यही क्रम चलता रहेगा। इसलिए आपको निंदक का उत्तर नहीं देना है, उसे वैसा ही बना रहने दो। आपको निम्न श्रेणी का व्यक्ति नहीं बनना है, आपको उच्च श्रेणी का व्यक्ति बनना है। जरूरत पड़ने पर आप उसके सामने हाथ जोड़कर कह सकते हैं- अगर मुझसे गलती हो गयी हो तो मुझे माफ कीजिये। ये शब्द सुनते ही उसके अन्दर का अहंकार भड़केगा और सोचेगा- देखो, मुझसे डर गया, इसलिए मुझसे हाथ जोड़ रहा है। इससे आपके अन्दर विशेष प्रकार की प्रसन्नता आयेगी। किसी से भी माफी माँगना और माफ कर देना श्रेष्ठ व्यक्तियों का

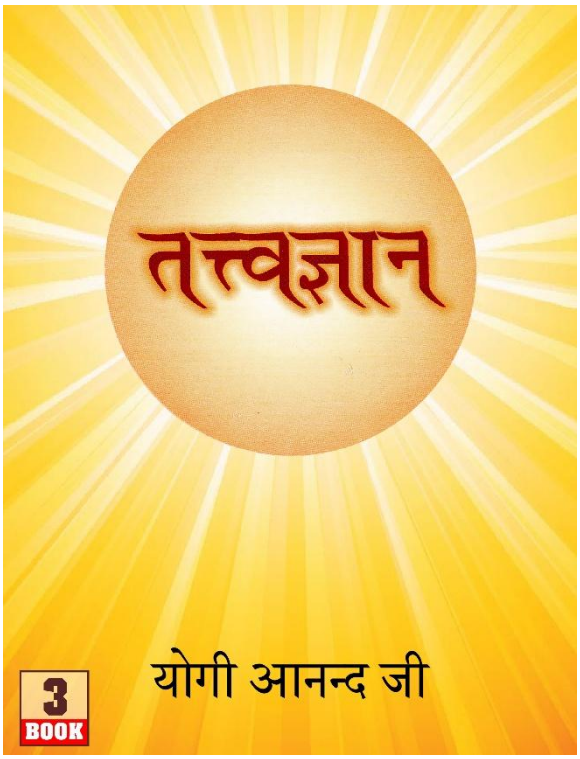
गुण होता है। बिच्छू का कार्य डंक मारना होता है, सज्जन व्यक्तियों का कार्य होता है- माफ कर देना। इसलिए सज्जन व्यक्ति बनिये, ताकि आप भविष्य में श्रेष्ठ साधक बन सकें।

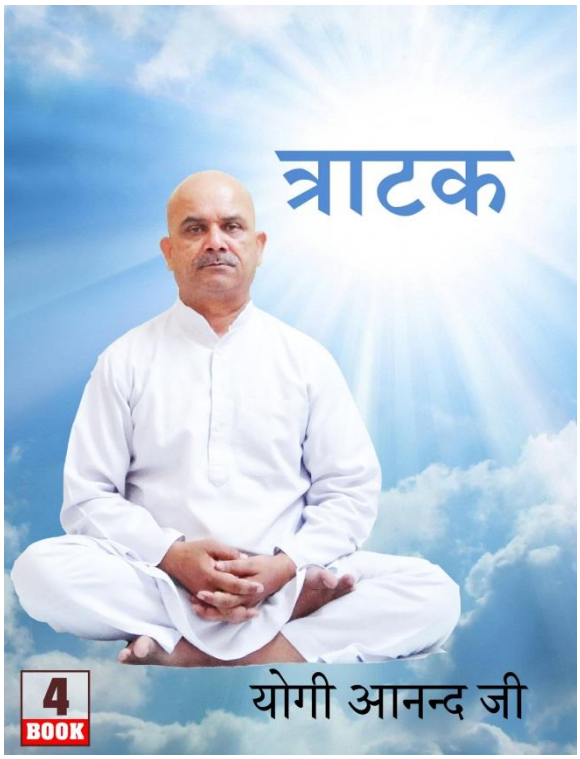
अपने जीवन में कभी किसी से ईर्ष्या और द्वेष न करो। अगर आप अपने अन्दर ईर्ष्या-द्वेष को जगह देंगे, तब ऐसी अवस्था में आपकी साधना में रुकावट आने लगेगी और आपका अध्यात्म में पतन होने का भय बना रहेगा। जो व्यक्ति अपनी आँखों पर जैसे रंग का चश्मा चढ़ाए रहता है, उसको वैसा ही संसार दिखाई देता है। जिसकी आँखों में पीलिया रोग लग जाता है, उसे सर्वत्र पीला ही पीला दिखाई देता है। अपने विरोधियों से भी प्रेम करो, इससे आपका चित्त निर्मल होने में सहायता मिलेगी।

योगी आनन्द जी द्वारा लिखित अन्य पुस्तकें

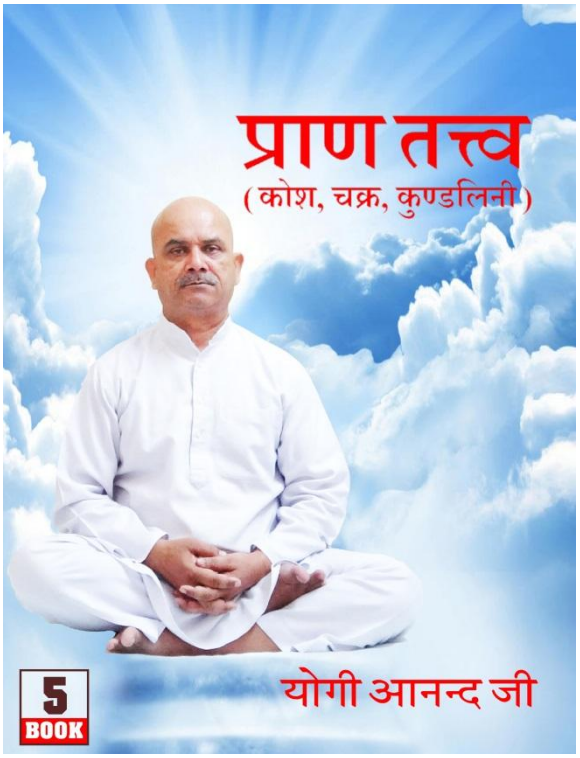








योगी आनन्द जी द्वारा लिखित अन्य पुस्तकें



सबीज समाधि की विशारदता पर अभ्यासी के चित्त में ऋतम्भरा प्रज्ञा का प्राकट्य हो जाता है। ऋतम्भरा प्रज्ञा अज्ञान की विरोधी होती है। यह ऋतम्भरा प्रज्ञा चित्त में स्थित अज्ञान को मूल से उखाड़कर फेंक देती है। चित्त के छिद्रों और विवरों में स्थित तमोगुण तथा क्लेशात्मक कर्मों को निकालकर उस स्थान पर ज्ञान का प्रकाश भर देती है। अंत में ज्ञान का प्रकाश चित्त में सर्वत्र फैल जाता है। ऐसा तत्त्वज्ञानी ईश्वर के चित्त में सदैव अन्तर्मुखी रहता है।

ISBN 978-93-345-5895-1

Email id: anandkyogi@gmail.com
Facebook: http://www.fb.com/sahajdhyanyog
Website: http://www.kundalinimeditation.in/
Youtube: http://www.youtube.com/c/YogiAnandJiSahajDhyanYog